स्वातंत्र्यपूर्व हिन्दी महिला लेखिकाओं की कहानियों का अध्ययन

A STUDY OF THE SHORT STORIES OF WOMEN WRITERS IN HINDI BEFORE INDEPENDENCE

Thesis Submitted To
Cochin University of Science & Technology
for the degree of
Doctor of Philosophy

By
ALICE V. A.

Prof. & Head of the Department
DR. P. V. VIJAYAN

Supervisor
DR. N. RAMAN NAIR

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE & TECHNOLOGY
KOCHI - 682 022

1994

Certificate

This is to Certify that this thesis is a bonafide record work carried out by Smt. V A. Alice under my supervision for Ph. D. and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any University

Department of Hindi
Cochin University of
Science and Technology.
Kochi-682 022

Date: 5-3-1994

Dr. N. Raman Nair
(Supervising Teacher)

Declaration

I hereby declare that the work presented in this thesis is based on the original work done by me under the guidance of Dr. N. Raman Nair, Professor, Department of Hindi, Cochin University of Science and Technology, Cochin and has not been included in any other thesis submitted for the award of any degree.

V. A. Alice

Department of Hindi
Cochin University of
Science and Technology,
Kochi-682 022

Date: 5 3-1994

प्राक्कथन

वैदिक युग से ही नारी साहित्य के क्षेत्र में पुरुष का साथ देती आयी है। मध्ययुगीन अनेक कवयित्रियों ने अपने गीतों से साहित्य कानन को मुखरित किया है। महिला कवयित्रियों अथवा लेखिकाओं की प्रारंभ में एक प्रकार से उपेक्षा ही रही। यद्यपि नारी साहित्य केलिए सब से अधिक आकर्षक विषय रही है, फिर भी उसके विवेचन विश्लेषण की सत्ता मुख्य रूप से लेखकों के हाथ में रही है। इन्होंने स्त्री के हृदय और चरित्र को रहस्यपूर्ण मानकर संदिग्ध, अविश्वसनीय तथा अतिवादी ढंग से विश्लेषित किया। समाज में नारी के उद्धार केलिए कभी कभी प्रतिहिंसा की भावना से आहत दृश्य को व्यक्त करने केलिए निराशाजनक गलित चित्र खींचे गये हैं। बाद में जिन साहसी स्त्रियों ने लेखक का दायित्व लिया, उन्होंने भी बराबर विधि-निषेध की चिन्ता करते हुए नितान्त परिचित और प्रतिष्ठित आदर्शों को ही स्पष्ट कर नारी की करुण मुद्रा अंकित की। अत: उन पर उँगलियाँ उठाई जाने लगीं, किन्तु ये नारियाँ निर्विकार रूप से आरोपों एवं आक्षेपों की चिन्ता न कर साहित्यिक योगदान में जुटी ही रहीं तथा अपनी कृतियों से वाक्देवी के भण्डार में वृद्धि करती ही रहीं। लेकिन पुरुष की मानसिक रूढ़ियों और नारी की प्रतिभा के प्रति उनकी दुराग्रहपूर्ण प्रवृत्ति के कारण नारी विरचित साहित्य की उपेक्षा होती आयी है। यही कारण है कि महिलाओं के उपेक्षित, छिन्न भिन्न और लुप्तप्राय कहानी साहित्य का आज समग्र अध्ययन करने की आवश्यकता आ पड़ी है। नारी-जागरण का वर्तमान युग इस बात की अपेक्षा करता है कि परंपरागत उपेक्षा-भाव और दुराग्रह को छोडकर महिलाओं की साहित्य सेवा को सही परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया जाय। वस्तुत: कई सामाजिक अत्याचारों और मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाओं के फलस्वरूप महिलाओं द्वारा

रचित साहित्य विशेषत: कहानी-साहित्य अपना विशिष्ट स्थान रखता है । प्रकृति ने पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियों को विशेष भाव-प्रवण एवं संवेदनशील बनाया है । जहाँ पुरूषों केलिए बुद्धिपरक विचार-धारा सहज गुण है, वहाँ नारियों के मानस में श्रद्धा, विश्वास, संवेदना, सहानुभूति आदि कोमल भाव अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में प्रकृतिस्थ रहते हैं । यही कारण है कि महिलाओं द्वारा प्रणीत साहित्य में हृदय को स्पर्श करने की क्षमता अथवा मार्मिकता का विशेष समावेश रहता है । परिवार, प्रणय, वात्सल्य आदि विषयों तथा तत्संबंद्ध समस्याओं के चित्रण में कहानी लेखिकाओं का जो दृष्टिकोण रहा है वह लेखकों की दृष्टि से भिन्न है ।

साहित्य की अन्यान्य विधाओं में महिलाओं का योगदान आदिकाल से बराबर दिखाई देता है । हिन्दी की प्रारंभिक मौलिक कहानियों का उल्लेख करते हुए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने इतिहास में श्रीमती बंगमहिला परिव्राजक की रचना "दुलाईवाली" को एक महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है, इसे महज आकस्मिकता कह कर नहीं टाला जा सकता । किशोरीलाल गोस्वामी की "इन्दुमती" और आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की "ग्यारह वर्ष का समय" कहानियाँ अपनी रोमानी पेंटेसी, उपदेशात्मकता, अत्यधिक अलंकृत भाषा शैली एवं लच्छेदार मुहावरों के प्रयोग के कारण अपने पूर्व की प्रेमाख्यानक परंपरा से जुडी प्रतीत होती हैं । इन कहानियों से बिलकुल भिन्न "दुलाई-वाली" कहानी में एक सामाजिक परिवेश उभरता है, जो आज की कहानी का मूल उपजीव्य है । बंगमहिला की इस कहानी के साथ ही हिन्दी कहानी में महिला-कहानीकारों की एक सशक्त परंपरा का प्रारंभ होता है, जो यह तथ्य देती है कि महिला कहानीकारों के योगदान को अपेक्षित महत्व दिये बिना हिन्दी कहानी के विकास का अध्ययन एकांगी और अपूर्ण माना जाएगा ।

हिन्दी आलोचकों ने महिलाओं द्वारा विरचित कहानी-साहित्य की ओर अपेक्षाकृत कम ध्यान दिया है । इन्होंने साहित्य के इतिहास में कुछ प्रमुख लेखिकाओं तक उनकी रचनाओं के नाममात्र गिना दिये हैं । लेकिन जिन महिलाओं ने अपनी मौलिक प्रतिभा के द्वारा हिन्दी कहानी साहित्य को विकासोन्मुख करने में अपना

महत्वपूर्ण योग दिया है, साहित्य में उनका नामोल्लेख तक नहीं हुआ है । इस अभाव की पूर्ति करने केलिए हिन्दी की स्वातंत्र्यपूर्व महिला लेखिकाओं की कहानियों का सम्यक अध्ययन करना ही प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का लक्ष्य है । लेखिकाओं के योगदान को प्रकाश में लाने का स्तुत्य प्रयास करनेवालों में डॉ॰उमेश माथुर तथा डॉ॰ऊर्मिला गुप्ता के नाम विशेष रूप से लिये जा सकते हैं । विषय की व्यापकता को दृष्टि में रखते हुए मैं ने स्वातंत्र्यपूर्व महिला कहानीकारों की प्रतिनिधि रचनाओं तक ही अपने अध्ययन को सीमित रखा है । अध्ययन को वैज्ञानिक एवं सुव्यवस्थित बनाने केलिए प्रस्तावित शोध-विषय को पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है ।

प्रथम अध्याय में हिन्दी गद्य साहित्य की विविध विधाओं में स्वातंत्र्यपूर्व कहानी साहित्य का व्यवस्थित रूप से एक ऐतिहासिक और विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है । विषय विस्तार से बचने केलिए प्रेमचन्द पूर्व-प्रेमचन्द युगीन-प्रेमचन्दोत्तर प्रमुख कहानीकारों की प्रतिनिधि कहानियों के आधार पर उनकी लेखकीय विशेषताओं पर विचार किया गया है ।

दूसरे अध्याय में स्वातंत्र्यपूर्व कहानी लेखिकाओं की कहानियों के सन्दर्भ में इनके व्यक्तित्व और कृतित्व का मूल्यांकन करके उनकी साहित्यिक मान्यताओं को आँकने का प्रयास किया गया है । साथ ही लेखिकाओं को सर्जनात्मक क्षेत्र में प्रवृत्त करनेवाले विविध प्रेरक सन्दर्भों को निरूपित किया गया है ।

तीसरा अध्याय लेखिकाओं की कहानियों का वर्गीकरण विषयवस्तु के आधार पर करके कहानियों का अध्ययन है ।

चौथे अध्याय में नारी के स्वरूप पर विचार किया गया है । लेखिकाओं की कहानियों में प्राप्त नारी जीवन से संबंधित सामाजिक समस्याओं - विधवा, अनमेल विवाह, कुलीनता का प्रश्न, विवाह-विच्छेद आदि का चित्रण करते हुए पारिवारिक जीवन में विकसित होने वाले संबंधों का विश्लेषण किया गया है । अध्याय के अन्त में लेखिकाओं के नारी-संबंधी दृष्टिकोण की सविस्तार चर्चा की गयी है ।

पाँचवें अध्याय में लेखिकाओं की कहानियों की भाषिक संरचना के बारे में

विस्तृत रूप से विश्लेषण है । अपनी कहानी की भाषा केलिए लेखिकाओं ने जिन सूक्ष्म तत्वों का उपयोग किया है, उनके बारे में विशेष रूप से चर्चा हुई है । सांकेतिकता, प्रतीक, बिम्ब विधान, भाषा की आन्तरिकता आदि निरूपित किया गया है ।

उपसंहार के अन्तर्गत संपूर्ण अध्ययन के निष्कर्षों की प्रस्तुति तथा स्वातंत्र्यपूर्व महिला लेखिकाओं के कहानी साहित्य की उपलब्धियों एवं सीमाओं को रेखांकित करते हुए हिन्दी कहानी के विकास में महिला कहानीकारों के योगदान पर भी विचार किया गया है ।

प्रस्तुत शोध प्रबंध का प्रणयन कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय हिन्दी विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष एवं प्रोफेसर तथा दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, विश्वविद्यालय विभाग, एरणाकुलम के अध्यक्ष एवं प्रोफेसर डॉ॰एन॰रामन नायर के निर्देशन में हुआ । इस शोध प्रबन्ध की निर्विघ्न परिसमाप्ति केलिए उन्होंने जो सुझाव एवं मार्ग दर्शन दिया है उस केलिए उनके प्रति बहुत आभारी हूँ । उन्हों की अनवरत प्रेरणा, परामर्श और दिशा निर्देश से ही मैं इस कार्य को शोध रूप में प्रस्तुत कर सकी ।

शोध कार्य की पूर्ति में मुझे हिन्दी विभाग के अध्यक्ष एवं प्रोफेसर डॉ॰पी॰वी॰ विजयन से जो प्रोत्साहन और सहायता प्राप्त हुई है मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ ।

कोचिन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के पुस्तकालय की अध्यक्षा श्रीमती कुंजिक्कावुट्टी तंपुरान तथा सहायक एम॰ए॰असीस के प्रति मैं कृतज्ञता प्रकाशित करती हूँ । इसके अलावा पंजाब विश्वविद्यालय, बंबई विश्वविद्यालय, सागर विश्वविद्यालय, गोरखपुर विश्वविद्यालय, केरल विश्वविद्यालय, मद्रास विश्वविद्यालय, एरणाकुलम हिन्दी प्रचार सभा आदि के पुस्तकालयों के अध्यक्ष एवं उन सहायकों के प्रति भी मैं आभारी हूँ जिन्होंने मेरे प्रति सहृदयता के साथ बर्ताव किया है और अपना पूर्ण सहयोग प्रदान किया है ।

कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के अधिकारियों के प्रति भी

मैं विशेष रूप से कृतज्ञ हूँ तथा प्रस्तुत शोध कार्य में परोक्ष-अपरोक्ष रूप से सहायता करनेवाले सहकर्मी, मित्र और शुभचिन्तकों का, मैं तहे दिल से आभार व्यक्त करती हूँ।

धन्यवाद सहित

विनीत

Alice V.A

आलीस·वी·ए·

हिन्दी विभाग
कोचिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय, कोचिन

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ - संख्या

प्राक्कथन — I - V

अध्याय - एक

स्वातंत्र्यपूर्व हिन्दी कहानी की दिशा और रचना प्रक्रिया — 1 - 45

गद्य साहित्य का विकास और आधुनिक गद्य विधा के रूप में कहानी का प्रादुर्भाव - भारतेन्दु युगीन गल्प साहित्य के उन्नायक और उनकी रचनाओं का स्वरूप (उन्नीस सौ तक) - स्वातंत्र्यपूर्व हिन्दी कहानी साहित्य का परिचय : प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी कहानी साहित्य - प्रेमचन्द युगीन हिन्दी कहानी साहित्य - प्रेमचन्द की कहानी, आधुनिक कहानी लेखन का प्रारंभ - प्रेमचन्द तथा प्रेमचन्द युगीन प्रमुख कहानीकार और उनकी रचनाओं का सैद्धांतिक एवं आलोचनात्मक अध्ययन - प्रेमचन्द युगीन महिला कहानीकार तथा उनके साहित्यिक गति विधान का परिचय - प्रेमचन्दोत्तर युग के प्रमुख कहानीकार और उनकी कहानियों का सैद्धांतिक एवं आलोचनात्मक अध्ययन - प्रेमचन्दोत्तर महिला कहानीकार और उनके साहित्यिक गति-विधान का परिचय - निष्कर्ष ।

पृष्ठ-संख्या

अध्याय - दो

स्वातंत्र्यपूर्व महिला कहानीकारों के व्यक्तित्व और कृतित्व

का समीक्षात्मक विवरण .. 46 - 93

भारतीय नारी दशा और दिशा - कहानी के क्षेत्र में
नारी की प्रगति - प्रेरणा के स्रोत एवं रचना दृष्टि
उषादेवी मित्रा - कमला चौधरी - कमला त्रिवेणी शंकर -
चन्द्रकिरण सौनरेक्सा - चन्द्रवती ऋषभसेन जैन - तारा पाण्डे
- तेजरानी पाठक - महादेवी वर्मा - राजेन्द्रबाला घोष
उर्फ बंग महिला - रामेश्वरी देवी "चकोरी" - शिवरानी देवी
प्रेमचन्द - सत्यवती मल्लिक - सुभद्राकुमारी चौहान - सुमित्रा
कुमारी सिन्हा - होमवती देवी - निष्कर्ष ।

अध्याय - तीन

विषयवस्तु के आधार पर महिला कहानीकारों की कहानियों

का अध्ययन 94 - 171

कहानी के सैद्धांतिक रूप - कथानक या विषयवस्तु - विषयवस्तु
के आधार पर कहानियों का वर्गीकरण - महिला कहानीकारों
की पारिवारिक कहानियाँ - महिला कहानीकारों की
सामाजिक कहानियाँ - महिला कहानीकारों की राजनीतिक
कहानियाँ - महिला कहानीकारों की ऐतिहासिक तथा
पौराणिक कहानियाँ - महिला कहानीकारों की उपदेशात्मक

कहानियाँ - महिला कहानीकारों की मनोवैज्ञानिक
कहानियाँ - महिला कहानीकारों की प्रगतिशील
(समाजवादी) कहानियाँ - महिला कहानीकारों की
प्रतीकात्मक कहानियाँ - महिला कहानीकारों की भाव-
प्रधान कहानियाँ - महिला कहानीकारों की हास्य-व्यंग्य
प्रधान कहानियाँ - निष्कर्ष ।

अध्याय - चार

महिला कहानीकारों की कहानियों में चित्रित नारी 172 - 24

नारी :स्वरूप विकास - प्रताड़ित एवं शोषित नारी-पात्र
- विद्रोही नारी पात्र - प्रगतिशील नारी पात्र - उदात्त
एवं उच्च भावनाओं से प्रेरित नारी पात्र - नारी के विविध
पारिवारिक रूप माँ-सन्तान - भाई-बहन - पति-पत्नी -
सास-बहू - भाभी-देवर - सौतेली माँ - सौतेली सन्तान
नारी और संयुक्त परिवार - नारी की वैवाहिक जीवन
समस्यायें अनमेल विवाह - वैधव्य जीवन - वेश्या वृत्ति -
बहु-विवाह - बाल विवाह - दहेज प्रथा - नारी और प्रेम -
नारी और मातृत्व भावना - महिला कहानीकारों का नारी
संबंधी दृष्टिकोण नारी समानता - नारी स्वातंत्र्य - नारी
और आर्थिक स्वावलंबन - नारी और वर्ण व्यवस्था,
अन्तर्जातीय विवाह - नारी-शिक्षा - नारी और राजनीति -
निष्कर्ष ।

पृष्ठ - संख्या

अध्याय - पाँच

स्वातंत्र्यपूर्व महिला कहानीकारों की कहानियाँ : भाषा शिल्प और शैलीगत अध्ययन 244 - 307

शिल्प की सर्जनात्मक सार्थकता - भाषा की संप्रेषणीयता - भाषा के गुण - मुहावरों का प्रयोग - लोकोक्तियों का प्रयोग - सूक्तियों का प्रयोग - पात्रानुकूल भाषा वैविध्य - उर्दु, अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग - अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग - ग्रामीण शब्दों का प्रयोग - संस्कृत तत्सम शब्दों से युक्त हिन्दी - भाषागत प्रयोगों के अन्य आयाम - प्रतीक बिंब - साँकेतिकता - शैलीगत प्रयोग - शैलियों के प्रकार वर्णनात्मक शैली - आत्मकथात्मक शैली - पत्रात्मक शैली - चेतना प्रवाह शैली - पूर्व दीप्ति शैली (फ्लेश बैक शैली)- नाटकीय शैली - डायरी शैली - प्रतीकात्मक शैली - मिश्रित शैली - चित्रात्मक शैली - स्वगत भाषण शैली - भाषा तथा शैलीगत प्रयोग के सन्दर्भ में महिला कहानीकारों की कहानियाँ - निष्कर्ष ।

उपसंहार .. 308 - 325

परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थों की सूची .. 326 - 33

अध्याय एक

अध्याय एक

स्वातंत्र्यपूर्व हिन्दी कहानी की दिशा और रचना-प्रक्रिया

गद्य साहित्य का विकास और आधुनिक गद्य विधा के रूप में कहानी का प्रादुर्भाव :-

साहित्य अथवा किसी अन्यकला का रूप अनायास ही एक दिन जन्म नहीं ले लेता, वरन् उसकी एक निश्चित परंपरा होती है। वह एक समय विशेष की आकस्मिक उपज नहीं है, वह एक सतत विकास का प्रतिफलन होता है जो एक निश्चित पूर्व पीठिका के आधार पर क्रमशः विकास और परिवर्तन के आलोडन-प्रत्यालोडन द्वारा एक समय विशेष पर जा कर नितान्त नूतन और अभिनव रूप धारण कर लेता है जो अपने पूराने रूप से सर्वथा भिन्न और नवीन होता है। हिन्दी गद्य साहित्य के विकास का भी यही क्रम रहा है।

हिन्दी गद्य का प्रचलन आधुनिक युग से ही नहीं प्रारंभ हुआ, यह प्राचीन है, पर यह ब्रजभाषा के गद्य रूप में ही प्रचलित था। गोरखनाथ के संप्रदाय ने भी इसे अपनाया था और नाथपंथ की कुछ गद्य रचनाएँ प्राप्त हैं। इसके पश्चात् कृष्णभक्ति शाखा ने इसे आश्रय प्रदान किया और गोस्वामी विट्ठलनाथजी के समय में "श्रृंगार रस मंडन", "चौरासी वैष्णवों की वार्ता", "दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता", सुरति मिश्र की "वैतालपच्चीसी", नाभादास का "अष्टयाम" इत्यादि पुस्तकें गद्य में लिखी गयीं। इसके पश्चात् संस्कृत ग्रंथों की टीका करने केलिए ब्रजभाषा गद्य अपनाया गया, पर उसका विकास अब नष्ट-सा होने लगा। इन टीकाओं की भाषा अव्यवस्थित तथा बेठिकाने का हैं। भाव-प्रकाशन भी ठीक से नहीं हुआ। ये सब टीकाएँ मूल से भी अधिक क्लिष्ट एवं दुर्बोध हैं। इस ने खडीबोली गद्य के विकास केलिए निर्बाध मार्ग खोल दिया, यद्यपि खडीबोली गद्य का कुछ नमूना हम पन्द्रह्वीं शताब्दी से पाते हैं। अमीर खुसरो तथा अकबर के दरबारी कवि गंग ने

भी इसे स्वीकार किया था । अत: जनसामान्य की यह भाषा आधुनिक युग से पहले ही साहित्य रचना केलिए स्वीकृत की गयी थी ।

जब मुसलमान अरब, फारस तथा तुर्किस्तान से आये तो भारत में प्रचलित "हिन्दवी" उनकी समझ में नहीं आती थी । अत: उन्होंने यहाँ की भाषा को क्रमश: अपनाया और जिस भाषा को इन लोगों ने बोलना प्रारंभ किया वह "उर्दु हिन्दी" कहलाई । भारतीय और मुसलमानी भाषाओं के सम्मिश्रण से बनी मिश्रित भाषा "हिन्दी" कहलाई । "हिन्दी" का "हिन्दी" नामकरण मुसलमानों ने ही मेरठ-देहली के आस-पास की बोलचाल की भाषा के आधार पर किया था । खडीबोली को अपनाकर उर्दु भाषा जो बनी इसमें अरबी तथा फारसी के शब्दों का क्रमश: बाहुल्य होता गया और विदेशीपन का इतना गहरा पुट होता गया कि जन-समाज से यह सर्वथा दूर होती गयी ।

संवत् 1788 में रामप्रसाद "निरंजनी" ने साफ-सुथरी खडीबोली में "भाषा योग वासिष्ठ" नामक ग्रंथ लिखा जिसमें गद्य का परिमार्जित तथा परिष्कृत रूप मिलता है । भाषा में गद्य की यही प्रथम पुस्तक मानी जाती है । पं॰रामचन्द्र शुक्लजी के शब्दों में -"अब तक पायी गयी पुस्तकों में यह "योग वासिष्ठ" ही सबसे पुराना है जिसमें गद्य अपने परिष्कृत रूप में दिखायी पडता है अत: जब तक और कोई पुस्तक इससे पुरानी न मिले तब तक इसको परिमार्जित गद्य की प्रथम पुस्तक और रामप्रसाद "निरंजनी" को प्रथम प्रौढ गद्य लेखक मान सकते हैं ।"[1] संवत् 1818 में पं॰दौलतराम का लिखा हुआ 700 पृष्ठों का एक "पद्मपुराण" नामक जैन ग्रंथ मिलता है, जिसकी भाषा "योग वासिष्ठ" की भाँति परिष्कृत तो नहीं है, पर अरबी-फारसी से असंबोन्धत, शुद्ध तथा स्वाभाविक खडीबोली का यह नमूना मात्र है । संवत् 1840 के लगभग राजस्थान के किसी लेखक ने साधारण बोलचाल की भाषा में "मंडोवर वर्णन" नामक एक ग्रंथ लिखा । पर यह गद्य-परंपरा उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण में समाप्त हो गयी और आधुनिक परंपरा का प्रादुर्भाव मुंशी सदासुखलाल, लल्लूलाल जी, सदल मिश्र तथा इंशा अल्लाखाँ इन्हीं चार महानुभावों द्वारा हुआ । लल्लूलालजी, जिन्होंने फोर्ट विलियम कालेज

1॰ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल; हिन्दी साहित्य का इतिहास; पृ॰सं॰447॰

के डॉ॰ गिलक्राइस्ट के कहने से "भाखा" के मुहावरों का परिचय कराने केलिए अपने "प्रेमसागर" की रचना की थी, उनके भी पहले मुन्शी सदासुखलाल ने अरबी तथा फारसी के लेखक होते हुए भी जगह-जगह पर शुद्ध संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग अपने "सुख-सागर" में करके आधुनिक गद्य को रूप दिया । "इंशा अल्लाखाँ ने"छूट हिन्दवी" अर्थात् "ठेठ हिन्दी" के परमोद्देश्य से "उदयभान चरित" अथवा "रानी केतकी की कहानी" की रचना की । न तो इसमें संस्कृत या ब्रजभाषा का प्रभाव है और न अरबी-फारसी का । इसमें गंभीरता के स्थान पर एक प्रकार की चंचलता और हलका-फुलका भाव मिलता है । सदल मिश्र के "नासिकेतोपाख्यान" में व्यवहार में आनेवाली भाषा का प्रयोग किया, जो ब्रजभाषा तथा परंपरागत भाषा से भिन्न थी । फिरभी भाषा अव्यवसस्थित ही रही । परंतु इनके भाव-प्रकाशन की पद्धति सुन्दर और आकर्षक है । आगे चलकर विकसित होनेवाले गद्य का आधार मुंशी सदासुखलाल और सदलमिश्र की गद्य शैली ही बना ।

इन लेखकों के लगभग 60 साल बाद तक हिन्दी की प्रगति बहुत मन्द रही । इस अवधि में मुख्य कार्य ईसाई धर्म-प्रचारकों ने किया । उन्होंने बाइबिल का सुबोध और शुद्ध हिन्दी में अनुवाद किया तथा भूगोल, इतिहास आदि की बहुत शिक्षा संबंधी पुस्तकें भी प्रकाशित कीं । सन् 1836 में प्रांतों में अदालती काम प्रचलित लोकभाषाओं में करने केलिए इश्तहारनामे निकाले । हिन्दी के विरुद्ध फिर कुचक्र रचे गये । हिन्दी पर घातक प्रहार हुआ । इसी बीच राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द और राजा लक्ष्मणसिंह गद्यक्षेत्र में अवतीर्ण हुए और दोनों ने हिन्दी को आगे बढाने में अपने अपने ढंग से योगदान दिया । शिवप्रसाद जी की अरबी-फारसी मिश्रित ठेठ हिन्दी जिसे उन्होंने "आमफहम" की संज्ञा दी प्रतिष्ठित नहीं हो सकी और राजा लक्ष्मणसिंह की संस्कृत गर्भित आगरा की ठेठ हिन्दी, जिसका रूप उनकी अनूदित कृति "अभिज्ञान शाकुन्तल " नाटक में देखा जा सकता है, जनता में प्रचलित नहीं हो सकी । वास्तव में भारतेन्दु ने ही हिन्दी गद्य की भाषा को सुव्यवस्थित कर स्थिरता प्रदान की और उन्हें ही हिन्दी गद्य की परंपरा का सूत्रपात कर उसे प्रतिष्ठित करने का श्रेय प्रदान किया जा सकता है । भारतेन्दु न तो फारसी-अरबी के शब्दों से बोझिल हिन्दी के समर्थक थे और न संस्कृत गर्भित हिन्दी के ही पक्षधर थे । उन्होंने बोलचाल की भाषा को गद्य रचना केलिए अपनाया । उन्होंने अपनी भाषा में संस्कृत और उर्दु के

उन्हीं शब्दों को स्थान दिया जो कि जनवाणी एवं मानस में प्रतिष्ठित हो घुल-मिल गये थे। भाषा की दृष्टि से उन्होंने मध्य-मार्ग का अनुगमन किया तथा हिन्दी गद्य में नवप्राण प्रतिष्ठा कर उसे स्थिरता प्रदान की। आज हिन्दी गद्य का जो रूप पाया जाता है वह "भारतेन्दु-हिन्दी" की परंपरा के ही स्वाभाविक विकास का है।

यद्यपि भारतेन्दु युग में भाषा के स्वरूप को गढने का पर्याप्त कार्य हुआ फिर भी उसी समय के गद्य में परिमार्जन और शुद्धता की कमी थी। इस कमी की ओर सर्वप्रथम महावीर प्रसाद द्विवेदी का ध्यान गया। प्रसिद्ध पत्रिका "सरस्वती" के संपादक के रूप में अपने लेखों से व्याकरण सम्मत भाषा लिखने की ओर उन्होंने लेखकों को आकृष्ट कर हिन्दी गद्य का एक सुस्थिर रूप तैयार करने का प्रयास किया। द्विवेदी युग में गद्य भाषा का पर्याप्त परिमार्जन हो चुका था।परंतु फिरभी उसमें प्रौढ विषयों के व्यक्तीकरण की क्षमता नहीं आ पायी थी। द्विवेदी के अनन्तर गंभीर विषयों का विश्लेषण करनेवाली प्रौढशैली लेकर रामचन्द्रशुक्ल आये। शुक्लजी की रचनाओं में हिन्दी गद्य का एक प्रौढ, व्याकरण बद्ध, परिष्कृत और अर्थ गंभीरता से युक्त शैली का आदर्श प्रस्तुत हुआ। इससे गद्य के विकास में अपूर्व सहयोग मिला। हिन्दी गद्य के विकास में बालकृष्ण भट्ट,बाबु श्यामसुन्दरदास, पदुमलाल पुन्नलाल बख्शी, बाबु गुलाबराय, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र आदि का भी कार्य महत्वपूर्ण था। इस युग में हिन्दी गद्य की सभी विधाओं को उत्कर्ष प्राप्त हुआ; अत: यह युग हिन्दी गद्य का उत्कर्ष काल माना जाता है। निबंध के क्षेत्र में शुक्लजी ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की तो उपन्यास के क्षेत्र में मुंशी प्रेमचन्द अप्रतिम रहे। कहानी के क्षेत्र में प्रसाद, प्रेमचन्द, सुदर्शन, कौशिक, जैनेन्द्रकुमार आदि प्रमुख कहानीकारों का महत्वपूर्ण स्थान है। नाटक के क्षेत्र में प्रसाद ने ऐतिहासिक नाटक लिखे। समालोचना के क्षेत्र में रामचन्द्र शुक्ल, श्यामसुन्दरदास तथा बाबु गुलाबराय आदि प्रमुख रहे। वर्तमान युग में हिन्दी गद्य अपनी चरम विकास की अवस्था को प्राप्त हो चुका है। इस युग में गद्य की विविध विधाओं का विकास निरन्तर हो रहा है।

आधुनिक युग में विश्व की प्राय: सभी भाषाओं में गद्य का अत्यधिक विकास हुआ है। गद्यात्मक अभिव्यक्ति की सबसे आरंभिक विधा "कथा" है क्योंकि कथा में कुछ कहने का तथा दूसरों तक अपनी भावना को इस रूप में प्रेषित करने का भाव है कि

दूसरा व्यक्ति उस भावना को प्राय: उसी रूप में समझ सके । कथा से ही आधुनिक युग में सर्वाधिक लोकप्रिय विधा कहानी का जन्म हुआ । "आज के मानव-जीवन को समझने, व्यक्त करने और उसकी सहज संवेदना से पाठक वर्ग को अभिभूत करने की अप्रतिम शक्ति कहानी में निहित हैं ।"[1] कहानी की इस व्यापकता और प्रभाव शीलता के कारण वह मानव हृदय को अन्य गद्य-विधाओं की तुलना में अधिक प्रिय लगती है । इसलिए लोकप्रिय साहित्यिक विधा के रूप में जनमानस ने उसे व्यापक स्वीकृति ही नहीं प्रदान की है वरन् समर्थ रचना-प्रक्रिया के रूप में उसका अभिनन्दन भी किया है । अत: समाचार पत्रों में कहानी का रूप रहता ही है; कहानी की स्वतंत्र पत्रिकाएँ निकलती हैं; साथ ही साहित्यिक पत्रिकाओं में भी कहानी को स्थान देना पडता है, अस्तु कहानी का महत्व किसी से छिपा नहीं है ।

<u>भारतेन्दुयुगीन गल्प साहित्य के उन्नायक और उनकी रचनाओं का स्वरूप (उन्नीस सौ तक)</u>

कहानी, गद्य साहित्य में आधुनिक युग की देन है । किन्तु इसके बीज प्रागैतिहासिक काल से ही प्राप्त होते हैं । "आदि मानव ने सृष्टि की क्रोडे में जब नयनोन्मीलन किया होगा, स्वाभाविक विस्मय और उत्सुकता से प्रेरणा पाकर अपनी अनुभूति को अपने सहचर पर अभिव्यक्त किया होगा, तभी कहानी का जन्म हुआ ।"[2] कहानी-रचना की दृष्टि से भारतीय कथा साहित्य प्राचीनतम माना जा सकता है, क्योंकि कहानी का प्राचीनतम रूप ऋग्वेद में भिन्न भिन्न देवताओं के स्तुति परक सूत्रों में, मनोरंजक शिक्षाप्रद आख्यानों के रूप में मिलता है । तदनन्तर हमारे विभिन्न ब्राह्मणों, उपनिषदों, महाकाव्यों, पुराणों और जैन-बौद्ध तथा अवदान और जातक साहित्य में कहानियों का अगाध भण्डार मिलता है । संस्कृत में रचित "पंचतंत्र" और "हितोपदेश" की कहानियों का प्रचार दूर दूर तक हुआ । इसके उपरान्त ब्रजभाषा गद्य में "दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता" (संवत् 1640) में कदाचित् हिन्दी की प्रथम

---

1. डॉ. राजेन्द्रप्रसाद शर्मा - हिन्दी कहानियों में व्यक्तित्व विश्लेषण, पृ-18.
2. उपेन्द्रनाथ अश्क; हिन्दी कहानी एक अन्तरंग परिचय; पृ-13.

गद्यमय कहानियाँ लिखी गयीं । संवत् 1660 के आस-पास लिखे गये "नासिकेतोपाख्यान" में संस्कृत-ग्रंथों के आधार पर लिखी गयी कहानियाँ उपलब्ध होती हैं । संवत् 1767 में सुरति मिश्र ने संस्कृत के "बैताल पंचविंशतिका" के आधार पर ब्रजभाषा में "बैताल पच्चीसी" की रचना की । अलावा इसके भारत में कथापरक साहित्य का दूसरा रूप सूफी कवियों के प्रेमाख्यानक काव्यों में उपलब्ध होता है जिसका विषय लौकिक है किंतु उद्देश्य अलौकिक तत्वचिन्तन । हिन्दी के आख्यानपरक काव्य में ये अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं ।

सन् 1880 से खड़ीबोली गद्य का प्रारंभ माना जा सकता है । इसका विकास राजनैतिक एवं सामाजिक कारणों से द्रुतगति से होता रहा और खड़ीबोली गद्य में साहित्यिक कृतियों की रचना होने लगी । इस काल में लिखी हुई लल्लूलाल का "प्रेमसागर", सदलमिश्र का "नासिकेतोपाख्यान" और इंशा अल्लाखाँ की "रानी केतकी की कहानी" प्रसिद्ध है । नन्ददुलारे वाजपेयी के शब्दों में "रानी केतकी की कहानी" "नासिकेतोपाख्यान", "प्रेमसागर" आदि कथात्मक रचनाओं में आधुनिक कहानी का कोई भी लक्षण नहीं दिखाई पड़ता । फिर भी इनमें से "रानी केतकी की कहानी" हिन्दी के प्रथम मौलिक कथात्मक रचना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है ।"[1] इन ग्रंथों का आधुनिक हिन्दी कहानी-परंपरा को आगे बढ़ाने में बहुत योग है ।

भारतेन्दु युग से ही खड़ीबोली गद्य में कथा साहित्य की अटूट परंपरा चल निकली । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके साथियों ने संपूर्ण जीवन चर्या का पल्ला छोड़कर जीवन के प्रसंगों और प्रकीर्ण अंशों को अपनाया और उन्हें पृथक वस्तु के रूप में स्वतंत्र सत्ता देकर या तो निबंध या निबंधात्मक कहानियाँ लिखीं, जो विस्मयात्मक और उपदेशात्मक उपकरणों के अतिरिक्त विनोद और व्यंग्य की विशेषताएँ भी रखती हैं । उनका आकार आधुनिक कहानी के उपयुक्त है, और उनमें अनावश्यक वस्तु विस्तार भी नहीं है । "कथा" में जो प्राचीन इतिवृत्त के ग्रहण की परिपाटी थी, उसके स्थान पर सामयिक सामाजिक जीवन की कल्पित "कहानी" का उदय हो चला ।

---

1. नन्ददुलारे वाजपेयी, आधुनिक साहित्य - पृ-232.

भूत के स्थान पर वर्तमान काल का प्रयोग भारतेन्दु-युग की हिन्दी कहानी में ही प्रथम बार हुआ । यहीं से हिन्दी कहानी के नवीन स्वरूप का आरंभ होता है, जो आगामी नवीनता का अंकुर भी अपने गर्भ में छिपाये हैं । आश्चर्य यही है कि भारतेन्दुकाल में कहानी कला का स्पष्ट रूप सामने न आ सका । उसका अस्पष्ट रूप नाटक, उपन्यास तथा प्रहसन में अवश्य दिखायी दिया । अस्तु कहानीकला की समस्त विशेषताओं का सूत्र भारतेन्दु युग से ही उपलब्ध हुआ ।

भारतेन्दु युग में विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं का जन्म हुआ । तत्कालीन प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में "कवि वचन सुधा" (1867) "हरिश्चन्द्र मैगज़ीन" (1873), "हरिश्चन्द्र-चन्द्रिका" (1874), "हिन्दी प्रदीप" (1877), "ब्राह्मण" (1880), "भारत मित्र" (1877) आदि उल्लेखनीय है । इन पत्र-पत्रिकाओं में गद्य, काव्य, निबंध, हास्यव्यंग्य के अनूठे चित्र, स्वप्न चित्र, सरस एवं ललित लेखों आदि का प्रकाशन करने का प्रयास हो रहा था, जिनका हिन्दी कहानी के आविर्भाव के मूल में महत्वपूर्ण स्थान हैं । वे भले ही सामाजिक हों अथवा साहित्यिक, उनमें कहानी की सी कथावस्तु और चित्रात्मकता स्पष्ट लक्षित होती है । व्यंग्य चित्रों में भी व्यंग्यात्मक कहानी का स्वरूप दिखाई देता है । स्फुट हास्य चित्रों में भी कहानी की सी सजीवता सरलता से देखी जा सकती है । । "एक बूढ़ा कमर झुकाए लाठी लिए बाज़ार में चला जाता था, राह में किसी ने पूछा कि यह कमान तुम ने कितने में लिया है । उसने उत्तर दिया कि थोड़े दिन सबर करो यह तुम्हें आप से आप मिल जाएगा ।"[1]

स्वप्न चित्रों में कहानी के तत्व सबसे अधिक स्पष्ट हुए हैं । इन स्वप्न चित्रों में कल्पना, संवेदना, चित्रात्मकता तथा सजीवता का जो आकर्षण है, वह उसे कहानीकला के विकास का प्रथम मौलिक प्रयोग कहलाने के योग्य बनाता है । वस्तुत: भारतेन्दु युगीन निबंधों, हास्य-चित्र, व्यंग्य-चित्र, स्वप्न चित्र आदि की मनोरंजक शैली ने जनता को कथाओं की ओर प्रेरित किया और संभवत: इस आनन्द से प्राप्त जिज्ञासा ने ही आगे चलकर हिन्दी कहानी के विकास में योग दिया ।

भारतेन्दु के आविर्भाव के साथ अनेक लेखकों ने इस क्षेत्र में विभिन्न कृतियाँ

---

1. "हिन्दी प्रदीप", अप्रैल 1879, पृ.सं—42.

प्रस्तुत की जिनका स्वरूप आधुनिक कहानी से साम्य रखता है। भारतेन्दु के समकालीन कहानीकारों में सर्वप्रथम गौरीदत्त का नाम उल्लेखनीय है जिन्होंने "कहानी टका कमानी" तथा "देवरानी व जेठानी" कहानियाँ स्त्री शिक्षा के उद्देश्य से लिखीं। इन कहानियों में नारी चेतना के जागरण का आवाहन मिलता है और ये उपदेशात्मक हैं। इनकी कहानियों में उपदेशात्मकता की प्रधानता और मनोरंजकता की गौणता देखी जाती है। शिक्षा विभाग के इन्सपेक्टर राजा शिवप्रसाद "सितारे हिन्द" ने शिक्षा विभाग का पाठ्यक्रम निर्धारित करते समय पठनीय सामग्री के अन्तर्गत सन् 1852 तथा 1862 के बीच कुछ कहानी पुस्तकों की रचना की।"[1] "राजा भोज का सपना", "वीरसिंह का वृत्तान्त", "आलसियों को कोडा", "सेंडफोर्ड और मरटन", "वामा मन रंजन", "लडकों की कहानी", आदि उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं। अपनी कहानियों में उन्होंने उर्दु मिश्रित भाषा का प्रयोग किया है। "राजा भोज का सपना" (सन् 1888) एक उपदेशात्मक कहानी है जिसका आधार काल्पनिक तत्व है। कहानी के अन्त में लेखक ने पाठकों को संबोधित करते हुए कहा है - "हे पाठक जनो! क्या तुम भी भोज की तरह ढूँढते हो और भगवान से उसके मिलने की प्रार्थना करते हो। भगवान तुम्हें शीघ्र ऐसी बुद्धि दें और अपनी राह पर चलावें, यही हमारे अन्तःकरण का आशीर्वाद है।"[2] कहानी का आरंभ वर्णनात्मक ढंग से होता है और अन्त उपदेशात्मक है। बीच बीच में काव्यपूर्ण दृश्य का वर्णन है। कहानी कहने का ढंग भारतीय है और पुरानी है। स्वरूप की दृष्टि से इन्होंने "स्वप्न" नाम से हिन्दी गद्य की एक नवीन शैली को जन्म दिया परन्तु उसको वर्तमान कहानी के समक्ष कदापि नहीं रखा जा सकता।

अपने युग के सर्वप्रमुख साहित्यकार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने भी कहानी के क्षेत्र में दो कहानियाँ प्रस्तुत की हैं जिनके शीर्षक हैं - "एक कहानी: कुछ आप बीती, कुछ जग बीती", और "एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न"। ये कहानियाँ भारतेन्दु की मौलिक रचना-शक्ति तथा चिन्तन-प्रवृत्ति का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं। प्रथम में समकालीन सामाजि

---

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ-520
2. राजा शिवप्रसाद "सितारे हिन्द", राजा भोज का सपना, अन्तिम पृष्ठ।

जीवन की पृष्ठभूमि में इन्सान की मनोवृत्ति का विश्लेषण किया गया है। यद्यपि कथावस्तु के वर्णन में पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को उपस्थित करने की ओर अधिक ध्यान दिया गया है तो भी "कहानी" के सब तत्वों के दर्शन इसमें नहीं होते। उनकी दूसरी रचना मूलत: निबन्धात्मक है और कथा तत्वों से युक्त है। इसके पात्रों के संवाद प्रभाव शून्य है, इस में नाटक तत्व का गुण नहीं मिलता। हमारे मुल्क में अंग्रेज़ों के शासनकाल में समाज में राजा-रइसों के आस-पास किस प्रकार से निकम्मे और चापलूस आदमी इकट्ठे रहते थे और किस प्रकार से उन्हें मूर्ख बनाते थे; इसका व्यंग्यपूर्ण चित्र इन कहानियों में मिलता है। इन कहानियों के अतिरिक्त "हमीर-हठ", "राजसिंह", "मदालसा", "सीलवती", "सुलोचना" आदि इनके और कई आख्यान मिलते हैं; परन्तु उनमें "कहानी" के सब तत्व विद्यमान नहीं हैं। मुंशी शाहीलाल ने "किस्सा शाहरूम", "कुलीन कन्या", "किस्सा गुलाब केवडा" आदि कहानियाँ लिखीं। "किस्सा मर्द औरत का" - यह कहानी, अग्रवाल कुल की एक कुलीन स्त्री - जैनमती द्वारा लिखी गयी है जिसमें मूलकथा के साथ कई प्रासंगिक कथाएँ भी उपलब्ध होती हैं। योगदास ने सन् 1893 ई॰ में "ठगलीला" की रचना की जिसकी कथावस्तु के बीच बीच में चौपाई तथा अन्य छन्दों का प्रयोग किया गया है। इस युग के फैज़ हुसैनी की "किस्सा सौदागर बच्चा" एक पद्यबद्ध कहानी है।

भारतेन्दु युग की कहानियों के अध्ययन से कई प्रवृत्तियाँ सामने आयीं। वे निम्नलिखित हैं:- मनोरंजन तथा उपदेश दोनों उद्देश्य इस समय कहानीकारों के सामने रहे हैं। उपदेशात्मक कहानियों की रचना पौराणिक कथाओं और नीतिपरक कहानियों के आधार पर हुई। कहानीकारों ने पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं का दिग्दर्शन प्राय: नहीं किया। अधिकांश कहानियाँ वर्णनात्मक शैली में रचित हैं। कहानी का बीज तो विविध शैलियों में मिलता था, किन्तु वह बीज प्रस्फुटित न हो सका था। कथा के बीच में आरंभ तथा अन्त में पद्यात्मक अंशों का प्रयोग अधिकतर हुआ है। कथावस्तु में अन्तर्कथाओं को रखने की शैली अधिक कहानीकारों ने अपनाई हैं जो वस्तुत: उनकी प्राचीन परंपरा का परिचायक हैं। किन्तु हिन्दी की आधुनिक कहानियों से उनकी समता नहीं की जा सकती। इस

युग में लोककथाओं और ऐतिहासिक कथानकों को भी कहानियों के रूप में लिखने का प्रयास किया गया । भारतेन्दु युग में "कहानी" के जो प्रयत्न तथा प्रयोग हुए वे भविष्य के कहानीकारों केलिए मार्ग प्रेरक अवश्य हुए । कहानी-कला के आविर्भाव तथा विकास मार्ग में इन रचनाओं का योग निस्संदेह महत्वपूर्ण है । भारतेन्दुयुगीन कहानी के विकास में एवं दिशा निर्धारण में अनूदित कहानियों का भी विशेष महत्व रहा है । हिन्दी में अंग्रेज़ी, बंगला आदि से अनूदित या रूपान्तरित होकर कई कहानियाँ आयीं ।

<u>स्वातंत्र्यपूर्व हिन्दी कहानी साहित्य का परिचय</u>

हिन्दी की आधुनिक कहानियों का प्रारंभ प्राय: समस्त विद्वानों के मतानुसार "सरस्वती" (सन् 1900 ई॰) के प्रकाशनारंभ से माना जाता है । डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल के शब्दों में कहें तो "इसके (सरस्वती के) प्रकाशन का सबसे महान् और क्रांतिकारी प्रयत्न था हिन्दी कहानी का आरंभ । इस तरह अगर हम "सरस्वती" का प्रकाशन बीसवीं शताब्दी के हिन्दी साहित्य के इतिहास की सबसे महान घटना कहें तो अत्युक्ति न होगी ।"[1] तात्पर्य यह कि "सरस्वती" के प्रकाशन के पूर्व आधुनिक कलात्मक हिन्दी कहानियों का अस्तित्व नहीं था । हिन्दी कहानी साहित्य के विकास में पत्रिकाओं का योगदान विशेष स्मरणीय है । "सरस्वती" के साथ साथ "सुदर्शन" (1900), "इन्दु" (1909), "गृहलक्ष्मी" (1910), "कन्या-मनोरंजन" (1910), "हिन्दी गद्यमाला" (1913), "चाँद" (1922), "माधुरी" (1923) आदि साहित्यिक पत्रिकाओं के प्रकाशन ने हिन्दी कहानी विकास क्रम में एक अभूतपूर्व क्रांति उपस्थित कर दी ।

कहानी-साहित्य में विकास क्रम की ओर दृष्टिपात करने केलिए आधुनिक कहानी साहित्य को विभिन्न कालों में विभक्त करके देखना मुझे उचित लगता है । प्रत्येग युग के प्रतिनिधि लेखकों की प्रमुख रचनाओं पर प्रकाश डालना हमारा ध्येय है । स्वातंत्र्यपूर्व आधुनिक कहानी साहित्य को मुख्य रूप से तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं, वे इस प्रकार हैं :-

---

1॰ डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल, हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास, पृ-49॰

1· प्रेमचन्द पूर्व युग (1900-1916) 2· प्रेमचन्द युग (1916-1936)
3· उत्तर प्रेमचन्द युग (1937-1947)

प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी कहानी साहित्य :-

इस काल में कहानी ने कलात्मक साहित्यिक विधा के रूप में अवतीर्ण होकर अपने विकास की पहली मंजिल पूरी की । श्री किशोरीलाल गोस्वामी की कहानी "इन्दुमती" 1900 ई· की "सरस्वती" में प्रकाशित हुई थी जिसे कई आलोचकों ने आधुनिक हिन्दी साहित्य की पहली कहानी के रूप में प्रतिष्ठित किया है । परन्तु इस कहानी की मौलिकता के संबंध में आलोचकों में मतभेद है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल काल-क्रम के अनुसार क्रमश: किशोरीलाल गोस्वामी की "इन्दुमती" (1900 ई·) स्वयं की "ग्यारह वर्ष का समय" (1903 ई·) तथा बंग महिला की "दुलाईवाली" (1907 ई·), इन तीन कहानियों को हिन्दी की मौलिक कहानियाँ मानते हैं । वे लिखते हैं कि "यदि" "इन्दुमती" किसी बंगला कहानी की छाया नहीं है तो हिन्दी की यही पहली मौलिक कहानी ठहरती है । इसके उपरान्त "ग्यारह वर्ष का समय", फिर "दुलाईवाली" का नंबर आता है ।"[1] इस कहानी पर विलियम सेक्सपीयर के विख्यात नाटक "टेम्पेस्ट" की छाया देखकर कुछ आलोचकों ने इसकी मौलिकता पर सन्देह प्रकट किया । डॉ·कृष्णलाल ने कहा - "यह (इन्दुमती) पूर्णतया मौलिक कृति नहीं कही जा सकती क्योंकि इस पर शेक्सपीयर के प्रसिद्ध नाटक "टेम्पस्ट" की छाप बहुत है ।"[2] हिन्दी कहानी के विकास क्रम के अनुसार "इन्दुमती" कहानी को प्रथम स्थान दिया जा सकता है यद्यपि इस पर "टेम्पस्ट" नाटक की छाया स्पष्ट है । इस कहानी पर भारतीय कथा शैली का प्रभाव दिखाई पडता है और बीच बीच में भारतीय कथा-शैली का वाक्य-विन्यास भी मिलता है ।" इसमें ऐतिहासिक वातावरण में एक आदर्श प्रेम का वर्णन है । रहस्य रोमाँच से भरी यह कहानी वास्तव में एक ओर तो एक निश्चित देश काल में बनी है, दूसरे इसमें आधुनिक कहानी का रूप है, तीसरे इसमें प्रेम के आदर्श स्वरूप की झाँकी है । अस्तु यह

1· रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ-603
2· श्रीकृष्ण लाल, हिन्दी कहानियाँ, भूमिका भाग-पृ·-23

कहानी कथावस्तु, पात्र, तथा वातावरण की दृष्टि से मौलिक कहानी ही मानी जाएगी ।"[1]

"सरस्वती" के प्रारंभिक दो वर्षों में हिन्दी कहानी का एक स्थूल स्वरूप निर्धारित हुआ । "सरस्वती" के प्रकाशन वर्ष में किशोरीलाल गोस्वामी की "इन्दुमती" प्रकाशित हुई । इसी वर्ष "सुदर्शन" में माधव प्रसाद मिश्र की "मन की चंचलता" कहानी तथा सरस्वती में स्वप्निल कलाओं पर आधारित केशव प्रसाद सिंह की कहानी "आपत्तियों का पर्वत" प्रकाशित हुई । "आपत्तियों का पर्वत" प्रथम पुरूष में "मैं" और "हम" के प्रयोग से लिखी गयी तथा इसमें कुतूहल की मात्रा पर्याप्त रूप से आयी है । इसमें लेखक ने स्वप्न को एक अभिव्यक्ति का साधन मान कर कहानी के मनोरंजन को सामने लाने का प्रयत्न किया है । कार्तिक प्रसाद खत्री ने आत्मकथात्मक शैली में प्रेमप्रधान कहानी "दामोदर राव की आत्मकहानी"[2] लिखी जिसे आत्मकथात्मक शैली में हिन्दी की प्रथम कहानी स्वीकार की जानी चाहिए । इस में उत्तम पूरूष में कहानी कहने की शैली सफलतापूर्वक चरितार्थ हुई है । कहानी के वर्णन पक्ष में विषय-प्रतिपादन तथा व्यक्ति के माध्यम से आदर्श प्रतिष्ठा इन दोनों तत्वों को सफलता मिली है ।

यात्रा विवरण के आधार पर केशव प्रसाद सिंह की "चन्द्रलोक की यात्रा"[3] तथा "काश्मीर यात्रा"[4] आदि कहानियाँ मिलती हैं जिनमें काल्पनिक एवं यथार्थ घटनाओं का सुन्दर समन्वय किया गया है तथा रोचकता एवं कुतूहलता बनाये रखने का भी प्रयत्न किया गया है । पंडित जगन्नाथ प्रसाद त्रिपाठी ने संस्कृत नाटिका रत्नावली की आख्यायिका"[5] की रचना की । यह आख्यायिका अपेक्षाकृत बहुत लंबी और विस्तृत रूप में आयी है । फलत: इसमें कहानी की सीमा नहीं रह पाती ।

---

1. रामदर्श मिश्र, हिन्दी कहानी अंतरंग पहचान, पृ.सं.-5.
2. सरस्वती- भाग-1; संख्या - 6.
3. " " ; संख्या - 7; पृ.-227
4. " " ; संख्या - 5 ; पृ-256.
5. " भाग-2 ; संख्या - 1.

अलावा इसके इसमें मूल नाटक के समस्त इतिवृत्त को स्थान देने का प्रयत्न भी किया गया है । संवेदनशील घटनाओं के आधार पर सामाजिक कहानी पार्वती नन्दन कृत "प्रेम का फुहारा"[1] भी प्रकाशित हुई । इसमें एक समस्यापूर्ण सामाजिक कथानक की अवतरणा हुई है । कहानी का निर्माण केवल संयोगों के आधार पर हुआ है । इसमें घटनाएँ एक के बाद एक आती रहती हैं ।

"सरस्वती" में प्रकाशित प्रारंभिक दो वर्षों की ये प्रमुख कहानियाँ हैं । हिन्दी की इन प्रारंभिक कहानियों में शिल्प-विधि की दृष्टि से भी मौलिकता का आभास नहीं मिलता । अधिकाँश कहानियाँ भावानुवाद हैं । इनमें कहानी के कलातत्व का स्वस्थ उद्घाटित नहीं हो पाया है । वस्तुत: ये प्रारंभिक कहानियाँ कहानी की प्रेरणा और प्रभाव की ओर केवल लक्ष्याभिमुख हैं और कहानी कला की दृष्टि से इनमें कथा तत्वों का पूर्णत: विकास नहीं हुआ है । लेकिन यह अवश्य है कि इन प्रारंभिक कहानियों से हिन्दी कहानी कला के आरंभ का सूत्रपात निश्चित रूप से हुआ । कहानी के रचना-विधान में कथानक, चरित्र, शैली और समस्या को गुंफित करने की एक निश्चित दिशा भी मिली अर्थात कहानी की सीमा, क्षेत्र और ध्येय को एक रूप मिला ।

आधुनिक हिन्दी कहानी के विकास में एवं दिशा निर्धारण में अनूदित कहानियों का विशेष महत्व रहा है । अंग्रेजी, संस्कृत, बंगला तथा अन्य भारतीय भाषाओं के कथानकों के हिन्दी रूपान्तर अथवा भावान्तर उपस्थित करने में जो भिन्न भिन्न प्रयत्न तथा कहानी कला के प्रयोग किये गये उनसे हिन्दी कहानी कला के "आरंभ" का सूत्रपात होने में अच्छा योग मिला । बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक की अनूदित कहानियों द्वारा हिन्दी "कहानी" को एक निश्चित दिशा मिली । "कहानी" की मौलिक परंपरा के स्थान में साहित्यिक परंपरा का पालन सभी अनुवादकर्ताओं ने किया है । अनूदित कहानियों का आकार संक्षिप्त है जो आगे चलकर मौलिक कहानीकारों द्वारा व्यापकता के साथ अपनाया गया ।

---

1. सरस्वती - भाग-2, संख्या-5, पृ-166.

हिन्दी के प्रसिद्ध आलोचक, निबंधकार तथा कवि पं॰रामचन्द्र शुक्ल द्वारा लिखित "ग्यारह वर्ष का समय"[1] कहानी का हिन्दी साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें शुक्लजी ने कथा भाग के मार्मिक अंगों की उद्भावना उत्तम ढंग से की है। कहानी का लक्ष्य अदृष्ट प्रेम की व्याख्या करना है। इस विकास क्रम में आनेवाली कहानी है पंडित गिरिजादत्त वाजपेयी लिखित "पंडित और पंडितानी"[2] नामक कहानी। यह प्रेमप्रधान मनोरंजक कहानी है जिसमें घटनाओं का प्राधान्य है। यह कहानी कलात्मक दृष्टि से व्यंग्य चित्र और हास्य चित्र के विकसित सूत्र में आती है। उसी वर्ष कुमुद बन्धु मित्र ने टैगोर की कहानी "दृष्टदान"[3] का हिन्दी में भावानुवाद किया। "सरस्वती" के चौथे वर्ष में आत्मकहानी शैली के प्रयोग से यशोदानन्द अखोरी कृत "इत्यादि की आत्मकहानी"[4] और पं॰महेंदुलाल गर्ग कृत "पेट की आत्म-कहानी"[5] नाम से दो कहानियों की सृष्टि हुई है। लाला पार्वतीनन्दन ने "मेरी चम्पा"[6] के नाम से एक कहानी लिखी, लेकिन यह कहानी स्वयं लेखक के शब्दों में टामस कारलायल द्वारा अनूदित एक जर्मन कहानी की छाया के आधार पर लिखी गयी है। इसके अतिरिक्त उन्होंने एक अन्य कहानी "नरक गुलज़ार"[7] के नाम से अनूदित की है, लेकिन इसका पता नहीं है कि यह किस मूल स्रोत से अनूदित हुई है। सन् 1905 ई॰ के पहले किशोरीलाल गोस्वामी के "चन्द्रिका" तथा "गुलबहार" कहानी संग्रह मिल जाते हैं। विश्वंभरनाथ जिज्जा की पहली मौलिक कहानी "परदेशी" अत्यंत सफल है। इसका प्रकाशन सन् 1906 ई॰ में हुआ।

1906 ई॰ की सरस्वती में कुल नौ कहानियाँ आई हैं जिनमें पं॰वेंकटेश

1॰ सरस्वती, भाग-4, सन् 1903, संख्या-9, पृ-308
2॰ " " " " -136
3॰ " " " -2, -3
4॰ " भाग-5, सितंबर 1904, सं-6
5॰ " -5, " -6॰
6॰ " -6, एप्रिल 1905, सं-4, पृ-132
7॰ " सितंबर 1905, सं-9, पृ-138

नारायण कृत "एक अशरफी की आत्मकहानी", लाला पार्वती नन्दन कृत "एक के दो दो", पंडित सूर्यनारायण दीक्षित कृत "चन्द्रहास का अद्भुत आख्यान", चाँदनी कृत "प्रोषित पतिका", और लाला पार्वती नन्दन कृत "मेरा पुनर्जन्म" मौलिक कहानियाँ हैं। ये सब कहानियाँ साधारण ढंग की है और शिल्पविधि विकास की दृष्टि से कुछ भी आगे न बढ सकीं। शेष कहानियाँ - जैसे बंग महिला कृत "कुम्भ में छोटी बहु" और "दान प्रतिदान", चतुर्वेदी कृत "भूल-भुलैया", भटाचार्य कृत "राज-पुतानी" पूर्ण अनूदित या छायानुवादित कहानियाँ हैं। सरस्वती के सातवें वर्ष भर की संख्याओं में फिर छ: कहानियाँ हैं, जैसे बाबूराम दास कृत "एक के दो दो", पंडित उदय नारायण बाजपेयी कृत "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी", लक्ष्मीधर बाजपेयी कृत "तीक्ष्ण छुरी", श्रीमती बंग महिला कृत "दुलाईवाली", प्रेमनाथ भट्टाचार्य कृत "पक्का गठि-बन्धन" और पं॰गंगा प्रसाद अग्निहोत्री कृत "सच्चाई का शिखर"। इन समस्त कहानियों में शिल्पविधि की दृष्टि से "केवल दुलाईवाली" कहानी महत्वपूर्ण है। अनेक आलोचकों ने इसे हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी मानी। इसकी कथा का संबंध एक ऐसी घटना से है जो एक स्त्री के जीवन में ही नहीं वरन् समाज के किसी भी व्यक्ति के जीवन में घट सकती है। कहानी के इतिवृत्त की कलात्मक सजावट ही इस कहानी की शिल्प विधि की परम विशेषता है।

इन कहानियों के पश्चात् "सरस्वती" में 1909 ई॰ में वृन्दावनलाल वर्मा की "राखी बन्द भाई" के साथ श्रीलाल शालग्राम पंड्या की "एक ज्योतिषी की आत्मकथा" श्रीमती बंग महिला कृत "कलियाँ", कुंदनलाल शाह की "प्रत्युपकार का एक अद्भुत उदाहरण" और पं॰शिवनारायण शुक्ल की "सात सुनार" कहानियाँ प्रकाशित हुईं। इनमें केवल वर्माजी की कहानी मौलिक तथा उनके व्यक्तित्व की परिचायक है। अन्य सभी कहानियाँ प्राय: अनूदित हैं। 1910 ई॰ में वृन्दावनलाल वर्मा की "तातार और एक वीर राजपूत" प्रकाशित हुई। वृन्दावनलाल वर्मा की इन कहानियों के द्वारा ऐतिहासिक कहानियों के स्वाभाविक स्वरूप का प्रणयन पहली बार हिन्दी में हुआ। 1909 ई॰ में ही मैथिलीशरण गुप्त की "नकली किला" तथा "निन्नानबे का फेर" दो कहानियाँ छन्दबद्ध शैली में प्रकाशित हुईं। ये उपदेशात्मक कहानियाँ थी। लेकिन इस तरह की पद्यबद्ध आख्यायिकाओं का प्रयोग हिन्दी में चल नहीं सके। इस प्रकार

सन् 1910 तक "सरस्वती" पत्रिका अनूदित तथा मौलिक कहानियाँ प्रकाशित करती रही । इस पत्रिका द्वारा एक ओर तो हिन्दी कहानी-कला का जन्म तथा विकास हुआ, कहानी की सत्ता स्थापित हो गयी और दूसरी ओर खड़ी बोली गद्य का भी परिमार्जन तथा सुसंगठन होता रहा ।

इस प्रकार हिन्दी कहानी के शैशव-काल में अनेक कहानियों का प्रकाशन हुआ। इन कहानियों में बंगला से अनूदित कहानियों की संख्या अधिक मिलती है और अंग्रेज़ी तथा बंगला की कहानी शैली पर यहाँ की कहानियों का निर्माण हुआ है । सन् 1911 ई॰ से ही हिन्दी कहानी की अभ्युदय शक्ति सशक्त रूप में प्रस्तुत होती है । प्रसाद की पहली कहानी "ग्राम" इसी वर्ष में "इन्दु" में प्रकाशित हुई जिसके द्वारा कलात्मक भाषा शैली एवं कल्पना प्रधान विषयों को कथा तत्व के रूप में प्रतिष्ठा मिली । "ग्राम" भारत के ग्रामीण जीवन की एक दुखपूर्ण कहानी है । किशोरीलाल गोस्वामी के सुपुत्र छबीलेलाल गोस्वामी भी इसी वर्ष से "स्त्री दर्पण" में अपनी कहानियों का प्रकाशन प्रारंभ करते हुए दिखाई पडते हैं । सन् 1911 ई॰ में ही हिन्दी कथा साहित्य के इतिहास को अपनी विद्युत्प्रतिभा से चमक देनेवाले कथा शिल्पी पंडित चन्द्रधर शर्मा गुलेरजी की पहली कहानी " सुखमय जीवन" "भारत मित्र" में प्रकाशित होती है । इसी वर्ष "इन्दु" में प्रकाशित जी॰पी॰श्रीवास्तव लिखित कहानी पिकनिक" से ही हिन्दी कथा साहित्य में वास्तविक हास्यकथाओं का प्रारंभ होता है । जयशंकर प्रसाद की दूसरी महत्वपूर्ण कहानी "रसिया बालम"[1] में प्रसादजी की भावुकता तथा काल्पनिकता का पता चलता है । प्रेमाख्यान की शैली पर लिखी हुई प्रसादजी की यह कहानी हिन्दी में काव्यात्मक कहानी का श्रीगणेश करती है । इस प्रकार "इन्दु" में प्रकाशित श्री॰राधिकारमण सिंह कृत "कानों में कंगना"[2] तथा पं॰ पारसनाथ कृत "सुख की मौत"[3] कहानियों द्वारा

1॰ "इन्दु", अप्रैल 1912

2॰ " कला-4, किरण-1, पृ-45

3॰ " मई 1913, पृ-468॰

हिन्दी में भावपूर्ण कहानियों की परंपरा आगे बढी । सन् 1914 ई॰ में पं॰ ज्वालादत्त शर्मा भी कहानी के क्षेत्र में आये । नीति उपदेश की प्रधानता इनकी कहानियों का लक्ष्य था । सन् 1915 और सन् 1916 में प्रकाशित पं॰चन्द्रधर शर्मा गुलेरजी की "उसने कहा था" (1915), विश्वंभरनाथ जिज्जा की "विदीर्ण हृदय" (1915), तथा प्रेमचन्द की "पंच परमेश्वर", (1916) अत्यंत उच्च कोटि की कहानियाँ हैं और उनके द्वारा हिन्दी कहानी-साहित्य की नींव दृढ हुई । इस युग के कथा साहित्य में प्रसाद, गुलेरी और प्रेमचन्द ये तीनों तीन दिशाओं के निदेशक हैं । गुलेरजी ने अपने जीवन काल में तीन ही कहानियाँ लिखीं । इनसे विकास युग को एक गति अवश्य मिली, लेकिन इतने कम सृजन के कारण इनसे यह युग प्रेरित न हो सका । ,पसाद एवं प्रेमचन्द इन दोनों अद्भुत प्रतिभा संपन्न कलाकारों के प्रभाव एवं दिशानिर्देश में रहकर ही विकास कालीन अन्य कहानीकार रचना कर सके । "इन दो महान कथा-शिल्पियों से दो पृथक संस्थानों के निर्माण हुए, जिनके अन्तर्गत अनेकानेक प्रतिष्ठित, विकासकालीन कहानीकारों ने अपनी बहुमूल्य कला-कृतियाँ दीं ।"[1]

प्रेमचन्द युग-हिन्दी कहानी साहित्य के संपूर्ण विकास का युग (1916-1936)

हिन्दो कहानी की विकास-यात्रा में प्रेमचन्द युग का सर्वाधिक महत्व है । इस युग के कहानीकारों ने हिन्दी कहानी को सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया तथा कहानी में प्राचीन संस्कारों की रूढियों के प्रति विद्रोह और सामाजिक यथार्थ की चेतना के प्रति जागृति पैदा कर नवीन संस्कारों की ज़मीन तलाशी । हालाँकि इस युग को प्रेमचन्द युग कहा गया है, फिर भी यह स्मरणीय है कि इस अवधि में करीब एक दर्जन बेहद प्रतिभ कहानीकार सक्रिय थे और उन्होंने एक विधा के तौर पर कहानी को "वयस्क" बनाने में अथक श्रम किया है । प्रेमचन्द स्वयं इन सब में अग्रणी थे ।

1॰ डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल; हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास;पृ-64॰

प्रेमचन्द की कहानी - आधुनिक कहानी लेखन का प्रारंभ :-

प्रेमचन्द का प्रादुर्भाव हिन्दी कहानी साहित्य की सबसे अभूतपूर्व घटना थी । उनके द्वारा रचित कहानियों की संख्या तीन सौ से अधिक है जो "मानसरोवर (आठ भाग) में संग्रहीत हैं । उनकी कला कहानी की भावभूमि पर यथार्थवादी परंपरा लेकर उतरी । प्रसाद की आदर्शवादिता, काल्पनिकता तथा प्रभावात्मकता की अपेक्षा प्रेमचन्द की आदर्शोन्मुख यथार्थवादिता ने उस युग पर अधिकप्रभाव डाला । डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल कहते हैं - "एक तरह से वे अपने में स्वयं एक कहानी युग थे, जिसमें हिन्दी कहानी में कहानियों के सच्चे तत्व अंकुरित हुए, विकसित हुए और उनसे भारतीय कहानी साहित्य में सुगन्धि आयी ।"[1] प्रेमचन्द के पूर्व की कहानियों में न तो देश की रूपरेखा है, न तत्कालीन वातावरण, न कोई विचार धारा । ऐसी स्थिति में कहानियों में अत्यंत घृणित और उच्छृंखलित रूप ही सर्वत्र चित्रित हुआ । प्रेमचन्द ने दृढता से पीडित मानवता का पक्ष लेकर पहली बार कहानी को लोकप्रिय बनाकर उसे सामान्य जन से जोडा । भारतीय समाज के सभी वर्गों से उन्होंने पात्र चुने और उनके संघर्षों, समस्याओं, सबलता-दुर्बलताओं, सुख-दुख आदि को अपनी कहानियों द्वारा वाणी दी । राष्ट्र के राजनैतिक मंच पर जो गतिविधियाँ हुईं, आन्दोलन चलाये गये या भारतीय जनता के मानस में जो उद्वेलन आरंभ हुआ उसकी गूँज प्रेमचन्द के साहित्य में सुनाई दी । उन्होंने प्रति-क्रियावादी हथियारों जैसे धार्मिक अन्धविश्वास, कुरीतियों, जातिवाद एवं साम्प्रदायिकता आदि का तीव्र विरोध किया । उन्होंने किसान और मज़दूर को कहानी के केन्द्र में स्थापित किया । साहित्य को "जीवन की आलोचना"[2] माननेवाले कथाकार प्रेमचन्द की कथा-चेतना जीवन से संपृक्त होकर नये संदर्भों को स्थापित करती है । इसलिए प्रेमचन्द का कथा साहित्य निरंतर विकासशील होता

---

1. डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल, हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास;पृ-84
2. प्रेमचन्द, कुछ विचार; पृ - 5.

हुआ यथार्थ से संघर्षोन्मुख होता गया । उन्होंने अमानवीयता के विरुद्ध जन-सामान्य केलिए एक लडाई की शुरूआत की, जन संघर्ष की एक परंपरा कायम की । प्रेमचन्द की परंपरा ऐतिहासिक और विकासोन्मुख परंपरा है।हिन्दी कहानी का विकास इसी परंपरा में हुआ । पूर्ववर्ती साहित्यिक परंपरा से संबंध स्थापित करने की कोशिश उनकी साहित्यिक प्रवृत्तियों में नहीं पायी जाती । इसलिए एक समृद्ध परंपरा प्रेमचन्द के साथ आरंभ होती है । "प्रेमचन्द से पूर्व की कहानियों में ऐसी शक्ति और क्षमता नहीं थी कि उन्हें किसी "परंपरा" या "स्कूल" के रूप में देखा जाता ।"[1]

प्रेमचन्द जी के पहले कहानियाँ अधिकतर घटना प्रधान रहती थीं । परन्तु प्रेमचन्द ने चरित्र-प्रधान कहानियों की परंपरा आरंभ की । प्रेमचन्दजी के अनुसार "सब से उत्तम कहानी वह होती है, जिसका आधार किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर हो ।"[2] इसलिए प्रेमचन्दजी ने अपनी चरित्र-प्रधान कहानियों द्वारा मनोवैज्ञानिक कहानी का सूत्रपात किया था । इस दृष्टि से उनकी कुछ कहानियाँ उल्लेखनीय हैं, यथा - मनोवृत्ति, नशा, कफन, ईदगाह, बूढी काकी, मिस पद्मा । जो भावनाएँ, जो संघर्ष, जो कुण्ठाएँ मनुष्य के मन में तैर रही हैं उन्हीं की अभिव्यक्ति इन कहानियों की आत्मा है । क्योंकि प्रेमचन्दजी के शब्दों में "अनुभूतियाँ ही रचनाशील भावना से अनुरंजित हो कर कहानी बन जाती है ।"[3] "टालस्टाय, चेखव, और गोर्की आदि का साहित्य सामाजिक संदर्भों में विकसित होकर उस समय विश्व के सभी भागों में प्रगतिशील एवं सजग कथाकारों केलिए आदर्श बना हुआ था । प्रेमचन्द ने भी साहित्य को उन्हीं आदर्शों के अनुरूप ढालने का प्रयत्न किया ।"[4] प्रेमचन्दजी की अनूठी कहानी कला से प्रभावित तथा प्रोत्साहित

---

1. डॉ.वेदप्रकाश अमिताभ, हिन्दी कहानी के सौ वर्ष; पृ.सं.-18
2. प्रेमचन्द,कुछ विचार; पृ.सं.-53
3. " " " 47
4. डॉ.सुरेश सिन्हा; हिन्दी कहानी उद्भव और विकास; पृ-257

होकर अनेक कहानीकार धीरे-धीरे हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में अवतरित हुए जिनकी कला एवं प्रयास ने हिन्दी कहानी को और अधिक व्यापक बनाया । अत: हम कह सकते हैं कि प्रेमचन्द आधुनिक कहानी साहित्य का जनक ही नहीं सम्राट ही हैं ।

<u>प्रेमचन्द तथा प्रेमचन्द युगीन प्रमुख कहानीकार और उनकी रचनाओं का सैद्धांतिक एवं आलोचनात्मक अध्ययन</u> :-

प्रेमचन्द अपने युग के प्रबुद्ध कलाकार थे । उनकी कथा यात्रा ने कई मोड लिए हैं - आदर्शवाद से यथार्थवाद तक । कहानी कला के विकास क्रम के आधार पर प्रेमचन्द जी की कहानियों के तीन वर्ग बन सकते हैं यथा -

(1) प्रयोगात्मक कहानियाँ (सन् 1918 तक) "सप्त सरोज", "नवनिधि" तथा "प्रेम पचीसी" की कुछ कहानियाँ

(2) विकासोन्मुख कहानियाँ (सन् 1929 तक) "प्रेम पचीसी", "प्रेम पूर्णिमा", प्रेम प्रसून", "प्रेम प्रतिमा", "प्रेम द्वादशी", "प्रेम चतुर्थी","पाँच फूल", "गल्प गुच्छ", "अग्नि समाधि", "प्रेम पंचमी" आदि ।

(3) प्रगतिशील कहानियाँ (सन् 1936 तक) "कफन", "ग्राम्य जीवन की कहानियाँ", "समजीवन", "नारी जीवन की कहानियाँ", "प्रेरणा", "मान सरोवर" ।

प्रयोग काल की कहानियों में भारतीय समाज का जर्जरित रूप अपने नग्न रूप में दिखलाया गया है । अपने समय की नैतिक हीनता, अत्याचार, घूसखोरी, षड्यंत्र आदि अनुचित व्यवहारों तथा सामाजिक कुरीतियों की इन्होंने तीव्र भर्त्सना की । "नमक का दारोगा" जैसी कहानियों में उक्त बातों का ही चित्रण हुआ है । "पंच परमेश्वर" में इस बात पर बल दिया गया है कि "पंच" भगवान के प्रतिनिधि हैं । उनके सामने हिन्दु और मुसलमान बराबर हैं । "सज्जनता का दंड" में लेखक ने दूसरों के धन को हडपने की वृत्ति का पर्दाफाश किया है । "सौत" में सौतिया डाह का चित्रण है तो "नवनिधि" की कहानियों में समाज के निम्न एवं उच्च वर्ग की समस्याओं का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया गया है । इस काल की अधिकांश कहानियों में समाज में उपेक्षित वर्ग की विभिन्न समस्याओं का यथार्थ चित्रण पाया

जाता है । वास्तव में मध्य एवं निम्न वर्ग की समस्याएँ ही देश की समस्याएँ हैं । इसी कारण प्रेमचन्द ने अपने कथा साहित्य में इन्हीं को प्रतिफलित किया है । उनकी कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इन में तत्कालीन युग का चित्र साकार हो उठा है । सदियों से उपेक्षित, पददलित, शोषित एवं अपमानित वर्गों के व्यक्तियों को तथा उनसे संबंधित समस्याओं को अपनी कहानियों का विषय बना कर उन्हें अमर कर दिया है ।

प्रेमचन्द की प्रारंभिक कहानियों के स्त्री पात्र अपने वर्गों का प्रतिनिधित्व करते दिखाई देते हैं । "बड़े घर की बेटी" की आनन्दी , "सौत" की गोदावरी , "पंच परमेश्वर" की खाला , "रानी सारंधा" की सारंधा, "ममता" की माँ इन सबका सामूहिक चरित्र आदर्शवादी और मर्यादावादी है । इन नारी पात्रों के पीछे प्रेमचन्द की आस्थाएँ दृष्टिगोचर होती हैं जैसे भारतीय आर्य ललनाओं का चित्रण, सम्मिलित परिवार का समर्थन आदि । प्रारंभिक कहानियों में पुरूष पात्र भी आदर्शवादी हैं । विपरीत परिस्थितियों में विरोधी शक्तियों से समझौता करने के लिए वे तत्पर हैं । "बड़े घर की बेटी" में श्रीकंठ आदर्श भाई हैं । "नमक का दारोगा" में वंशीधर आदर्श दारोगा है । इस काल की कहानियों में धर्म और राजनीति में एक प्रकार की घनिष्ठता दिखाई पडती हैं । भारत को गुलामी से मुक्त देखना प्रेमचन्द चाहते थे । पुराने- रीति-रिवाज, वैवाहिक संबंध, छुआछूत आदि के बन्धनों में परिवर्तन चाहते थे । "संसार प्रेम और देश प्रेम", "रानी सारंधा" आदि कहानियों में ये प्रवृत्तियाँ देखने को मिलती हैं । उनकी प्रारंभिक कहानियाँ जन जागृति और गाँधीवाद के प्रथम चरण की कहानियाँ हैं ।

प्रेमचन्द की प्रयोग काल की कहानियाँ लंबी हैं । कथावस्तु के विकास में प्रस्तावना, मुख्यांश, चरमोत्कर्ष आदि सहयोग देते हैं । घटनाएँ विस्तृत होती हैं । उनकी प्रारंभिक कहानियाँ वर्णन द्वारा प्रारंभ होती हैं । कहानियों के शीर्षक किसी पात्र या घटना के आधार पर रखे गये हैं । पात्रों की मन:स्थीति की ओर संकेत करनेवाले शीर्षक बहुत कम रखे गये हैं । किसी भावना को तीव्र करनेवाले शीर्षक भी उन्होंने प्रयोग किए हैं यथा "पंच परमेश्वर", "परीक्षा" आदि ।

शीर्षक संक्षिप्त है तथा कहानी की विषयवस्तु से सीधा संबंध है । प्रेमचन्द की कहानी रचना का उद्देश्य पतित समाज को आदर्श रूप में परिवर्तित करने का था । अत: वे अपनी कहानियों में यथार्थ के सहारे आदर्श की स्थापना करते हुए सामने आते हैं । आरंभिक कहानियों के संवाद पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को प्रकट करने की अपेक्षा घटनाओं के विकास में अधिक सहायक हुए हैं । संवाद पत्र-तत्र नाटकीय भी दृष्टिगोचर होते हैं । "नवनिधि" के धर्मसिंह और पृथ्वी सिंह के संवाद[1] इसके अच्छे उदाहरण हैं । इस काल की कहानियों की भाषा अत्यंत सरल और सुबोध है । उर्दु के शब्दों का विशेष प्रयोग हुआ है ।

प्रेमचन्द की विकासोन्मुख कहानियों में उनका दृष्टिकोण बदल गया है । देश की आर्थिक विषमता के कारण वे यथार्थ वादी बन गये । इस काल की कहानियों की बडी विशेषता यह है,उनमें आदर्श तथा यथार्थ का उचित समन्वय दर्शित है । अधिकांश कहानियों का लक्ष्य आदर्शोन्मुख यथार्थवाद हो गया है । कहानियों में जमींदारों एवं पूँजीपतियों की अमानुषता का खण्डन तथा उनके अत्याचारों का विरोध किया गया है । इन कहानियों में साम्यवाद, भौतिकवाद तथा जडवाद की समस्याओं पर मनन व चिन्तन भी किया गया है । "नशा", "मोटेराम की डायरी" आदि कहानियाँ इसके उदाहरण हैं ।

इस काल की कहानियों में स्त्री पात्र पुरूष पात्र से अधिक सक्रिय हैं । कुछ कहानियों का धरातल केवल मनोवैज्ञानिक अनुभूति ही है जैसे "बूढी काकी", "शतरंज के खिलाडी", "विध्वंस", "नैराश्य लीला" आदि । आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के चित्रण के उद्देश्य से लिखी गयी कहानियों में प्रेमचन्द ने विशिष्ट शैलियों को अपनाया है जैसे "यह मेरी मातृभूमि है", "शाप", आदि आत्मकथात्मक शैली में प्रस्तुत कहानियाँ हैं । आत्मविश्लेषणात्मक शैली में प्रस्तुत "ब्रह्मा का स्वाँग", भाषण शैली में लिखी गयी "दुराशा", व्यात्मक शैली की कहानी "ज्वाला",

---

1. प्रेमचन्द, नवनिधि, पृ.सं.-76

"सेवापथ" आदि,लघुकथात्मक शैली में प्रस्तुत "विध्वंस", कथोपकथनात्मक शैली में लिखी गयी "धर्म संकट" आदि शैली की दृष्टि से प्रेमचन्द के वैविध्य का परिचय कराने में समर्थ हैं । विकासोन्मुख कहानियों की और एक विशेषता यह है कि संवाद अधिक निखर उठे हैं । उन में चोट करने, व्यंग्य बाण चलाने की क्षमता आ गयी है । उदाहरणार्थ "शतरंज के खिलाडी" में तीखे कथापकथनों द्वारा दोनों बहादुर खिलाडी आपस में लड जाते हैं ।[1]

प्रेमचन्द की प्रगतिशील कहानियों में जीवन स्वयं अपने विभिन्न प्रसंगों में कथानक बन गया । "आहुति", "शराब की दूकान", "उन्माद", "होली का उपहार", "प्रेरणा", "आखिरी होली", "कैदी", "दो बहनें", "कफन" आदि प्रगति वादी विचारधारा को प्रस्तुत करनेवाली कहानियाँ हैं । इन कथानकों का महत्व केवल पात्रों के मनोभावों और प्रतिपाद्य जीवन दर्शन की अभिव्यक्ति में हैं । "कफन" कहानी की मूल आत्मा यह बात व्यक्त करती है कि आधुनिक आर्थिक व्यवस्था के कारण व्यक्ति कितना पतित बन सकता है । यहाँ आकर कथानक-निर्माण में मनोवैज्ञानिक अनुभूतियाँ प्रधान हो गयी हैं । "नशा", "पूस की रात", "कुसुम" आदि कहानियों में न कोई घटना है, न संयोग, बल्कि प्रेमचन्द ने मानववाद और मानवता के चिरन्तन संघर्षों और प्रतिक्रियाओं को मुखरित किया है । इन कहानियों द्वारा उन्होंने यह सिद्ध किया है कि जीवन की सारी समस्याओं के पीछे आर्थिक व्यवस्था का मुख्य हाथ है ।

इस प्रकार प्रेमचन्द अपनी कहानियों के आरंभ में विशुद्ध आदर्शवाद लेकर चले थे । उनके विकासकाल वही आदर्शवाद यथार्थोन्मुख में परिणत हो गया है और अन्तिम काल में वे पूर्णत: यथार्थवादी हो गये हैं ।

प्रेमचन्द का भाषा पक्ष इतना समृद्ध और विशाल था कि उस में पंडित, मौलवी, जज-वकील, गाँव के गरीब किसान-मजदूर अपने अनुकूल भाषा पा जाते थे । उनकी भाषा में कहीं ठेठ उर्दु, कहीं फारसी मिश्रित उर्दु, कहीं संस्कृत गर्भित हिन्दी तथा

---

1. प्रेमचन्द , मानसरोवर, भाग-3, पृ-265.

यत्र-तत्र प्रान्तीय और प्रादेशिक शब्दों के सुन्दर समन्वय पाये जाते हैं । इनके भाषा-ज्ञान के संबंध में डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाला का कथन है - "प्रेमचन्द भाषा के बहुत बडे धनी थे । जैसी आवश्यकता होती स्वाभाविकता लाने केलिए वे उसी तरह की भाषा का प्रयोग करते, वैसे प्रेमचन्द की भाषा हिन्दुस्तानी है - स्वाभाविक बोलचाल की भाषा की चुस्ती, मुहावरों की सजावट, कहावतों और सूक्तियों के अपूर्व समन्वय से अपना व्यक्तित्व डाल दिया है और इस अनोखी भाषा को लोगों ने प्रेमचन्द भाषा की संज्ञा दी है ।"[1] कहानी साहित्य के संबंध में यह निर्विवाद बात है कि प्रेमचन्द ने रचनात्मकता के सन्दर्भ में एक उचित मानक स्तर बनाया । उनका कहानी साहित्य भारतीय जनता का अमूल्य धन है ।

प्रसाद :-

प्रेमचन्द की कहानियों के साथ-साथ प्रसादजी की भावपूर्ण कहानियाँ प्रकाशित हो रही थीं । 1911 ई॰ में उनकी प्रथम कहानी "ग्राम", "इन्दु" में प्रकाशित हुई । उनकी यह कला निरन्तर गतिमान रही और धीरे धीरे उनके कई कहानी संग्रह क्षेत्र में आये - "छाया", "प्रतिध्वनि", "आकाश दीप", "आँधी" और "इन्द्रजाल" । इनके अतिरिक्त और भी कितनी ही कहानियाँ प्रकाशित हुई जैसे, "पुरस्कार", "बिसाती", "व्रतभंग", "स्वर्ग के खण्डहर", "भिखारिन", "ममता", आदि । इनकी सभी कहानियों में उनकी आदर्शोन्मुखी कल्पना तथा भावमूलकता की स्पष्ट छाप है । भारतीय संस्कृति का गौरव उनमें बोलता है । "इनकी कहानियों में विशिष्ट रूप से बौद्धों की करूणा और निर्लिप्तता का वातावरण मिलता है जिससे प्रसाद के व्यक्तित्व पर बौद्ध दर्शन और भारतीय संस्कृति का प्रभाव माना जाता है ।"[2]

"प्रसाद की कहानियों का मूल स्वर प्रेम और सौन्दर्य की कलात्मक अभिव्यंजना है और यह उनकी सभी कहानियों में उभरा है । इसलिए प्रसाद की कहानियाँ रोमाँटिक और भावमूलक ही हैं ।"[3] कथा रचना का पूरा परिवेश सौन्दर्यानुभूति

---

1. डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल, हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, पृ-155
2. " " पृ-196
3. डॉ॰परमानन्द श्रीवास्तव, हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रिया, पृ-99

और भावुकता की मीठी हिलोरों से झंकृत है । "आकाशदीप", "मधुआ" और "स्वर्ग के खंडहर" इनकी प्रतिनिधि कहानियाँ हैं जिनमें इस चेतना का प्रस्फुटित रूप दिखाई देता है ।

प्रसाद की कहानियों के रचना विधान पर विचार करते समय ऐसा प्रतीत होता है कि उनके चरित्रों में संघर्ष प्रमुख है । यह संघर्ष कई जगह भावना और कर्तव्य में है तो कई जगह कर्तव्य और प्रेम में । उन्होंने प्रेम में अन्तर्द्वंद्व की स्थिति उत्पन्न करके परस्पर विरोधी दो अनुभूतियों और अभिवृत्तियों का द्वन्द्व प्रदर्शित किया । यह द्वन्द्व कहीं प्रेम और घृणा, कहीं परिवार की मर्यादा और राष्ट्रीय मूल्य कहीं वैयक्तिक प्रेम तथा राष्ट्रीय प्रेम के मध्य है । प्रेम और घृणा का द्वन्द्व "आकाशदीप" कहानी में अभिव्यक्त हुआ है । चम्पा, जलदस्यु बुद्ध गुप्त को अपने पिता का हत्यारा समझकर उससे घृणा करती है, किन्तु उनके मन में बुद्धगुप्त के प्रति राग की भी मनोवृत्ति है । इसलिए चम्पा कहती है - "मैं तुम्हें घृणा करती हूँ । अंधेर है जलदस्यु ! तुम्हें प्यार करती हूँ ।"[1] इसी प्रकार "पुरस्कार" कहानी में द्वन्द्व का रूप उभरा है । प्रसाद की अधिकतर कहानियों में यही संघर्षशील वातावरण छाया हुआ है । अत: उन कहानियों को वातावरण प्रधान भी कहा जा सकता है । डॉ लक्ष्मीनारायणलाल कहते हैं - "वातावरण का निर्माण प्रसाद की कहानी कला की सबसे बडी विशेषता है । मुख्यत: ऐतिहासिक और भावात्मक कहानियों में वातावरण का निर्माण आश्चर्यजनक हुआ है ।"[2] "प्रतिध्वनि" संग्रह की कहानियों में उनकी कवित्वपूर्ण तथा स्वच्छन्दतावादी प्रकृति का आभास मिलता है । नाटकीय शिल्प सौन्दर्य से संपृक्त कहानी है "सालवती" । ऐतिहासिक यथार्थ के साथ मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण उनकी कहानियों की विशेषता है । "तानसेन", "अशोक", "ममता", "सिकन्दर की शपथ" आदि इसी को टिकी कहानियाँ हैं ।

"दैन्य पूर्ण स्थिति तथा अर्थाभाव से ग्रस्त, उपेक्षित, निम्नवर्ग की ओर भी प्रसादजी का ध्यान गया है । "गुदडी का लाल", "करूणा की विजय" और

---

1. प्रसाद ; आकाशदीप ; पृ.सं.-13
2. डॉ.लक्ष्मीनारायणलाल; हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास; पृ-211.

"दुखिया" शीर्षक कहानियों में इनकी इस प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। विविध सामाजिक रूढियों, कुरीतियों और कठोर विधानों के प्रति लेखक ने अपना आक्रोश व्यक्त किया है। इस दृष्टि से "दासी", "व्रतभंग" और "विजया" कहानी को ले सकते हैं।

प्रसाद एक ऐसे कहानीकार हैं जो भाषा शैली के बहुत बडे धनी थे। उनकी कहानियों में एक ओर भाषा की लाक्षणिकता, व्यंजकता के साथ ही साथ उपमा, रूपक की प्रचुरता मिलती है तो दूसरी ओर विभिन्न रंगों और रसों में डूबे हुए शब्द-जाल मिलते हैं। उदाहरणार्थ "सामने शैल-माला की चोटी पर हरियाली में विस्तृत जल-देश में, नील-पिंगला संध्या, प्रकृति की एक सहृदय कल्पना, विश्राम की शीतल छाया, स्वप्न-लोक का सृजन करने लगी। उस मोहिनी के रहस्यपूर्ण जल का कुहुक फुट हो उठा, जैसे मदिरा से सारा अंतरीक्ष सिक्त हो गया। सृष्टि नीलकमलों से भर उठी। उस सौरभ से पागल चम्पा ने बुद्धगुप्त के दोनों हाथ पकड लिए। वहाँ एक आलिंगन हुआ, जैसे क्षितिज में आकाश और सिंधु का। किन्तु उस परिरंभ में सहसा चैतन्य हो कर चम्पा ने अपनी कंचुकी से एक कृपाण निकाला"[1] डॉ॰लक्ष्मी-नारायण लाल का कहना है - "प्रसाद की कहानी, भाषा शैली में कवि की कल्पना, नाटककार का विश्लेषण और निबन्धकार के चिन्तन तीन तत्वों का सुन्दर समन्वय है।"[2] तात्पर्य यह कि प्रसाद ने अपनी स्वतंत्र तथा मौलिक प्रतिभा के अद्भुत चमत्कार से हिन्दी कहानी को ऐसी युग-चेतना प्रदान की जिसके संबल से वह अधिक "चेतन" होती जा रही है।

इस युग के अन्य कहानीकारों में प्रेमचन्द से प्रभावित हो कर विश्वम्भरनाथ "कौशिक", सुदर्शन, ज्वालादत्त शर्मा, विश्वम्भरनाथ जिज्जा, राधिकारमण प्रसाद सिंह, गंगाप्रसाद श्रीवास्तव, वृन्दावनलाल वर्मा, भगवती प्रसाद वाजपेयी तथा प्रसाद से प्रभावित होकर चतुरसेन शास्त्री, रायकृष्णदास, चण्डीप्रसाद "हृदयेश", गोविन्द-

---

1. प्रसाद ; आकाशदीप ; पृ॰-9॰
2. डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल ; हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, पृ-210

वल्लभ पन्त, बेचन शर्मा "उग्र", विनोद शंकर व्यास तथा वाचस्पति पाठक जैसे अन्य कलाकारों ने अपनी कला चातुरी से हिन्दी कहानी को प्रबुद्ध किया ।

विश्वम्भरनाथ कौशिक

प्रेमचन्द जी के यथार्थवादी दृष्टिकोण को लेकर विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक ने "ताई", "शान्ति", "पगली", "पत्नी", "पुरस्कार", "काकी", "न्याय" आदि कहानियाँ लिखीं । पारिवारिक समस्याओं और साधारण तथा मध्य वर्ग के समाज का दर्शन उनकी कहानियों में होता है । उनकी कहानियों में "ताई" और "प्रतिभा" अधिक प्रसिद्ध हैं । "ताई" एक मनोवैज्ञानिक कहानी है । उसमें सहज स्पर्द्धा और स्नेह के अन्तर्द्वन्द्व का सौन्दर्य है । कौशिकजी कथोपकथन और भाषा प्रयोग में प्रेमचन्द की पद्धति को ग्रहण करते हैं और उन्हीं के समान एक निश्चित उद्देश्य को लेकर कहानी के घटना-चक्र का संचालन करते हैं । कहानी के क्षेत्र में कौशिकजी संवादात्मक शैली के प्रवर्तक कहे जा सकते हैं । वे सीधी-सादी शब्दावली द्वारा कहीं कहीं बडा गहरा-तीखा और मार्मिक व्यंग्य कर जाते हैं। उनकी भाषा में पात्रानुकूल स्तर भेद आ जाता है । समग्रत्व से उन्होंने भाषा का वही रूप अपनाया है जो प्रेमचन्द का आदर्श रूप था ।

सुदर्शन :-

प्रेमचन्दजी के समान "सुदर्शन" भी उर्दु से हिन्दी में आए और उन्होंने "कवि की स्त्री", "हार की जीत", "सदासुख", "एथेन्स का सत्यार्थी", "संसार की सबसे पहली कहानी" आदि कहानियाँ लिखकर प्रेमचन्द की यथार्थोन्मुख आदर्शवादी कहानियों की परंपरा को आगे बढाया । उनकी अधिकतर कहानियाँ मानव जीवन की दैनिक परिस्थितियों का विश्लेषण करती है और उनमें वातावरण का गांभीर्य, चरित्रों का आत्मविश्लेषण आदि बातें मिलती हैं । "हार की जीत" में यथार्थ व आदर्श का संघर्ष और आदर्श की प्रतिष्ठा उसका विशेष गुण है । "एथेन्स का सत्यार्थी"नामक कहानी में मानव हृदय की चिरन्तन सत्ता के भावात्मक चित्र उपस्थित किए गए हैं । दैनिक जीवन से संबंधित सूक्ष्म मनोविश्लेषणात्मक कहानियों

में "सूरदास", "सन्यासी", "हेर फेर" आदि अच्छी कहानियाँ हैं । इनकी कहानियों में द्वन्द्व की प्रधानता, आत्मविश्लेषण तथा कथानक की सूक्ष्मता दृष्टिगत होती है जो उन्हें प्रेमचन्द के समकालीन कहानीकारों में प्रतिनिधित्व प्रदान करती है ।

राजा राधिकारमन प्रसाद सिंह :-

राधिकारमनजी आदर्शोन्मुख यथार्थवादी भावुक कहानीकार हैं । इनकी कहानियाँ "गाँधी टोपी", "सवनी समा", तथा "गल्प कुसुमांजली" शीर्षक कहानी संग्रहों में संगृहीत हैं । "कानों में कंगना", "बिजली", "दरिद्रनारायण" आपकी उत्कृष्ट कहानियाँ हैं । इनकी कहानियाँ बीसवीं शती के आरंभ की सामाजिक व्यवस्था तथा राजनीतिक क्रान्तियों पर आधारित हैं । इनकी कहानियों में कथानक छोटे भी हैं और बडे भी । शैलिगत विविधता भी आपकी कहानियों की विशेषता है । "हिन्दुस्तानियों की छाती में गुर्दा भले ही न हो कुछ दिल की कमी तो होती नहीं [1] जैसे व्यंग्यात्मक वर्णनों के अतिरिक्त संवादों में हास्य का पुट भी हम देख सकते हैं । इनकी कहानियों में सामयिक समाज के विभिन्न वर्गों का भी चित्रण है और इस विवेचन में से कुछ प्रेमचन्द की धारा के ठहरते हैं, परन्तु शैली की दृष्टि से उनका संबंध प्रसाद स्कूल से ही रहता है ।

वृन्दावनलाल वर्मा :-

ऐतिहासिक कहानियों में ऐतिहासिक यथार्थ की रक्षा करते हुए तथा जहाँ इतिहास मौन है वहाँ अपनी कल्पना-प्रतिभा का परिचय देते हुए वर्माजी ने हिन्दी ऐतिहासिक कहानी के विकास में अनन्य योग दिया है । उनकी कहानियों में प्रेमचन्द की ही भाँति वर्णनात्मकता तथा इतिवृत्तात्मकता का दर्शन होता है, उन्हीं की भाँति विरोधी चरित्रों के द्वन्द्वात्मक विश्लेषण द्वारा आदर्श की स्थापना पर कहानियों का अन्त होता है । ऐतिहासिक तत्वों का एकनिष्ठ होकर पालन करने

---

1. राजा राधिकारमन प्रसाद सिंह; इस हाथ दे उस हाथ ले; सरस्वती हीरक जयन्ती विशेषांक - पृ-328.

का श्रेय वर्माजी को अवश्य है । इस दिशा में उन्होंने प्रेमचन्द से अधिक कला-चातुर्य एवं मौलिक प्रतिभा दिखायी । उनकी ऐतिहासिक कहानियों में "कलाकार का दण्ड", "जैनवादी बेगम", "सौन्दर्य प्रतियोगिता", "शेरशाह का न्याय" प्रधान एवं प्रसिद्ध हैं । इनके अतिरिक्त वर्माजी ने सामाजिक समस्याओं को भी कहानियों का विषय बनाया है । इन कहानियों में लेखक ने मानवता के आदर्श की सर्वत्र व्यंजना की है । चरित्र-चित्रण केलिए नाटकीय शैली का तथा अन्तर्द्वन्द्वों एवं घात-प्रतिघातों के चित्रण में मनोवैज्ञानिक शैली का प्रयोग किया है । उनकी सामाजिक कहानियों में "शरणागत", "पतरंगेवाली", "राखी", "हमीदा" आदि प्रसिद्ध हैं । उनकी यह सामाजिक और ऐतिहासिक देन हिन्दी कहानी की प्रगति की अमूल्य वस्तु है ।

<u>भगवती प्रसाद वाजपेयी</u> :-

वाजपेयीजी की प्रारंभिक कहानियाँ हास्यात्मक हैं किन्तु उनमें मानव-मन की गहरी संवेदना तथा उच्च कला और शिष्टता की छाप है । सभी कहानियों का कथानक समाज क्षेत्र से चुना गया है । हास्य के साथ साथ कहानियों में विनाश-प्राय समाज की करूण दशा का चित्रण है । इस प्रकार की कहानियों में "खाली बोतल", "अंधेरी रात", "मैना", "हार - जीत", "इन्द्रजाल" आदि प्रमुख हैं । वाजपेयी की कहानियों में चरित्र-विश्लेषण तथा अन्तर्द्वन्द्व की गंभीरता दिखाई देती है । यथार्थवादी विश्लेषण तथा मनोवैज्ञानिक सूझ-बूझ उनमें पायी जाती है । "मिठाई-वाला", "निंदिया लागी", "हत्यारा", "आत्मघात" ऐसी कहानियों के उदाहरण हैं । उनकी सभी कहानियों में व्यंजना तथा शिल्प विधि की सूक्ष्मता दर्शनीय है ।

<u>आचार्य चतुरसेन शास्त्री</u> :-

प्रसाद की कहानी कला से प्रभावित होनेवाले कहानिकारों में शास्त्री का सर्वप्रथम स्थान है । इन्होंने हिन्दी में लगभग साढे चार सौ कहानियाँ लिखीं, फिर भी अधिकांश कहानियों को संग्रह-बद्ध नहीं किया गया । ये कहानियाँ सामाजिक राजनीतिक, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक विषयों पर आधारित हैं । इनकी अधिकांश कहानियाँ घटना प्रधान हैं । घटनाओं का संयोजन करने में वे सिद्ध हस्त थे । इसलिए कहानियों में रोचकता एवं कौतूहल अन्त तक बनाये रखने में वे

सफल रहे । ऐतिहासिक कहानियों में उन्होंने सौन्दर्य, प्रेम और बलिदान के सुन्दर चित्र खींचे हैं । वस्तुत: चरित्र-चित्रण की गंभीरता एवं सूक्ष्मता, कल्पना का प्राचुर्य नाटकीयता का प्रयोग, वातावरण की उपयुक्तता तथा स्वाभाविकता और साथ ही संयोगों की अद्भुत योजना आदि का समन्वय उनकी ऐतिहासिक कहानियों में उपलब्ध होता है । कहानियों में "दुखवा मैं कासे कहूँ सजनी", "नूरजहाँ का कौशल", "वसन्त" आदि प्रसिद्ध हैं जिनमें इतिहास और कल्पना का सामंजस्य है । उनकी "नहीं" कहानी एक नये शिल्प को लेकर सामने आती है । इसमें न कथानक है, न चरित्र-चित्रण, न घटनाएँ, केवल भाव है । "पानवाली", "दे खुदा की राह पर", "लकडी की कीमत" आदि उनकी श्रेष्ठ सामाजिक कहानियाँ हैं । इनकी कहानियों के शीर्षक बडे सरस , रोचक और आकर्षक होते हैं ।

<u>बेचन शर्मा उग्र</u>

प्रेमचन्द युग में प्रगतिवादी कहानियों की रचना कर उग्रजी ने हिन्दी संसार का ध्यान अपनी ओर आकृष्ठ किया था । उग्रजी शुद्ध रूप से यथार्थवादी कलाकार हैं । धार्मिक अन्धविश्वासों, सामाजिक कुरीतियों से संबंधित समस्याओं और नवीन सभ्यता के दोषों को लेकर उग्रजी ने अपनी कहानियों में समाज-सुधार के दृष्टिकोण को प्रधान रखा । उनका मुख्य स्वर विद्रोही है । इनकी कहानियों में देश भक्ति तथा राष्ट्रीयता का सुन्दर रूप देखने को मिलता है । "उसकी माँ", और "देश भक्त" इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं । "विकास" कहानी में यह सिद्ध किया गया है कि आज का मानव किस प्रकार पैसे को ही परमात्मा समझ रहा है । उग्रजी ने गीली पलकों से अपने समाज की विषमताओं को देख उबलते हुए जोश में उनका विरोध किया । "यह कंचन सी काया " शीर्षक कहानी में अनमेल विवाह की समस्या प्रस्तुत की है । "मो को चुनरी की साध" बाल विवाह और वैधव्य जीवन विडम्बना पर लिखी गयी कहानी है । "विधवा" तथा "दिल्ली की मौत" में बाल-विवाह, वैधव्य की विवशता से उत्पन्न वेश्याचार, पर पुरूष गमन जैसे दुष्परिणामों पर प्रकाश डाला गया है । इस प्रकार उग्रजी शोषित नारी के प्रवक्ता साबित होते हैं । अस्पृश्यता और वर्ण व्यवस्था को वे समाज की प्रगति

केलिए बाधक समझते हैं । जीवन की आर्थिक विषमताओं का यथार्थ के धरातल पर उग्रजी ने बडे ही मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रण किया है । डॉ·लक्ष्मीदत्त गौतम ने कहा है -"उग्रजी ने समाज के घृणित परिवेश का द्वार खोला था, जिसमें मानवता अपने खण्डित रूप में करूण आर्तनाद कर रही थी और नारी पुरुष के छल-कपट एवं कामलोलुपता की वेदी पर अपने सतीत्व एवं मर्यादा को बलिदान कर रही थी।"[1] यह कथन शत-प्रतिशत इनकी कहानियों के संबंध में ठीक बैठता है ।

पात्रानुकूल, संक्षिप्त एवं सरल संवाद योजना इनकी कहानियों की विशेषता है । उनमें पर्याप्त स्वाभाविकता तथा गहरा व्यंग्य रहता है । जैसे - "साँडों की जगह काँग्रेस के पुराने, मोटे, दागी, देश भक्त खडे सींग दिखा रहे हैं "[2] व्यंग्य की आड में लेखक समाज की खामियों को उधेड रखने में कभी नहीं झिझकता । उदाहरण केलिए "उर्वशी" में राजनीतिज्ञों पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं - "राजनीति में पाप करना बुरा नहीं है, पकडा जाना मात्र बुरा है"[3]

इस तरह उनकी कहानियों में भाव-मूलक काल्पनिकता, कवित्वपूर्ण आकर्षक शैली, जीवन के प्रति यथार्थवादी दृष्टिकोण, यथार्थ का स्वाभाविक वर्णन तथा पात्रों के सूक्ष्म चित्रण के साथ साथ उनके स्वच्छन्द व्यक्तित्व तथा मौलिकता की झलक स्पष्ट मिलती है जो उन्हें प्रसाद-प्रेमचन्द युगीन कहानीकारों में अमर स्थान प्रदान करती है ।

<u>विनोद शंकर व्यास</u> :-

भावुकता पूर्ण कहानियों की रचना करनेवाले प्रसाद-संस्थान के एक अन्य कहानीकार हैं विनोद शंकर व्यास । "कलिका", "भूली बात", "नव पल्लव," "उसकी कहानी", "मणिदीप" तथा "पचास कहानियाँ" आपके लोकप्रिय कहानी संग्रह हैं । उनकी कहानियाँ प्राय: छोटी किन्तु भावपूर्ण होती हैं । उनकी कहानियों

1· डॉ·लक्ष्मीदत्त गौतम; आधुनिक हिन्दी कहानी साहित्य में प्रगति चेतना, पृ-172
2· पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र; व्यक्तिगत; पृ-87
3· पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र; पोली इमारत; पृ-11

की विशेषता का उल्लेख करते हुए डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल लिखते हैं - "इनकी छोटी छोटी भावपूर्ण कहानियों में गद्यगीत, रेखाचित्र और कहानी तीनों तत्व मिलते हैं। प्राय: अधिकांश कहानियाँ करूणा और मानवीय संवेदना को लक्ष्य बनाकर लिखी गयी हैं तथा कहानियों में अनुभूति की प्रेरणा मुख्य है।"[1]

इनकी कहानियों में कथावस्तु की तुलना में चरित्र-चित्रण की प्रधानता रहती है। इनकी शिल्पगत विशेषताओं को प्रस्तुत करनेवाली कहानियाँ हैं -"कल्पनाओं का राजा", "विधाता", "अपराधी" आदि। प्रसाद की तरह व्यासजी भी करूणा, प्रेम तथा जीवन के सौन्दर्य का चित्रण करनेवाले कहानीकार हैं। इनकी कहानियों में अनुभूति की प्रधानता है अत: उनमें मुख्य लक्ष्य किसी मानवीय संवेदना का चित्रण करना रहा है। अत: कहानियाँ चरित्र प्रधान होती हैं। बुद्धि पक्ष की अपेक्षा हृदय पक्ष को इनकी कहानियों में अधिक प्रश्रय मिला है। मनोवैज्ञानिक शैली, अन्तर्द्वन्द्वों का चित्रण, पत्रात्मक शैली, नाटकीय शैली आदि इनकी शिल्पगत विशेषताओं को प्रकट करनेवाले तत्व हैं। "विधाता", "अपराध", "भूली बात", "रूखा स्नेह", "हृदय की कसक", आदि इनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

उक्त विवेच्य कहानीकारों के अतिरिक्त हिन्दी के और भी कई गण्यमान्य कहानीकार इस युग में अवतरित हुए जिन्होंने हिन्दी कहानी को वस्तु एवं शिल्पगत विविधता से विकासोन्मुख किया। ऐसे कहानीकारों में ज्वालादत्त शर्मा, विश्वंभरनाथ जिज्जा, गंगाप्रसाद श्रीवास्तव, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, ज्वालादत्त शर्मा, सियाराम शरण गुप्त, ऋषभ चरण जैन, मोहनलाल महतो "वियोगी", मन्मथनाथ गुप्त, गोविन्द वल्लभ पंत, चण्डीप्रसाद "हृदयेश", वाचस्पति पाठक, कमलाकांत वर्मा, रायकृष्णदास आदि के नाम विशेष रूप से लिये जा सकते हैं जिन्होंने अपने महत्वपूर्ण योगदान से हिन्दी कहानी को उत्तरोत्तर विकसित किया। लेकिन उपर्युक्त सभी कहानीकारों की कहानियों की साहित्यिक उपलब्धियों का विस्तृत अध्ययन प्रस्तुत करना शोध प्रबंध के विस्तार की दृष्टि से संभव नहीं है।

---

1. लक्ष्मीनारायण लाल, हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, पृ-216-217

इसलिए उन सबका नामोल्लेख मात्र ही यहाँ किया जा रहा है ।

प्रेमचन्द युगीन महिला कहानीकार तथा उनके साहित्यिक गतिविधान का परिचय :-

विवेच्य काल में कई महिला कथा लेखिकाएँ उभरकर आयीं जिन्होंने सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, पौराणिक समस्याओं से जुटकर छिटपुट कहानियाँ लिखीं । महिला कथा लेखिकाओं का क्रमबद्ध लेखन का सिलसिला लगभग 1922 ई॰ से शुरू हुआ है । क्योंकि सन् 1922-23 में "चाँद" और "माधुरी" पत्रिकाओं का प्रकाशन विशेषत: नारी के साहित्यिक और बौद्धिक विकास को व्यावहारिक और क्रियात्मक बनाने के उद्देश्य से किया गया । "चाँद" पत्रिका के आरंभिक संपादकीय लेख में छपे "आज हम चाँद को इस देश की स्त्रियों के चरणों में अर्पण करते हैं कि वह इस बालक से जिस प्रकार उचित सेवा लेना चाहें, लें,।"[1] इस निमंत्रण को स्वीकार कर कई लेखिकाएँ कहानी रचना की दिशा में प्रवृत्त हुईं । 1922 ई॰ के "चाँद" में मुन्नीदेवी भार्गव की कहानी "कमला"[2] प्रकाशित हुई जिसमें नारी के प्रति समाज की निर्दयता एवं क्रूरता का सजीव चित्रण है । इसी समय चन्द्रप्रभा देवी मेहरोत्रा की "डिप्टी साहब की आदर्श पत्नी"[3] छपी जिसमें भारतीय नारी के संस्कारी आदर्श चरित्र का अंकन है । सन् 1923 में श्रीमती विमला देवी चौधरानी की "विधवा"[4] शारदा कुमारी की "सरोज"[5] विद्यापतीजी की "लीलावती"[6] और सन् 1924 में सरस्वती वर्मा की "कामना"[7] चन्द्रप्रभा देवी मेहरोत्रा की "कमला की सास"[8] सन् 1925 में श्रीमती मनोरमा देवी की "मालती"[9] आदि अनेक कहानियाँ

- -

1॰ "चाँद", नवंबर 1922, वर्ष 1, खण्ड-1, संपादकीय पृ-3
2॰ " " " पृ-17
3॰ " " " " पृ-155-161
4॰ " जनवरी-23 " " पृ-176-180
5॰ " दिसंबर 1923 पृ-159
6॰ पृ-187
7॰ " अगस्त 1924 पृ-354-357
8॰ " मई 1924 पृ-51-56
9 " सितंबर 1925 पृ-367

तत्कालीन सामाजिक, राजनैतिक परिवेश में नारी की स्थिति को लेकर लिखी गयीं ।

इन के उपरान्त हिन्दी कहानी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान श्रीमती शिवरानी प्रेमचन्द का है । "चाँद" में प्रकाशित "साहस"[1] आपकी प्रथम कहानी है । लेखिका ने मुख्य रूप से अपनी कहानियों में नारी समस्याओं और उनकी व्यथा के बारीक चित्र खींचे हैं । समाज द्वारा नारियों पर किये जा रहे जुल्म और पीडा का उन कहानियों में यथार्थ अंकन है । साथ ही पाश्चात्य सभ्यता का विरोध और प्राचीन भारतीय संस्कृति का समर्थन भी किया गया है ।

प्रेमचन्द युग की महिला कथाकारों में उषादेवी मित्रा का नाम सर्वोपरि है । सुश्री मित्रा की पहली कहानी प्रेमचन्द द्वारा संपादित "हंस" में सन् 1933 ई॰में "मातृत्व" शीर्षक से छपी । हलाँकि उन्होंने बाद में बहुत कुछ लिखा, लेकिन उनका बोध और कथन-पद्धति प्रेमचन्द से ही पर्याप्त प्रभावित रही । पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक,ऐतिहासिक, प्रतीकात्मक, मनोवैज्ञानिक, पौराणिक तथा धार्मिक कथानकों को लेकर लेखिका ने अत्यंत कलात्मक ढंग से कहानियों को प्रस्तुत किया है । सुश्री मित्रा से पूर्व सुभद्राकुमारी चौहान कहानी के क्षेत्र में आयी थी । समाज की कुंठित रूढियों से कुचली हुई नारी के स्पष्ट उद्गार इनकी कहानियों में दृष्टगोचर होते हैं । अपनी राजनीतिक कहानियों में उन्होंने देशभक्ति, देश-द्रोह, और हिन्दु-मुस्लिम समस्याओं को उठाया है । बंग महिला का "कुसुम संग्रह" इस युग की किसी लेखिका का एक मात्र कहानी संग्रह है ।

उपर्युक्त लेखिकाओं के अतिरिक्त श्रीमती कुन्ती देवी, श्रीमती राजप्यारी देवी, श्रीमती ठकुरानी शिवमोहिनी, श्रीमती सुशीला देवी, श्रीमती बावली बहू आदि अनेक लेखिकाओं ने कहानी लेखन में प्रवृत्त होकर हिन्दी कहानी के विकास में अपना योग दिया है । इस युग की लेखिकाओं की कहानियाँ नारी को केन्द्र बनाकर रची गयी हैं । पुरूषों के कारण नारी को परिवार एवं समाज में कितनी यातनाएँ सहनी पडीं इसका यथार्थ परक वर्णन इनकी कहानियों में देखने को मिलता

1॰ चाँद, सितंबर 1927, पृ-627॰

है । हिन्दी कहानी साहित्य के विकास में अनूदित एवं मौलिक कहानियों की रचना कर लेखिकाओं ने पर्याप्त मात्रा में योग दिया है जिसकी उपेक्षा करना उनके प्रति अन्याय करना होगा ।

प्रेमचन्दोत्तर युग के प्रमुख कहानीकार और उनकी कहानियों का सैद्धांतिक और आलोचनात्मक अध्ययन :-

प्रेमचन्द और प्रसाद की कला का प्रभाव सन् 1936 तक हिन्दी साहित्य पर अपनी पूर्ण पराकाष्ठा पर पहुँच गया था । प्रेमचन्द के रचनाकाल में ही जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी और अज्ञेय जैसे प्रतिभावान और स्वतंत्र विचारक कहानीकार रचना के क्षेत्र में आ गये थे । मानव मन के सूक्ष्म विश्लेषण की ओर इनका ध्यान आकृष्ट हुआ और बाह्य वर्णन से उदासीन हो कर इन्होंने व्यक्तित्व के आन्तरिक स्वरूप को विश्लेषित कर कहानी के धरातल को सजीव, सक्रिय, विवेकशील बनाया । जोशी, अज्ञेय और पहाडी की कहानियों में फ्रायडवादी विचारधारा का प्रभाव होने लगा । समाजवादी व्यवस्था की जीवन्त व्याख्या का आदर्श मार्क्सवाद से प्राप्त कर यशपाल जैसे कुशल कथाकार ने व्यक्ति और समाज के तात्त्विक विश्लेषण का प्रयास किया । इस प्रकार कहानी का क्षेत्र विविध प्रयोगों द्वारा विस्तार एवं विकास पाने लगा ।

जैनेन्द्र कुमार :-

हिन्दी कहानी के क्षेत्र में जैनेन्द्र का आगमन प्रेमचन्द के आगमन के बाद एक दूसरा महत्वपूर्ण मोड है । इनकी समस्त कहानियों को "जैनेन्द्र की कहानियाँ" शीर्षक से सात भागों में संकलित कर प्रकाशित किया गया । उनकी कहानियों का मुख्य आधार जीवन दर्शन तथा मनोविज्ञान है । कहानी कला में उनका दार्शनिक तत्व मूलत: मौलिक तथा क्रांतिकारी था । दार्शनिक तत्वों पर लिखी गयी कहानियों में उनकी चार प्रकार की कहानियाँ आती हैं - प्रथम पौराणिक चरित्रों के आधार पर, द्वितीय ऐतिहासिक संवेदना से, तृतीय काल्पनिक तथा लौकिक

संवेदना से और चतुर्थ पशु, पक्षि और वृक्ष आदि के द्वारा । ये कहानियाँ आत्म-दर्शन और रहस्य की उन शाश्वत प्रेरणाओं से लिखी गयी हैं जिनका मूल आधार हमारी संस्कृति है । "अनबन" कहानी में नैतिकता तथा दार्शनिकता की तुलनात्मक व्याख्या मार्मिक ढंग से की गयी है । "राजपथिक" कहानी में परोक्ष सत्ता एवं उसके अन्वेषण की ओर अधिक ध्यान दिया गया है । "लाल सरोवर" की वस्तु में अध्यात्म का पुट है । "नीलम देश की राजकन्या" में आत्मा-परमात्मा के प्रगाढ बन्धुत्व की दार्शनिक व्याख्या की गयी है ! इन कहानियों की शैली भावगत रही है । सूक्ष्मतम भावों की अभिव्यक्ति केलिए उन्होंने स्थान स्थान पर संकेतों और कार्यों का सहयोग लिया है ।

मनोविज्ञान के आधार पर जैनेन्द्र की कुछ कहानियाँ उनके युग के प्रतीक स्वरूप हैं । प्रेमचन्द के विपरीत जैनेन्द्र व्यक्ति के अन्तर्मन के कथाकार हैं और उन्होंने प्रथम बार हिन्दी कहानी को मानव-मनोविज्ञान का ठोस धरातल प्रदान किया, किन्तु यह भी स्मरणीय है कि जैनेन्द्र ने अपना मनोविश्लेषण फ्रायड आदि विदेशी विचारकों से ग्रहण नहीं किया है । उनका मनोविश्लेषण मानव जीवन के चिरंतन प्रश्नों, समस्याओं और संघर्षों का समाधान खोजने की प्रक्रिया में स्वभावत: उद्भूत हुआ है । प्रकट है कि कहीं कहीं यह मनोविज्ञान दार्शनिक गहराई प्राप्त कर लेता है ।" "प्रतिभा", "परिवर्तन", "ध्रुवयात्रा", "रत्नप्रभा", "उर्वशी" आदि में फ्रायड की दमित कामवासना के सिद्धांत की झलक दिखायी देती है ।"[1] "मास्टरजी" कहानी में व्यक्तिगत जीवन की मनोवैज्ञानिक व्याख्या की गई है । ध्रुवयात्रा", "पानवाला", "पूर्ववत्" आदि कहानियों में स्त्री पुरूष का चारित्रिक विश्लेषण मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है । अपनी नवीनतम कहानियों "विज्ञान", "अविज्ञान", "कौन" आदि में उन्होंने सेक्स की समस्याओं को उठाया है ।"

कहानी की भाषा और शिल्प के क्षेत्र में भी जैनेन्द्रजी की देन उल्लेखनीय है ।

---

1. डॉ॰देवराज उपाध्याय, आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य, पृ-205

जैनेन्द्र का कथन है कि वे कहानी का शिल्प नहीं जानते और न उस पर ध्यान देते हैं। यह शिल्पहीन शिल्प की सहजता ही उनकी कहानियों का विशेष गुण है। शिल्प के क्षेत्र में वे सदा नये नये प्रयोग करते रहे हैं। पात्रों का परिचय वह वार्तालापों द्वारा और उनकी परिस्थिति, मनोदशा, रूप-रंग द्वारा भी करा देते हैं। इनके संवाद नाटकीय हैं जो पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं के साथ साथ कथावस्तु का भी परिचय मिल जाता है।

इनकी शैली की दृष्टि से कहानियों में विविधता है। पत्रात्मक शैली, "परिवर्तन", आत्मकथात्मक "नादिरा", संवाद "पाजेब", स्वागत कथन "क्या हो?" नाटकीय "परदेशी" और वर्णनात्मक "मास्टरजी", सभी शैलियों का प्रयोग जैनेन्द्र ने किया है। जैनेन्द्र की कहानियों के शीर्षक संक्षिप्त और आकर्षक हैं जैसे - "खेल", "पत्नी", "पाजेब", "एक गो" आदि।

अज्ञेय :-

अपने युग के अन्तर्गत अज्ञेयजी मनोविज्ञान के अधिष्ठाता माने जाते हैं क्योंकि उनकी कहानी कला मनोविज्ञान पर आधारित रही है। उनकी कहानियों में कहीं समाज की आलोचना है, कहीं राजनीति की, कहीं चरित्र की व्याख्या है और कहीं मानसिक संघर्षों का अध्ययन। चूँकि वे कवि भी हैं अतएव एक कवि की भावुकता का भी उन पर प्रभाव है। इनकी अधिकांश कहानियाँ व्यक्ति प्रधान हैं। "व्यक्तिगत जीवन के आधार पर अपने अनुभवों द्वारा मनुष्य की भावनाओं का चित्रण करना इनकी कहानी कला का आदर्श है। "रोज", "हरसिंगार", "विपथगा" आदि कहानियों में उनकी अतीत कालीन मधुर स्मृतियों का चित्रण मिलता है।"[1]

अज्ञेय ने "एकाकी तारा" नामक कहानी में नारी मन के अन्तर्द्वन्द्व और मानसिक उहापोह की स्थिति को सन्तुलन के साथ विश्लेषित किया है। समाज की अकारण निष्ठुरता और दम्भ पर आघात करते हुए अज्ञेय ने "नम्बर दस" नामक

---

1. डॉ. बलवन्त लक्ष्मण कोतमिरे, हिन्दी गद्य के विविध साहित्य रूपों का उद्भव और विकास, पृ-242

कहानी लिखी । "रोज़" शायद अज्ञेय की सबसे अच्छी कहानी है । परिवेश की एकरसता मालती के मातृत्व तक को सुखा देती है । समाज की दूषित परंपराओं के प्रति आक्रोश, प्रतिक्रिया और अमर्ष के भाव इनकी अनेक कहानियों में, विभिन्न स्थितियों में, विस्फोटित हुए हैं । "दुख और तितलियाँ" का शेखर, "रोज़" की मालती, "सूक्ति और भाषा" की जसुमती, "परंपरा एक कहानी" का दरबान तथा "सभ्यता का एक दिन" का नरेन्द्र इन भावों के प्रतिरूप हैं । कुछ कहानियों में शोषण और न्याय के प्रति तीव्र असन्तोष और उग्र आक्रोश है जिनमें "एकाकी तारा" "शक्ति", जीवन शक्ति" आदि कहानियों को ले सकते हैं । अत: कहा जा सकता है कि समस्त सामाजिक,नैतिक, आर्थिक और साम्प्रदायिक समस्याओं का समाधान उन्होंने व्यक्तिवादी दृष्टकोण से किया है ।

अज्ञेय का शिल्प संवाद-योजना की दृष्टि से अत्यंत सफल है । उनके संवाद छोटे, संगठित और व्यंजनात्मक हैं । वातावरण का प्रभावशाली चित्रण करने में भी अज्ञेय सिद्धहस्त हैं । जैसा कि डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल ने कहा है "इन्होंने अपनी कहानी कला में देश-काल और परिस्थिति का चित्रण इतने व्यापक और विस्तृत ढंग से किया है कि इनका स्थान सर्वोपरि सिद्ध होता है ।"[1]

उनकी शैली में जो संयम, गांभीर्य और परिष्कार मिलता है; रचना शैली के नवीन प्रयोगों का उनमें जो आग्रह मिलता है उन सब का हिन्दी कहानी के विकास में अत्यंत महत्व है । इनकी व्यंग्योक्तियों द्वारा वर्तमान समाज में व्याप्त कुप्रथाओं पर कुठाराघात किया है । स्वगत कथन शैली का भी इनकी कहानियों में उपयुक्त ढंग से प्रयोग हुआ है । "अज्ञेयजी की हिन्दी भाषा ने हिन्दी गद्य को एक नया रूप प्रदान किया है । यह हिन्दी गद्य का एक आधुनिक रूप माना जा सकता है ।"[2]

1॰ डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल, हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, पृ-250
2॰ डॉ॰शेख मुहम्मद इकबाल, स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी-तेलुगु कहानी, पृ-273

उपेन्द्रनाथ अश्क :-

प्रेमचन्द की यथार्थवादी परंपरा के प्रगतिशील कहानीकार हैं । प्रेमचन्द की भाँति उनकी कहानियाँ भी समाज के यथार्थ जीवन की समस्याओं तथा साथ ही मनोविज्ञान को लिए हुए चलती हैं । वे एक ओर समाज की विकृतियों की आलोचना करती है और दूसरी ओर व्यक्ति के मन का अध्ययन व विश्लेषण । फलत: उन में व्यंग्य भी है और पाठकों केलिए आदर्श तथा विचार शीलता की उत्तेजना भी । उनकी कहानियों में भाव-पक्ष को अधिक महत्व दिया गया है , कला-पक्ष को उतना नहीं । फिर भी पात्रों की स्वाभाविकता, चित्रण करने में नाटकीयता, कथोपकथन सरल और संयत, भोली-भाली भाषा जो उर्दु तथा पंजाबी के गुण लिए चलती हैं, आदि उनको मौलिकता प्रदान करती है । प्रतीकात्मक शैली के प्रयोग में अश्कजी को अपेक्षित सफलता मिली है । "एरोमा" कहानी में अश्कजी ने यश-प्राप्ति केलिए पागल मनोवृत्ति के हिंसक रूप का चित्रण किया है ।

इनकी हास्य प्रधान कहानियों के अन्तर्गत "छींटे" नामक कहानी संग्रह की कहानियाँ आती हैं । "पहली", "तकल्लुफ", "दलदल", "दली का नाम", "ज्ञानी" "रोब-दाब", "चोरी-चोरी" आदि कहानियाँ हास्य एवं व्यंग्य प्रधान कहानियाँ हैं । अश्कजी की यथार्थवादी परंपरा की कहानियों के अन्तर्गत "निशानियाँ" तथा "दो धारा" कहानी संग्रहों की कहानियाँ आती हैं । इनकी यथार्थवादी कहानियों के कथानक संक्षिप्त और स्पष्ट होते हैं जिनमें अनावश्यक कथा विस्तार की गुंजाईश नहीं रहती । इनमें अनुभूति की प्रधानता है, कलात्मकसौन्दर्य का अभाव है । इन कहानियों के पात्र भिन्न -भिन्न मानसिक अवस्थाओं एवं सामाजिक तथा व्यक्तिगत समस्याओं का प्रतिनिधित्व करते है । अश्कजी नारी को समाज वृक्ष पर बढनेवाली कडवी बेल अथवा कोई जड या पशु मानने की रूढिवादी धारणा का खण्डन करते हैं । "गोखरू", "वह मेरी मंगेतर थी", "एम्बेडसर" आदि कहानियों द्वारा नारीजन्य दुर्दशा का खण्डन करते हैं ।

अश्कजी के संवाद संक्षिप्त, प्रभावशाली, एवं पात्रोचित होते हैं। संवादों के द्वारा कथानक का विकास कराने के साथ साथ वे पात्रों के चरित्र का विकास

भी कराते हैं । उदाहरण केलिए "काले साहब" में काले साहब और रिक्शेवाले के बीच के वार्तालाप से ही कथा चलती है । डॉ·लक्ष्मीनारायण लाल कहते हैं कि उनकी कहानियों में "नाटक के तीखे व्यंग्य, तिलमिला देनेवाले छींटे और औपन्यासिक शैली से देश-काल परिस्थिति के चित्रण इनकी कहानी-कला की मुख्य विशेषताएँ हैं ।"[1] इनकी यह कहानी कला निरन्तर विकास की ओर अग्रसर है । उन्होंने अनेक सुन्दर कहानियाँ लिखी हैं जिनमें "काले साहब", "वह मेरी मंगेतर थी", "खिलौने", "जादूगरनी" और "चित्रकार की मौत" अधिक सफल रही हैं ।

<u>यशपाल</u> :-

यशपालजी प्रगतिशील विचारधारा के पोषक हैं । उनकी कहानियाँ शोषण के प्रति विद्रोह, साम्प्रदायिक विद्वेष के प्रति घृणा, अर्थहीन रूढ़ियों, अन्धविश्वासों और सामाजिक असंगतियों का विरोध करती हैं । इनकी कहानियों में मनोविश्लेषण भी बडा सफल हुआ है । वे मूलत: मार्क्सवादी विचारक हैं इसलिए वे मार्क्सवादी मान्यताओं को कहानी का जामा पहनाकर पाठकों को सचेत करते हैं ।

सन् 1939 ई· में यशपाल का पहला कहानी संग्रह "पिंजरे की उडान" प्रकाशित हुआ तो "लोगों ने जाना कि यशपाल बन्दूक और पिस्तौल चलाने में निपुण हैं, उनकी कलम भी तेज़ चलती हैं ।"[2] यशपाल "कला को कला केलिए" न मानकर "कला को जीवन केलिए" मानने के पक्ष में हैं । "भस्मावृत्त चिनगारी" इसका स्पष्ट उदाहरण है । "पिंजरे की उडान" की कहानियों में प्रेम के भिन्न भिन्न रूप दिखाये गये हैं । "वो दुनिया" कहानी संग्रह में लोक समाज की गतिविधियों से असन्तुष्ट दिखायी देता है । "वो दुनिया" शीर्षक कहानी प्रतीकात्मक है । "नारायण की पूजा", "स्वराज्य की पुडिया" नामक कहानियों में साम्यवाद, समाजवाद, तथा गाँधीवाद की व्याख्या की गयी है । "तर्क का तूफान" प्रेम प्रधान

1· डॉ·लक्ष्मीनारायण लाल, हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, पृ-261·
2· डॉ·परमानन्द श्रीवास्तव, हिन्दी कहानी की रचना प्रक्रिया, पृ-168·

कहानियों का संग्रह माना जा सकता है । अपनी दमित वासनाओं के पाश में बंध कर मानव के व्यक्तित्व में जो असन्तुलन आ जाता है उसका विश्लेषण "फूलों का कुर्ता" की कहानियों में उत्कृष्ट और मनोवैज्ञानिक पद्धति से किया गया है । "फूलों का कुर्ता" यह कहानी यशपाल की कहानी-कला का आदर्श प्रस्तुत करती है । हास्य एवं व्यंग्य प्रधान कहानियों में मनुष्यों के अन्धविश्वासों एवं उनकी रूढिवादिता पर करारे व्यंग्य किये गये हैं । "या साईं सच्चे" एक जंगली जाति के अन्धविश्वासों पर व्यंग्य कसा गया है । यशपाल की कहानियों में भारतीय नारी के दीन-हीन, कुंठित, शोषित व परतंत्र रूप का चित्रण पाया जाता है । "तुम ने क्यों कहा था कि मैं सुन्दर हूँ" इसका उदाहरण है । नैतिकता, आर्थिक-विषमता तथा यौवनवाद की समस्यायें यशपाल की कहानियों में सर्वत्र प्राप्त हैं ।

यशपाल ने अधिकतर तत्कालीन समाज का यथा तथ्य वातावरण प्रस्तुत किया है । चरित्र-चित्रण में इन्होंने आर्थिक संघर्ष एवं वर्ग चेतना की ओर अधिक ध्यान दिया है । उनकी कहानियों में वर्णनात्मक, संवादात्मक, नाटकीय, पत्रात्मक, आत्मकथात्मक, प्रतीकात्मक, भावात्मक कहानियों के सुन्दर उदाहरण पाये जाते हैं । इसके अतिरिक्त संवादों द्वारा चरित्र-चित्रण का विकास भी कराया गया है । "उत्तराधिकारी" कहानी में गनेरीसिंह और कुशली के बीच होनेवाले संवादों द्वारा चारित्रिक स्पष्टीकरण के साथ साथ घटना का विकास भी होता है । प्रो·वासुदेव का यह कथन भी यहाँ सार्थक बैठता है कि "यशपाल की कहानियाँ जीवन की अनुभूत वास्तविकताएँ न हो कर जीवनोपयोगी और सामाजिक कल्पनाएँ हैं ।"[1]

उपर्युक्त सभी कहानीकारों की विशेषताओं से यह स्पष्ट है कि हिन्दी कहानी जीवन के अधिकाधिक निकट आती जा रही थी । मनोविज्ञान तथा यथार्थ जीवन व समाज की समस्याओं व गुत्थियों के दर्शन कराना व उन्हें सुलझाना हिन्दी कहानी का लक्ष्य बनता जा रहा है । दूसरी ओर शैली की दृष्टि से भी हिन्दी कहानी विविधमुखी हो रही थी । इस काल में उपर्युक्त प्रवृत्तियों के पोषक तथा

1· प्रो·वासुदेव, हिन्दी कहानी और कहानीकार, पृ-263

प्रसारक अन्य अनेक कहानीकार हुए जिनमें निराला, मोहनलाल महतो "वियोगी", कमलाकांत वर्मा, "पहाडी", वीरेश्वर सिंह, भुवनेश्वर प्रसाद, सद्गुरूशरण अवस्थी, देवेन्द्र सत्यार्थी, अमृतराय, रांगेय राघव, विष्णु प्रभाकर, गजानन माधव, धर्मवीर भारती, राहुल सांकृत्यायन, सुमित्रानन्दन पन्त, सत्येन्द्र शरत् आदि प्रसिद्ध हैं ।

प्रेमचन्दोत्तर महिला कहानीकार और उनके साहित्यिक गतिविधान का परिचय :-

पुरूष वर्ग के अतिरिक्त विवेच्य काल में स्त्री वर्ग ने भी कहानी कला में अपना कौशल दिखाया । महादेवी वर्मा, यशोदा देवी, कमला चौधरी, चन्द्रवती ऋषभसेन जैन, कमला त्रिवेणी शंकर, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, सुमित्राकुमारी सिन्हा, होमवती देवी, तारापाण्डे, उमा नेहरू आदि महिलाएँ प्रसिद्ध व मान्य कहानीकारों के रूप में सम्मुख आ चुकी हैं । इस अवधि की कहानी लेखिकाएँ प्रेमचन्द, प्रसाद, जैनेन्द्र जैसे महान कहानीकारों की कहानियों से काफी प्रभावित हुई हैं । परिणाम स्वरूप उनकी कहानी कला भी गाँधी के आदर्शवाद, मार्क्स के समाजवाद और फ्रायड की मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों के प्रचलन की ओर उन्मुख हुई । फलत: लेखिकाओं की कहानियों में वस्तु तथा शिल्पगत विविधता आयी है । पारिवारिक व सामाजिक कहानियों के साथ-साथ ऐतिहासिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक, प्रतीकात्मक एवं भावकथा चित्र खींचने में इस अवधि की लेखिकाओं को काफी सफलता मिली है ।

गृहस्थ की आस्तिकता को कोमल भावजगत् तक सीमित न रखकर जीवन के यथार्थ का चित्रण इनकी कहानियों की विशेषता है । नारी जीवन से संबंध अनेक समस्याओं को अपनी कहानी की कथावस्तु के रूप में स्वीकार कर इन्होंने मर्मस्पर्शी चित्रों की अभिव्यंजना की है । समाज की कुंठित रूढ़ियों से कुचली हुई नारी के स्पष्ट उद्गार इनकी कहानियों में दृष्टिगोचर होते हैं । लेखिकाओं ने जीवन-तल को स्पर्श किया है । स्त्री जीवन को समझने की दृष्टि से इनकी कहानियाँ उपयोगी हैं ।

बहुमुखी प्रतिभा संपन्न श्रीमती कमला चौधरी ने पात्रों के चरित्रों के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण पर बल दिया है । मनोवैज्ञानिक कहानियों के साथ साथ सामाजिक, पारिवारिक, भावात्मक, प्रतीकात्मक, ऐतिहासिक, पौराणिक, हास्य

एवं व्यंग्य प्रधान कहानियों की रचना करके हिन्दी साहित्य के विकास में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है । होमवती देवी ने मुख्य रूप से पारिवारिक संवेदनाओं को अपनाकर ही अधिकांश कहानियाँ लिखी हैं । पति-पत्नी, सास-बहू देवरानी-जेठानी, मित्र, माँ, पिता सभी पारिवारिक संबंधों का वर्णन उनकी कहानियों में मिलता हैं । उनकी सामाजिक कहानियों में लेखिका ने समाज में प्रचलित अन्धविश्वास, अनैतिक रूढियाँ, विधवा समस्या, अनमेल विवाह, आदि विकृतियों के खोखलेपन का चित्रण किया है । आपकी राजनीतिक कहानियाँ स्वतंत्रता से पूर्व और पश्चात् की परिस्थितियों, समस्याओं व विचार-धारोओं को लेकर लिखी गयी हैं । हिन्दी में प्रमुखतया रेखाचित्र लिखने में प्रसिद्ध महादेवी वर्मा ने अपने परिचय में आये विविध व्यक्तियों की जीवन-धारा का संस्मरणात्मक रेखाचित्र खींच लिया है । जो कि "अतीत के चलचित्र" तथा "स्मृति की रेखाएँ" में संग्रहीत है । उन्होंने इन गद्य रचनाओं की सृष्टि में भी अपनी उच्चकोटि की प्रतिभा का परिचय दिया है । इनके माध्यम से आपने लोकदर्शन तथा युगधर्म की सजगता का परिचय दिया है ।

श्रीमती सुमित्रा कुमारी सिन्हा की कहानियों में पहले-पहल आधुनिक स्त्री-पुरूषों के मानसिक तथा व्यावहारिक जीवन का यथार्थ चित्रांकन मिलता है । समाज के प्रति लेखिका के मन में जो विद्रोह की भावना है, इस भावना का प्रतिनिधित्व करनेवाले पात्र उनकी कहानियों में प्राय: दृष्टिगोचर है । रवीन्द्र, बंकिम तथा प्रेमचन्द से प्रभावित होकर जीवन की कटु यथार्थता का चित्रण करनेवाली लेखिका है श्रीमती चन्द्रकिरण सोनरेक्सा। उनकी कहानियों में सामाजिक यथार्थों की तीव्र, कटु और गतिशील अभिव्यक्ति तथा मध्य, निम्न वर्ग के शोषित जीवन की हीन आर्थिक परिस्थितियों की करूणा और कठोरता सजीवतम रंगों में चित्रित है ।

कमला त्रिवेणी शंकर की अधिकांश कहानियों में आधुनिक भारतीय समाज के शिक्षित, संपन्न, उच्च वर्ग के सामाजिक जीवन की किसी न किसी मार्मिक समस्या का सूक्ष्म चित्रण, त्याग, करूणा तथा आदर्शवादिता की कसौटी पर उस समस्या का सुन्दरतम समाधान पाया जाता है । तेजरानी पाठक ने सामाजिक,

ऐतिहासिक, राजनीतिक कहानियों के अतिरिक्त पशु-पक्षियों के स्वभाव से संबंधित कहानियों की भी रचना की है ।

उपयुक्त लेखिकाओं के अतिरिक्त कौसल्या अश्क, विमल रैना, इंदुमती, चन्द्रकुमारी मिश्र, स्वर्णलता देवी, मालती वर्मा, रामेश्वरी देवी "चकोरी", आदि ने हिन्दी कहानी साहित्य को अपनी रचनाओं द्वारा महत्वपूर्ण योग दिया और कहानी के क्षेत्र में गुण एवं राशि की प्रगति में उत्तरोत्तर प्रगति दिखायी देती है । विवेच्यकालीन लेखिकाएँ अपनी पूर्ववर्ती लेखिकाओं से वस्तु एवं शिल्प की दृष्टि से प्रगति कर परवर्ती लेखिकाओं केलिए प्रेरणा एवं आदर्श की स्थापना कर हिन्दी कहानी साहित्य के विकास में ही अनुपम योग दिया है ।

<u>निष्कर्ष</u> :-

भारतेन्दु युग हिन्दी गद्य के बहुमुखी विकास का युग है । इस काल में कहानी कला का स्वतंत्र और सम्यक विकास नहीं हो पाया था जैसे नाटक और निबंधों का हुआ । आधुनिक हिन्दी कहानी का आरंभ बीसवीं शताब्दी से होता है और इसका श्रेय हिन्दी की प्रसिद्ध पत्रिका "सरस्वती" को है । "सरस्वती" के प्रकाशन के कारण अनेक कहानियों का प्रकाशन हो रहा था परन्तु इनमें आधुनिक कहानियों के तत्व नहीं मिलते हैं । इन में केवल वर्तमान समस्याओं के चित्रण की प्रवृत्ति तथा प्राचीन शैली का एक विचित्र संयोग मिलता है । आधुनिक हिन्दी कहानी का विकास प्रसाद और प्रेमचन्द से आरंभ होता है । इस क्षेत्र में प्रेमचन्द तथा प्रसाद ने दो भिन्न प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व किया । कालान्तर में हिन्दी कहानी में विकसित होनेवाली सभी प्रवृत्तियों का उद्भव-स्रोत यही लक्षित होता है । इन दोनों ने तत्कालीन लेखकों को पर्याप्त प्रभावित किया । उनसे प्रभावित होकर उस समय कहानी क्षेत्र में अनेक प्रतिभा संपन्न कलाकारों का जन्म हुआ और उन्होंने कहानी कला को माँज-निखार कर सुन्दर और परिष्कृत रूप प्रदान किया ।

प्रसाद तथा प्रेमचन्द युगीन कहानी कला जीवन और जगत् की बाह्य

परिस्थितियों, बाह्य समस्याओं तथा जीवन के बहिरंग एवं व्यावहारिक रूप को अपना विषय बनाती थी । प्रेमचन्दोत्तर युग की कहानी-कला इन सबके साथ जीवन की द्रुत झलक, चरित्र, स्वभाव या मनोस्थिति के विश्लेषणात्मक चित्रण की ओर आकर्षित हुई । वह मानव के अन्तरंग का अधिक चित्रण करने लगी । मानव मन की चेतन-अचेतन अवस्थाओं के असाधारण संघर्ष तथा उसकी जटिलताओं के चित्रण केलिए कहानी के शिल्प विधानों तथा रूप विधानों में भी इस युग में नवीन प्रयोग हुए । स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् यौवनवाद, मार्क्सवाद, गाँधीवाद तथा मनो-विश्लेषणवाद का और भी विकास हुआ । लोक जीवन की प्रतिष्ठा कहानियों में होने लगी ।

हिन्दी कथा साहित्य का प्रारंभ भारतेन्दु युग में हुआ, किन्तु महिला कथाकारों ने इस क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का अपेक्षाकृत विलंब से परिचय दिया । द्विवेदी युग के प्रारंभ में सर्वप्रथम बंग महिला ने इस ओर ध्यान दिया और तब से अब तक अनेक महिलाओं ने इस साहित्यांग की श्रीवृद्धि की । प्रेमचन्द युग की लेखिकाओं की कहानियाँ नारी को केन्द्र बनाकर रची गयीं । प्रेमचन्दोत्तर युग की लेखिकायें लेखकों की तुलना में पिछडी या निम्न स्तर की नहीं कही जा सकती । इनमें गाँधीवाद, समाजवाद तथा मनोविश्लेषणात्मकता की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है । अत: स्पष्ट है कि कहानी के क्षेत्र में नारियों का योगदान क्रमश: बढ़ता गया जो इस समय असीमित मात्रा में है ।

"""""""""""

अध्याय दो

अध्याय दो

स्वातंत्र्यपूर्व महिला कहानीकारों के व्यक्तित्व और कृतित्व का समीक्षात्मक विवरण

भारतीय नारी : दशा और दिशा :-

धर्म प्रधान भारत वर्ष में वेद, पुराण, स्मृति, इतिहास, दर्शन तथा प्राचीन संस्कृति ने नारी को नर की अर्धांगिनी माना है। धर्म ग्रन्थों में स्त्रियों को आदि शक्ति के नाना रूपों में देखने की परंपरा हमारे यहाँ अत्यंत प्राचीन है। नारी को गृहलक्ष्मी माननेवाले भारतीयों का विश्वास था कि उस घर को ही घर कहते हैं जहाँ गृहिणी का निवास होता है। यह स्पष्ट है कि भारत वर्ष में नारी को सामाजिक जीवन के आरंभ से बड़ा गौरव प्रदान किया गया था।

ऋगवेद से लेकर समस्त वैदिक अथवा लौकिक साहित्य में नारी का अभिचित्रण उसके कर्मठ जीवन, त्याग, उत्सर्ग आदि गुणों को ध्यान में रखते हुए उसके गौरव के सर्वथा अनुरूप हुआ है। वह पुरूष की सहयोगिनी के रूप में चित्रित हुई, वह उसके साथ सामाजिक, धार्मिक, गार्हस्थिक और कहीं कहीं राजनैतिक कार्यों में भी भाग लेती थी। परन्तु धीरे धीरे नारी की सामाजिक स्थिति में ह्रास आरंभ हो गया, उसका स्थान गिरने लगा तथा उसे केवल पुत्र प्राप्ति का साधन मात्र मान लियागया। लडके के जन्म पर बधावे बज गये और लडकियों की उत्पत्ति दु:खद मानी गयी। इस लोकवृत्ति का आज भी अवशेष नहीं हुआ है। नव-जात पुत्री को आज भी यही कहकर स्वीकारा जाता है "चलो, अगली बार लड़का होगा।"

बौद्धों एवं जैनों के निवृत्तिमूलक सिद्धांत ने उसकी स्थिति और भी शोचनीय बना दी। उनके अनुसार स्त्री विरक्तिमूलक मार्ग में बाधक होने के कारण गर्हित समझी जाने लगी। राजपूत युग में नारी केवल भोग और सौन्दर्य की उपकरण मात्र रह गयी, परिणामत: उसे प्राप्त करने केलिए बड़े-बड़े युद्ध होने लगे। बौद्धों-जैनों के निवृत्ति सिद्धांत का प्रभाव नाथ सिद्धों में होता हुआ सन्तों में आया। इसलिए समस्त सन्त साहित्य में स्त्री को अविद्या, माया के रूप में देखा गया है और उसकी पूर्णत: अवहेलना की गयी है। राम-भक्ति शाखा में अलौकिक शक्तिमयी सीता को तो आदर के साथ देखा गया है परन्तु साधारण नारी का समाज में कोई उचित

स्थान निर्धारित नहीं था । सूफ़ियों और कृष्ण भक्तों ने नारी के केवल मधुर रूप को ही देखा । तुलसीदास जैसे महाकवियों ने एक ओर नारी पात्रों द्वारा सामाजिक आदर्शों की स्थापना की, दूसरी ओर उनकी भर्त्सना कर तत्कालीन समाज की विषमताओं को उजागर किया । रीतिकाल की नारी अति वासना का शिकार हो गयी, अत: वह मन बहलाव का उपकरण मात्र बन गयी । 19 वीं शती पूर्व तक नारी-स्थिति के विवेचन से यह तो स्पष्ट ही है कि इस युग तक पहुँचते-पहुँचते नारी का गौरवमय पद समाप्त हो चुका था । परिवार में नारी को कोई स्थान प्राप्त नहीं था । माता-पत्नी, पुत्री, बहिन सब रूपों में वह पुरूष पर आश्रित थी, पुरूष ने अपने स्वामित्व की शक्ति से लाभ उठाकर उसे इतना अधिक परालंबी बना दिया था कि वह उसकी सहायता के बिना संसार पथ में एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकी थी । नारी रह गयी थी केवल पुरूष की दासी मात्र । साथ ही सती-प्रथा, दहेज-प्रथा, बहु-विवाह, पर्दा-प्रथा आदि सामाजिक कुप्रथाओं से नारी बुरी तरह जकड़ी हुई थी ।

19 वीं शताब्दी के भारतीय इतिहास की युगांतकारी घटना थी अंग्रेज़ी राज्य की स्थापना । अंग्रेज़ों के साथ ही साथ अंग्रेज़ी सभ्यता, संस्कृति, भाषा, शिक्षा, साहित्य एवं विचारों का भारत में आगमन हुआ । अत: देश में अनेक सुधारवादी आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ । उनका ध्यान सर्वप्रथम नारी की दीन-हीन दशा की ओर गया जो शताब्दियों से पर्दे के पीछे पुरूषों के अत्याचारों एवं स्वार्थपरक बुद्धि की शिकार होकर आ रही थी । इसके परिणाम स्वरूप देश में सुधारवादी कार्य प्रारंभ हुआ और सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक आन्दोलनों के साथ स्वयं नारी इस कार्य में लग गयी ।

अद्वितीय प्रतिभा संपन्न एवं भारत के अग्रगण्य प्रतिनिधि राजा राममोहन राय द्वारा स्थापित "ब्रह्मसमाज" (सन् 1828) महाराष्ट्र में सन् 1867 में श्री केशवचन्द्र सेन के नेतृत्व में स्थापित "प्रार्थना समाज", सन् 1875 ई॰ में स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित "आर्य समाज", अमेरिका में स्थापित "थियोसोफिकल सोसाइटी" (सन् 1857) का भारत में खुला गया केन्द्र, सन् 1905 में श्री गोपाल कृष्ण गोखले के नेतृत्व में स्थापित "भारतीय सेवक समाज", बंगाल में स्वामी रामकृष्ण परमहंस से स्थापित

"रामकृष्ण मिशन" आदि के सुधारवादी कार्यक्रमों के फलस्वरूप तथा सुधारवादी व्यक्तियों के फलस्वरूप नारी 19 वीं शती के अन्तिम दशकों में सामाजिक रंगमंच पर आकर अपनी समस्याओं पर स्वतंत्रतापूर्वक विचार व्यक्त करने लगी । पाश्चात्य देशों में प्रारंभ हुआ स्त्री आन्दोलन क्रमश: श्रीमती मार्गरट ई॰ कजिन्स, श्रीमती एनी बेसेंट, मार्गेट नोबिल आदि के सहयोग से भारत में भी प्रसारित हुआ । सन् 1923 में स्त्री-शिक्षा के समर्थन के साथ-साथ सामाजिक कुप्रथाओं, अन्धविश्वासों एवं नारी जीवन से संबंधित मान्यताओं का विरोध होने लगा । कई क्षेत्रों में स्त्री-पुरूष की पृथक भावना मिटने लगी । फलस्वरूप 20 वीं शताब्दी में सामाजिक एवं साहित्यिक क्षेत्रों में नारी का सक्रिय योगदान दिखाई देने लगा । अपनी समस्याओं को प्रकट करने के लिए उन्होंने साहित्य की विधाओं को अपना साधन माना, विशेषकर कथा साहित्य को । प्राय: समूचे भारत में नारी समाज की यही स्थिति रही ।

कहानी के क्षेत्र में नारी की प्रगति :-

भारतीय नव-जागरण की कई अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धियों में एक उल्लेखनीय उपलब्धि यह भी रही है कि भारतीय नारी समुदाय के बीच उनकी रचनात्मक अस्मिता की नई पहचान शुरू हुई । जीवन के हर क्षेत्र की तरह कला, साहित्य के क्षेत्र में भी ऐसी कई महिलाओं के नाम उभरे जिन्होंने साहित्य जगत् पर पुरूषों के एकाधिकार को चुनौती देते हुए साहित्य के विकास की मुख्य धारा के साथ जुड़कर अपनी रचनात्मक दृष्टि को विकसित किया ।

आधुनिक काल के हिन्दी साहित्य में कविता के बजाय गद्य में लेखिकाओं की उन्नति अधिक हुई । हिन्दी कहानी का सूत्रपात हो "बंग महिला" नाम की एक महिला कहानीकार के हाथों हुआ । "बंग महिला" का वास्तविकनाम राजेन्द्रबाला घोष था । उसकी कहानी "दुलाईवाली" हिन्दी की पहली कहानी मानी जाती है जो सन् 1907 में "सरस्वती" में प्रकाशित हुई थी । इसे पं॰भगवतीप्रसाद वाजपेयी ने हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी मान कर लिखा है - "यह कहानी शिल्प विधान की दृष्टि से बहुत कुछ निर्दोष है और मौलिकता की दृष्टि से भी वह खरी उतरती है ।

अत: निष्पक्ष भाव से देखा जाय तो हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी "दुलाईवाली" है ।"[1] "हिन्दी में अनूदित कहानियों का प्रकाशन सन् 1900 में प्रारंभ हुआ था ।"[2] बंग महिला की प्रथम अनूदित कहानी "राई से पर्वत" का रचना-काल सन् 1902 है । अत: हिन्दी कथा साहित्य को अनुवाद के माध्यम से पुष्ट करनेवाले प्रारंभिक लेखकों में बंगमहिला का योगदान भी अविस्मरणीय है ।

सन् 1922-23 में "चाँद", "माधुरी" के प्रकाशन के उपरान्त हमारा कई कहानी लेखिकाओं से परिचय होता है । इन पत्रिकाओं का प्रकाशन विशेषत: नारी के साहित्यिक और बौद्धिक विकास को व्यावहारिक और क्रियात्मक बनाने के उद्देश्य से किया गया था । सन् 1922 के "चाँद" में मुन्नीदेवी भार्गव की कहानी "कमला" प्रकाशित हुई । इसी वर्ष नवंबर में ही चन्द्रप्रभा देवी मेहरोत्रा की "डिप्टी साहब की आदर्श पत्नी "छपी जिसमें भारतीय नारी के संस्कारी आदर्श चरित्र का अंकन है । सन् 1923 में श्रीमती विमला देवी चौधरानी की "विधवा", शारदा कुमारी की "सरोज", विद्यापतीजी की "लीलावती" और सन् 1924 में सरस्वती वर्मा की "कामना" चन्द्रप्रभा देवी मेहरोत्रा की "कमला की सास" सन् 1925 में श्रीमती मनोरमा देवी की "मालती" आदि अनेक कहानियाँ तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक परिवेश में नारी की स्थिति को ले कर लिखी गयीं ।

तत्पश्चात् हिन्दी कहानी के विकास में महत्वपूर्ण योगदान श्रीमती शिवरानी प्रेमचन्द का है जिनके "नारी हृदय" और "कौमुदी" कहानी संग्रह प्रसिद्ध हैं, पर वह स्वयं प्रसिद्ध हुई "प्रेमचन्द घर में" पुस्तक से । प्रेमचन्द युगीन तथा प्रेमचन्दोत्तर युगीन महिला कहानीकारों को प्रेमचन्द, प्रसाद, जैनेन्द्र - जैसे महान कथाकारों की कहानियों ने निश्चित रूप से प्रभावित किया, फलस्वरूप उनकी कहानी कला भी गाँधी के आदर्शवाद, मार्क्स के समाजवाद और फ्रायड की मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों के प्रवलन की ओर

---

1. भगवती प्रसाद वाजपेयी, प्रतिनिधि कहानियाँ, भूमिका पृ.सं -27
2. डॉ. ब्रह्मदत्त शर्मा, हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन, पृ-101.

उन्मुख हुई । कहानियों के विषय में विविधता आयी, पारिवारिक तथा सामाजिक कहानियों के साथ-साथ ऐतिहासिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक, प्रतीकात्मक, भाव-कथा चित्र आदि अनेक प्रकार की कहानियाँ इस युग में परिलक्षित हुईं । पत्र-पत्रिकाओं में एक-दो कहानी प्रकाशित होने का समय समाप्त हो गया । कमला चौधरी के "उन्माद", "पिकनिक", "यात्रा", तेजरानी पाठक के "अंजली", "एकादशी", कमला त्रिवेणी शंकर का "पुकार", चन्द्रवती ऋषभसेन का "नींव की ईंट", उषादेवी मित्रा के "रागिनी", "मेघमल्लार", चन्द्रकिरण सोनरेक्सा का "आदमखोर", सुमित्राकुमारी सिन्हा का "अचल सुहाग" सुभद्राकुमारी चौहान का "बिखरे मोती" आदि कहानी संग्रह इस युग की ही देन हैं । अत: स्पष्ट है कि कहानी के क्षेत्र में नारी की प्रगति उत्तरोत्तर वृद्धि की ओर हो थी । स्वातंत्र्यपूर्व प्रशस्त महिला कहानीकारों में उषा-देवी मित्रा, कमला चौधरी, कमला त्रिवेणी शंकर, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, चन्द्रवती ऋषभसेन जैन, तारा पाण्डे, तेजरानी पाठक, महादेवी वर्मा, राजेन्द्रबाला घोष (बंग महिला), रामेश्वरी देवी "चकोरी", शिवरानी देवी प्रेमचन्द, सत्यवती मल्लिक, सुभद्राकुमारी चौहान, सुमित्राकुमारी सिन्हा, होमवती देवी आदि के व्यक्तित्व और कृतित्व का समीक्षात्मक विवरण यहाँ दिया जाता है ।

<u>उषादेवी मित्रा</u> :-

शताधिक कहानियों की रचना करके हिन्दी कहानी साहित्य के विकास में महत्व-पूर्ण योग देनेवालों में श्रीमती उषादेवी मित्रा का नाम उल्लेखनीय है ॥

<u>प्रेरणा के स्रोत</u> :- उषादेवी मित्रा का जन्म 1897[1] ई॰ में जबलपुर में हुआ । पारिवारिक साहित्यिक वातावरण ने ही लेखिका को प्रेरणा प्रदान की । आपके पिता हरिश्चन्द्र दत्त जबलपुर के एक प्रसिद्ध वकील थे । मातृ-भाषा बंगला के साथ-साथ अंग्रेज़ी उर्दु व हिन्दी पर उनका अधिकार था । फलस्वरूप आपने उर्दु तथा अंग्रेज़ी में कतिपय पंस्तकें लिखीं । आप शिकारी साहित्य के भी ख्यातिनामा लेखक थे । उषादेवी के पितामह स्वर्गीय राय बहादुर वीरेश्वर चन्द्र दत्त, जज एवं सार्वजनिक व्यक्ति थे । वे स्वयं लेखक तो न थे पर फारसी और अंग्रेज़ी के प्रगाढ विद्वान अवश्य थे । आपकी मातामही श्रीमती विनोदिनी देवी, अपने युग की बंगला साहित्य की

1॰ डॉ॰धीरेन्द्र वर्मा, तथा अन्य, हिन्दी साहित्य कोश - भाग-2, पृ-53॰

एक ख्यातनामा सुकवयित्री थी । उषाजी ने अपनी माता से ही बंगला सीखी थी । उनके काका स्वर्गीय अक्षय कुमार दत्त ने बंग भाषा के गद्य साहित्य में कीर्ति उपार्जित की । बंग साहित्य के जाज्वल्यमान रत्न सुकवि सत्येन्द्र नाथ उषाजी के मामा थे । इस प्रकार साहित्यिक परिवार के साहित्यिक वातावरण में जन्म लेने के कारण साहित्यिक संस्कार विरासत-रूप में उषाजी ने प्राप्त किए ।

विधवा होने के कारण अर्थोपार्जन केलिए उन्होंने लेखनी उठा ली । साहित्य के साथ संगीत तथा चित्रकला में भी रूचि थी । अपने भाई के पास रहकर अपने जीवन का एकमात्र लक्ष्य पठन-पाठन को ही बनाया । वह कुछ समय तक रवीन्द्रनाथ ठाकुर के पास रही । उषाजी पर उनके मामा कवि श्री सत्येन्द्रनाथ दत्त का सबसे अधिक प्रभाव पडा । शान्ति निकेतन रहकर उषाजी सबसे छिपकर उपन्यास, कहानियाँ लिखा करती थीं । एक दिन मामा सत्येन्द्र नाथ दत्त तथा गुरूदेव की नज़र इनकी कृतियों पर पड गयी । उनमें इतना अधिक तथ्य पाया गया कि "सम्मोहिता" उपन्यास तथा अन्य कहानियाँ बंगला मासिक पत्र-पत्रिकाओं में (जैसे प्रवासी, भारतवर्ष, वसुमती, पंच पुष्प आदि में) प्रकाशित की गयीं । अपनी व्यक्तिगत परिस्थितियों, रवीन्द्रनाथ तथा सत्येन्द्रनाथ दत्त के अतिरिक्त लेखिका को "साकेत" ने अत्यधिक प्रभावित किया । स्वयं उषाजी ने लिखा है "बीमारी की दशा में मेरे हिन्दी भाषा-भाषी मित्र मुझे चन्द्रकान्ता आदि उपन्यास तथा कहानियाँ सुनाया करते --------- मुझे लगे कि हिन्दी साहित्य अभी शिशु अवस्था में है तथा शब्द कोष क्षुद्र है । एक दिन मैथिली शरण गुप्त का "साकेत" सुनाया । मैं प्रभावित हो उठी तो हिन्दी साहित्य में भी कुछ है खोज सूक्ष्म दृष्टि सृष्टि भी है । हाँ काव्य की उपेक्षिताएँ चार कन्याओं पर सर्वप्रथम दृष्टिपात किया विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ने । इसके बाद काव्य की उपेक्षिता ऊर्मिला को घर घर पहुँचाया "साकेत" ने औरतब चुम्बक की नाई उस "साकेत" ने मुझे आकर्षित कर लिया ।"[1] "साकेत" से प्रभावित होने पर लेखिका ने हिन्दी में लिखने का संकल्प किया । प्रेमचन्द ने उन्हें प्रोत्साहित किया । वे इसी कारण हिन्दी में लिखने लगी । अनवरत साहित्य-साधना ने उन्हें उच्च कोटी का कलाकार बना दिया ।

---

1. डॉ॰प्रभा सकसेना; उषादेवी मित्रा - व्यक्तित्व और कृतित्व; पृ-6॰

बचपन की साहित्यिक चेष्टाएँ भी इसमें सहायक हुई । बचपन में श्रीमती उषादेवी मित्रा कविता लिखा करती थीं लेकिन बाद में गद्य की ओर आकर्षित हुईं और कथा साहित्य में अपना विशेष महत्वपूर्ण स्थान बना लिया ।

रचना-दृष्टि :-

बाल्य काल से ही कथा साहित्य की ओर आपका विशेष रूझान था । उषाजी ने अनेक उपन्यास और कई प्रकार की कहानियाँ लिखी हैं । पुराण, राजनीति, इतिहास, समाज प्राय: सभी क्षेत्रों में से उन्होंने सामग्री चुनी है । उन सब में पारिवारिक गृहस्थ जीवन की समस्याओं का चित्रण करने में उन्हें सर्वाधिक सफलता मिली है । सन् 1933 अगस्त मास से उन्होंने हिन्दी में गल्प लिखना आरंभ किया । सर्वप्रथम कहानी "मातृत्व", "हंस" पत्रिका में सन् 1933 अगस्त मास में प्रकाशित हुई, उसी वर्ष अगस्त मास में दूसरी कहानी "अन्तिम उत्तर" सरस्वती में प्रकाशित हुई । श्रीमती मित्रा की प्रथम कहानी की स्व॰प्रेमचन्द के मन पर यों प्रतिक्रिया हुई -"तुम्हारी कहानी पढ कर चित्त प्रसन्न हो गया । मैं नहीं समझता था कि तुम इतनी सुन्दर गल्प लिख सकोगी । --------- ऐसी दस कहानियाँ भी तुम लिख दो तो हिन्दी गल्प लेखकों में तुम्हारा स्थान सर्वोच्च हो जाएगा ।"[1] स्व॰ महावीर प्रसाद द्विवेदी का पत्र भी उत्साह वर्धक था । तब से वे द्रुतगति से लिखती चली जा रही थी । एक समय तक सभी प्रमुख पत्रिकाओं में उनकी रचनाओं की धूम मची । कहानी के संबंध में अपना दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए उन्होंने लिखा है - "कलाकार बीज रोपता है । उसका काम है - प्रशस्त, प्रशान्त, बृहत्तर को खोज निकालना । वह समुदाय को लेता है, किसी संकीर्णता में आबद्ध रह कर किन्हीं शाखा - प्रशाखाओं के विश्लेषण में लगे रहना उसका काम नहीं । वह रोपता है बीज ही और तब उसमें से निकलती है शाखा-प्रशाखाएँ । ---------- आदर्शवाद, नग्नवाद आदि की परिकल्पना को हम कला की शाखाएँ मान सकते हैं । ---------- मेरा दृष्टिकोण है - सर्वप्रथम किसी भी एक वस्तु का चाहे वस्तु कुत्सित, नग्न ही क्यों न हो - उसका रूप, सौन्दर्य, जीवन खोज कर सुसज्जितरूप से एक कला की सृष्टि करना । ----------"[2]

1॰ उषादेवी मित्रा, सम्मोहिता, भूमिका भाग से
2॰ कहानी - अक्तूबर 1941

उषाजी ने सामाजिक कहानियाँ अधिक लिखी हैं और उसमें भारतीय परिवार की नित-प्रति की समस्याओं को मुख्यतया अंकित किया है। पति-पत्नी के जीवन माधुर्य, परित्यक्ता नारी, वेश्या जीवन, अन्तर्जातीय विवाह, स्त्री के सौन्दर्य से मोह, विधवा-समस्या आदि विषयों को उन्होंने कहानी का आधार बनाया है। कहानियों का लक्ष्य समाज की वर्तमान समस्याओं की ओर पाठकों का ध्यान आकर्षित करना तथा मानव समाज के उत्थान का सन्देश प्रदान करना है। यथार्थ और आदर्श के समन्वित रूप की उन्होंने प्रतिष्ठा की है। यथार्थ वर्णन में छिपी हुई आदर्श भावना जीवन की प्रेरिका और सन्देश प्रदायिनी है। श्रीमती मित्रा के उपन्यासों की सामान्य प्रवृत्ति यह है कि "इन सब में नारी जीवन की विभिन्न समस्याओं का चित्रण किया गया है, इसलिए प्राय: सभी में एक ही भावना दृष्टिगत होती है।"[1] प्रेमचन्द की भाँति वे उपन्यास को मानव-जीवन का चित्र मानती हैं।

आपकी अधिकांश कहानियाँ सात संग्रहों में प्रकाशित है। उनमें संगृहीत कहानियाँ निम्न लिखित हैं :-

1. आँधी के छन्द :- प्रतीक्षा, पपीहरा, पथिक, परिचय, पिउ कहाँ, भेंट, प्रश्न, हृदय, अनुराग रंगे दृग मीन, भूल, समस्या, महुआ, शेष उत्तर, राजपुतानी, मैं प्यासी हूँ।
2. महावर :- व्यवधान, बुभुक्षा, छोटा प्रश्न, माँ, सुन्दर, मन का परिचय, फागुन बीतो जाय फूल कुम्हलाये, बूँद भर पानी, पूजारी, समझौता, अपशकुन, छाया।
3. नीम चमेली :- नीम चमेली, मन्दिर का देवता, गहरी नदिया नाव पुरानी, प्यास, पुरोहित, लाल लिफाफा, बेकारी का भूत, वरदान, दिल्लीवाला, मुनिया, भूत का भय, गिलहरी के जोडे, कौतुक, सूखी रोटी, काल की देन।
4. रात की रानी :- मन का दीप, छद्मवेशी, सती, नग्न सत्य, एप्रिल फूल, जानवरों का देश, लेखक, आरती, स्मृति की पूजा, सोलहा बेचल मालिनियाँ रे, लेखक की समस्या।

---

1. प्रो. मोहनलाल "जिज्ञासु", हिन्दी गद्य की रूपरेखा, पृ-156.

5· मेघ-मल्लार :- प्रथम छाया, अतृप्त वासना, मन कर यौवन, देश-भक्त, चातक, कलाकार, रहस्यमयी, रूप का मोह, उन्नीस सौ पैंतीस, ललिता की डायरी, महान की पूजा, बुलबुल ।

6· रागिनी :- पुतली उठी, मृत्युंजयी, जीवन का एक दिन, जातिस्मर, सुहाग की बिन्दी, रिक्ता, जीवन-ज्वाला, बहता फूल, मन की देन, कल्पना की देन, अफीम का फूल, चम्मच भर आँसु, आह ।

7· सान्ध्य पूरवी :- बीच भँवर में, तो वह कौन थी, देवी, सभ्यता की देन, आर्त चीत्कार, नारी का दान, मतवाला, रैनन का है सपना, खिन्न पिपासा ।

इन कहानियों के अतिरिक्त "हंस", "विश्वामित्र", "सरस्वती", "चाँद", "वीणा" आदि पत्र-पत्रिकाओं में भी लेखिका की शताधिक कहानियाँ प्रकाशित हैं । वर्गीकरण की दृष्टि से उनकी कहानियों को निम्न रूप में देखा जा सकता है

1· सामाजिक कहानियाँ :- सुहाग की बिन्दी, जीवन ज्वाला, रहस्यमयी, रूप का मोह, उन्नीस सौ पैंतीस, मन की देन, आह आदि ।

2· राजनीतिक कहानियाँ :- देश भक्त, आर्त-चीत्कार आदि ।

3· ऐतिहासिक तथा पौराणिक कहानियाँ :- चम्मच भर आँसु, महान की पूजा, राजपुतानी, कलाकार, जातिस्मर आदि ।

4· मनोवैज्ञानिक कहानियाँ :- अतृप्त वासना, रूप का मोह, प्रतीक्षा, पहचान, सुहाग की बिन्दी, समझौता आदि ।

5· प्रतीकात्मक कहानियाँ :- कलाकार, बुलबुल, प्रथम छाया, नीम-चमेली आदि ।

साहित्यिक मान्यताएँ :-

"साँध्य पूरवी" पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से उषादेवी मित्रा को "सेक्सरिया पुरस्कार" प्राप्त हुआ है ।[1] कलकत्ता में इन्होंने सामाजिक कार्यों में योगदान दिया । "आपने स्त्री शिक्षा के उद्देश्य से "नारी मंगल समिति" की प्रतिष्ठा

1· प्रेमनारायण टंडन; हिन्दी साहित्यकार कोष - हिन्दी सेवी संसार; भाग-1, पृ-41·

की और कई वर्ष तक उसमें संचालक के रूप में कार्य किया ।"। ये आकाशवाणी नागपुर में कई वर्ष तक परामर्श दात्री के रूप में रहीं । "इस महान विदुषी लेखिका का स्वर्गवास 19 सितंबर 1966 को हुआ ।"[2]

कमला चौधरी :-

हिन्दी कहानी के क्षेत्र में आप ख्याति प्राप्त लेखिका है । यों तो कमलाजी ने कविता, कहानी एवं चित्रकारी आदि ललित कलाओं के क्षेत्र में अपनी बहुमुखी प्रतिभा का अधिकारपूर्ण परिचय दिया है, किन्तु कहानी के क्षेत्र में उन्होंने विशेष सफलता प्राप्त की है ।

प्रेरणा के स्रोत :-

नारी स्वातंत्र्य और नारी शिक्षा की हिमायती कमला चौधरी का जन्म "22 फरवरी 1908 ई॰ को लखनऊ में हुआ।"[3] पिता का नाम श्रीराम मनमोहन दयाल और पति होम्योपैथी के डॉ॰जितेन्द्र मोहन चौधरी है । प्रारंभ से ही पढ़ने में रूचि होने के कारण रत्न तथा प्रभाकर की डिग्रियाँ हासिल कीं । ग्यारह वर्ष की आयु से ही कमलाजी के विचार क्रांतिकारी थे और उनको स्वदेशी तथा खादी के प्रति सदैव ही बड़ा प्रेम था । दूरदर्शी तथा मेधावी होने के साथ साथ कमलाजी में अदम्य उत्साह और अनोखी कार्यक्षमता का मणिकांचन योग हुआ है जिसके परिणाम स्वरूप उनके कार्यक्षेत्र की सीमायें राष्ट्रीय साहित्यिक और सामाजिक क्षेत्र में सुदूर फैली हुई हैं । वे आदर्श गृहणी, सक्रिय राजनीतिज्ञ एवं सशक्त लेखिका हैं । कहानी लिखने की प्रेरणा के संबंध में लेखिका का मत है "राष्ट्रपिता पूज्य बापु को आत्म-शुद्धि से सर्वप्रथम कहानी लिखने की प्रेरणा मेरे मन को मिली और कहानी रचना का श्रीगणेश हुआ ।"[4]

1॰ उषादेवी मित्रा, सान्ध्य पूरवी;नर्मदाप्रसाद खरे के परिचय भाग से; पृ-3
2॰ प्रभा सक्सेना, उषादेवी मित्रा:व्यक्तित्व और कृतित्व; पृ-4
3॰ सत्य प्रकाश मिलिंद; हिन्दी की महिला साहित्यकार; पृ-42
4॰ कमला चौधरी; उन्माद; मेरी कहानियों की कहानी भाग से, पृ-21॰

आपके पितामह और पिता राज्य भक्ति केलिए विख्यात थे । ऐसे वातावरण में पलित-पोषित कमलाजी के मन में देश-भक्ति का बीज अंकुरित हुआ । आपने सन् 1930 ई॰ में "सविनय अवज्ञा आन्दोलन" में सक्रिय भाग लिया । स्वतंत्रता आन्दोलन में कई बार तो जेल जाने के कारण इतनी बीमार पड़ गयी कि मरते मरते बचीं । आपने "अखिल भारतीय काँग्रेज कमेटी" 54 वें अधिवेशन में उपाध्यक्षता के पद पर कार्य किया । वर्षों तक महिला काँग्रेस की उपप्रधान व कोषाध्यक्ष रहीं । 1939-40 में आपके भाषणों पर जिला अधिकारियों ने बारम्बार आपत्ति की और 1941-42 में आपको नज़रबन्द कर दिया गया । 1946 में मेरठ काँग्रेस अधिवेशन पर उपस्वागताध्यक्षा के रूप में पंडाल तथा निर्माण कार्य संभाला । 1947 में कॉंस्टीट्यूएंट असेंम्बली की सदस्या निर्वाचित हुई और इसके अनन्तर लोकसभा की सदस्या रही। काँग्रेस कार्य के साथ साथ आप मेरठ की प्रमुख शिक्षा संस्थानों में अग्रणी मेरठ कालेज की कार्य समिति की सदस्या रही हैं । उत्तर प्रदेश के समाज कल्याण बोर्ड तथा राज्य की लोक साहित्य विकास समिति की सदस्या भी रही हैं । 1929 में महिला संघ की स्थापना हुई और आप उसकी मंत्री निर्वाचित हुई । अत: आपके जीवन के अनुभव वैविध्यपूर्ण हैं जो अपकी रचनाओं में प्रतिबिंबित हुई हैं ।

<u>रचना दृष्टि</u> :-

श्रीमती कमला चौधरी में साहित्यिक एवं कलात्मक प्रतिभा प्रारंभ से थी । विवाहोपरान्त काव्य मर्मज्ञ पति से आपकी साहित्यिक अभिरूचि को प्रेरणा एवं प्रोत्साहन मिला और साहित्य साधना का पथ सरल तथा सुगम हो गया । कमलाजी की सर्वप्रथम कहानी "पागल" थी जिसका प्रकाशन 1933 ई॰ में "विशाल भारत" में हुआ था । "विशाल भारत" के संपादक श्री बनारसीदास चतुर्वेदी के प्रशंसा पत्र ने आपको दूसरी कहानी रचना केलिए प्रोत्साहित किया । फलस्वरूप "भिखमंगे की बिटिया" की सृष्टि हुई और प्रकाशनार्थ भेज दी गयी । इस बार मुख्य संपादक और दोनों सहकारी संपादक के लिखे प्रशंसा पत्र भी आपको मिले । तदुपरान्त निरन्तर आपकी कहानियाँ "हंस", "विशाल भारत" आदि पत्रपत्रिकाओं में समय समय पर प्रकाशित होती रहीं । उनकी कहानियों के अनुवाद अनेक भारतीय भाषाओं

में हो चुके हैं । हिन्दी, उर्दु तथा अवधी भाषा पर आपका समानाधिकार है । बाल-साहित्य, आधुनिक मनोवैज्ञानिक कहानी तथा हास्य-व्यंग्य पर आपकी लेखनी का चमत्कार अनुपम है ।

कमलाजी की कहानियों में भारतीय पारिवारिक जीवन और उसकी विविध समस्याएँ केन्द्रबिन्दु बन कर आती हैं । जाति, धर्म, संप्रदाय, वर्ग, प्रेम, घृणा, आचार-व्यवहार, नैतिकता, विनोद आदि कई ऐसे तथ्य हैं जो अनुभूति की ऐकान्तिक गहराई के साथ इनकी कहानियों में व्यक्त हुए हैं । अछूतों की तत्कालीन स्थिति (पागल) नारी का निस्वार्थ प्रेम, (त्याग), पुत्र-पुत्री के बीच का फर्क (आँखें खुली), अन्तर्जातीय विवाह (भ्रम) भारतीय विधवाओं की दुरवस्था (कन्यादान, गीता), तथा नारी हृदय का अन्तस्वर (अधूरा चित्र) आदि इनकी कहानियों की विशिष्ट वस्तु योजना है ।

कमलाजी की अधिकांश आरंभिक कहानियाँ दुखान्त हैं । ये दुखान्त कहानियाँ वीणा की दर्दमय झंकार के समान कुछ अधिक मीठी हो गयी हैं वैसे उनका जीवन के प्रति दृष्टिकोण काफी स्वस्थ है और आधुनिक मनोविज्ञान के तथ्यों से प्रेरित है । उनकी एक मनोवैज्ञानिक कहानी "स्वप्न" उनके प्रेम के प्रति आधुनिक मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण को स्पष्ट करती हुई कहती है, मानुषिक प्रेम द्वारा ही तुम्हें दिव्य प्रेम का परिचय मिलेगा । प्रवृत्तियों के दमन करने से नहीं, बल्कि उन्हें अध्यात्मिक रूप में परिवर्तित करने से ही वास्तविक शान्ति की प्राप्ति होगी । वस्तुत: यह उपदेश समस्त पाठकों के लिए बड़े ही कौशल से कहानी में व्यंजित हुआ है, जो अपना प्रभाव डाले बिना नहीं रहता । उनकी सभी प्रकार की कहानियाँ जहाँ मनोरंजन के साधन हैं, वहाँ वे प्रेरक भी हैं, वे सन्देश-वाहिनी भी हैं ।

श्रीमती कमला चौधरी की अधिकांश कहानियाँ चार संकलनों में संकलित हैं । इनमें संकलित कहानियों के नाम क्रमश: अधोलिखित हैं :-

1. उन्माद :- साधना का उन्माद, भ्रम, मधुरिमा, भिखमंगे की बिटिया, पागल, श्रमी की अभिलाषा, मेरी रानी, कर्कशा, प्रायश्चित, त्याग, आँखें खुलीं ।

2· यात्रा :- यात्रा, अधूरा चित्र, गण्डूषा, ममता, मातृहीना, डयरी का एक पृष्ठ, स्मृति, अनाथालय, चित्रकार, जन्म-दिन, पथिक, दिग्विजय, महान्, टेक की रक्षा, वरमाल, हार, रूपा, अपमान, पटाक्षेप, त्याजा, समस्या ।

3· पिकनिक :- स्वप्न, करूणा, वीणा, कर्त्तव्य, पत, रोना, सुरिया, पतन, पराजय, कन्यादान, बलिदान, सुधिया, गीता, कैलासा दीदी, पिकनिक ।

4· प्रसादी कमण्डल :- निराधार प्रतीक्षा, बैरिस्टर साहब, दृष्टि का मूल्य, पुराना पत्र, मिसेज़ चोपडा, छब्बीस जनवरी, दादी ब्लेकन, आवरण, अज़ाब, आवारा, तीन दृश्य, प्रसादी कमण्डल ।

आलोच्य कहानियों को मुख्य रूप से छः वर्गों में विभक्त किया जा सकता है -

1· सामाजिक कहानियाँ :- साधना का उन्माद, भ्रम, मधुरिमा, आँखें खुलीं, पतन, कन्यादान, मेरी रानी, कर्कशा आदि ।

2· ऐतिहासिक तथा पौराणिक कहानियाँ :- बलिदान, अधूरा चित्र, टेक की रक्षा आदि ।

3· उपदेशात्मककहानियाँ :- पराजय, सुधिया, स्मृति, पटाक्ष आदि ।

4· हास्य रस की कहानियाँ - पिकनिक, गण्डूषा आदि ।

5· मनोवैज्ञानिक कहानियाँ :- स्वप्न, हार, रोना, वीणा आदि ।

6· भाव प्रधान कहानियाँ :- यात्रा, चित्रकार, रूपा, मातृहीना, कर्कशा आदि ।

साहित्यिक मान्यताएँ :- सन् 1937 में आयोजित "अखिल भारतीय गल्प सम्मेलन" की आप स्वागताध्यक्षा रहीं ।

<u>कमला त्रिवेणी शंकर</u> :-

आदर्शोन्मुख यथार्थवादी लेखिका श्रीमती कमला त्रिवेणी शंकर का नाम विकास कालीन लेखिकाओं में विशेष रूप से उल्लेखनीय है । नारी के मातृत्व के रूप को सर्वाधिक गौरवान्वित करने में आलोच्य कालीन लेखिकाओं में कमलाजी सिद्धहस्त मानी जाती है । उनका जन्म 1920 ई· में हुआ था।आपने हाईस्कूल की शिक्षा प्राप्त की ।

रचना दृष्टि :-

श्रीमती त्रिवेणी शंकर ने अनेक सामाजिक कहानियों की रचना की है, जो समय समय पर विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रही है । आपकी पहली रचना 1938 में प्रकाशित हुई । आधुनिक भारतीय समाज के शिक्षित, संपन्न उच्च वर्ग के सामाजिक जीवन के किसी न किसी मार्मिक समस्या का सूक्ष्म चित्रण तथा त्याग करूणा एवं आदर्शवादिता के आधार पर उसका सुन्दरतम समाधान ही आपकी अधिकांश कहानियों की विषयवस्तु है । नारी जीवन की विविध समस्याएँ एवं उनके संदर्भ में नारी के मन का सूक्ष्म अध्ययन उनकी कथानकों का प्रमुख विषय है । इनमें नारी के अन्तस की वेदना एवं विषाद के अतिरिक्त नारी तथा पुरूष दोंनों के तप: पूत निस्वार्थ एवं त्यागमय व्यक्तित्व की विविध झाँकियाँ प्रस्तुत की गयी हैं । इस प्रकार उन्होंने आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का आश्रय लेते हुए दाम्पत्य जीवन की सुखदु:खमयी स्थितियों के सहज एवं हृदयस्पर्शी चित्र अंकित किये हैं । पारिवारिक सामाजिक चित्रण के अतिरिक्त लेखिका ने इतिहासमयी समस्याओं एवं राष्ट्रव्यापी आन्दोलनों के संकेत भी प्रस्तुत किये हैं ।

उनकी कहानियों के दो ही संग्रह प्रकाशित हुए हैं - "पुकार" और "जयमाल" । उनमें संकलित कहानियाँ निम्नलिखित हैं :-

1. पुकार :- रागिनी, नारी का स्वाभिमान, त्याग का सौदा, नारीत्व, प्रायश्चित., फाउण्डेनपेन, समझौता, मातृत्व की छाया में, सन्तोष, घर की लाज, पुकार, राजद्रोही का प्रेम, मन का मोह, अपराजिता, एकरात, तृप्ति, दृष्टि भ्रम, अन्तिम विदा ।
2. जयमाल :- जयमाल, सरोज, माँ, मूक-सेवा, विवाह-विज्ञापन, माँ का आँचल, माँ, लाकेट, परख, राजद्रोही का प्रेम, भाई, देश-भक्त, अमीर की बेटी, नारी, तपस्या, अपराध, नर्गीस, छोटी माँ, रक्षा बन्धन, आत्मा की पुकार ।

कथानक के आधार पर आपकी कहानियों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से संभव है :-

1. पारिवारिक कहानियाँ :- अमीर की बेटी, समझौता, छोटी माँ, मन का मोह, आदि ।

2· सामाजिक कहानियाँ :- कर्तव्य, मातृत्व की छाया में, अपराजिता, प्रायश्चित, दृष्टि भ्रम आदि ।

3· मनोवैज्ञानिक कहानियाँ :- माँ का आँचल, माँ, नारी, आदि ।

4· राजनीतिक कहानियाँ :- जोस्यना, अपराध, लाकेट, मूक सेवा आदि ।

5· जासूसी कहानियाँ :- लाल हवेली ।

चन्द्रकिरण सौनरेक्सा :-

प्रगतिशील विचारों वाली चन्द्रकिरण सौनरेक्सा हिन्दी कहानी लेखिकाओं में अग्रगण्य है । मध्यवर्गीय समाज की अन्तरंग समस्याओं एवं नारी मनोविज्ञान की सफल और मुख्य अभिव्यंजना के दृष्टिकोण से चन्द्रकिरण सौनरेक्सा का नाम उल्लेखनीय है ।

प्रेरणा के स्रोत :-

श्रीमती चन्द्रकिरण सौनरेक्सा का जन्म 1920 ई· में नौशहरा, पेशावर जिला में हुआ ।"[1] आपके पिता का नाम श्री नामफल मांगलिक है । पिता आर्य समाजी होने के कारण लडकियों की थोडी बहुत शिक्षा के समर्थक थे । अतएव अपनी बच्ची की पढाई की उचित व्यवस्था की । आप सन् 1932 तक हाईस्कूल में नवीं श्रेणी में पढती रही, उसी समय एकायक माता की मृत्यु हो जाने के कारण आपका पढना छूट गया । फिर घर पर ही इधर उधर से पुस्तकें माँग कर स्वयं पढी । अपने व्यक्तिगत प्रयास से आपने प्रथमा, विशारद और साहित्य रत्न की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कीं । स्वाध्याय के बल पर आपने हिन्दी के अतिरिक्त बंगला, उर्दु, गुजराती आदि विभिन्न भाषाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया है । आपके पति श्री सौनरेक्सा हिन्दी के सुप्रसिद्ध आलोचक तथा उत्तर प्रदेश में डिप्टी कलक्टर थे ।

आपको प्रारंभ से ही रवीन्द्र, बंकिम तथा प्रेमचन्द के उपन्यास एवं कहानियाँ बहुत प्रिय थीं । उर्दु कहानियों के अध्ययन से आपकी यह भावना बन गयी थी कि

1· डॉ·रामकली शराफ; आधुनिक हिन्दी कथा लेखिकाएँ; पृ-192·

रवीन्द्र, प्रेमचन्द बनना तो संभव नहीं, परन्तु कहानियाँ लिखना कठिन नहीं । आपकी इस दृढ भावना ने ही आप को कहानी लिखने की प्रेरणा प्रदान की ।

रचना-दृष्टि :-

श्रीमती सौनरेक्सा ने ग्यारह वर्ष की आयु में कहानी लिखना प्रारंभ किया । आपकी पहली कहानी "घीसु चमार" सन् 1931 में कलकत्ता की "विजय" मासिक पत्रिका में प्रकाशित हुई । तदुपरान्त भाई किशोरजी से प्रोत्साहन पाकर आप विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशनार्थ अपनी कहानियाँ भेजने लगीं । अब लगभग 400 कहानियाँ देश की विभिन्न प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं । आप की कई कहानियाँ बंगला, मराठी, रूसी भाषाओं में अनूदित हुई है । अपनी रचना-प्रक्रिया के विषय में उन्होंने स्वयं लिखा है - "सन् सैंतीस-अडतीस से मैं नियमित रूप से लिखने लगी । अपने आस-पास के सीमित दायरे में जब जहाँ भी व्यक्ति के प्रति व्यक्ति का अथवा समाज का अन्याय दृष्टिगत होता वहाँ ही अश्वत्थामा के व्रण की तरह जो विकलन अन्तर में उठती थीं उसे प्रकट करने का एक-मात्र उपाय लेखनी से उस शोषित जीव के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करना ही था ।"[1]

सौनरेक्साजी ने अपनी कहानियों में सामाजिक कटुता के प्रति विद्रोहात्मक भावों की अभिव्यक्ति की है । श्री·प्रभाकर माचवे के शब्दों में "भारतीय जीवन की टूटती हुई "गिरस्ती" नारी की तकलीफों और आर्थिक विषमता की रस्साकशी में जीवन का आधि-व्याधि-जर्जरित होना, यह सब बहुत ही यथार्थ रूप लेकर उनकी कहानियों में उतरा है ।"[2] उन्होंने भारतीय जन-जीवन की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई विषमता के परिणाम स्वरूप मानवता के मानसिक, दैहिक एवं बौद्धिक संघर्ष का चित्रण किया है । समाज की घातक अर्थ व्यवस्था पर कटु प्रहार उन्होंने किये हैं जो कतिपय विशिष्ट व्यक्तियों को आवश्यकता से अधिक धन-संपन्न बनाकर एक ओर अनीति एवं अनाचार को जन्म देती है और दूसरी ओर समाज के अधिकांश

1· डॉ·रीता शुक्ल; हिन्दी कहानी के विकास में महिला कथाकारों का योगदान, पृ-166·

2· वीणा, मार्च 1946, पृ-212·

व्यक्तियों को तुच्छ कीटों की भाँति निकृष्ट जीवन व्यतीत करने केलिए बाध्य करती है। लेखिका ने जीवन एवं समाज के अनुभूतिपरक यथार्थ चित्रांकन को कलाकार का लक्ष्य माना है। अपने पति श्री कान्तिचन्द्र सौनरेक्सा के कहानी-संग्रह "चौराहा" की समीक्षा करते हुए लेखिका ने अपने उक्त विचारों को इन शब्दों में व्यक्त किया है - "राजा रानी की कथाओं और कोरे मनोरंजनमय उपदेशों के उद्देश्य के कहानी लिखने का युग बीत चुका है। आज के अधिकाँश हिन्दी लेखक साधारण मध्य वर्ग को विषय श्रेणी के विषम जीव हैं। गरीबी, बेबसी और पेट की मार उनके आये दिन के निजी अनुभव होते हैं। उनकी ओर से आँखें मूँद कर हवाई महलों में निवास करनेवालों की कोरी भावुक कृतियों में हम कला की देह का कर-स्पर्श भले ही पा लें, पर उसके प्राणों का स्पंदन नहीं पा सकेंगे।"[1] लेखिका ने अपनी कहानियों में उक्त विचारों को कार्यान्वित किया है।

"आदमखोर" आपका एकमात्र प्रकाशित कहानी संग्रह है। चन्द्रकिरण जी ने केवल कहानी ही नहीं लिखी वरन् रेखाचित्र, उपन्यास और एकाँकी भी लिखा है। प्रारंभ में आप कविताएँ भी लिखती थीं। "आदमखोर" में संकलित कहानियाँ निम्नलिखित हैं :-

आदमखोर :- गृहस्थी का सुख, छलिया, अकीला, चाय में नींबू, रूपया, जीजी, मर्द, कमीनों की ज़िन्दगी में, बेजुबाँ, दो रोटियाँ, आदमखोर, परंपरा।

कथानक के विचार से आपकी कहानियों का विभाजन निम्न प्रकार से संभव हैं :-

1. पारिवारिक कहानियाँ :- गृहस्थी का सुख, कमीनों की ज़िन्दगी, परंपरा, अफसर का बेटा आदि।
2. समाजवादी कहानियाँ :- आदमखोर, परंपरा, बेजुबाँ, दूसरा बच्चा आदि।
3. ऐतिहासिक तथा पौराणिक कहानियाँ :- रूपया।

साहित्यिक मान्यताएँ :- कहानी संग्रह "आदमखोर" पर सन् 1947 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन का "सेक्सरिया पुरस्कार" मिला। सन् 1950 से लंदन विश्वविद्यालय की

---

1. डॉ. ऊर्मिला गुप्ता, हिन्दी कथा साहित्य के विकास में महिलाओं का योग, पृ-230

बि॰ए॰ कक्षाओं में उनकी कहानियाँ पढाई जा रही हैं ।"[1] "आदमखोर" संग्रह की पहली कहानी को चेकोस्लोवाकिया की साहित्य अकादमी की ओर से एशिया - आफ्रिका की सर्वश्रेष्ठ कहानी स्वीकार किया गया ।

श्रीमती चन्द्रवती ऋषभसेन जैन :-

श्रीमती चन्द्रवती ऋषभसेन जैन बेचन शर्मा उग्र तथा चतुरसेन शास्त्री की परंपरा की ही कहानीकार हैं । नारी की समस्याओं को लेकर कहानियाँ प्रस्तुत कर हिन्दी कहानी साहित्य को विकसित करने में चन्द्रवतीजी का योगदान अविस्मरणीय है ।

प्रेरणा के स्रोत :-

श्रीमती चन्द्रवतीजी का जन्म सन् १९०१ ई॰ मई महीने में दिल्ली के एक सुशिक्षित परिवार में हुआ था । उनके पिता डॉ॰मोतीसागर पहले देश के लोकप्रिय वकील बने, बाद में "पंजाब हाईकोर्ट के जस्टिस और साथ ही दिल्ली यूनिवेर्सिटी के वाइस चॉंसलर भी । चन्द्रवती की आँखों ने जो कुछ सब से पहले गौर से देखा वह था अपने पिता का विशाल पुस्तकालय । श्रीमती चन्द्रवती के शब्दों में "इन पुस्तकों के साथ ही मैं देखती कि मेरे न्यायाधीश पिता अक्सर कुछ लिखते हैं, अपने स्टैनों को लिखाते हैं । मैं सोचती कि क्या मैं भी लिख सकती हूँ ? मेरा मन कहता - क्यों नहीं लिख सकती मैं ? और एक दिन तो मैं ने अपने पिता के लिखे कागज़ों पर भी बहुत कुछ लिख दिया था, लकीरें खींच दी थीं । लेखन कला की इस प्रथम साधना पर मेरे पिताजी के सैक्रेटरी ने मुझे डाँटा था कि मैं ने सर साहब का कीमती कलम खराब कर दिया है, पर मेरे पिताजी ने तो मेरी लिखाई मुझे दाद दी । कहा था तु बडा सुन्दर लिखती है बेटी ।"[2] इस प्रकार चन्द्रवतीजी लेखन के संस्कार लेकर बडी हुई ।

आपके पति ऋषभसेन भगवानदास कलाप्रेमी थे । इसलिए उनसे आपको

१॰ डॉ॰उमेश माथुर; आधुनिक युग की हिन्दी लेखिकायें; पृ-339

2॰ सत्यप्रकाश मिलिन्द, हिन्दी की महिला साहित्यकार; पृ-74॰

प्रोत्साहन मिला । जब उनकी कलम पूरे वेग से चल रही थी उनकी सन्तान की मृत्यु हो गयी । मृत्यु ने उसके मन को झकझोर दिया और कुछ ऐसा आघात लगा कि उनका लिखना ही बन्द हो गया । उनकी साहित्यिक अभिरूचि ही कुंठित हो गयी । उसके बाद उन्होंने कुछ कविताएँ अवश्य लिखीं जिनमें उनका नारीत्व मुखर हो उठा है । पति की मृत्यु के बाद आपका जीवन मसूरी के पासवाले पहाड़ी गाँवों में लगा रहा है । उन्होंने अपने जीवन के संस्मरण लिखने का कार्य आरंभ किया और अपना कहानी-संग्रह भी प्रकाशित किया । मोपासाँ, चेखव, प्रेमचन्द आदि आपके प्रिय लेखक हैं ।

रचना दृष्टि :-

श्रीमती चन्द्रवती 16-17 वर्ष की उम्र से कुछ लिखने लगी । 1939-40 में आकर उनकी रूख कहानी लेखन की ओर हुआ और इसमें आप को काफी सफलता मिली । अंग्रेज़ी, बंगला, उर्दु, मराठी, कन्नड और गुजराती भाषाओं में आपकी कहानियों के अनुवाद हुए हैं । जीवन में जिन घटनाओं ने चन्द्रवतीजी को सब से अधिक प्रभावित किया है उन्हीं को उन्होंने संवार कर साहित्य में रख दिया है । नींव की ईंट कहानी संग्रह की भूमिका में लेखिका ने स्वयं लिखा है - "इन कहानियों में कल्पना के करिश्मों का अभाव है । ये सब मेरे या मेरे साथियों के जीवन की घटनाएँ हैं ।"[1]

आपकी कहानी में भारतीय पारिवारिक जीवन अपने विविध रूपों में उपस्थित हुआ है । स्त्री रूप और उनका मोह, पति-पत्नी का प्रेममय जीवन, देवर-भाभी संबंध, आदर्श गृहिणी, परिवार और नौकर आदि विषय इनकी कहानियों का आधार बिन्दु है । वेश्याओं की जीवन-स्थिति का यथार्थ चित्रण के साथ साथ पुरूषों की चरित्र हीनता का भी विश्लेषण आपकी कहानियों में हैं । आपकी कहानियों का एक संग्रह "नींव की ईंट" नाम से प्रकाशित हुआ है जिनमें निम्नलिखित कहानियाँ संकलित हैं ।

---

1. चन्द्रवती ऋषभसेन जैन, नींव की ईंट, भूमिका भाग से , पृ-5

नींव की ईंट :- झींक्ती भिखारिन, मेरी चुरिया उसके हाथ में थी, अंजनहारी, वह भीख माँगती आयी, जब घर में चोर था, है न यही बात, वे तीन दिन, गुलाबी चुनरिया, भैया की डायरी, नींव की ईंट, गरीब का ईमान, धवल छत्र की छाया में, तीन साल पहले की बात, जंगू की बात ।

कथानक के आधार पर आपकी कहानियों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है:-

1. पारिवारिक कहानियाँ :- झींक्ती भिखारिन, मेरी चुरिया उसके हाथ में, गुलाबी चुनरिया ।
2. सामाजिक कहानियाँ :- झींक्ती भिखारिन, है न यही बात, वे तीन दिन, जंगु की बात आदि ।
3. पक्षियों के स्वभाव संबंधी कहानियाँ :- अंजनहारी ।

साहित्यिक मान्यताएँ :-

"नींव की ईंट" पर आपको सन् 1943 में "सेक्सरिया पारितोषिक" प्राप्त हुआ था ।"[1] सार्वजनिक कार्यों एवं साहित्यिक सेवा में आपकी विशेष रूचि थी । सन् 1941 में आपने "दीदी" पत्रिका की प्रधान संपादिका के रूप में भी कार्य किया था ।"[2]

तारा पाँडे :-

सामाजिक इतिवृत्त को लेकर कहानी लिखनेवाली लेखिकाओं में तारा पाण्डे का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है ।

प्रेरणा के स्रोत :-

आपका जन्म दिसंबर 1915 ई॰ में दिल्ली में हुआ था । आपके पिता पं॰ मनमोहनजी जोशी पब्लिक-वर्क्स डिपार्टमेंण्ट में इंजिनीयर थे । शिक्षा सब

---

1. श्रीमती उमेश माथुर, आधुनिक युग की हिन्दी लेखिकाएँ, पृ-309.
2. डॉ॰प्रेमनारायण टंडन, साहित्यकार कोश, पृ-103.

घर पर ही हुई । हिन्दी, अंग्रेज़ी तथा बंगाली का अच्छा ज्ञान था । ताराजी अद्भुत साहित्यिक प्रतिभा-संपन्न नारी थी ।

रचना दृष्टि :-

।9 वर्ष की अवस्था में आपका काव्य संग्रह "सीकर" ।1934। प्रकाशित हुआ । "सरस्वती", "विशाल भारत", "कर्मयोगी", इत्यादि में इनकी कविताएँ ।929 से प्रकाशित होती रही हैं । आपके द्वारा रचित कहानियाँ "उत्सर्ग" शीर्षक से प्रकाशित हैं । ये कहानियाँ सामाजिक हैं । श्रीयुत प्रेमचन्द ने उपर्युक्त संकलन की भूमिका में इन कहानियों में निहित विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए लिखा है -"श्रीमती तारा पाण्डे कवि है और कवि का हृदय और कवि की आँखें रखती हैं । उन्होंने मानव जीवन को कवि की सहृदय और कलात्मक दृष्टि से देखा है । और उनकी इन सभी रचनाओं में सद्भावना की प्रेरणा भरी हुई है । उनका संसार कपट और स्वार्थ का संसार नहीं, प्रेम और आदर्श का संसार है ।"[1]

"उत्सर्ग" की कहानियों में आदर्शवादिता को मुख्य स्थान देते हुए मनोवैज्ञानिक स्वाभाविकता की उपेक्षा की गयी है । लेखिका का उद्देश्य इन कहानियों के द्वारा नारी जाति के गौरव को व्यक्त करना है । नारी-हृदय की कोमल आशाएँ और निराशाएँ, वेदनाएँ और अभिलाषाएँ अपनी संपूर्ण मर्यादाओं के साथ इसमें चित्रित हैं । पत्नी, माता, भगिनी आदि विभिन्न रूपों में स्त्री जाति द्वारा पुरूष के प्रति उत्सर्ग ही उक्त कहानियों का इष्ट है । "उत्सर्ग" में तेरह कहानियाँ संकलित हैं -
उत्सर्ग :- उत्सर्ग, राखी बन्द भाई, विमाता, प्यास, वन्ध्या, जल में मीन प्यासी, सौन्दर्य, मीमी, दारोगा की बेटी, भ्रम, माँ, पिता और पुत्री, बालिका ।

विषयवस्तु के आधार पर कहानियों का वर्गीकरण इस प्रकार हैं :-

।· पारिवारिक कहानियाँ भ्रम, उत्सर्ग, माँ आदि ।
2· सामाजिक कहानियाँ मीमी, जल में मीन प्यासी आदि ।

।· तारा पाण्डे, उत्सर्ग, - दो शब्द से उद्धृत·

3· प्रतीकात्मक कहानी :- बालिका ।

4· राजनीतिक कहानी :- दारोगा की बेटी ।

साहित्यिक मान्यताएँ :-

"1942 में सेक्सरिया पुरस्कार प्रदान किया गया ।"[1] आप नैनीताल की कई प्रमुख सार्वजनिक संस्थाओं की सदस्या रहीं । नैनीताल में 1936 में "महिला शिल्प कला भवन" स्थापित किया और 1955 तक निरंतर संचालित करती रहीं । किंग एडवेड मैमोरियल सैनिटोरियम भुवाली की प्रबन्धकारिणी थी । 1936 से 1940 तक आप उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा प्रकाशित पत्रिका "हक" के संपादक मंडल में रहीं । वे यू·पी·एजुकेशन कमेटी की सभानेत्री भी थी ।

तेजरानी पाठक :-

श्रीमती तेजरानी पाठक आदर्शोन्मुख यथार्थवादी कहानियों की रचना द्वारा हिन्दी कहानी साहित्य के विकास में महिला कहानीकारों में अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं ।

प्रेरणा के स्रोत :-

तेजरानी पाठक का जन्म लखीमपुर खीरी में हुआ था । अपनी प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई । उसके बाद उसने बनारस के सुप्रसिद्ध महिला क्रास्थवेट कॉलेज में बि·ए· तक शिक्षा प्राप्त की । तेजरानी की माँ विमाता थी । विमाता होते हुए भी उन्होंने तेजरानी को यह अनुभव नहीं होने दिया कि वह उनकी माँ नहीं, विमाता है । तेजरानी जी के शब्दों में - "जिनकी असीम कृपा से, मैं इस योग्य बनी हूँ । विमाता होने पर भी उन्होंने मुझे यह अनुभव नहीं होने दिया कि मेरी माँ नहीं - विमाता है और जो स्वयं अनेक कष्ट उठा कर मेरी उन्नति में लगी रही है ।"[2] विवाहोपरान्त हिन्दी प्रेमी पति से प्रोत्साहन प्राप्त कर साहित्य सेवा

1· सत्यप्रकाश मिलिन्द, हिन्दी की महिला साहित्यकार, पृ-86

2· तेजरानी पाठक, एकादशी- समर्पण भाग से;

में लग गयी । साहित्य प्रेम उनकी अपनी पैतृक-संपत्ति है । प्रेमचन्द की कहानी कला से प्रभावित होकर उन्होंने आदर्शोन्मुख यथार्थवादी कहानियों की रचना की है । भिन्न भिन्न पत्रिकाओं में आपकी कहानियाँ प्रकाशित होती रही हैं ।

रचना-दृष्टि :-

श्रीमती तेजरानी ने "हृदय का काँटा" शीर्षक उपन्यास के अतिरिक्त "अंजली" और "एकादशी" शीर्षक कहानी संग्रह भी प्रस्तुत किए हैं । इन कहानियों में मानवीय व्यवहारों के विविध यथार्थवादी एवं आदर्शवादी चित्र अंकित किए गए हैं । श्रीयुत नर्मदाप्रसाद खरे ने "एकादशी" की भूमिका में श्रीमती पाठक की कहानियों के उद्देश्य के संबंध में लिखा है - "तेजरानी की कहानियों की आत्मा उज्ज्वल है । इनकी कहानियों से हमारा मनोरंजन तो होता ही है, साथ ही उनसे शिक्षा भी मिलती है । जिस प्रकार टालस्टॉय की कहानियाँ आदर्शवादी हैं, उसी प्रकार इनकी कहानियों में भी आदर्शवाद है ।"[1] धनिकों के अहं, भोग-विलास तथा अत्याचारों द्वारा प्रताडित और शोषित निर्धनों की दयनीय दशा का चित्रण, निस्वार्थ त्याग, रोमानीप्रेम, पितृ-स्नेह, मातृ-स्नेह आदि उनकी कहानियों की विषयवस्तु है । अत्याचारी अभिजात वर्ग, रूढिवादी व्यक्तियों, समाज के चाटुकारों, दूसरों का घर-फूँक कर तमाशा देखनेवाले चुगलखोरों तथा लकीर पीटनेवाले संकीर्ण विचारकों केलिए पर्याप्त प्रेरक सन्देश कहानियों में निहित है । लेखिका ने समाज-सुधार की भावना को प्रत्यक्ष शैली में व्यक्त करने के अतिरिक्त उसे प्रसंगानुसार व्यंजित भी रखा है । "अंजली" कहानी संग्रह में आठ और "एकादशी" में ग्यारह कहानियाँ संग्रहीत हैं जिनके शीर्षक निम्नलिखित हैं ।

1. अंजली :- लाल कुरता, बदला, विमाता, सन्यासिनी, दो शब्द, प्लानचेट, मक्खियों का छत्ता, फिलोसोफर ।
2. एकादशी :- परिचय हृदय, श्यामा, मेरी डायरी, मुसलमान, अपराधी कौन है, गरीबी की बू, भिखारी, सोने का पिंजडा, अपना घर, निर्बल के बल,

---

1. व्यथित हृदय, हिन्दी की श्रेष्ठ लेखिकाएँ, पृ-78.

गुप्ताकर्षण ।

कथानक के आधार पर कहानियों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है :-

1· सामाजिक कहानियाँ :- दो शब्द, गुप्ताकर्षण, विमाता, सन्यासिनो, मक्खियों का छाता, गरीब की बू, अपना घर ।
2· ऐतिहासिक कहानी :- बदला ।
3· राजनीतिक कहानियाँ :- परिचय हृदय, लाल कुरता, सोने का पिंजडा, मुसलमान, मिट्टी का तेल ।
4· पशुओं के स्वभाव संबंधी कहानी :- श्यामा ।

महादेवी वर्मा :-

श्रीमती महादेवी वर्मा ने काव्य-रचना के अतिरिक्त गद्य रचना के क्षेत्र में भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है । "अतीत के चलचित्र" और "स्मृति की रेखाएँ" उनकी गद्य-रचनाएँ हैं जिनमें उन्होंने संस्मरणात्मक रेखाचित्रों को स्थान दिया है । रचना-शिल्प की दृष्टि से ये रेखाचित्र कहानी के अधिक निकट हैं । रेखाचित्र के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए डॉ·नगेन्द्र लिखते हैं कि "आज चित्रकला का यह शब्द, साहित्य में आया तो इसकी परिभाषा भी स्वभावत: इसके साथ आयी अर्थात् रेखाचित्र एक ऐसी रचना केलिए प्रयुक्त होने लगा जिसमें रेखाएँ हों, पर मूर्त रूप अर्थात् उतार-चढाव दूसरे शब्दों में, कथानक का उतार-चढाव आदि न हो तथ्यों का उद्घाटन मात्र हो । पूर्व आयोजन अथवा आयोजित विकास न हो । रेखाचित्र में तथ्य खुलते जाते हैं, संयोजित नहीं होते ।"[1] इस तरह यहाँ रेखाचित्र के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए दूसरी ओर डॉ·नगेन्द्र यह भी मानते हैं कि "रेखाचित्र को कहानी से अलग नाम और रूप देने की कोशिश बेकार है ।"[2] उनका कहना है कि "यह धारणा गलत है कि घटना की प्रधानता कहानी को रेखाचित्र से पृथक करती है । कहानी केलिए

1· डॉ·नगेन्द्र, विचार और विश्लेषण, पृ-81
2· " पृ-82

घटना बिलकुल अनिवार्य नहीं है और इसके अतिरिक्त घटना केवल स्थूल और भौतिक ही हो यह भी ज़रूरी नहीं है वह मानसिक भी हो सकती है ------इसलिए रेखाचित्र कहानी का ही स्वरूप है ।"[1] अत: इनकी समीक्षा कहानी के तत्वों की दृष्टि से ही करेंगे ।

प्रेरणा के स्रोत :-

"श्रीमती महादेवी वर्मा का जन्म 1907 ई॰ में फर्रुखाबाद में एक सुसंपन्न परिवार में हुआ था ।"[2] इनके पिता श्री गोविन्द प्रसाद वर्मा जो कि एम॰ए॰,एल॰एल॰बी॰ थे और इन्दौर के "डेली कॉलेज" में प्राध्यापक के रूप में कार्यरत थे । इनकी माता श्रीमती हेमरानी देवी एक विदुषि, कलाप्रिय तथा धर्मपरायण नारी थी । इनके नाना ब्रज भाषा के बडे अच्छे कवि और भक्त थे । सन् 1912 ई॰ में इन्दौर के मिशन-स्कूल में महादेवी की शिक्षा आरंभ हुई । इसके साथ-साथ घर पर भी एक पंडित, एक मौलवी, एक चित्र शिक्षक और एक संगीत शिक्षक के माध्यम से विभिन्न भाषाओं और कलाओं की शिक्षा दी जाने लगी । बाद में क्रास्थवेट गर्ल्स कॉलेज प्रयाग से बि॰ए॰ और 1933 में सम्मान पूर्वक एम॰ए॰ किया । बचपन से ही घर में गाये जानेवाले गीतों और भजनों से साहित्यिक प्रेरणा मिली । अत: कम उम्र में ही कविताएँ लिखना प्रारंभ भी की । 1933 में ये प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधान अध्यापिका नियुक्त की गयीं । अपने साहित्यिक और सामाजिक कार्यों के साथ वे देश के स्वतंत्रता-आन्दोलन में भी निरन्तर यथायोग्य सहयोग देती रही थीं ।

सात-आठ वर्ष की आयु में ही इन्होंने ब्रजभाषा में अनेक पदों एवं मुक्तकों की रचना की, किन्तु शीघ्र ही श्री मैथिलीशरण गुप्त की खडी बोली की कविताओं से प्रभावित होकर आप ने भी खडी बोली को ही अपनी कविताओं का माध्यम बनाया । खडीबोली में इनकी प्रथम पूर्ण रचना "दिया" है जो ग्यारह वर्ष की आयु में लिखी गयी थी । आगे चलकर इनकी अनेक कविताएँ "आर्य महिला", "महिला जगत्" और

1॰ डॉ॰नगेन्द्र, विचार और विश्लेषण , पृ-80
2॰ डॉ॰धीरेन्द्र वर्मा तथा अन्य लेखक; हिन्दी साहित्य कोश भाग-2, पृ-408॰

"चाँद" में प्रकाशित हुई । सन् 1920 ई॰ में इन्होंने करूण रस का एक खण्ड काव्य भी लिखा जो अप्रकाशित एवं अप्राप्य है । नीहार, रश्मि, नीरजा, सान्ध्यगीत, दीपशिखा, यामा, अतीत के चलचित्र, श्रृंखला की कड़ियाँ, हिन्दी का विवेचनात्मक गद्य, स्मृति की रेखाएँ, क्षणदा, पथ के साथी आदि उनकी प्रमुखतम रचनाएँ हैं ।

रचना-दृष्टि :-

महादेवी जी ने काव्य-क्षेत्र की भाँति कथा-क्षेत्र में भी उच्च कोटी की प्रतिभा का परिचय दिया है । उन्होंने अपने रेखाचित्रों और संस्मरणों में सामाजिक जीवन की कठोर वास्तविकताओं का स्पर्श किया है । समाज की रूढ़ियों, दु:ख, दैन्य और स्वार्थ की कुटिलताओं को देखकर उसकी आत्मा विद्रोह कर उठी है । समाज के शिकंजों में फँसी नारी की अन्तर्वेदना आप ने प्रकट की है । विधवाओं, वेश्याओं, घर की चहारदीवार में बन्द हिन्दु नारी, पुरूषशासित समाज की पुरानी-नई रूढ़ियों, मिथ्याडंभ और अत्याचार को प्रकाश में लाकर उन्होंने उनपर मार्मिक व्यंग्य किया है । विधवाओं, वेश्याओं तथा गृह-बन्धुओं के विषय में महादेवी ने बौद्धिक प्रगतिशील दृष्टिकोण अपनाया है । जिन समस्याओं को महादेवी ने अपने कथा-साहित्य में स्थान दिया है, वे कुछ इस प्रकार की है :- नौकरों के प्रति हमारी उपेक्षा, विधवाओं के प्रति हमारी प्रतारणा, नीच जातियों के प्रति हमारी अनुदारता और तिरस्कार, अशिक्षितों के प्रति हमारी उदासीनता, सौतेली सन्तान के प्रति हमारी निर्ममता और कठोरता, पथभ्रष्ट के प्रति हमारी असहिष्णुता, निर्धन के प्रति हमारी अवहेलना इत्यादि का नितान्त यथार्थ चित्रण उन्होंने किया है । उनके प्रति उनकी सहानुभूति भी प्रकट हुई है ।

महादेवी के कथा साहित्य के संबंध में लिखा गया है - "महादेवी के कथा साहित्य में भी उनकी कविताओं की भाँति एक दर्द है , एक वेदना है । ऐसा प्रतीत होता है कि जब भी कभी आप कहानी लिखने बैठती है, आपकी अंगुली समाज रूपी शरीर के ठीक उसी अंग पर पडती है, जहाँ पीडा है, कसक है । मनुष्य के जीवन में

1॰ रामचन्द्र महेन्द्र, प्रतिनिधि कहानीकार, पृ-296॰

सभी प्रकार की सुखद और दुखद घटनाएँ घटित हुआ करती हैं, और सभी प्रकार के सुखी-दुखी व्यक्तियों से संपर्क हुआ करता है, किन्तु महादेवीजी के स्मृति पट पर केवल एक ही प्रकार के चित्र अंकित होते हैं और वे हैं करूण-रस-अनुरंजित । समाज में जिस परिस्थितिवाले लोग उपेक्षित और दुखित हैं, उन्हीं से उनका नाता है और है गहरी सहानुभूति । इसे समाज का एकांगी चित्रण कहा जा सकता है, किन्तु अपूर्ण नहीं - वह तो उनके अपने हृदय की प्रेरणा है और उनका सौन्दर्य अपने आप में पूर्ण है ।"[1] "अतीत के चलचित्र" और "स्मृति की रेखाएँ"-इन दोनों में संकलित रेखाचित्रों के नाम इस प्रकार हैं :-

1· अतीत के चलचित्र :- रामा, बाल-विधवा, मारवाडिन, बिंदा, सबिया, बिट्टो अनाहूत की माँ, घीसा, विधवा, आलोपीदीन, बदलू रधिया, लछमा ।
2· स्मृति की रेखाएँ :- भक्तिन, चीनी, जंगिया धनिया, मुन्नु की माँ, ठकुरी बाबा, बिबिया, गूँगिया ।

महादेवी जी ने इन्हें अध्यायों में आवंटित किया है , इनका नामकरण नहीं किया है । परन्तु ये शीर्षक इतने लोक-प्रसिद्ध और लोक-प्रिय हो गये हैं कि इन्हें इसी रूप में स्वीकृति देना ही संगत जान पडता है ।

साहित्यिक मान्यताएँ :-

उन्हें "यामा" पर "मंगल प्रसाद" पारितोषिक प्राप्त हुआ है । "नीरजा" केलिए उन्हें सन् 1934 में "सेक्सरिया पुरस्कार" मिला था । देश के स्वतंत्र होने पर ये उत्तर प्रदेश विधान परिषद की सदस्या मनोनीत हुई । भारत सरकार ने इन्हें "पद्म भूषण" से सम्मानित किया है । आप ने हिन्दी के प्रसिद्ध मासिक पत्र "चाँद" का अनवरत संपादन किया । आपने हिन्दी के साहित्यकारों के सहयोग एवं प्रेरणा से "साहित्यकार संसद" नामक संस्था की स्थापना की जिसका कार्य साहित्यकारों की सहायता करना है । कुछ समय तक आप प्रयाग महिला विद्यापीठ की उपकुलपति रहीं । बंगाल के अकाल के समय "बंग दर्शन" (1943) और भारत की उत्तरी सीमा पर चीन के आक्रमण काल में "हिमालय" (1963) का संपादन करके इन्होंने अपने दृढ

1· डॉ·रामचन्द्र महेन्द्र, प्रतिनिधि कहानीकार, पृ-296

और तेजस्वी व्यक्तित्व का परिचय दिया है। इन्होंने "साहित्यकार" मासिक का भी कुछ वर्षों तक संपादन किया।

राजेन्द्रबाला घोष (बंग महिला) :-

हिन्दी की प्रारंभिक कहानी-लेखिकाओं में श्रीमती राजेन्द्रबाला घोष "बंग महिला" ही एकमात्र प्रमुख लेखिका है जिनका नाम हिन्दी साहित्य में आदर के साथ लिया जाता है। अहिन्दी भाषी होते हुए भी वे हिन्दी की अनन्य अनुरागिनी थी। हिन्दी की प्रथम मौलिक (आधुनिक) कहानी लेखिका के रूप में "बंग महिला" का नाम चिरस्मरणीय है।"[1]

प्रेरणा के स्रोत :-

"कलकत्ता के पास चन्द्रनगर के किसी गाँव में बंग महिला का जन्म हुआ।"[2] पिता राम प्रसाद घोष मिरजापुर के एक प्रतिष्ठित बंगाली महाशय थे। साहित्यिक वातावरण में पली-पुसी इनकी शिक्षा-दीक्षा घर में ही हुई। बाहर जाकर शिक्षा प्राप्त करने का अवसर नहीं प्राप्त हो सका। साहित्यिक रूचि विरासत रूप में माता-पिता से हासिल हुई, पर सृजनात्मक प्रेरणा आचार्य रामचन्द्र शुक्ल से ग्रहण की। शिक्षा के संबंध में लेखिका स्वयं कहती है - "मुझे जो कुछ शिक्षा मिली है वह मेरी पूजनीया जननी देवी और परम पूज्य पिता द्वारा ही।"[3]

रचना दृष्टि :-

कहानी जगत् में श्रीमती बंग महिला का पदार्पण अनुवादक के रूप में पहले होता है। इनकी प्रथम अनूदित कहानी "राई से पर्वत" है। "कुंभ में छोटी बहु" श्रीमती नीरदवासिनी घोष द्वारा रचित बंग भाषा की एक गल्प का अनुवाद है।[4] उनकी अन्य अनूदित कहानियाँ समय समय पर "सरस्वती" पत्रिका में निकल रही थी।

---

1. डॉ. धीरेन्द्र वर्मा तथा अन्य लेखक, हिन्दी साहित्य कोश, भाग-2, पृ-340
2. सरस्वती हीरक जयंती विशेषांक, पृ-797
3. बंग महिला, कुसुम संग्रह, भूमिका पृष्ठ "च",
4. डॉ. ब्रह्मदत्त शर्मा, हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन, पृ-108

लेखिका की अनूदित कहानियों के कथानक में परिवर्तन का आधार नहीं था । किंतु बंगला से हिन्दी स्थान्तर करते समय उन्होंने कतिपय कहानियों के पात्रों के नाम बंगला से हिन्दी प्रान्त के नामों की भाँति कर दिये हैं । ऐसा करने से ये कहानियाँ हिन्दी भाषी प्रान्त में अधिक लोकप्रियता प्राप्त कर सकीं । अनूदित कहानियों के साथ साथ श्रीमती बंग महिला ने मौलिक कहानियों की भी रचना की ।" उनकी रचनाएँ "सरस्वती" "कन्या मनोरंजन" आदि सामयिक पत्रिकाओं में प्रकाशित हुई थीं, जिनका संग्रह आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा सम्पादित "कुसुम संग्रह" में हुआ है ।"[1] इस कृति में दो मौलिक तथा दस अनूदित कथाओं के अतिरिक्त कतिपय जीवन-चरित्र तथा लेख भी संकलित हैं, जिनमें स्त्री-शिक्षा पर बल देने के साथ-साथ जातीय प्रवृत्तियों पर भी प्रकाश डाला गया है । उन्होंने अपने लेखों में नारी शिक्षा का समर्थन करते हुए पति-भक्ति को नारी का आदर्श माना है । इस विषय में पाश्चात्य महिलाओं का आदर्श उन्हें मान्य नहीं था । इनकी मौलिक कहानियों तथा अनूदित कहानियों का नाम निम्नलिखित है :-

मौलिक कहानियाँ :- दुलाईवाली, भाई-बहन, हृदय-परीक्षा ।
अनूदित कहानियाँ :- दालिया, मुरला, मातृहीना, संसार, सुख, कुंभ में छोटी बहू, अपूर्व प्रतिज्ञा पालन, दान-प्रतिदान, तिल से ताड, गृह, पति-सेवा, राई से पर्वत ।

आपकी मौलिक कहानियों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है :-

1. हास्य प्रधान कहानियाँ :- दुलाईवाली, हृदय-परीक्षा ।
2. उपदेशात्मक कहानी :- भाई-बहन ।

साहित्यिक मान्यताएँ :-

कुछ आलोचकों ने बंग महिला की "दुलाईवाली" को ही हिन्दी साहित्य के आधुनिकयुग की प्रथम मौलिक कहानी"[2] माना है । हिन्दी में अनूदित कहानियों का प्रकाशन सन् 1900 में प्रारंभ हुआ था । और बंग महिला की प्रथम अनूदित कहानी "राई से पर्वत" का रचना-काल सन् 1902 है । अत: हिन्दी कथा साहित्य

---

1. ऊर्मिला कुमारी गुप्ता, हिन्दी कथा साहित्य में महिलाओं का योग, पृ-22
2. भगवती प्रसाद वाजपेयी, प्रतिनिधि कहानियाँ, भूमिका पृष्ठ से-27.

को अनुवाद के माध्यम से पुष्ट करनेवाले प्रारंभिकलेखकों में बंग महिला का योगदान भी अविस्मरणीय है ।

रामेश्वरी देवी "चकोरी" :-

आधुनिक हिन्दी कहानी को विकासोन्मुखी धारा प्रवाह में जिन लेखिकाओं ने अपनी रचनाओं से पाठकों को उद्वेलित किया उनमें श्रीमती रामेश्वरी देवी "चकोरी" जी का भी नाम आता है ।

प्रेरणा के स्रोत :-

श्रीमती रामेश्वरी देवी "चकोरी" का जन्म 1916 ई॰ में उन्नाव जिले (उत्तर प्रदेश) के केत्थर ग्राम में हुआ था ।"[1] आपके पिता तहसीलदार होते हुए भी काव्य में रूचि लेते थे । उन्होंने कई धार्मिक पुस्तकें लिखीं । आपकी प्रारंभिक शिक्षा लखनऊ में ही हुई । अपने मामा जनार्दनन मिश्र, बडी बहिन इन्देश्वरी देवी तथा अपने चाचा उन्नाव के वकील बाल कृष्ण शुक्ल से इन्हें लिखने की प्रेरणा मिली । सन् 1929 में आपका विवाह लखनऊ निवासी कवि तथा कथाकार पं॰लक्ष्मीशंकर मिश्र "अरूण" के साथ हुआ । अरूण जी के सहयोग से आप कविता और कहानी के क्षेत्र की ओर अग्रसर हुई । "प्लूरसी" रोग के कारण इनकी अकाल मृत्यु सन् 1935 ई॰ में हो गयी । इतनी कम उम्र में ही इनका इतना विकास इनकी प्रतिभा का अन्यतम उदाहरण है । "धूपछाँह" कहानी संग्रह का प्रकाशन आपकी मृत्यु के उपरान्त आपके पति "अरूण" जी के द्वारा किया गया है ।

रचना दृष्टि :-

"चकोरी"जी में आरंभ से ही अलौकिक प्रतिभा थी । अपने कौमार्य जीवन में ही आप अच्छी कविता लिखने लगी थीं । इनकी रचनाएँ उस समय की प्रमुख पत्रिकाओं - "माधुरी", "सरोज", "सुकवि" आदि में सम्मान पूर्वक प्रकाशित

1॰ धीरेन्द्रवर्मा तथा अन्य लेखक, हिन्दी साहित्य कोश -भाग-2, पृ-340॰

होने लगी थीं । "चकोरी"जी ने अपेक्षाकृत कम कविताएँ कीं; किन्तु आपने जो कुछ लिखा वह हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि है । "धूपछाँह" आपका एकमात्र कहानी संग्रह है । पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक सभी धरातलों पर लिखी गयी आपकी कहानियाँ भारतीय नारी के आदर्शमय जीवन तथा नि:स्वार्थ प्रेम की भव्य झाँकी प्रस्तुत करती हैं । चकोरीजी को भारतीय नारीत्व पर गर्व है - आदर्श प्रेम उनके जीवन की महत्ता है । भारतीय नारी सब कुछ अपने आराध्य देव के चरणों में अर्पित कर देना चाहती है । यथार्थ की अपेक्षा आदर्श के प्रति उन्हें विशेष ममत्व है ।

"धूपछाँह" में संकलित कहानियाँ अधोलिखित है -

"धूपछाँह, तिरस्कृता, आलमगीर, आँखों का कौतुक, दीदी का मन्दिर, माता की ममता ।

कथानक के आधार पर कहानियों का वर्गीकरण इस प्रकार है :-

1. पारिवारिक कहानियाँ :- धूपछाँह, तिरस्कृता, आँखों का कौतुक आदि ।

2. सामाजिक कहानियाँ :- आलमगीर, माता की ममता ।

साहित्यिक मान्यताएँ :-

उस समय के कवि-सम्मेलनों में उन्हें बहुत सम्मान मिला था । "सुधा" के प्रकाशन ने उन्हें प्रमुख कवयित्रियों में स्थान दिला दिया । "विशालभारत","विश्वामित्र" आदि पत्रों ने उन्हें पुरस्कृत भी किया ।"[1]

शिवरानी देवी प्रेमचन्द :-

आधुनिक हिन्दी कहानी के उन्नायक प्रेमचन्दजी की धर्म-पत्नी शिवरानी देवी भी एक सफल महिला कहानीकार थी । उन्होंने अनेक उत्कृष्ट कहानियों की रचना करके एक महिला कहानीकार की हैसियत से कथा साहित्य की समृद्धि में अपना योग दिया है ।

---

1. धीरेन्द्र वर्मा तथा अन्य लेखक हिन्दी साहित्य कोश ,भाग-2, पृ-349

प्रेरणा के स्रोत :-

प्रख्यात कथा-लेखक प्रेमचन्द की पत्नी है । इन्हीं के संपर्क से शिवरानी देवी में पढ़ने, लिखने, और अध्ययन करने की प्रेरणा जागी । विवाह के समय अशिक्षित शिवरानी मामूली हिन्दी ही जानती थी । प्रेमचन्द अपनी लिखी कहानियाँ, साथ ही विभिन्न अंग्रजी पत्र तथा पुस्तकों के अनुवाद सुनाया करते थे । धीरे-धीरे इनके भीतर भी साहित्यिक रूझान पैदा हुआ और कहानियाँ लिखने लगीं । कभी कभी समसामयिक, सामाजिक और राजनैतिक समस्याओं पर प्रेमचन्द के साथ वाद-विवाद भी होता । शिवरानी के ही शब्दों में - "पति में होनेवाली रूचि ही पति के कर्म में होनेवाली रूचि के क्रम में साहित्यिक रूचि के रूप में प्रतिफलित हुई ।"[1]

रचना-दृष्टि

आपकी पहली कहानी "साहस"[2] सन् 1927 में "चाँद" में प्रकाशित हुई थी । क्रम शुरू हुआ तो लिखना बराबर चलता रहा और देखते देखते महिला साहित्यकारों की सम्मानित पंक्ति में प्रतिष्ठा हो गयी । उनकी कहानियाँ सामयिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं । ये कहानियाँ नारी पक्ष को ही लेकर लिखी गयी हैं; जिनकी भूमिका पारिवारिक और सामाजिक दोनों पृष्ठों पर आधारित हैं । नारी जीवन के कई पक्ष- विधवा के, पत्नी के, विमाता के, प्रेम, ईर्ष्या, त्याग और निष्ठा के क्रम-क्रम से उद्घाटित हुए हैं । पतियों के अत्याचार, सामाजिक कुरीति, वृद्ध-विवाह, दहेज-प्रथा तथा हिन्दु-मुस्लिम एकता का सजीव चित्र प्रस्तुत हुआ है । पूँजीवाद की छाया में पनपने वाले सामाजिक फोडों को उन्होंने जैसे चीर-फाड कर रख दिया है । शल्य-क्रिया के साथ नारी जीवन के प्रति सहृदयता से मृदु मरहम भी लगाया है ।

प्रेमचन्द के आत्मीय संस्मरणों के अतिरिक्त आप की कहानियों के दो संग्रह प्रकाशित हुए हैं । दोनों में संकलित कहानियों के नाम इस प्रकार हैं :-

1. कौमुदी :- तर्का, विध्वंस की होली, जीवन, विधवा, आँसु की दो बूँदें,

---

1. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, प्रेमचन्द घर में, पृ.22
2. चाँद, 1927 सितंबर, पृ- 127.

चोर, नर्स, सिन्दूर की रक्षा, निराला नाच, विश्वास, विमाता, पछतावा, ऋण, नमक का ऋण, हत्या, अनोखा ब्याह ।

2· नारी हृदय;- नारी हृदय, करनी का फल, साहस, बूढी काकी, विजय, माता, वरयात्रा, हत्यारा, सच्ची सती, सौत, गिरफ्तारी, कुरबानी, समझौता, जेल में, आँसु ।

कथानक के आधार पर कहानियों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से संभव है -

1· पारिवारिक कहानियाँ :- पछतावा, हत्यारा, माता, जेल में, सती, विमाता, बूढी काकी, आँसु, नमक का ऋण आदि ।

2· सामाजिक कहानियाँ :- साहस, वधू-परीक्षा, नर्स, विश्वास, बूढी काकी, सौत, वरयात्रा, विजयी आदि ।

3· राजनीतिक कहानियाँ :- माता, हत्यारा, जेल में, गिरफ्तारी, कुरबान, ऋण आदि ।

साहित्यक मान्यताएँ :-

सन् 1937 से "हंस" पत्रिका की संपादिका के रूप में कार्य किया । स्वाधीनता संग्राम की एक सिपाहिन के नाते भी वे हम सब केलिए वन्दनीय हैं, अभिनन्दनोय हैं ।

सत्यवती मल्लिक :-

कहानी लेखिकाओं में से कईयों की कहानी कला स्वातंत्र्योत्तर अवधि में ही निखार पा कर स्थायित्व को पा सकी है, लेकिन कहानी क्षेत्र में इनका पदार्पण तो स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व ही हो चुका था । सत्यवती मल्लिक इसी दौर की लेखिका है ।

प्रेरणा के स्रोत :-

श्रीमती सत्यवती मल्लिक का जन्म 1 जनवरी 1906 को श्रीनगर की पर्वतीय घाटियों में हुआ था । अपने घर में ही रह कर उन्होंने बंगला और अंग्रेजी का

1· संपादक:रणवीर रांग्रा; नारी हृदय की साध, सत्यवतीमल्लिक की श्रेष्ठ रचनाएँ, पृ-8

गहन अध्ययन किया । माँ पंजाबी भाषा की प्रसिद्ध कवयित्रि थी । उनकी धारणा थी कि "खाली बैठने से श्वास-प्रश्वास निष्फल जाते हैं, आयु कम होती है ।"[1] साहित्य के अतिरिक्त संगीत तथा विविध ललित कलाओं में भी विशेष रूचि थी । प्रारंभ से ही चेखव, तुर्गनेव, इब्सन आदि को पढने के कारण प्रगतिशील रूझान रखती थी । कवीन्द्र रवीन्द्र और शरत्चन्द्र का भी इनके उपर गहरा प्रभाव रहा । अध्ययन में गहन रूचि होने के कारण घर में ही पुस्तकालय भी बना रखा था । "श्रीमती सत्यवतीजी का पुस्तकालय उनके विवेक तथा प्रगतिशीलता का सूचक है ।"[2] आपके अध्ययन के संबंध में पंडित बनारसीदास चुतुर्वेदी लिखते हैं -"श्रीमती सत्यवती वस्तुत: प्रगतिशील हैं । आज चेखव पढ़ रही है, कल तुर्गनेव, तो परसों इब्सन । कवीन्द्र श्री रवीन्द्रनाथजी की तो वह अनन्य भक्त हैं और मूल बंगला में ही उनके ग्रन्थों को पढती हैं ।"[3] लगभग 13-14 वर्ष की अवस्था में ही लिखने का शौक उनमें उत्पन्न हुआ । विवाहोपरान्त दिल्ली बस जाने पर 1925 के काँग्रेस द्वारा संचालित स्वतंत्रता संग्राम में, 1931 में नमक सत्याग्रह के अवसर पर बंबई में तथा 1942 के काँग्रेस समाजवादी पार्टी आन्दोलन द्वारा दिल्ली में सक्रिय भाग लिया । 1947 में काश्मीर पर पाकिस्तानी आक्रमण के समय दिल्ली से तुरन्त पहुँच कर स्थिति का अध्ययन एवं स्थानीय सांस्कृतिक दल में सम्मिलित होकर सेवायें अर्पित कीं और लौट कर भी शरणार्थी कार्य में व्यस्त रहीं । इन राजनैतिक आन्दोलनों व सामाजिक कार्यों के कारण यद्यपि बीच बीच में लेखन का क्रम टूटता रहा किन्तु उसे पुन: प्रोत्साहन कलकत्ता प्रवास के पाँच वर्षों में "विशाल भारत" से मिला ।

रचना-दृष्टि :-

आपकी प्रथम कहानी "गुरूकुल काँगडी" हरिद्वार की "ज्योति" नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई । 1935 से विशाल-भारत, विश्ववाणी, संघर्ष, आजकल, नया समाज,

---

1. संपादक:रणवीर रांग्रा,नारी हृदय की साध:सत्यवतीमल्लिक की श्रेष्ठ रचनाएँ,पृ-65-
2. सत्यवती मल्लिक, दो फूल, लेखिका का परिचय, पृ-8
3. "

मधुकर, अजन्ता, धर्मयुग, हिन्दुस्थान आदि में कविता, कहानी, स्केच, निबन्ध, बाल-साहित्य आदि आप निरन्तर लिखती रही हैं। सत्यवतीजी ने अपनी सामाजिक कहानियों में विवाह-समस्या, बेकारी की समस्या, देहाती जीवन की कठोरताओं एवं संकीर्णताओं का उद्घाटन, वहाँ के रीति-रिवाज़ों, पर्दा-प्रथा आदि का चित्रण किया है। हिन्दु समाज में जाति-भेद ने विवाह कीसमस्या को कितना जटिल बना दिया है यह "श्यामा" कहानी से पता चलता है। "बेकारी" में नौकरी न मिलने के कारण भारत के नवयुवकों की जो दुर्दशा होती है उस पर प्रकाश डाला गयाहै। "बुत" कहानी देहाती जीवन का दुख-सुख भरा काल्पनिक चित्र उपस्थित करती है जिसमें देहातों में प्रचलित रीति-रिवाज़ों, पर्दा-प्रथा, आचार-विचारों का जीवन्त चित्रण है। प्रगतिशील विचार-धारा को लेकर सत्यवतीजी ने समाज के शोषित, पीडित, पद दलित वर्ग को लेकर कहानियों की रचना की हैं। अलावा इसके समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुप्रथाओं, भ्रष्टाचार, अन्तर्जातीय विवाह, विधवा-विवाह आदि की संकीर्णताओं और कठोरताओं पर करारा प्रहार अपनी कहानियों में किया है।

अज्ञेयजी ने सत्यवतीजी की कहानियों की व्याख्या करते हुए लिखा है "दो फूल" एक ऐसे व्यक्ति के मनोभावों का प्रतिबिंब हैं, जिसकी सौन्दर्यानुभूति औसत से काफी ज़्यादा है। मानव जीवन के, खासकर नारी जीवन के, दुख-क्लेश का जिक्र पुस्तक में हैं, किन्तु उनसे लेखिका का संबंध सौन्दर्य की खोज करनेवाले का नहीं। यही सत्यवतीजी की कहानियों की विशेषता है और उनका प्रधान गुण भी है। सौन्दर्य की अनुभूति अत्यन्त तीखी है, जिन कहानियों में उन्होंने उस सौन्दर्य की झाँकी पाठक को देने का प्रयत्न किया है, उनमें उन्हें सफलता मिली है।"[1] सत्यवतीजी ने स्वयं अपने कहानी-लेखन का अभिप्राय इन शब्दों में व्यक्त किया है - "सृष्टि के रंगमंच पर नित्य ही प्रभात से संध्या तक, निशा से उषा तक जो भाव रंगीन बादलों की तरह आते और पुन: आगामी दिवस के अभिनय के हेतु मिट जाते हैं। उन्हीं में से जो अमिट रेखाएँ करूण एवं मधुर गुंजन सी मेरे मानस पटल पर अंकित हो जाती हैं,

---

1. अज्ञेय, त्रिशंकु, पृ-105.

जिन साँसों, आँसुओं और हास्य के साथ मेरा हृदय एकाकार हुआ है, आत्मा तड़प उठी है या आनन्द से विभोर हो उठी है, भावों के जिन उफानों में जहाँ घंटों बेचैन रही हूँ, उन्हीं के व्यक्तीकरण में कुछ एक को मैं ने कहानी एवं स्केच का रूप दिया है ।"[1] आगे उन्होंने लिखा है - "कहानी लिखने का भी कोई एक नियम नहीं है । "दो फूल" कहानी सब कल्पना है - केवल एकभाव को प्रस्फुटित करने केलिए, किन्तु "भाई-बहन" में एक लड़की के आँसुओं ने मुझे इतना प्रभावित किया, मानो बार-बार कोई अन्दर से कह बैठा - इन्हें समेट लो, यह छोड़ने की बात नहीं है ।"[2]

जीवन के छोटे-छोटे अनुभवों को समेट कर इन्होंने अपनी कहानियों का निर्माण किया है । सत्यवतीजी के चार कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं । प्रत्येक कहानी संग्रह की मौलिक कहानियों का विवरण इस प्रकार है :-

1. दो फूल :-, दो फूल, नारी हृदय की साध, जीवन-सन्ध्या, वे क्षण, एक सन्ध्या, कब्रिस्तान में, भाई-बहन, बेकारी में, हसन, डायरी से, श्यामा, सगाई के दिन, वसन्त है या पतझड, उलझन, माली की लड़की, स्मृति, शुभाना, साथी, कैदी ।

2. वैशाख की रात :- इसमें बारह कहानियाँ दो फूल की हैं, शेष नौ कहानियाँ ये हैं - बुत, तूरी, यात्रा में, सन्नाटा, प्रेमा, इनकी जाति, पर जो चला जाता, वंशी और चिट्ठी, वैशाख की रात ।

3. दिन-रात :- इसमें बारह कहानियाँ "दो फूल", "वैशाख की रात" संग्रहों से ली गयी हैं । शेष इस प्रकार हैं - आँसु, नीलम, उत्तेजना, दृष्टि, एक झलक, गुड्स ट्रेन, दिन-रात, शाहबाज़ा ।

4. नारी हृदय की साध :- "सिद्धवाँ", कहानी ही मौलिक कहानी है । बाकी सब उपर्युक्त तीनों संग्रहों की है ।

---

1. कहानी, 1941, अक्तूबर, पृ-105
2.

आपकी कहानियों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से संभव है :-

1. पारिवारिक कहानियाँ :- नारी हृदय की साध, भाई-बहन, जीवन सन्ध्या, ध्यान आदि ।
2. सामाजिक कहानियाँ :- श्यामा, माली की लडकी, बेकारी में, बुत, यात्रा आदि ।
3. प्रगतिशील या समाजवादी कहानियाँ :- डायरी में, उलझन, एक सन्ध्या आदि ।
4. प्रतीकात्मक कहानियाँ :- दो फूल, वसन्त या पतझड आदि ।

साहित्यिक मान्यताएँ :-

"मानव-रत्न" इनके बेजोड रेखाचित्र तथा संस्मरण का संग्रह है । इसका तो देश की शिक्षा संस्थाओं में अभूत पूर्व स्वागत हुआ और वह वर्षों तक उच्चतर माध्यमिक स्कूलों में पाठ्य पुस्तक रही । आप आल इण्डिया फैन आर्टस एण्ड क्राफ्ट सोसाइटी के संचालक सदस्या, इण्डियन नेशनल थियटेर दिल्ली के भूतपूर्व अध्यक्षा, सरस्वती समाज नई दिल्ली की अध्यक्षा, गाँधर्व महाविद्यालय, नई दिल्ली की प्रधान मंत्री, हिन्दी भवन, नई दिल्ली की प्रधान मंत्री, संगीत भारती, नई दिल्ली की संचालक, आल इण्डिया फिल्म सैन्सर बोर्ड की सदस्या आदि पदों पर उपविष्ट थी ।

सुभद्राकुमारी चौहान :-

एक महिला कहानीकार की हैसियत से तीसरे और चौथे दशक में हिन्दी कहानी को विकास पथ पर बढाने में सुभद्रा का अपना विशेष योगदान रहा है । आप प्राचीन भारतीय ललनाओं के शौर्य की याद दिलानेवाली कर्मठ महिला थी और उनकी कविताएँ भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान लाखों देशवासियों के होंठों पर थीं और अब भी हैं । आश्चर्य नहीं कि हिन्दी के महानतम कवि निराला तथा मुक्तिबोध भी सुभद्राकुमारी चौहान के प्रशंसक थे ।

प्रेरणा के स्रोत :-

"सुभद्राकुमारी चौहान का जन्म 1904 ई. में प्रयाग के निहालपुर मुहल्ले में

हुआ था ।"[1] आपकी प्रारंभिक शिक्षा प्रयाग में हुई थी । उसके बाद क्रास्थ्वेट गर्ल्स कालेज मेंआपने शिक्षा प्राप्त की । पन्द्रह वर्ष की आयु में इनका विवाह लक्ष्मण सिंह से हो गया । विवाह के बाद भी सुभद्रा को अध्ययन का अवसर मिला । लक्ष्मण सिंह की भी रूचि लिखने-पढने में थी । सन् 1920-21 में गाँधीजी ने विद्यार्थियों को स्कूल-कालेज छोडकर देश का काम करने का आह्वान किया था । दोनों ने इसी आह्वान को सुना और सुभद्राजी की पढायी अधूरा ही छूट गयी । उन दिनों स्वतंत्रता केलिए असहयोग आन्दोलन चल रहा था । श्रीमती चौहान ने उसमें सक्रिय भागलिया और फलस्वरूप ये जेल भी गयीं । "आप भारत वर्ष की पहली महिला सत्याग्रही थीं ।"[2] आप समाज सेविका भी थीं । "वे जीवन भर मानवता की पूजारिन बनी रहीं ।"[3] सुधा चौहान के शब्दों में - "वे सामाजिक कार्यकर्ता, देश-सेविका, कवि, लेखिका तो जो थी; सो थी ही; सब से बडी तो उनकी मनुष्यता थी, उनका सहज-स्नेहमय उदार हृदय था जिसने अपने-पराये सब को आत्मीय बना लिया था।"[4]

साहित्य के प्रति रूचि और कविता रचना की ओर प्रवृत्ति इनको प्रकृति से प्राप्त है । छः-सात वर्ष की अवस्था से ही छोटी छोटी कविता रचना प्रारंभ कर दी थीं । कभी कभी बहनों में, कविता में ही उत्तर-प्रत्युत्तर भी होता था । एक बार उनके भाई के कहे अनुसार उनके घर के सामने जो नीम का पेड था उस पर कविता लिखी । नौ वर्ष की सुभद्रा की यह कविता सन् 1913 में तब की प्रसिद्ध पत्रिका "मर्यादा" में छपी थी । पूर्णरूपेण साहित्य सृजन का कार्य सुभद्राजी ने 1920-21 से आरंभ किया ।" खूब लडी मर्दानी वह तो झाँसीवाली रानी थी ।"[5]

---

1. डॉ॰धीरेन्द्रवर्मा तथा अन्य लेखक, हिन्दी साहित्य कोश,भाग-2, पृ-603
2. डॉ॰उमेश माथुर, आधुनिक युग की हिन्दी-लेखिकायें, पृ-96
3.
4. सुधा चौहान, सुभद्राकुमारी चौहान, पृ-70
5. " पृ-86

जैसी वीरतापूर्ण प्रसिद्ध कविता इन्हीं की कलम से प्रसूत है । "झाँसी की रानी" काव्य की इन पंक्तियों ने देश में राष्ट्रीयता का जागरण किया और युवकों को काफी प्रेरणा दी । हिन्दी के देशभक्त लेखिकाओं में सुभद्राकुमारी चौहान का स्थान अनुपम है । काव्य के अतिरिक्त आप की दूसरी साहित्यिक विधा कहानी थी । कहानियों के अतिरिक्त सुभद्राजी ने अच्छे निबन्ध भी लिखे हैं । हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं में इनकी कविताएँ और कहानियाँ बराबर प्रकाशित होती रही थीं ।

रचना-दृष्टि :-

"बिखरे मोती" के लेखकीय "निवेदन" में उन्होंने अपनी रचना-प्रक्रिया को स्पष्ट करते हुए बताया है कि "समाज और गृहस्थी के भीतर जो घात-प्रतिघात होते रहते हैं उनकी यह (कहानियाँ) प्रतिध्वनियाँ मात्र हैं। उन्हें आपने सुना होगा । मैं ने कोई नयी बात नहीं लिखी है, केवल उन प्रतिध्वनियों को अपने भावुक हृदय की तंत्री के साथ मिलाकर ताल-स्वर में बैठाने का प्रयत्न किया है ।"[1]
"उन्मादिनी" संग्रह के प्रकाशकीय वक्तव्य में इन कहानियों की विशेषता लक्षित करते हुए संकेत किया गया है कि स्वतंत्रता की दौड में स्त्रियाँ पीछे रहना नहीं चाहतीं । वे अपने पैरों पर खड़ी हो जाना चाहती हैं । पाश्चात्य "फेमिनिस्ट मूवमेन्ट" की इसी नवीन चेतना का फल इब्सन के "ए डाल्स हाउस" तथा रोम्या रोलाँ के "दि सोल एनचैण्टेड" में परिलक्षित है । सुभद्राजी की कहानियों में बहुत-कुछ यही प्रेरणा कार्य करती है । आपने अपनी कहानियों के माध्यम से समकालीन धरातल पर नारी की पारिवारिक, सामाजिक विभिन्न समस्याओं, घातों-प्रतिघातों को अपने भावुक हृदय की कल्पना के सहारे बड़ी ही मार्मिकता से अंकित किया है । विधवा-समस्या, समाज और परिवार द्वारा अभिशप्त नारी की स्थिति, समाज द्वारा किये गये शोषण तथा पीड़ाओं की मूक व्यथा आदि इनकी कहानियों में चित्रित किया गया है । उन्होंने विवाहित नारियों के जीवन को प्राय: सुखी नहीं दिखाया क्योंकि उनपर सदा पति की कटु, शंकालू, उपेक्षाशील, अहंवादी, स्वार्थी

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, बिखरे मोती, निवेदन से,

और पौरुष प्रकृति का प्रकोप बना रहता है । सास अथवा जेठानी की कुटिल और झगडालू प्रकृति का उन पर तीव्र प्रहार होता रहता है । अथवा पर-पुरुष से उन स्त्रियों का पावन अथवा अपावन संबंध शंका पैदा कर जीवन को कटु बना देता है । अत: उन्होंने अपनी अधिकांश कहानियों में पारिवारिक जीवन के करूण एवं कुरूप पक्षों का ही उद्घाटन किया है । राष्ट्रीय कहानियों में लेखिका ने सामयिक राष्ट्रीय आन्दोलन में विश्वास होने पर भी पेट केलिए विवश सरकारी कर्मचारियों, देश पर बलि होनेवाले तरूण युवकों, देश-भक्ति का ढोंग रचनेवाले सत्ताभक्तों के अत्याचारों आदि का प्रसंगानुकूल चित्रण भी सफलतापूर्वक किया है ।

आपके तीन कहानी-संग्रह प्रकाशित हुए हैं । उनके नाम तथा उनमें संकलित कहानियाँ निम्न लिखित हैं :-

1. उन्मादिनी :- उन्मादिनी, असंमजस, अभिशुक्ता, सोने की कण्ठी, नारी हृदय, पवित्र ईर्ष्या, अंगूठी की खोज, चढ़ा दिमाग, वेश्या की लड़की ।
2. बिखरे मोती :- भग्नावशेष, होली, पापी पेट, मँझली रानी, परिवर्तन, दृष्टिकोण, कदम्ब के फूल, किस्मत, मछुए की बेटी, एकादशी, आहुति, थाती, अमराई, अनुरोध, ग्रामीणा ।
3. सीधे-साधे चित्र :- गौरी, रूपा, ताँगवाले, कल्याणी, कैलाशी नानी, हींगवाला, राही, गुलाबसिंह, दो साथी, बिआहा, प्रोफ्सर मित्रा, दुराचार मँगला ।

कहानियों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है :-

1. पारिवारिक कहानियाँ :- उन्मादिनी, भग्नावशेष, होली, दृष्टिकोण, कदम्ब के फूल, ग्रामीणा, गौरी, रूपा, कल्याणी आदि ।
2. सामाजिक कहानियाँ :- किस्मत, नारी-हृदय, एकादशी, कल्याणी, असमंजस, अमराई, गौरी, मंगला, पवित्र-ईर्ष्या, आदि ।
3. राष्ट्रीय कहानियाँ :- ताँगवाला, गुलाबसिंह, पापी-पेट, हींगवाला, सुभागी, राही आदि ।

साहित्यिक मान्यताएँ :-

"मुकुल" को स्त्रियों द्वारा लिखित वर्ष की सर्वोत्तम पुस्तक कहकर उन्हें सेक्सरिया पारितोषिक प्रदान किया था और "बिखरे मोती" पर भी उपर्युक्त पुरस्कार देकर उन्हें सम्मानित किया था ।

सुमित्राकुमारी सिन्हा :-

हिन्दी की प्रसिद्ध कवयित्रि और कहानी लेखिका श्रीमती सुमित्राकुमारी सिन्हा तीसरे-चौथे दशक में लेखन की ऊँचाई पर थी ।

प्रेरणा के स्रोत :-

श्रीमती सुमित्राकुमारी सिन्हा का जन्म 1913 ई॰ को पैजाबाद में एक मध्यवर्गीय कायस्थ परिवार में हुआ था ।"[1] उनके पिता प्रसिद्ध वैज्ञानिक, सुधारक और लेखक थे । हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेज़ी की प्रारंभिक शिक्षा घर से प्रारंभ हुई और फिर स्कूली शिक्षा भी प्राप्त की । विवाहोपरान्त पति ने उनके अध्ययन एवं लेखन को सदैव प्रोत्साहित किया । लेखन कार्य की शुरूआत कविताओं से की, अच्छी कवयित्रि भी हैं । "सुमित्राजी इस युग की ऐसी एक जागरूकनारी हैं जिन्होंने नारियों की स्थिति में सुधार लाने केलिए उन्नाव नगर में भी महिलाओं का एक संगठन बनाया ।"[2] बाद में नारी सेवा संघ और लेडीज़क्लब की स्थापना की । नारी स्वतंत्रता तथा नारी जागृति हेतु उत्साहवर्धक कार्य किये । स्वतंत्रता आंदोलन में भी भाग लिया । राष्ट्रप्रेम संबंधी साहित्य की रचनाओं द्वारा इस क्षेत्र में उनका योगदान कम महत्वपूर्ण नहीं । 1927-28 ई॰ के लगभग कहानी लेखन प्रारंभ किया । समय-समय पर आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों से इनकी कहानियाँ रिले होती रहीं । आपने आकाशवाणी केलिए असंख्य रूपक और वार्ताएँ लिखीं, बच्चों केलिए ढेरों कविताएँ-कहानियाँ रचीं, अवधी भाषा के माध्यम से वे जन-

---

1॰ अजितकुमार, सुमित्राकुमारी सिन्हा-रचनावली, प्रस्तावना भाग से

2॰ डॉ॰उमेश माथुर, आधुनिक युग की हिन्दी लेखिकाएँ पृ-140॰

मन तक पहुँची और लोकधुनों पर आधारित उनके प्रसार गीत विभिन्न कलाकारों द्वारा रेडियो पर गाये जाते रहे । आप ने अवधी भाषा में भी कविताएँ लिखी हैं जो "माटी का न्योता" नाम से संग्रहीत है ।

सुमित्राजी का कण्ठ मधुर था । देश भर के कवि सम्मेलनों में उन्हें साग्रह बुलाया जाता था । उनकी कविताएँ पत्रिकाओं के मुख पृष्ठों को सुशोभित करती थीं । आपके उपर रहस्यवाद का गहरा प्रभाव पडा है जिसका मूल कारण दर्शन तथा रवीन्द्र साहित्य का अध्ययन ही था ।

रचना दृष्टि :-

सुमित्राजी ने नारी को केन्द्र में रखकर अनेक कहानियाँ लिखीं । समाज में नई विचार धाराओं के अनुसार परिवर्तन लाना ही आपका मन्तव्य मालूम होता है । वे समाज के पुराने रवैये से सहमत नहीं प्रतीत होतीं । सामन्तीय मानसिकता को जीनेवाले इस पुरूष प्रधान समाज में उत्पीडित होती नारी के अन्तर की अशान्ति और विद्रोह का बेबाक चित्रण मिलता है । इस समस्या से मुक्ति पाने केलिए नारी को आर्थिक रूप से निर्भर बनाना चाहती है पर निर्भर हो जाने के बाद नारी का पुरूष के साथ कैसा संबंध होगा ? इस पर मौन रह जाती हैं । लेखिका ने यथार्थ को देखते हुए विद्रोह-प्रदर्शन का पुरूष वर्ग के प्रति अपनी समस्त कटुता जाहिर कर दी और जैविक प्रकृति की दृष्टि से प्रेम को स्त्री-पुरूष दोनों ही जगह समान रूप में देखा, पर हमारी सामाजिक नैतिकता इसकी हामी नहीं । परन्तु दुख का ही कारण बनते हैं इस तरह के संबंध । व्यक्तित्व की भूख, विवाहिता, विद्रोहिनी, मैं नहीं जाऊँगी, मुरली आदि अनेक कहानियों में यह दृष्टि हैं । इनकी कहानियों का विषय प्रमुखत: विवाह, अवैध प्रेम, समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, पुरूष की पाशविक वृत्ति आदि से लिये गये हैं । इनकी कहानियों की मूल समस्या एक भारतीय नारी की दुविधा है, घुटन है । आपके प्रकाशित कहानी संग्रह निम्न लिखित हैं :-

1. वर्षगाँठ :- गृहलक्ष्मी, माँगते, सफल नारीत्व, शीला का पति, वर्षगाँठ, पत्थर

को देवी, मैं नहीं जाऊँगी, मुरली, भावुक, कुचला मातृत्व, हसीना, सुखिया ।

2· अचल सुहाग :- विवाहिता, व्यक्तित्व की भूख, मेरी जाँ लुट गयी, इटर्नल ट्रैंगिल, सूली ऊपर, प्रतिक्रिया, वह भूल, व्यवधान, भाभी, नारी का सपना, विद्रोहिनी ।

कथानक के आधार पर कहानियों का वर्गीकरण निम्नलिखित हैं :-

1· पारिवारिक कहानियाँ :- गृहलक्ष्मी, शीला का पति, कुचला मातृत्व, प्रतिक्रिया, भाभी, विवाहिता आदि ।

2· सामाजिक कहानियाँ :- व्यक्तित्व की भूख, मेरी जाँ लुट गयी, मैं नहीं जाऊँगी, सफल नारीत्व, भाभी, प्रतिक्रिया, विवाहिता आदि ।

साहित्यिक मान्यताएँ :-

सुमित्राजी को अनेक स्फुट पुरस्कार एवं पदक मिले हैं । "1944 में 'विहाग' पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से "सेक्सरिया पुरस्कार" प्राप्त हुआ है ।"[1] राजस्थान, पंजाब और उत्तर प्रदेश में कोर्स बुकों में उनकी रचनाएँ संग्रहीत हैं । प्रयाग महिला विद्यापीठ के विद्या विनोदिनी कोर्स में उनकी रचनाएँ हैं । "उनके उग्र और विद्रोही लेखन से विचलित हो महात्मा गाँधीजी तक एक बार उनके लेख "बढे चलो" पर अपनी संपादकीय टिप्पणी करने को बाध्य हुए थे ।"[2] आप विश्वम्भर दयाल त्रिपाठी हिन्दी विद्यापीठ, उन्नाव की अवैतानिक प्राचार्या रहीं ।

होमवती देवी :-

पारिवारिक कहानियाँ लिखनेवाली स्त्री लेखिकाओं में होमवती देवी का स्थान श्रेष्ठ है । नारी लेखिकाएँ प्राय: स्त्री जीवन की व्याख्या में ही तल्लीन रही हैं और एक सीमा जैसी बाँधकर एक तरफा समस्याओं का उद्घाटन करती रही हैं । होमवती ने उस परंपरा को विकास देते हुए भंगिमा-परिवर्तन का भी प्रयत्न किया ।

1· डॉ·प्रेमनारायण टंडन, साहित्यकार कोश, पृ-463

2· अजित कुमार, सुमित्राकुमारी सिन्हा रचनावली, प्रस्तावना भाग से

प्रेरणा के स्रोत :-

होमवती का जन्म मेरठ के सुप्रसिद्ध वंश पत्थरवाले के यहाँ सन् 1906 को हुआ। पिता श्री रामनाथ, माता श्रीमती कुंदनी देवी और पति डॉ॰चिरंजीलाल हैं। 48 वर्ष की आयु में ही निधन हो गया। माँ का प्रभाव उन पर सबसे अधिक था। नारी की संपूर्ण करूणा, ममता, समर्पण, सहज उदारता, व्यवस्था और चातुर्य जो उनमें थे, सब माँ के प्रभाव स्वरूप ही विद्यमान थे। शिक्षा सामान्य स्तर तक प्राप्त करने के बावजूद जीवनगत अनुभूतियाँ साहित्य रचना की प्रेरणा देती रहीं। पति की मृत्यु के उपरान्त इन्होंने स्थायी रूप में लेखन-कार्य प्रारंभ किया। कहानियों के साथ-साथ कविताएँ भी बहुतायत में लिखीं। सन् 1929 से पूर्व तक आपकी कहानियाँ केवल पारिवारिक समस्याओं को आधार बनाकर लिखी गयी थीं। पारिवारिक एवं सामाजिक बन्धनों के कारण उनका साहित्य समाज के सम्मुख नहीं आ सका था। श्री कृष्णचन्द्र शर्मा "चन्द्र"जी से साहित्यिक क्षेत्र में आने की प्रेरणा उन्हें मिली। शर्माजी की प्रेरणा ने ही उनके साहित्य को गति तथा सामाजिकता प्रदान की और साहित्य-रचना के साथ ही साहित्य-संबंधी कार्य उनके जीवन के विशेष अंग बन गये। सन् 1939 में मेरठ के नौबन्दी मेले में आयोजित गल्प सम्मेलन में प्रथम बार आपने अपनी प्रसिद्ध कहानी "गोटे की टोपी" जनता के सम्मुख पढी। धीरे-धीरे आपने सार्वजनिक रूप से साहित्यिक कार्यों में भाग लेना प्रारंभ कर दिया था। आपके निवासस्थान "पर्णकुटी" में साहित्य-सदन, साहित्य-परिषद कार्यालय और पुस्तकालय तो थे ही, पर सबसे अधिक पर्णकुटी का महत्व साहित्य-चर्चा केन्द्र के रूप में था।

रचना-दृष्टि :-

"होमवतीजी की प्रथम कहानी "गोटे की टोपी" सन् 1937 में "चाँद" पत्रिका में प्रकाशित हुई।"[1] समय समय पर इनकी कहानियाँ कई पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं। उद्गार, अर्घ, प्रतिछाया आदि उनकी कविताओं के

---

1. डॉ॰शेख मुहम्मद इकबाल, स्वातंत्र्यपूर्व हिन्दी - तेलुगु कहानी, पृ-314.

संग्रह हैं ।

उनकी सभी कहानियों में भिन्न भिन्न परिस्थितियों अथवा वर्गों के व्यक्तियों के पारिवारिक जीवन के रंग-रूप को कथा से सजाया गया है । दारिद्र्य ने किसान और मजदूर को पारस्परिक संघर्ष, रोग, ईर्ष्या तथा अन्य कई दबावों से कुचलकर विषण्ण और क्षत-जर्जर बना दिया है । कलाकार भी आर्थिक समस्याओं से मुक्त नहीं है और उच्च तथा मध्यवर्गीय परिवार भी नैतिकता, पुराने नये आदर्श तथा विघटित मूल्यों के जाँत में चँपे हुए हैं । होमवती देवी ने इस सारे विस्तृत परिवेश को अपनी अल्पसंख्यक कहानियों के द्वारा रँगने की चेष्टा की है । अपनी पारिवारिक कहानियों में नारी की विवशता, नारी के पूहडन, तीज-त्यौहार, पारिवारिक संबंध की झाँकियाँ प्रस्तुत हुई हैं । कहानियों में समाज में प्रचलित अन्धविश्वास, अनैतिक रूढियाँ, विधवा-समस्या, बहु-विवाह, उत्तराधिकार समस्या, अनमेल-विवाह आदि विकृतियों के खोखलेपन का चित्रण हुआ है । अपनी व्यंग्यात्मक कहानियों में मंत्रियों, संसद सदस्यों, गरीब तबके का शोषण करके स्वयं आरामदेह जीवन व्यतीत करनेवाले पूँजीपतियों, दूसरों की रचनाओं को लेकर स्वयं को लेखक सिद्ध करनेवाले व्यक्तियों पर करारा व्यंग्य किया गया है । "स्वप्न भंग" कहानी संग्रह की भूमिका में वे लिखती हैं - "उन व्यापारियों और मिल-मालिकों की निष्ठूरता तथा स्वार्थपरायणता को मैं निश्चय ही नहीं भुला सकी हूं जो भूखी नंगी जनता के कंकालों को रौंदकर लखपति और करोड़पति बने रहने की साध में गले तक डूबे हुए हैं "[1] शोषकों के प्रति बेहद घृणा और आम जनता के प्रति गहरी सहानुभूति उनमें थी । व्यंग्य का तीव्र आघात तथा संवेदना का मृदु आलेप दोनों ही सुधार केलिए उपयुक्त उपचार हैं । लेखिका ने तटस्थ रहकर समस्या के प्रत्येक पक्ष को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर दिया है, किन्तु समाधान की दिशा में वे प्राय: मौन रहती हैं ।

पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित कहानियों के अतिरिक्त आपके चार प्रकाशित कहानी-संग्रह हैं -

---

1. होमवती देवी, स्वप्न भंग, भूमिका भाग पृ-3.

1. नि:सर्ग :- स्मृति चिह्न, कान का बुन्दा, गोटे की टोपी, प्रायश्चित, नारीत्व, अव्यवस्था, सलूनों का त्यौहार, मनुष्यता की ओर, बचपन की याद, त्याग, स्वाभिमानी ।

2. धरोहर :- राव की मटकी, पीतल की चूड़ियाँ, परिवर्तन, मन की साध, बिसाती, शशांक, एप्रिल फूल, कागज़ की नाव, क्रिसमस कार्ड या नालिश, कहानी का अन्त, अन्तिम सहारा, युगान्तर, धरोहर, भगवती, वह कौन थी, स्पेशल परमिट ।

3. स्वप्न भंग :- उपहार, स्वप्न भंग, मीरा की जात, टी पार्टी, जीवन-क्रम, नया पेशा, त्यागीजी, कहानी का विषय, स्पेशल ट्रेन, गृहणी, प्रवास, विडम्बना, वारण्ड, शिलान्यास, नया अंक ।

4. अपना घर :- पुरस्कार, ट्रेनिंग, चने, दो आँखें, शेष स्मृति, बात का धनी, वे तीनों, उत्तराधिकारी, मिट्टी का घरौंदा, आधार, चौराहे पर, जन-सेवक, नन्दी, माँ, लल्लू, परिश्रमिक, गुब्बारा, अन्तिम मिलन, पुरूषार्थ, प्रतिभा--विसर्जन, अपना घर, अब्बा ।

कथानक के आधार पर आपकी कहानियों का विभाजन निम्न प्रकार से संभव है:-

1. पारिवारिक कहानियाँ :- राव की मटकी, बिसाती, स्वाभिमानी, अन्तिम सहारा, गोटे की टोपी, नारीत्व, प्रायश्चित, शशांक, गृहणी, विडम्बना, चौराहे पर, माँ ।

2. सामाजिक कहानियाँ :- पीतल की चूड़ियाँ, अपना घर, कहानी का अन्त, अन्तिम सहारा, नारीत्व, आधार, उत्तराधिकारी, अन्तिम मिलन, माँ, गृहणी, विडम्बना ।

3. राजनीतिक कहानियाँ :- त्याग, स्वाभिमानी, स्पेशल परमिट, प्रवास, स्वप्न भंग; स्पेशल ट्रेन, चने, पुरूषार्थ, अब्बा, जन सेवक, ट्रेनिंग, त्यागीजी ।

<u>साहित्यक मान्यताएँ</u> :-

"अत्यंत अध्यवसायपूर्वक अनेक प्रकार की सामाजिक बाधाओं का सामना कर

कई वर्षों तक उन्होंने मेरठ के साहित्यिक जीवन का नेतृत्व और हिन्दी परिषद् का अखिल भारतीय स्तर पर संचालन किया ।"[1] आपकी मृत्युपरान्त मेरठ के साहित्यिक जीवन में गतिरोध आ गया ।

निष्कर्ष

हिन्दी कहानी के विकास-क्रम के प्रथम दौर (1900-1915 ई॰) की कथा-लेखिकाओं में एकमात्र कथा लेखिका बंग महिला ही है । कुछ विद्वानों का मत है कि उनके द्वारा विरचित "दुलाईवाली" हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी है । इसी अवधि में श्रीमती यशोदा देवी, श्रीमती प्रियंवदा देवी, श्रीमती शारदा कुमारी आदि लेखिकाओं ने भी आर्य समाज, ब्रह्म समाज आदि से प्रेरणा और प्रोत्साहन प्राप्त कर उपदेशमूलक तथा प्रचारात्मक कहानी साहित्य की रचना की । उन लेखिकाओं द्वारा विरचित दो-चार कहानियों के अतिरिक्त अन्य लेखिकाओं की कहानियों में कहानी का कलात्मक रूप नहीं उभर आ सका है । अत: हिन्दी कहानी के आरंभ काल में ही बंग महिला जैसी लेखिकाओं का योगदान आगामी लेखिकाओं केलिए प्रेरणा व बल प्रदान करने में काफी सहायक रहा है ।

आगे चलकर 1922 ई॰ में "चाँद" और "माधुरी" पत्रिकाओं के प्रकाशन के साथ नारियों का बौद्धिक और साहित्यिक विकास का व्यावहारिक रूप प्रकाश में आया । बाद की कथा-लेखिकाओं की कहानियाँ परिवार के ईर्द-गिर्द ही नहीं घूमती, वरन् युग-समाज की गति-प्रवृत्ति से भी जुटती है और कथा लेखिकाओं के समानान्तर युगीन समस्याओं के प्रति सचेत भी हैं । सन् 1930 ई॰ के आस-पास प्रसाद और प्रेमचन्दीय प्रवृत्ति के स्थान पर गाँधीवाद, मार्क्सवाद और फ्रायड के मनोविश्लेषणवाद से प्रभावित होकर कहानी के क्षेत्र में जैनेन्द्र, अज्ञेय, यशपाल आदि कथा लेखक आते हैं, वहीं महिला कथा-लेखिकायें भी इस ओर मुंडती हैं, उनका भी योगदान कहानी-कला के विकास में कम नहीं । उषादेवी मित्रा, कमला चौधरी,

---

1॰ डॉ॰धीरेन्द्रवर्मा, डॉ॰ब्रजेश्वर वर्मा, श्रीराम स्वरूप चतुर्वेदी, डॉ॰रघुवंश, हिन्दी साहित्य कोश भाग-2, पृ-215

सत्यवती मल्लिक आदि लेखिकाओं ने सामाजिक समस्याओं के यथार्थांकन के साथ ही मनोवैज्ञानिक कहानियाँ लिखने में भी सफलता हासिल की । तत्कालीन सामाजिक संरचना में राष्ट्रीय आन्दोलन के दौर में पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं का योगदान भले ही कम हो, पर शून्य नहीं कहा जा सकता । इसमें सक्रिय हिस्सेदारी करनेवाली देश प्रेमिका, नवचेतना से उद्‌बुद्ध लेखिका श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान हैं । श्रीमती होमवती देवी, श्रीमती महादेवी वर्मा, श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान, श्रीमती चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, श्रीमती कमला त्रिवेणी शंकर आदि अन्य अनेक लेखिकाओं ने युग-समाज की समस्याओं से जुटकर कहानियाँ लिखीं । साथ ही पत्र-पत्रिकाओं में एक दो कहानी प्रकाशित होने का समय समाप्त हो गया, तेजरानी पाठक के "अंजली", "एकादशी", कमला चौधरी का "उन्माद", "पिकनिक", "यात्रा", चन्द्रवती ऋषभ जैन का "नींव का ईंट", कमला त्रिवेणी शंकर का "पुकार", उषादेवी मित्रा की "रागिनी", "मेघमल्लार", चन्द्रकिरण सौनरेक्सा का "आदमखोर", सुमित्राकुमारी सिन्हा का "अचल सुहाग", सुभद्राकुमारी चौहान का "बिखरे मोती" आदि कहानी-संग्रह इस युग की देन है । अत: स्पष्ट है कि कहानी क्षेत्र में नारी की प्रगति उत्तरोत्तर वृद्धि की ओर ही थी और उनका योगदान अप्रतिम है ।

अध्याय तीन

अध्याय तीन

विषयवस्तु के आधार पर महिला कहानीकारों की कहानियों का अध्ययन

कहानी के सैद्धान्तिक स्वरूप :-

कहानी का विकास वर्तमान युग की आवश्यकताओं के अनुरूप ही हुआ है । कहानीकार अपने जीवन से ही प्रेरणा ग्रहण करता है । जीवन की किसी संवेदनशील घटना को चुन लेता है और इसे शब्दों में अत्यन्त सूक्ष्मता एवं कुशलता से बाँधने का प्रयत्न करता है । इसकेलिए अनेक उपकरण जुटाने पडते हैं जिनका एक प्रकार से कहानी के शिल्प में समाहर हो जाता है । ये विभिन्न उपकरण ही वस्तुत: कहानी के तत्व होते हैं । श्रेष्ठ कहानी में ये सभी तत्व स्वयमेव आ जाते हैं और कहानी शिल्प का स्वरूप निर्धारित हो जाता है । डॉ॰सुरेश सिन्हा कहते हैं कि "कहानी जीवन के यथार्थ की प्रतिच्छाया होती है, वह काल्पनिक हो ही नहीं सकती ।"[1] अत: उसके संबंध में कोई निश्चित नियम बना लेना अत्यंत कठिन है । फिर भी साहित्यिक अंग होने के कारण उसकी कुछ सीमाएँ अवश्य माननी चाहिए, वरना वह उच्छृङ्खल हो सकती है । विद्वानों ने रचना-दृष्टि से कहानी के मुख्यत: छ: तत्वों का उल्लेख किया है :- 1॰ कथानक अथवा विषयवस्तु, 2॰ वार्तालाप अथवा संवाद 3॰ पात्र एवं चरित्र-चित्रण 4॰ देश काल अथवा वातावरण 5॰ भाषा-शैली 6॰ जीवन दर्शन या उद्देश्य ।

पर यह आवश्यक नहीं कि जब तक इन तत्वों का पूर्ण समावेश किसी कहानी में नहीं किया जाय तब तक उसे कहानी की संज्ञा न है । आज केवल कुछ पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को लेकर ही कहानी की रचना की जाती है । कुछ रेखाएँ या विचार मात्र ही कहानी का रूप धारण कर जाती है । अत: यह स्पष्ट है कि कहानी लिखने में कोई विशेष नियम बनाकर कहानीकार को उन नियमों की परिधि में नहीं बाँधा जा सकता । फिर भी कहानियों में अधिकांशत: उमर

1॰ डॉ॰सुरेश सिन्हा, हिन्दी कहानी उद्भव और विकास, पृ-36॰

गिनाए गए कला-तत्वों का किसी न किसी रूप और मात्रा में समावेश हो ही जाता है । डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल लिखते हैं कि "कहानी के उक्त तत्वों में से कहानीकार किसी एक या एकाधिक तत्वों पर बल दे सकता है, फिर भी समस्त तत्वों का सामूहिक प्रभाव कहानी कला की मुख्य आत्मा है क्योंकि प्रत्येक तत्व अपने अपने स्थान पर विशिष्ट और मूल्यवान है । किसी न किसी रूप और स्तर में उन तत्वों का सहारा कहानीकार को अवश्य लेना पड़ता है ।"[1]

उक्त उल्लिखित कहानी तत्वों को स्थूल रूप में वस्तु तथा शिल्प के नामों में दो वर्गों में बाँटा जा सकता है । मोटे रूप में वस्तु पक्ष के अन्तर्गत कथावस्तु, पात्र एवं चरित्र-चित्रण तथा उद्देश्य तत्वों को तथा शिल्प पक्ष के अन्तर्गत कथोपकथन, वातावरण तथा भाषा शैली को समाविष्ट किया जा सकता है । इसी दृष्टि से ही शोध प्रबन्ध में लेखिकाओं की कहानियों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है ।

कथानक या विषयवस्तु :-

प्रत्येक कथाकाव्य में कोई न कोई कथा होती है । इसी को कथावस्तु (वस्तु , कथा, कथानक) कहते हैं । कथानक का संबंध उन घटनाओं एवं कार्यों से होता है जो पात्रों द्वारा घटित होते हैं तथा जो कहानी को विकास की ओर ले जाते हैं । स्पष्ट है कि कथानक ही कहानी का आधार है, उसके निर्माण का आधार है । डॉ॰सुरेश सिनहा के शब्दों में -

"कहानी का मूलभूत आधार कथानक ही होता है, जिसके बिना सत्य तो यह है कि कहानियों का अस्तित्व संभव ही नहीं होता "[2] आज के सर्वथा अति आधुनिक युग की कहानियों में कथानक का एक प्रकार से ह्रास ही लक्षित होता है । प्राय: चरित्रों, मन:स्थितियों, पड़नेवाले इम्प्रेशनों, विचारोत्तेजक रेम्बलिंग आदि बातों को महत्व दिया जाता है । फिर भी महत्व चाहे किसी तत्व को दिया

---

1. डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल, हिन्दी कहानी की शिल्प विधि का विकास, पृ-295
2. डॉ॰सुरेश सिनहा, हिन्दी कहानी उद्भव और विकास, पृ-38

जाए, कहानी में कथानक का कोई न कोई अंश निश्चित रूप में अवश्य उपस्थित होगा चाहे वह कितना ही गौण तथा उपेक्षणीय क्यों न हो । यहाँ कहा जा सकता है कि जब कथावस्तु में मानवीय अन्तर्द्वन्द्व एवं मनोवैज्ञानिक भावों का चित्रण होता है, तब उस में और भी सूक्ष्मता आ जाती है । सामान्यतया कथावस्तु लेखक के जीवन की किसी संवेदनशील घटना या अनुभूति होती है ।

कथानक प्रधान कहानी साधारणतया घटना प्रधान कहानी की कोटी में रखी जा सकती है । घटना प्रधान कहानियों का प्राण संघर्ष का चित्रण है । संघर्ष अथवा द्वन्द्व का चित्रण जिन कहानियों में प्रतिपाद्य बन जाता है उनमें यह संघर्ष ऐसा संवेदनशील रूप धारण कर लेता है कि उसका अपना एक प्रकार का चमत्कार स्वयं में बन पडता है । कथावस्तु के सफल तथा कलात्मक प्रस्तुतीकरण केलिए संक्षिप्तता, मौलिकता, रोचकता, क्रमबद्धता, विश्वसनीयता, कौतूहल अथवा उत्सुकता, प्रभावात्मक एकता, सुनियोजित प्रस्तुतीकरण आदि गुणों का समावेश आवश्यक है ।

श्रीमती गिरीश रस्तोगी के अनुसार "कथा विन्यास की दृष्टि से कथावस्तु के चार प्रधान अंग होते हैं जिनके द्वारा कहानी की सफलता का निर्णय किया जा सकता है - 1· शीर्षक, 2· आरंभ, 3· विकास, और 4· चरमसीमा या अन्त"।[1]

कहानी की सफलता की दृष्टि से शीर्षकका महत्वपूर्ण स्थान है, एक प्रकार से वह कहानी में प्रवेश करने का द्वार है । शीर्षकका आकर्षण कहानी को रोचक बना सकता है और उसकी उपयुक्तता कहानी का एक गुण बन सकती है । कहानी के शीर्षकों को कई वर्गों में विभाजित किया जा सकता है जैसे भावात्मक, तथ्योद्घाटक, इतिवृत्तात्मक; संबंध सूचक, पात्र सूचक, स्थान सूचक, घटना-व्यापार सूचक, कौतूहलजनक, व्यंग्यपूर्ण, हास्योद्भावक, मनोवृत्ति पर आधारित, कालविधि सूचक, प्रश्नार्थक, मुहावरों, कहावतों पर आधारित शीर्षक आदि । इनके अतिरिक्त शीर्षकों की लंबाई के आधार पर उसके कई वर्ग किये गये हैं जैसे एक शब्दवाले, दो शब्दवाले, तीन शब्दवाले आदि ।

1· श्रीमती गिरीश रस्तोगी, हिन्दी कहानी:सिद्धान्त और विवेचन, पृ-57·

कहानी का आरंभ कई प्रकार में हो सकता है । किसी कहानी का आरंभ परिचयात्मक भूमिका से होता है, तो किसी का आकस्मिक घटना के साथ, किसी वातावरण के चित्रण से आरंभ होता है तो किसी का नाटकीय वार्तालाप से, किसी का इतिवृत्तात्मक आरंभ से होता है तो और किसी का आरंभ पात्रों के चरित्र-चित्रण के साथ होता है । अत: कहानी के आरंभ के संबंध में निश्चित रूप से यह कहना उचित नहीं है कि आरंभ इसी प्रकार का हो । किन्तु वह इतना आकर्षक और कौतूहलोद्दीपक हो जिससे पाठक कहानी को आद्यंत पढ़ने केलिए बाध्य हो जाए ।

कहानी का मध्यभाग कहानी का मूल आधार होता है । यह कहानी की कथावस्तु को आगे बढ़ाता है । कहानी के मध्य भाग में मुख्य घटना या समस्या की उन्मुखता और परिवर्तन बिन्दु का समावेश रहता है । डॉ॰शोभा बिसारिया ने लिखा है कि " कहानी की कथावस्तु का मध्यभाग मूल कथा सूत्र के प्रसार में सहायक होता है तथा आगामी कथा की ओर संकेत करता है ।"[1] डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल के शब्दों में "इसी अंग में कहानी की वास्तविक आत्मा प्रस्फुटित होती है और कहानी के लक्ष्य की पूर्ण पृष्ठभूमि तैयार हो जाती है, रचना विधान की दृष्टि से वस्तु विकास का मध्य-भाग ही कहानी का विकास-भाग है और विकास-भाग कहानी का मूल शरीर है ।"[2]

कहानी के विकास की अन्तिम अवस्था कहानी का अन्त है जितना भी विवरण कहानी में प्रसारित रहता है, उसका सारा सौन्दर्य पूँजीभूत होकर अन्त में आकर एक विशेष प्रकार की संवेदनशीलता को स्फुरित करता है । सिद्धान्त की दृष्टि से इसी को प्रभावान्विति और समष्टि प्रभाव माना जाता है । अन्त के भी दो पक्ष है - 1॰ चरम सीमा, 2॰ अन्त । कुछ कहानियों में केवल चरम सीमा ही अन्त होता है, अन्त अलग से नहीं होता । कहानियों में चरम सीमा और अन्त दोनों का निर्वाह सफल कहानीकार ही कर पाते हैं । चरम सीमा

1॰ डॉ॰ शोभा बिसारिया, कहानीकार प्रसाद, पृ-46

2॰ डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल, हिन्दी कहानी की शिल्प विधि का विकास, पृ-297

कहानी का सबसे महत्वपूर्ण अंग है क्योंकि इसी पर पहुँचकर कहानी का सारा रहस्य खुल जाता है और पाठक को एक चमत्कारिक आनन्द की अनुभूति होती है ।

विषयवस्तु के आधार पर कहानियों का वर्गीकरण :-

हिन्दी में अनेक प्रकार की कहानियाँ लिखी जा चुकी हैं । अत: आधुनिक कहानी के वैविध्य एवं प्रसंगों को देखते हुए उन्हें निर्धारित वर्गों में विभाजित करना कठिन कार्य है । फिर भी कहानियों के वैज्ञानिक अध्ययन केलिए उन्हें कुछ वर्गों में विभाजित करना अनिवार्य हो जाता है । विभिन्न आधारों पर कहानियों का वर्गीकरण विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किया गया है । डॉ·ब्रह्मदत्त शर्मा के विचार में "कहानियों का वह वर्गीकरण सर्वोत्तम माना जाएगा जिसमें आधारभूत ऐसे सिद्धांतों को ग्रहण किया गया हो, जो सर्वमान्य तथा व्यापक हो । एक एक कहानी में प्राप्त साधारण विशेषताओं के आधार पर किसी भाषा की समस्त कहानियों को श्रेणियाँ निर्धारित करना समीचीन नहीं । ---------- अत: विषयवस्तु, प्रतिपादन शैली, रचना-लक्ष्य तथा स्वरूप विकास की विशेषताओं के सुदृढ तथा व्यापक सिद्धान्तों के ही आधार पर किया गया हिन्दी कहानियों का वर्गीकरण अधिक स्वाभाविक तथा महत्वपूर्ण होगा ।"[1] वर्णित विषय के आधार पर डॉ·श्रीपति शर्मा ने कहानी के सात वर्ग माने हैं - 1· सामाजिक कहानियाँ , 2· राजनीतिक कहानियाँ, 3· ऐतिहासिक कहानियाँ, 4· पौराणिक कहानियाँ, 5· लोक कथाएँ, 6· जासूसी कहानियाँ और 7· मनोवैज्ञानिक कहानियाँ ।"[2]

महिला कहानीकारों की कहानियों में विषयवस्तु के जो भिन्न-भिन्न प्रकार देखने को मिलते हैं उन्हीं के आधार पर कहानियों के निम्नलिखित वर्ग किए जा सकते हैं - 1· पारिवारिक कहानियाँ,2· सामाजिक कहानियाँ, 3· राजनीतिक कहानियाँ, 4· ऐतिहासिक तथा पौराणिक कहानियाँ, 5· उपदेशात्मक कहानियाँ, 6· मनोवैज्ञानिक कहानियाँ, 7· प्रगतिशील (समाजवादी) कहानियाँ,

---

1· डॉ·ब्रह्मदत्त शर्मा, हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन, पृ-35
2· श्रीपति शर्मा त्रिपाठी, कहानीकला :विकास और इतिहास, पृ-40

-G5445-

8· प्रतीकात्मक कहानियाँ, 9· भाव-प्रधान कहानियाँ, 10· हास्य-व्यंग्य प्रधान कहानियाँ ।

पारिवारिक कहानियाँ :-

घरेलू संवेदनाओं पर आधारित पारिवारिक कहानियाँ भारतीय परिवार में नारी की विवशता, पारिवारिक संबंधों के ईर्ष्या, प्रेम, कलह आदि विषयों पर आधारित कहानियाँ हैं । संयुक्त परिवार में होनेवाले द्वेष, संघर्ष तथा गृह-कलह, मध्यवर्गीय परिवार में बच्चों की देखभाल आदि विषयों को आधार शिला बनाकर लिखनेवाली कहानियाँ भी इसके अन्तर्गत आती हैं ।

सामाजिक कहानियाँ :-

राजनीतिक क्षेत्र में नेता गण, समाज में सुधारक, समूह तथा साहित्य जगत् के लेखक वर्ग, विभिन्न सामाजिक कुप्रथाओं का निवारण करने केलिए प्रयत्नशील रहते हैं । "समाज सापेक्ष कहानियों में सामयिक जीवन की विविधता का पूरा प्रदर्शन किया जाता है ।"[1] जिन कहानियों में देश की सामाजिक कुप्रथाओं पर प्रकाश डाला जाता है और उनका अनुशीलन किया जाता है तथा समाज का स्पंदन रहता है, उन्हें सामाजिक कहानियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है । व्यापार, व्यवसाय, समाज-सुधार, सरकारी काम, नवीन सभ्यता के गुण-दोष आदि विषयों से संबंध रखनेवाली कहानियाँ सामाजिक कहानियाँ ही हैं । महिला कहानीकारों की अधिकांश कहानियाँ सामाजिक कहानियों के अन्तर्गत आएँगी ।

राजनीतिक कहानियाँ :-

जिन कहानियों का ध्येय शुद्ध राजनीति तथा शासन और शासित पर आलोचना और व्यंग्य करना हो, उन्हें राजनीतिक कहानियों की संज्ञा दी जाती है । राजनीतिक कहानियों के प्रमुख विषय हैं - राष्ट्रीय आन्दोलन, पुलिस का अत्याचार, हिन्दु मुस्लिम साम्प्रदायिक संघर्ष, जमीन्दारी वर्ग का शोषण,

---

1· डॉ·ब्रह्मदत्त शर्मा, हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन, पृ-44

विभाजन के अवसर पर हुए साम्प्रदायिक दंगें, मारकाट, लूटखसोट, हत्या, बलात्कार, शरणार्थियों की समस्या, स्त्रियों के बेइज्जत होने तथा देश में व्याप्त भ्रष्टाचार का वर्णन । "भावुक तथा प्रतिभा संपन्न कहानीकार समाज की सार्वकालिक और सार्वदेशिक समस्याओं के प्रति पूर्णत: जागरूक होता है ।"[1]

ऐतिहासिक तथा पौराणिक कहानियाँ :-

ऐतिहासिक कहानियों की रचना में ऐतिहासिक घटनाओं तथा पात्रों के प्रति न्याय करने की दृष्टि तथा अतीत को वर्तमान से महत्वपूर्ण मानने की भावना काम करती है । जातीय गौरव की भावना से प्रेरित होकर वर्तमान से पराजित एवं असन्तुष्ट होने की भावना से भी इस वर्ग की कहानियों की रचना होती है । ऐतिहासिक कहानियों में भूतकाल की घटनाएँ कल्पना तथा भाव समन्वित रखी जाती हैं । बिना वातावरण निर्माण के ऐतिहासिक कहानियों में प्राण नहीं आ सकते । ऐतिहासिक कहानियों में वस्तु और पात्र चाहे इतिहास प्रसिद्ध हो या न हो पर उनमें जो सांस्कृतिक वातावरण संबंधी विवरण और वर्णन सामने खड़ा किया जाएगा वह सर्वदा इतिहासानुमोदित होगा ।

उपदेशात्मक कहानियाँ :-

प्राचीन भारतीय कथा साहित्य के अन्तर्गत उपदेशात्मक कहानियों की रचना होती थी । बीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में कुछ ऐसी कहानियाँ भी लिखी गयीं जिनका उद्देश्य कोई उपदेश अथवा शिक्षा देना रहता था ।

मनोवैज्ञानिक कहानियाँ :-

मनोवैज्ञानिक धरातल पर लिखी गयी कहानियों में समाज की समस्याओं के यथार्थ चित्रांकन के साथ-साथ ही व्यक्तियों की मनोवृत्तियों का सूक्ष्म अध्ययन तथा विश्लेषण भी प्रस्तुत किया जाता है । लेखक पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण उसके कार्य-व्यापारों और कर्म प्रेरणाओं के अनुकूल मनोवैज्ञानिक शर्तों पर करता है । कथानक का प्रधान उद्देश्य पात्रों की मनोवृत्तियों का विश्लेषण ही रहता है और वातावरण, कथोपकथन आदि सब कहानी तत्व उस प्रधान उद्देश्य की पूर्ति में योग देते हैं और इन तत्वों के प्रति लेखक का ध्यान नहीं रहता । "इस तरह की कहानियों में घटनाओं और कार्यों की अपेक्षा मानसिक उहापोह और विश्लेषण को प्रमुखता मिलती है ।"[2]

---

1. डॉ. ब्रह्मदत्त शर्मा, हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन, पृ-43
2. डॉ. प्रभा सक्सेना, उषादेवी मित्रा: व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ-41.

प्रगतिशील (समाजवादी) कहानियाँ :-

इन कहानियों का उद्देश्य सामाजिक चेतना जगाना है । यथार्थ का चित्रण इनका लक्ष्य रहा है । समाजवादी रचनाओं का मूलाधार मार्क्सवादी दर्शन रहा है । मार्क्सवादी साहित्यकार अपने साहित्य के केन्द्र में मानव की प्रतिष्ठा करता है । मार्क्सवादी दर्शन के अनुसार समाज में केवल दो वर्ग हो सकते हैं - सर्वहारा और शोषक । आजके मशीनी युग में बहुत बड़ा वर्ग आर्थिक गुलामी से त्रस्त है । आर्थिक विपन्नता का अर्थ है - जीवनधारण के तत्वों का अभाव । भौतिक जीवन का यह अभाव व्यक्तित्व को अत्यन्त संकीर्ण, निष्प्राण और रूढ कर देता है । नैतिक मान्यताएँ और चारित्रिक मूल्य अत्यधिक गिर जाते हैं । शोषक और शोषित दोनों वर्गों में अनेक प्रकार की मनोवैज्ञानिक ग्रन्थियाँ, मानसिक विक्षिप्तता और यौवन विकृतियाँ, आ जाती हैं ।

प्रतीकात्मक कहानियाँ :-

इनक कहानियों में पात्र एवं घटनाओं के सहारे जीवन के सूक्ष्म तत्वों अथवा सिद्धान्तों का निदर्शन किया जाता है । प्रतीकात्मक कहानियों का प्रचलन जिस शैली में हो रहा है उसमें किसी तथ्य का प्रतीक लक्षणिक रूप से खड़ा किया जाता है । इनमें अर्थबोध का चमत्कार प्रस्तुत अर्थ में न रहकर लक्ष्यार्थ में होता है । प्रतीकात्मक कहानियों में जो चमत्कार मिलता है उसे वास्तव में विषयवस्तु के अर्थ से संबंधित समझना चाहिए ।

भाव प्रधान कहानियाँ :-

इन कहानियों में कहानीकार किसी पात्र, घटना अथवा परिस्थिति के संबंध में पाठकों के हृदय में कोई विशेष भाव जगाना चाहता है । परन्तु भाव प्रधान कहानियों में भावों के साथ विचार तथा कल्पना का भी योग रहता है । इनमें भाव प्रधान रहते हैं और अर्थ बोध अपेक्षतर गौण रहता है । कहानीकार पात्रों के चारित्रिक गुणों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी इनमें करते हैं । वस्तुत: भावप्रधान

कहानियाँ प्रभावपूर्ण होती हैं ।

हास्य-व्यंग्य प्रधान कहानियाँ :-

सरस शैली में तीखे व्यंग्यों के माध्यम से किसी सामाजिक यथार्थ को उभारने का प्रयत्न जिन कहानियों में किया जाता है वे हास्य-व्यंग्य प्रधान कहानियाँ ही हैं । इनका उद्देश्य पाठकों को केवल हँसाना ही नहीं होता, कभी कभी समाज की जर्जरता, कुरीति आदि देखकर लेखक के हृदय की व्यथा फूट पड़ती है और हास्य व्यंग्य के सहारे वह अपने हृदय के चीत्कार को प्रकट करता है । हास्य-व्यंग्य प्रधान कहानियों का संबंध विशेष रूप से कहानी की घटनाओं अथवा पात्रगत विशेषताओं से होता है ।

महिला कहानीकारों की पारिवारिक कहानियाँ :-

घरेलू संवेदनाओं पर आधारित पारिवारिक कहानियाँ भारतीय परिवार में नारी की विवशता, पारिवारिक संबंधों के ईर्ष्या, कलह, प्रेम आदि को विषय बनाकर लिखी गयी कहानियाँ हैं । इस वर्ग की कहानी लेखिकाओं ने धनी, मध्य, निम्न वर्ग-तीनों की समस्याओं और तीनों के ही गृहस्थ जीवन के चित्र अंकित किए हैं । नारी जीवन की समस्याओं तथा सूक्ष्म भावनाओं का मार्मिक, यथार्थ एवं सजीव चित्रांकन करने में जितनी सफलता नारी को मिली है उतनी पुरुष को नहीं ।

उषादेवी मित्रा की कहानियों में भारतीय एवं पाश्चात्य देशों की विवाह व्यवस्थाओं के तथा पति-पत्नि के संबंधों के चित्र देखने को मिलते हैं । पति को परमेश्वर माननेवाली नारी अपनी संपूर्ण सेवा, त्याग, सहानुभूति पति पर ही केन्द्रित रखती है । "सांध्य तारा" में भारतीय दाम्पत्य जीवन का भव्य रूप मिलता है । ऊर्मिला और सुकुमार दाम्पत्य जीवन के बन्धन में बंध गये हैं । सुकुमार विदेश जाता है, विदेशी जीवनचर्या में तल्लीन हुआ, परन्तु पति को परमेश्वर माननेवाली ऊर्मिला का त्याग एवं आत्मशक्ति के बल पर जीवन त्याग कर सांध्य तारक के रूप में चमकना पाठक को भारतीय संस्कृति और दाम्पत्य जीवन की

गुणमयी अवस्था के प्रति आकर्षण पैदा कर देता है । उसके ठीक विपरीत अंग्रेजी समाज में नारी एक पति के रहते हुए अथवा उसकी मृत्यु के पश्चात् भी किसी अन्य से विवाह कर सकती है । उनके समाज में नारी पर कोई अंकुश नहीं । "पहचान"[1] कहानी में बेटी, पुत्री डिना और पति के होते हुए भी राले से विवाह कर लेती है । "समझौता"[2] में पाश्चात्य संस्कृति में पली हुई कुसुम और भारतीय संस्कारों से ओतप्रोत परेश के बीच वैवाहिक बन्धन के कारण उत्पन्न समस्याओं का चित्रण मिलता है । इक्कीस वर्ष की अवस्था में कुसुम का विवाह भारतीय संस्कृति के रंग में रंगे परेश से होता है । विवाहोपरान्त जब कुसुम भारतीय वातावरण के परिवार में आती है, उसे बड़ा धक्का लगता है, उसका स्वप्न भंग हो जाता है, उसे ससुराल से घृणा हो जाती है । कुसुम के हृदय की घृणा उसे उच्छृंखल, अविनीत, चिड़चिड़ा बना देती है । नौकर-चाकर सभी उस से आतंकित रहते हैं । एक दिन फूलों की चोरी का अपराध लगाकर मालिन को पुलिस के हवाले कर देती है और परेश का विरोध करने पर भी अपने सम्मान की रक्षा केलिए पागल हो उठती है । उसी दिन माली की दरिद्रता देख उसकी आँखें खुल जाती हैं और वही क्षण उसे जीवन के प्रति प्रेरणा देता है । इन कहानियों के माध्यम से उषादेवी जी ने भारतीय एवं पाश्चात्य पारिवारिक जीवन की यथार्थ एवं सजीव झाँकी प्रस्तुत की है ।

पति और पत्नी के आपसी संबंधों की नींव स्नेह और विश्वास पर आधारित है । स्नेह और विश्वास का आधार चुकते ही विवाह की नींव हिल जाती है और दोनों ओर अमिट दूरियाँ आ जाती हैं । "रिक्ता"[3] कहानी में इस समस्या का निरूपण बड़ी ही मार्मिकता एवं सहजता से हुआ है । "रिक्ता" कहानी में कमला तपेदिक की रोगिणी है । वह सदैव शंकित रहती है कि कहीं उसका रोग पति को न लग जाए । पति के शुभकामना के फलस्वरूप ही वह जीवन के अन्तिम क्षण तक अपनी संपूर्ण इच्छाओं, वासनाओं का दमन कर अपने को पति से दूर ही

---

1. उषादेवी मित्रा, पहचान, हंस, फरवरी, 1937, पृ-458
2. " महावर, पृ-128
3. " रागिनी पृ-A-8

रखती है । लेकिन पति की चिन्ता है कि पत्नी उससे घृणा करती है । एक दिन जब विनोद ज्वर से काँपता घर लौट कर पलंग पर पड़ा छटपटा रहा था तब कमला द्वार पकड़े आतुर दृष्टि से उसे देख ही रही थी । उन्हें विश्वास था कि उनकी श्वास से विनोद बीमार पड़ जाएगा । लेकिन विनोद के मित्र विजय की बहन सुरंजिता उसके सिरहाने बैठ कर उसके सिर दबा रही थी । यह उसे सह्य नहीं होता कि उसके रहते उसके पति पर किसी अन्य का अधिकार हो । धीरे-धीरे सभी रहस्य अपने वास्तविक रूप में पति के सामने आते हैं और उसे अपनी गलती का बोध होता है । लेकिन यह सब कुछ तब होता है जब कमला इस जीवन के दुखों से मुक्त होकर चल देती है । विवाहिता स्त्री अपने पति को स्वर्ग के समान समझती है तथा सदैव उसकी मंगल-कामना करती है ।

"मृत्युंजयी"[1] कहानी में उस प्रेम का वर्णन हुआ है जो सुखी परिवारों में पति-पत्नी के बीच पाया जाता है । लेखिका के शब्दों में ऐसा प्रेम मृत्यु को जीतनेवाला होता है । "मातृत्व"[2] में मध्यवर्गीय मुसलमानी संयुक्त परिवार का चित्र प्रस्तुत किया गया है । गरीब मंजुरअली की एकमात्र बहन साकी दस वर्ष की अवस्था में विधवा होकर पिता के घर लौट आती है, तो अपनी बहन का आदर के साथ स्वागत करते हुए मंजुर ने अपनी पत्नी कुलशुम से कहा - "इस अभागिनी को लड़की के समान प्यार करना । यदि इसमें तुम्हारे लड़कों को थोड़ा बहुत कष्ट भी हो तो उसका विचार न करना ।"[3] कष्ट होने पर भी नन्द को काम करने केलिए कुलशुम नहीं पुकारती है । संयुक्त परिवार के सुनियोजित एवं व्यवस्थित संचालन केलिए परिवार के मुख्य "कर्ता" का निर्णय अन्य सारे सदस्यों को मान्य होता है । अत: पारिवारिक जीवन की भिन्न-भिन्न परिस्थितियों की भिन्न-भिन्न समस्याओं का चित्रण इन्होंने आदर्शप्रतिष्ठा की दृष्टि से किया है । पुरूष-स्त्री का पारस्परिक संबंध, प्रेमी प्रेमिकाओं का प्रेममय जीवन, भारतीय परिवारों की विवाह संबंधी समस्याएँ, दारिद्र की भीषण ज्वाला, स्त्रियों की ईर्ष्या, नवयुवकों

---

1. उषादेवी मित्रा, रागिनी, पृ-8-14
2. " आँधी के छन्द, पृ-197-229.
3. " " पृ-197-198

की विलासिता आदि समकालीन समस्याओं की व्याख्या का लक्ष्य इन्होंने "मानव समाज का उत्थान" रखा है ।

पारिवारिक कहानियों में श्रीमती कमलाजी ने नारी की विषमताओं और पारिवारिक संबंधों का चित्रण किया है । पारिवारिक संबंध की कहानियाँ पति-पत्नी, देवर-भाभी के प्रेम, वैमनस्य और कर्तव्य-भावना की समस्याओं को आधार-शिला बनाकर लिखी गयी हैं । "करूणा" में देवर-भाभी का पवित्र प्रेम है । करूणा विधवा हो गयी । तब से वह अपने घर में दासी के समान काम करके जीवन बिता रही थी । जेठानीजी के निर्देशानुसार ऐ·सी·एस· परीक्षा उत्तीर्ण होकर आनेवाले देवर के आते समय कुलक्षणी विधवा भाभी अपने को छिपाकर खड़ी रही । भाभी को देखने की उत्कट अभिलाषा से सब के रोकने पर भी नवकुमार ने अपनी भाभी करूणा का चरण स्पर्श किया । वह बोलता है -"भाभी, इसलिए तो मैं विवाह नहीं करना चाहता । तुम्हारे प्रति मैं जो अपना कर्तव्य निश्चय कर लिया है, संभव है विवाह के बाद मैं उससे डिग जाऊँ । मैया के रहते हुए तुम केवल भाभी ही थी, किन्तु अब तो तुम मेरी माता के स्थान पर हो ।"[1] करूणा का हृदय देवर के ममत्व भरे शब्दों को सुनकर उमड़ पड़ता है । "गीता" में देवर-भाभी का पवित्र-प्रेम कलुषित हो गया है । जब बाल-विधवा गीता युवती हुई तब यौवन संबंधी इच्छाएँ उसके मन में उभरकर आने लगीं । शिक्षा समाप्त कर घर आया हुआ विनोद अपनी भाभी की मीठी वाणी, हँसी-खुशी और रूप-सौन्दर्य की ओर इतना आकृष्ट हुआ कि दोनों प्रेम की सरिता में डूब गये । बड़े घर का रहस्य खुल जाने पर सास ने गीता को कुल -कलंकिनी कहकर घर से निकाल दिया । "कर्तव्य" कहानी पति-पत्नी के आदर्श प्रेम और एक दूसरे के प्रति निष्ठा एवं कर्तव्य की भावना को प्रकट करती है । कहानी के आरंभ में आदर्श दांपत्यजीवन का चित्र हमें मिलता है । "एक दिन का बिछोह उसे असह्य था ।"[2] हरिहर क्षेत्र मेले के तीसरे दिन उषा अपने पति के साथ बोटिंग का आनन्द लेने केलिए नाव पर बैठी । भारी बोझ के कारण नाव भँवर में फँस गयी । मृत्यु सामने होने पर,

---

1· कमलादेवी चौधरी, पिकनिक, पृ-25
2· " " पृ-36

पत्नी को जिसे वह जीजान से चाहता था, छोड़कर अपना जीवन बचाता है । लेकिन लोगों ने उषा को बचाया । वर्षों बाद पति रोगी हो गया । उठने असमर्थ था । एक दिन भूकम्प के कारण सारा घर झूल रहा था। भयभीत उषा बच्चे को बाहर छोड़कर रोगी पति को बचाने केलिए अन्दर आयी तो क्षुधित भूमि ने दोनों को सदा केलिए अपने गर्भ में छिपा लिया । "पतन" में भाई-भा की वैमनस्य-समस्या को उठाया गया है । सदाचारी, संयमी और त्यागी सुधीर अपने सद्व्यवहार के कारण लोगों की प्रीति का पात्र बना था । उस की दूकान के ग्राहक भी खूब बढ़े और अधिक आमदनी भी होने लगी । सबका सुख चाहनेवाला त्यागी सुधीर स्वार्थी और ईर्ष्यालु बना । ईर्ष्या, द्वेष के वशीभूत होकर सुधीर ने केशव की दूकान में आग लगा दी । लेकिन भूकंप की घटना महत्वाकांक्षी सुधीर को पूर्ववत् ही बना देती है । "भ्रम", "पिकनिक" आदि में मित्रों का आपसी प्रेम तथा श्रद्धाभाव देखने को मिलता है । "सुधिया" कहानी कहारिन विधवा सुधिया धनी विधवा रम्भावती की सेवा करके उसके साथ रहती थी । काल ही में सुधिया बीमार हो कर धीरे-धीरे चारपाई ही लग गयी । "सुधिया केलिए पथ्य आदि स्वामिनी ही तैयार करती थी । कभी बाज़ार से दू मँगा देती, कभी अपनी रसोई में साबू दाना बना देती ।"[1] सुधिया की सेवा-सुश्रूषा करते वक्त स्वामिनी स्वयं सोचती है - "बेचारी ने मेरी बहुत सेवा की है अब अन्त समय में उसका दीन-ईमान क्यों जाय ।"[2] उस समय परिवारों के नौकरों का आदर-सम्मान पारिवारिक सदस्यों के समान ही था । "कर्कशा" की कर्कशा, "हिरिया" की हिरिया स्वामिभक्त सेविकाएँ हैं जो अपनी संपूर्ण सेवा, जीवन-भर की कमाई अपनी स्वामिनी को ही अर्पित कर देती हैं। "श्रमी की अभिलाषा" में उच्च और निम्न वर्ग की नारी की विवशता का चित्रण मिलता है धन की अभिलाषा में मस्ता अपनी पत्नी मोहनियाँ की आबरू तक उतारने केलिए तैयार है । दुखिया मोहनियाँ क्या करे, "पति की बात मानती है तो स्त्री की

---

1. कमलादेवी चौधरी, पिकनिक, पृ-106
2. " "

सबसे प्यारी संपत्ति - सबसे कीमती चीज़ - आबरू जाती है, नहीं मानती है तो डंडों की मार पड़ती है। अबला ठहरी, क्या करे? किस की शरण में जाय ? मार से दुखिया के शरीर पर नीली-नीली परतें पड़ गयी हैं; हड्डी में दर्द है, और रुपये के लोभी मस्ता को उस पर ज़राभी दया नहीं है।"[1] दूसरी ओर सेठानी कैद है। दुश्चरित्र पति की अवहेलना करने की सामर्थ्य उसमें नहीं। दोनों की स्थिति एक सी है - कुछ भी अन्तर नहीं। अत: स्पष्ट है कि सभी वर्ग की नारियाँ विवशता का अनुभव करती हैं। "साधना का उन्माद" कहानी में, स्त्री के अतृप्त प्रेम की पूर्ति,वस्त्र, आभूषण तथा अन्य सांसारिक पदार्थों द्वारा नहीं हो सकतीं; इस भाव की मार्मिक अभिव्यंजना की गयी है। बाल्यकाल में ही माता की मृत्यु हो जाने पर चाची की स्नेह शून्य छाया में पलने से साधना का हृदय स्नेह पिपासु रहा। विवाह के उपरान्त सदाचारी एवं संयमी पति का प्रेम भी उसके भाव-ज्वार को शान्त न कर सका।

कमला त्रिवेणी शंकर की कहानियों में सामान्यतया नारी के चार रूप हमारे सामने आते हैं - माता, भगिनी, पत्नी तथा प्रेयसी। लेखिका द्वारा विरचित "भाई", "रक्षाबन्धन", "दृष्टि-भ्रम" आदि कहानियों में नारी के भगिनी रूप का पावन चित्र प्रस्तुत किया है। पत्नी रूप में उनकी पात्राएँ प्राय: भारतीय मर्यादा से अनुप्राणित पति - परायणा, सेवामयी एवं त्यागशीला रही हैं। "मूक-सेवा" कहानी की मीना, "एक रात" कहानी की ऊर्मिला एवं "तृप्ति" कहानी की मीना पति के विचारों को कार्यान्वित करनेवाली हैं। "मन का मोह" की उमा तथा "घर का लाज" की लता और "कल्पना" की कल्पना अपने हृदय की पीड़ा को अन्तर में ही दबाकर पति को प्रसन्न रखना अपना कर्तव्य मानती हैं। "समझौता" की कामना भी पति के दुर्व्यवहार से तिरस्कृत होकर गृह-त्याग देती है, किन्तु पति का हृदय-परिवर्तन होने पर ससम्मान लौट आती है। किन्तु "नारी का स्वाभिमान" की शीला पति द्वारा चौदह वर्षों तक त्यक्ता रहकर पति के आग्रह पर भी पुन: घर लौटने को तैयार नहीं हुई, क्योंकि जब पति ने तनिक से सन्देह

---

1. कमलादेवी चौधरी, उन्माद , पृ-134

पर उसका त्याग कर दिया तब वह स्वाभिमानी नारी चौदह वर्ष बाद उनके पश्चाताप और आमंत्रण को क्यों स्वीकार करें ? क्योंकि उसके पति ने दूसरी नारी से विवाह कर लिया था । उनकी अधिकांश कहानियों में दाम्पत्य प्रेम के विषाद-ग्रस्त तथा सरस चित्र अंकित किये गए हैं । "राजद्रोही का प्रेम", "नर्गिस", "उषा", "रागिनी", "छोटी माँ" आदि कहानियों में लेखिका ने नारी के प्रेयसी रूप के साथ-साथ उसके तप, त्याग एवं बलिदान आदि चारित्रिक विशेषताओं का भी अंकन किया है ।

कमला त्रिवेणी शंकर ने नारी की माता, भगिनी, पत्नी तथा प्रेयसी - इन रूपों में से मातृत्व को अधिक सबल माना है । "माँ का आँचल", "माँ", "नारी", "नारीत्व", "पुकार", "मातृत्व की छाया में", "नई माँ", तथा "ममता" शीर्षक कहानियों में नारी के मातृत्व भाव की प्रबलता का चित्रांकन है । "माँ" कहानी की गिरिबाला में इसी प्रवृत्ति को लक्ष्य करके उसके पति आनन्द सोचते हैं - "पत्नी बनकर ही नारी ने मातृत्व का पद पाया है, लेकिन पहले वह माता है तब पत्नी ।"[1] "माँ का आँचल" की प्रभा सपत्नी के अवैध शिशु को अपनाकर इतनी सन्तुष्ट हो जाती है कि उसकी तपेदिक जैसी भयंकर बीमारी भी स्वत: दूर हो जाती है । "नारी" की सरोजिनी अपने विश्वासघाती प्रियतम प्रमोद की अवहेलना चाह कर भी नहीं कर पाती; क्योंकि उसकी दिवंगता पत्नी के नवजात शिशु ने उसके मातृत्व को वशीभूत कर लिया । "ममता" की नर्तकी-पुत्री रमा प्रभात के तीन मातृहीन बच्चों के स्नेह में अपना व्यवसाय छोड़कर प्रभात की पत्नी बन गयी ।

चन्द्रवती ऋषभसेन जैन ने भारतीय पारिवारिक जीवन में आनेवाली समस्याओं का उल्लेख किया है । स्त्री रूप और उसका मोह, पति-पत्नी का प्रेममय जीवन, देवर-भाभी संबंध, आदर्श गृहिणी, परिवार और नौकर आदि विषयों को आधार बनाकर कहानियाँ लिखी गयी हैं । "झींकती भिखारिन","मेरी चुटिया उसके

---

1. कमला त्रिवेणी शंकर, जयमाल , पृ-26

हाथ में", "पारो" आदि कहानियाँ वैविध्यपूर्ण भारतीय पारिवारिक जीवन को प्रस्तुत करती हैं । "पारो" एक अंधी लड़की की कहानी है जो अन्धी होने पर अपनी चेतना शक्ति के कारण घर का सारा काम-काज कर लेती है । "नींव की ईंट" में सन्दलसिंह की पत्नी एक आदर्श भारतीय नारी के रूप में चित्रित है । पुरूष की चंचल प्रवृत्ति एवं स्त्री को देखते ही उसके मन में उठनेवाली वासना का वर्णन लेखिका ने "गुलाबी चुनरिया", "भैया की डायरी", "धवल छत्र की छाया में" आदि कहानियों में प्रस्तुत किया है । "धवल छत्र की छाया में" कहानी में लाला देवदास लिखते हैं -"रानी, मैं बूढ़ा हूँ पर मेरे भीतर जवानी का दिल है । तुम मेरे बुढापे को देख कर मेरा अदब करती हो, पर चाहता हूँ कि मेरा दिल देखकर एक बार मुझे प्यार कर लो । मैं देखता हूँ, रोज़ तुम अपने जवान देवरों के साथ चुहल करती हो, पर मेरा अनुभव है कि जवान के दिल में हज़ार उम्मीदें, हज़ार रंग होते हैं । उसका प्यार दुनिया में हज़ार जगह बँटा रहा है, पर मेरा प्यार तो केवल तुम्हारे ही चरणों में न्यौछावर है ।"[1] देवर-भाभी संबंध पर लिखी गयी कहानी है "है न यही बात" । इसमें देवर-भाभी का पारस्परिक हास्य-विनोदपूर्ण संवाद देखने को मिलता है । परिवारों में नोकरों की स्थिति पारिवारिक सदस्यों के सदृश्य थी । "गरीब का ईमान" का आशाराम पुराना रसोइया था, उसकी स्थिति परिवार के बुजुर्ग जैसी थी । अपने मालिक की प्रसन्नता केलिए, वह त्याग-पत्र देता है । फिर भी उसमें अपने मालिक के प्रति प्रेम-भाव में कोई कमी नहीं आती है । मालिकिन के हृदय में उसके प्रति पूर्ववत् आदर भाव है और गरीब आशाराम की ईमानदारी की स्मृति में एक होल बनवा देती है जिस में शहर के सभी नौकर और श्रमिक विश्राम करते हैं जिनकेलिए रहने तक का प्रबन्ध नहीं था । "झींकती भिखारिन" में यह दिखाया गया है कि सुख मन की भावना है । झींकती और सूरदास भिखारी होते हुए भी स्वर्गिक आनन्द का अनुभव करते हैं । पति-पत्नी के प्रेममय जीवन से उत्पन्न आनन्द ही उनका आनन्द है ।

सामान्यत: समाज में उच्च, मध्य, निम्न-तीन वर्ग स्वीकार किये गये हैं ।

---

1. चन्द्रवती ऋषभसेन जैन, नींव की ईंट, पृ-149

सब वर्गों की पारिवारिक समस्याएँ अलग-अलग हैं । श्रीमती चन्द्रकिरण सोनरेक्साजी ने अपनी सबल लेखनी द्वारा सब वर्गों के पारिवारिक जीवन की झाँकी तथा समस्याओं को प्रस्तुत किया है । "अफसर का बेटा" कहानी में उच्चवर्ग के पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति में रंगे भारतीय परिवार का यथार्थ चित्रण है । सुरजीत एक बड़े अफसर का पुत्र है । माता-पिता दोनों ही आधुनिक विचारोंवाले हैं । दोनों रात-दिन पार्टी, डिनर, पिक्चर आदि में व्यस्त रहते हैं । एकमात्र पुत्र सुरजीत की देखभाल केलिए भी उनके पास समय नहीं है । सुरजीत का पालन-पोषण का संपूर्ण दायित्व आया पर है । इसी से सुरजीत सदैव अपने मन में एकाकीपन का अनुभव करता है । बड़े अफसर का पुत्र होने के कारण उसे आसपास के बच्चों के साथ खेलने की अनुमति भी प्रदान नहीं की गयी है । सुरजीत के माध्यम से लेखिका ने उच्च परिवार के बच्चों की समस्याओं एवं मानसिक उलझनों के विविध रूप इस कहानी में अंकित किये हैं । "गृहस्थी का सुख" में एक मध्यवर्गीय अपराधिनी नारी की कहानी है । बड़ी बहू पच्चीस वर्ष की होने तक भी संतानवती न होने के कारण अपराधिनी ठहराई जाती है । आखिर शिवसहाय का दूसरा विवाह ही हो गया। बड़ी बहू को रात-दिन सास की खरी-खोटी सुननी पड़ती । परिवार में होनेवाले कलह का कितना यथार्थ चित्रण लेखिका ने किया है - "हाँ,हाँ , नहीं तो सास ने गरज कर कहा - रूको, क्यों गयी, कोस ले जी भर कर । पर कहे देती हूँ जो मेरे बेटे-बहू को कुछ हो गया तो जानेगी कुलच्छनी । राम-राम करके अब इस छोटी बहू ने ज़रा बंसबेल चढाने की आस दिखलाई है, सो तू दिन-रात दाँत पर दाँत बजाकर चढ़ने न दें, अपन कहीं की ।"[1] अन्त में वह विवश होकर आत्महत्या कर लेती है । दूसरी पत्नी लक्ष्मी आठ बालकों को जन्म दे कर आधि-व्याधि से जर्जर हो चल बसी, जिनमें कुल चार शेष रहे सो भी अच्छा भोजन न मिलने से चिड़चिड़े और बीमार । "दो रोटियाँ" में संयुक्त परिवार में मशीन के समान काम करनेवाली बहू "उमा" की स्थिति देखने को मिलती है । "कमीनों की ज़िन्दगी में मध्यम वर्ग की गृहणी कुसुम की विवशता का चित्रण है - पति द्वारा डाँट

---

1. चन्द्रकिरण सोनरेक्सा, आदमखोर, पृ-20

फटकार, मधपान करके अर्धरात्री को बाहर से लौटना, मायके न जाने देना, ज़रा सा बाहर झाँकने पर सन्देह की दृष्टि से देखना आदि । अपने पति के व्यवहार से विरक्त कुसुम अपनी कुलीनता के कारण घुल-घुल कर प्राण दे देती है । ठीक यही दिशा कलुआ भंगी की पत्नी वसन्ती की थी, किन्तु वसन्ती नीच जाति की होने के कारण पति को एक की चार सुनाती थी । चन्द्रकिरणजी निम्न वर्गीय परिवारों के रहन-सहन तथा उनके मध्य रात-दिन होनेवाली गाली-गलौज, मार-पीट को अपनी लेखनी द्वारा सफलतापूर्वक चित्रित किया है । "कमीनों की ज़िन्दगी" में दरिद्रता से अभिशप्त जनता के जीवन में हाहाकार का वर्णन भी किया है । पति कलुआ शराबी होने के कारण बसन्ती को ही सारे ठिकानों का काम संभालना पड़ता है, इस पर वह रात-दिन बसंती लड़ता है, गाली देता है । बसन्ती भी गाली देने में अपना उतना ही अधिकार समझती है । दोनों की लड़ाई का यथार्थ चित्र निम्न पंक्तियों में मिलता है - "कलुआ बसंती का झोटा पकड़े गली में घसीट रहा था और बसन्ती उच्च स्वर में रोते रोते कह रही थी । नासपीटे ! बाल छोड़ दो । नहीं तो आज तेरी सारी पत उतार कर रख दूँगी । छोड़ दे, छोड़ दे, अरे कसाई --------। अरी मैया री ! बसन्ती चीत्कार उठी कि अकस्मात् अपने पास पड़ी छोकरी के तले से झाड़ू खींच ली, उसे घुमाते हुए बोली, मैं लुच्ची हूँ । अच्छा रे अच्छा । बस सीधे-सीधे अपना रास्ता ले । आज से तेरे साथ रहूँ तो अपने बाप की नहीं । बहुत निभाया, बहुत सहा, अब नहीं सहूँगी ।"[1] "परंपरा" कहानी में यह व्यक्त किया है कि निम्न वर्ग के बच्चे अपने पिता के संस्कारों को ग्रहण करते हैं । बदलू अपने पुत्र रग्घू को अपने समान बुरी आदतों से बचाने केलिए बार-बार मारता है । पर रग्घू परंपरा से प्राप्त अपने जन्मजात अधिकार को त्यागने में असमर्थ है । इसलिए बदलू रग्घू को मारे ही जाता है । "साले ! हरामी के पिल्ले ! फिर पियेगा बीड़ी ? आज तेरी जान लेकर छोड़ूँगा । ससुरे में तो बिना पढ़े बरबाद हो ही गया । अब क्या तू भी उम्र भर घास ही खोदेगा ? बापु ने पढ़ाने केलिए मुझे कितना मारा पर मैं तो नालायक निकल गया ।

---

1. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, आदमखोर, पृ-124-125.

उसी का फल भोग रहा हूँ । तु तो भिडिल कर ले । कहीं चपरासी हो जाएगा । पर नहीं -------- तु तो बीडी । यह नहीं कि पैसे का पेडा ही खा लें ------ हरामी ।"[1] "जीजी" कहानी में परिवार में आजकल की पढ़ी-लिखी लडकियों पर अच्छा व्यंग्य है जो घर का कामकाज करने की कोई भी योग्यता नहीं रखती । पुस्तक ज्ञान और अनुभव में कथनी और करनी में बड़ा अन्तर है; यह सुरेख के उन कार्यों से दिखाया गया है जो वह अपनी ननद की अनुपस्थिति में करती है ।

श्रीमती तारा पाण्डे की पारिवारिक कहानियों में नारी हृदय की कोमल आशाएँ और निराशाएँ, वेदनाएँ और अभिलाषाएँ अपनी संपूर्ण मर्यादाओं के साथ चित्रित की गयी हैं । प्रेमचन्दजी की मान्यता है कि - "इन कहानियों में नारी अपने भिन्न भिन्न रूपों में हमें दर्शन देती है, कहीं वह स्नेहमयी माता के रूप में नज़र आती है, कहींशीलमयी बहिन के रूप में और कहीं प्रेममयी पत्नी के रूप में ।"[2] "भ्रम" कहानी में भगिनी सुलभ अनुराग को सुशील अनुचित अर्थों में लेता है और भ्रम निवारण की नाटकीय कथा का चित्रण हुआ है । "मीमी" में नायिका मीनी की दुखपूर्ण गाथा के अंकन द्वारा समाज की कुत्स्य-प्रवृत्तियों पर प्रकाश डाला गया है । मीमी ऐसी नारी है जो उत्सर्ग को ही अपने जीवन का ध्येय समझती है और अपने पति के हाथों विभिन्न यातनाएँ सहकर भी उनकी सेवा में संलग्न रहती है । "माँ" शीर्षक कहानी में माँ की मृत्यु पर एक नन्हीं बालिका के वेदना प्रेरित विलाप तथा क्रिया कलाप का चित्रण है । "प्यास" में विनीता के क्षुधित मातृत्व, "वन्ध्या" में वन्ध्या रेणुका का सपत्नी के शिशु के प्रति अपार प्रेम तथा "विमाता" में रजनी का सौतेले पुत्र के प्रति ममत्व दिखाकर लेखिका ने नारी के मातृत्व रूप की महिमा प्रकट की है । "उत्सर्ग" कहानी मातृ-पितृ हीना सोना के सुख केलिए उसके अग्रज प्रकाश ब्रह्मचर्यव्रत पालन करता है तो सोना अपना जीवन पर्यन्त पति तथा सपत्नी की सेवाएँ करती हुई खेती-बाड़ी में अपना जीवन यापन करती है । सोना का पति ऐसा निष्ठूर पात्र है जो पत्नी के सद्गुणों की ओर अन्त तक

---

1. चन्द्रवती सौनरेक्सा, आदमखोर, परंपरा, पृ-184
2. तारा पाँडे, उत्सर्ग कहानी संकलन, "दो शब्द"से उधृत

दयार्द्र नहीं होता ।

"अतीत के चलचित्र" संग्रह के प्रथम रेखाचित्र में एक देहाती, अनपढ़, विमाता के सौतेले व्यवहार से पीड़ित ऐसा बालक रामा का चित्रण है जो अनायास ही महादेवी के घर पहुँच अपनी सरलता, दीनता और विनम्रता द्वारा उनकी माँ का स्नेह पात्र बन जाता है । जब माँ उस से विवाह कर लेने केलिए कहती है - "रामा, अब तुम घर बसा लो, जिससे बाल-बच्चों का सुख देख सको "[1] तब सरल भाव से रामा उत्तर देता है - " बई की बातें । मोय नासमिटे अपनन खौं का करने है, मोरे राजा हरे बनें रहें - जेई अपने रामा की नैया पार लगा दे हैं ।"[2] रामा ग्रामीण जनों की सरलता, निश्छलता, ईमानदारी, कृतज्ञता और सेवा-परायणता का प्रतीक है । दूसरे रेखाचित्र में पारिवारिक अत्याचारों से पीडित और उपेक्षापूर्ण वातावरण में मूक रहकर घुट-घुट कर अपना जीवन बितानेवाली एक बाल-विधवा का चित्रण है जिसकी करुण आँखें ही उसके जीवन की समस्त वेदना को स्वत: व्यक्त कर देती है । जब बहू की ननद अपने मायके आती है तब बहू के जीवन में भयंकर कष्ट, पीड़ा और ताड़ना का तूफान उठ खड़ा होता था । ननद बहू को खूब पिटाई करती थी, जलती लकड़ी से उसके हाथ झुलसा देती थी । उसके शरीर पर पड़े काले-पीले निशान ही उन अत्याचारों की सारी कहानी कह देते हैं । तीसरा चित्र विमाता के दुर्व्यवहार तथा अत्याचारों से दुखी एक निरीह तथा अबोध बालिका बिन्दा का है । विमाता खुद पलंग पर लेटी लेटी उस पर हुकुम चलाया करती थी । "मोहन का दूध कब गर्म होगा, अभागी मरती भी नहीं"[3] आदि वाक्य निरन्तर उस घर में गूँजते रहते थे । बिन्दा को दोपहरी में आँगन के स्पर्श पर घण्टों खड़ा करती थी, खम्भे से दिन-दिन भर बाँधे रखती थी, खाना नहीं देती थी, गर्मियों में घण्टों अपने और मोहन के ऊपर पंखा झलवाया करती थी । सौतेली माँ के कठोर व्यवहार देखकर महादेवीजी ने अपनी माँ से कह ही दिया - "तुम कभी तारा न बनना, चाहे भगवान कितना भी चमकीला तारा बनावें । ----- --- नहीं तो पंडिताइन चाची जैसी नई अम्मा पालकी में बैठकर आ जाएगी

---

1. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ-20
2. " " "
3. "

और फिर मेरा दूध, बिस्कुट, जलेबी, सब बन्द हो जाएगी - और मुझे बिन्दा बनना पड़ेगा ।"[1] चौथे रेखाचित्र में मेहतरानी सबिया का चित्रण है जो उपेक्षित भारतीय नारीत्व का प्रतिनिधित्व करती है । सबिया का पति जो दुराचारी है सद्य: - प्रसूता सबिया को सोरी में छोड़ कर एक दूसरी स्त्री को भगा ले जाता है और कुछ दिनों बाद उसी स्त्री को सबिया की छाती पर ला बैठाता है । पति की इस हरकत से सबिया के मन को बहुत चोट पहुँचती है परन्तु पुलिस से वह इसलिए आतंकित हो उठती है कि पति के अपराध केलिए पुलिस उस पर अत्याचार करेगी और उसका सतीत्व खण्डित हो जाएगा । सबिया सतीत्व का उज्ज्वलतम प्रमाण है । सातवें रेखाचित्र "घीसा" नामक उस नन्हें, अबोध, सरल, भावुक कर्तव्यपरायण शिष्य का है जिसकी गुरूभक्ति एकलव्य की गुरूभक्ति से कम नहीं । घीसा की गुरू दक्षिणा के संबंध में महादेवीजी स्वयं कहती हैं - "और तब अपने स्नेह में प्रगल्भ उस बालक के सिर पर हाथ रखकर मैं भावातिरेक से निश्चल हो रही । उस तट पर किसी गुरू को किसी शिष्य से कभी ऐसी दीक्षणा मिली होगी, ऐसा मुझे विश्वास नहीं, परन्तु उस दीक्षणा के सामने संसार में अब तक के सारे आदान-प्रदान फीके जान पड़े ।"[2] नवें में अथक परिश्रमी, कर्तव्य परायण तथा सरल व्यक्तित्ववाले साग-सब्जी बेचनेवाले अन्धे आलोपी की हृदय विदारक कथा है । जब उसकी चतुर पत्नी उसकी सारी जमा-पूँजी लेकर चुपचाप कहीं चली गयी तब परोपकारी पडोसियों ने उसे पुलिस में खबर देने को कहा । यह सुनकर उसने बडी दृढता से कहा - "अपनी स्त्री का हुलिया लिखवाकर पकड़ मँगाना नीच का काम है ।"[3] सब पर विश्वास करनेवाला बेचारा आलोपी अपनी पत्नी के इस विश्वासघात पर विश्वास नहीं कर सका । "आलोपी के सब साहस, संपूर्ण उत्साह और समस्त आत्म-विश्वास को संसार का एक विश्वासघात निगल गया है, यह सत्य होने पर भी कल्पना जैसा जान पड़ता है ।"[4] "बदलू-कुम्हार" शीर्षक रेखाचित्र कुम्हार बदलू तथा उसकी पत्नी रधिया

---

1. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ-36
2. " पृ-74
3. " " पृ-91
4. " " पृ-92

के सरल दांपत्य प्रेम का है । अन्तिम रेखाचित्र उस पहाड़ी कर्मठ महिला लछमा का है जिसकी स्वाभाविक हँसी में छिपे आँसुओं का तथा उन आँसुओं के नीचे छिपे कारणों का पता लगाने केलिए महादेवीजी ने विशेष परिश्रम किया है । निर्धनों की दरिद्रता तथा विपिन्नता का उल्लेख कहीं महादेवी की सीमा को भी लाँघ गया है । एक चित्र देखिए :- "मार्ग में तीन दिन तक कुछ खाने को न मिल सका । लछमा हँसकर कहती है - जब बहुत भूखा हुआ, तब पीली मिट्टी का एक गोला बनाकर मुँह में रखा और आँख मूँदकर सोचा-लड्डू खाया, लड्डू खाया । बस फिर बहुत सा पानी पीलिया और सब ठीक हो गया ।"[1] "स्मृति की रेखाएँ" आप का दूसरा संकलन है । पहला रेखाचित्र लेखिका के घर में काम करनेवाली "भक्तिन" नामक वृद्धा का सहज चित्रण है । सेव्य-सेवक भाव की अपेक्षा वह अभिभाविका है, नौकरानी कम । महादेवीजी ने स्वयं लिखा है - "उसे नौकर कहना उतना ही असंगत था जितना अपने घर में बराबरी से आने जाने वाले अंधेरे-उजाले और आँगन में फूलनेवाले गुलाब और आम को सेवक मानना ।"[2] कितनी आत्मीयता की भावना है । दूसरा रेखाचित्र एक चीन देश के फेरीवाले से संबंधित है जो हृदय में व्यथा तथा मुख पर हास्य लिये अपनी खोई बहन की तलाश में अपने देश को छोड़कर कपड़े की फेरी लगाता फिरता है । अनाथ चीनी बालक के विगत जीवन के कष्टों, अत्याचारों की करूण कथा का चित्र महादेवीजी की करूणापूर्ण लेखनी से सजीव हो उठा है । एक बूढ़े तथा निठल्ले पति से बंधकर भी अपने दुर्भाग्य पर आँसु बहाये बिना, पति और ससुर की तन-मन से सेवा करनेवाली मुन्नु की माँ एक अन्य रेखाचित्र में मिलता है तो सातवें में धोबिन बिंबिया अपने पहले पति चरित्रहीन रमिया तथा दूसरे वृद्ध पति झनकू की गृहस्थी सँभाल कर भी पुरूष समाज की हृदयहीनता के कारण लाँछित होती है और अन्त में आत्महत्या कर लेती है ।

रामेश्वरी देवी चकोरी जी अपनी कहानियों में आदर्श प्रेम को प्रमुख स्थान देती है । "धूपछाँह" कहानी में सकीना निर्धन मछुए की कन्या है । बाल्यकाल

---

1. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ- 107
2. " स्मृति की रेखाएँ - पृ-11

से ही सकीना-अहम्मद एक दूसरे को चाहते हैं और जाने अनजाने उन का यह बाल्य-प्रेम प्रणय में बदल जाता है । लेकिन रूपवती होने के कारण उसे मोती बेगम नाम से बादशाह अपने अन्त:पुर में स्थान देते हैं । परन्तु राजसी वैभव उसे मानसिक शान्ति नहीं दे सका और उसका मन बारंबार उन्मत्त हो उठता है यह सोचकर "मेरा एक साथी था - बचपन का, मेरे साथ का खेला हुआ - वह बड़ा अच्छा था । मगर मैं ने उसे खो दिया - हमेशा केलिए खो दिया ।"[1] वह समझती है कि प्रेम पात्र के बिना जीवन अधूरा और बिखरा बिखरा रहता है । वे अपने आदर्श से च्युत नहीं होते, प्रेम केलिए बलिदान करते हैं । बन्धनों की अपेक्षा बन्धन रहित जीवन ही सुखदायक है । नारी हृदय की गहन व्यथा और उसके त्याग की गाथाचकोरजी की कहानी "तिरस्कृता" में अंकित है । एक रूपवती नारी पुरूष के गुणों पर आकृष्ट होकर अपने को स्वयं उसके चरणों पर अर्पित कर देती है । परन्तु उसका निष्ठूर प्रेमी उसका तिरस्कार कर किसी अनजान पथ का पथिक बन जाता है । पति चाहे कैसा ही व्यवहार करें पत्नी केलिए पति तो परमेश्वर के ही समान पूज्य हैं । वह अपने मन में अपने देवता की उपासना करती रहती है और अपने को तिरस्कृता बतलाती है । "आँखों का कौतुक" में दाम्पत्य प्रेम के आदर्श रूप का चित्रण देखने को मिलता है तो दूसरी ओर पुरूष के विश्वासघात का चित्रण भी । मीना ने नेत्रहीन पति को अपने नेत्र देकर जिस आदर्श प्रेम को प्रकट किया, उसके पति ने उसकी उपेक्षा करके उतने ही विश्वासघात का परिचय दिया ।

श्रीमती शिवरानी प्रेमचन्द की पारिवारिक कहानियाँ भारतीय परिवार में नारी की विवशता, पारिवारिक संबंधियों के ईर्ष्या, कलह, प्रेम, त्याग, निष्ठा, सेवा, घृणा, स्वार्थ, छल तथा प्रतिशोध की कहानियाँ हैं । हिन्दु संयुक्त परिवारों में आदर्श पुत्र-वधु की स्थिति "पछतावा" कहानी में प्रस्तुत की गयी है । सख्या अपने रोगी ससुर की सेवा-सुश्रूषा रात-दिन करती है, पर उसे उसके बदले मार, गाली ही ससुर से सुनने को मिलती है । एक बार ससुर बोले - "डाइन, भाग यहाँ से, क्या मेरे मरने पर ही तुझे खुश होगी ।"[2] "विमाता"

---

1. रामेश्वरी देवी 'चकोरी', धूमछाँह, पृ-14
2. चाँद, जुलाई पृ-107

में सौतेली माँ का एक अत्यन्त प्रभावशाली चित्र अंकित किया गया है । कहावत है कि माँ यदि दूसरी होती है तो बाप तीसरा बन जाता है । "विमाता" के मुन्शी रमाकान्त की पत्नी का देहान्त हुआ । माता के आग्रह के विरोध करके ही रमाकान्त रंभा नामक स्त्री से शादी करते हैं । सोहन पुस्तक माँगने केलिए नयी माँ से रूपये माँगता है । लेकिन नयी माँ उसे गालियाँ देती है और पिता से उसकी शिकायत करती है । पिता के भी क्रुद्ध होने से दुखी होकर सोहन घर छोड़ कर चला जाता है । घर पर सब खुश हैं, केवल बूढ़ी दादी ही इस पर दुखी है । रमाकान्त की मृत्यु के बाद रंभा सोहन के चाचा के घर आती है । चाचा सोहन पर विमाता का भार चढ़ाने केलिए परिश्रम करता है । पर मोहन का कहना है - "जो बाप अपनी सन्तान केलिए त्याग नहीं कर सकता, उसकेलिए बेटे के त्याग करने की कोई जरूरत मैं नहीं समझता ।"[1] "बूढ़ी काकी", "आँसु", "पछतावा" आदि कहानियों की कथावस्तु पारिवारिक कलहों पर आधारित है । माता की ममता, वात्सल्य भावना का चित्रण इनकी "हत्यारा", "भूख की ज्वाला", "माता" "जेल में" आदि कहानियों में मिलती है । उस समय परिवार में कार्य करनेवाले नौकरों को हीन-दृष्टि से नहीं देखा जाता था । नौकरों में भी अपने स्वामि के प्रति सच्ची भक्ति, त्याग भावना पायी जाती थी । "नमक का ऋण", "कातूदादा", "बूढ़ी काकी" आदि कहानियों में एक ओर नौकरों की सच्ची स्वामि-भक्ति तथा दूसरी ओर नौकरों को परिवार के सदस्य समझना आदि का वर्णन है । "बूढ़ी काकी" के बाबू गंगाप्रसाद का घर इलाहाबाद के निकट झूसी में है । इनकी स्त्री का नाम चम्पा है । एक कन्या है, उसका नाम मानकी है । एक दासी भी है, जिसे लोग बूढी काकी कहते हैं । घर के आदमियों में बूढ़ी काकी भी गिनी जाती है क्योंकि मुंशीजी की माता ने उसे नौकर रखा था । "उन लोगों को वह अपना लड़का समझती है । इनके दुख-सुख में शरीक रहती है । मुंशीजी और चम्पा इसका आदर करते हैं ।"[2] "नमक का ऋण" के "मुंशी संगमलाल के घर में बिहारी भी उसी तरह रहता है, जैसे घर के और आदमी, कोई उसे

---

1. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, कोमुदी, पृ-154
2. " नारी हृदय, पृ-28

नौकर न समझता था और न उसके साथ नौकरों का सा बर्ताव था ।"[1] "पछतावा" पारिवारिक कलह की कहानी है । गिरिधर अपने भाई का सब लेकर बंबई जाता है । देवर के सब लेकर चले जाने पर सोनिया घर में रूठी रहने लगती है । लेकिन उस के पति अपने बच्चे और पत्नी केलिए जी तोड़कर काम करता है । लेकिन उसका जीवन लेने को यम होड़ लगा रहता है । वह बीमार पड़ जाता है । निराश होकर सोनिया बीमार पति से कहती है - "राह की भिखारिन तो बना दिया, साधु बनना था तो शादी-ब्याह क्यों किया ।"[2] स्वार्थी सोनिया चुभती हुई ज़बान से ही पति से बातें करती है । बुखार चढ़ जाने पर तीसरे दिन वह चला जाता है । सोनिया देवर को पति का हत्यारा समझकर हाथ में कठार लेकर बदला लेने केलिए बंबई जाती है । इसी बीच उसके बेटे मिलवालों की गोली का निशान हो जाता है । इसी का बदला चुकाने केलिए सोनिया मालिक के घर बच्चे खेलाने की नोकरी कर लेती है । एक दिन मालिक का बेटा मोटोर से चोट खाकर मर जाता है तो सोनिया की रक्त-पिपासा शान्त हो जाती है । उसे मालूम हो जाता है - "अपने पति की हत्यारिनी मैं ही हुँ । मैं ने स्त्री के रूप में जन्म तो पाया, माँ भी बनी, लेकिन माँ का दिल न पाया । अगर मिला होता तो मैं इस सब पाप की भागी न बनती है ।"[3]

श्रीमती सत्यवती जी ने अपनी "जीवन संध्या", "आँसु", "दृष्टि", "एक झलक", "दिन रात", "नारी हृदय की साध" आदि कहानियों में नारी हृदय की सरलता, भावुकता, मातृत्व की कसक,परिस्थिति जन्य व्यथाएँ तथा विवशताओं को कथावस्तु के रूप में स्वीकार किया है । "जीवन संध्या", "दो फूल" आदि कहानियों में आपने नारी हृदय की परम प्राकृत व्यक्त और अव्यक्त मातृत्व भावनाओं और धड़कनों को चित्रित किया है । विधवा गंगा अपने पुत्र मनोहर को अपने सारे प्यार और मोह से रिंचित कर पढ़ा-लिखा कर एक प्रोफ्सर बन जाने योग्य बना देती है । अपने पुत्र के प्रोफ्सर बन जाने पर वह असीम आह्लाद

---

1. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, कौमुदी, पृ-190
2. " पृ-173
3. पृ-181

और उल्लास से अपनी गृहस्थी बसाती है । लेकिन कभी-कभी पुत्र वधु के आने पर अपने अधिकारों से वंचित हो जाने की कल्पना मात्र से भाव विह्वल हो उठती है तो "क्या मुझे बच्चे की संपूर्ण चिन्ता संपूर्ण देखभाल एक नये व्यक्ति के हाथों में सौंप देना होगा ? यहाँ तक कि उसके आने जाने के समय गहरी उत्सुकता और अनन्य प्रतीक्षा का मेरा संपूर्ण अधिकार भी मुझ से छीन जाएगा । जिस नन्हें पौधे को वह लगातार बाइस वर्षों से बिना किसी की सहायता के सिंचती आयी है, क्या आज एकाएक किसी कोने में बैठकर सिर्फ उसकी छाया का ही आनन्द उठाया करें ।"[1] "दो फूल" बच्चों के बाल-सुलभ प्रकृति-प्रेम की कहानी है । प्रकृति अपनी हरी-भरी रम्यता में बच्चों को पूर्णतया रमा लेती है । दोनों एक स्वर से चिल्ला उठते हैं - "अन्नाजी, आकर देखी तो सही । उस दिन गमले में गुलाब का जो पेड़ लगाया गया था उससे फूल निकलनेवाला है । देखिए न उसका गुलाबी-गुलाबी रंग भी दिखाई देने लगा है ।"[2] "भाई-बहन" में भाई प्रेम के निश्चल प्रेम को दर्शाया गया है । निरन्तर सहाई अगहे के बावजूद भी कमल के खो जाने पर निर्मला अत्यन्त व्याकुल हो उठती है । उसकी आँखों से निरन्तर आँसु बहता रहता है । अचानक भाई के मिल जाने पर वह भाव विह्वल हो उसे सीने से लगा लेती है "कमल को दृढ पाश में बंधे निर्मला दुगुने वेग से रो रही है । उसके कोमल गुलाबी गाल मोटे-मोटे आँसुओं से भीगे जा रहे हैं और वह बार बार कमल का मुख चूम चूमकर कह रही है पगले । तू कहाँ चला गया था ? गधे । तु क्यों चला गया था ?"[3] अपने प्रवासी पुत्र की स्मृति में माता की विलक्षण स्थिति हो जाती है, "हसन की माँ उनींदी-सी दशा में अनेक स्वप्न देखा करती । रह-रहकर हसन की वे शरारतें, उन पर उसका गाली-गलौज, वह मार-पीट- ये सब स्मृतियाँ उसके हृदय को छलनी बनाया करती । ---------- केवल एक बार यदि उसका बच्चा घर आ जाता ।"[4] पाँच वर्ष के बाद जब हसन घर लौट आता है तो वह फिर

---

1. सत्यवती मल्लिक, दो फूल, पृ-19
2. " 2
3. " " "38
4. " "43

उन छोटे नन्हें बच्चों से लेकर शतरंज खेलनेवाले बड़े बूढ़ों तक का मित्र बन जाता है । एक दिन शतरंज के खिलाड़ियों के सामने ही अपने जवान बेटे के पास खड़े होकर उसने दोनों हाथ अपने माथे में ज़ोर से दे मारे और चिल्लाकर कहा - "कम्बख्त, तु किस घड़ी में पैदा हुआ था ? तू लौटकर यहाँ आया ही क्यों ?"[1] फिर वह विह्वल होकर रो पड़ी । नारी हृदय के अनेक रूप सत्यवती की कहानियों में देखने को मिलते हैं । श्री·बनारसीदास चतुर्वेदीजी के शब्दों में "बाल मनोविज्ञान का बड़ा ही आकर्षक वर्णन उनकी रचनाओं में पाया जाता है, कहीं-कहीं तो मातृप्रेम का वह स्वच्छन्द झरना उन्होंने बहाया है कि पढ़ कर तबियत खुश हो जाती है ।"[2] "कॉब्रस्तान" सती साध्वी आदर्श पत्नी स्टैला के पति-प्रेम संबंधी मार्मिक कहानी है । स्टैला अपने पति चार्ल्स के कुछ पता न चलने पर यह सोचकर कि वह युद्ध में वीरगति को प्राप्त हो गया, एक अज्ञात समाधि पर कॉब्रस्तान में जा फूल माला चढ़ाती है और सारा दिन उस समाधि के पास गुज़र देती है । ऐसा करते करते पाँच वर्ष गुज़र जाते हैं और एक दिन एकाएक चार्ल्स लौट आता है । उसकी खुशी का ठिकाना नहीं और प्रतिदिन फिर चार्ल्स के साथ उस समाधि पर फूल चढाने जाती है । "माली की लड़की", "भाई-बहन", "वसन्त है या पतझड" आदि कहानियों में गार्हस्थ जीवन की मधुर झाँकियाँ प्रस्तुत की गयी है ।

सुभद्राकुमारी ने अपनी कहानियों के माध्यम से समकालीन धरातल पर नारी की पारिवारिक समस्याओं को अपने भावुक हृदय को कल्पना के सहारे बडी ही मार्मिकता से अंकित किया है । नारी स्वातंत्र्य, नारी समानाधिकार के इस युग में नारी ने व्यावहारिक रूप से अपने अन्दर स्वतंत्रता का अनुभव नहीं किया और आधुनिक स्वतंत्र विचारवाली शिक्षित भारतीय नारी की सबसे प्रमुख एवं गंभीर समस्या बन गयी, पति के अतिरिक्त अन्य पुरूष की मित्रता । सैद्धान्तिक रूप से नारी स्वतंत्रतावादी होने पर भी सदियों से जकड़े शिक्षित भारतीय मनुष्यों के दृष्टिकोण में परिवर्तन संभव न हो सका था । "मझली रानी" के पति की

1· सत्यवती मल्लिक, दो फूल, पृ-50

2· " " पृ-10

उदासीनता और पारिवारिक बन्धनों से तप्त वातावरण में मास्टरजी का व्यवहार, सहानुभूति मझली रानी का उनके प्रति आकर्षण का कारण बनता है। इसी पाप के कारण उसे घृणित आरोप लगाकर घर से निकाल दिया जाता है और अन्त में उसे भिक्षा-वृत्ति का सहारा लेना पडता है। "भग्नावशेष" की नायिका विवाह से पूर्व एक भावुक क्वयित्रि थी। लेकिन विवाहोपरान्त पति के कठोर व्यवहार एवं शंकालू वृत्ति के कारण कविता का नाम लेना भी उस केलिए कठिन है। उससे कविता लिखना छोड़ देने के संबंध में पूछने पर वह रूँधे हुए कंठ से कहती है "लिखने-पढने की बात अब आप मुझसे कुछ न पूछें।"[1] इतने में उसके पति वहाँ आ जाता है और बहुत बुरी तरह से झिडककर बोलता है - "यहाँ खडी खडी बातें कर रही हो ? -------- चलो भी, परिचय फिर हो लेगा।"[2] पुरूषों की निरंकुशता, उद्दंण्डता तथा स्त्री की प्रतिकारहीन असमर्थता का सच्चा मर्मान्तक चित्र ही "भग्नावशेष", "होली" आदि में खींचा है। "दृष्टकोण" की नायिका निर्मला को लेखिका ने अधिक जागरूक, दृढ, स्वतंत्रविचार एवं पतिगृह पर अधिकार समझनेवाली चित्रित किया है। इसलिए अभागिनी बाल-विधवा बिट्टन जब गर्भवती हो जाने के कारण ससुराल से निकाल दी जाती है तब वह उसकी दुरवस्था पर दयार्द्र होकर पति और सास के विरोध करने पर भी उसे अपने यहाँ आश्रय देने का संकल्प करती है, किन्तु पति के तमाचे उसे बता देते हैं कि वह घर की स्वाभिमानिनी नहीं दासी मात्र है। "तुम्हारी ही तरह मैं भी बिना घर की हुँ बहिन। यदि इस घर पर मेरा कुछ भी अधिकार होता तो मैं तुम्हें इस कष्ट के समय कहीं भी न जाने देती। क्या करूँ ? विवश हुँ।"[3] पारिवारिक कहानियों की परंपरा में लेखिका को भाई-बहन, देवर-भाभी, मित्र-मित्र का संबंध बहुत प्रिय है। "पवित्र ईर्ष्या", मछुए की बेटी", "अमराई", "गुलाबसिंह" आदि कहानियों में भाई-बहन के पवित्र-प्रेम, तेजस्वनी वीर बहनों द्वारा भाई को आत्मोसर्ग की प्रेरणा देना,

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, बिखरे मोती, पृ-4.
2. "
3. पृ-49.

भाइयों पर अटूट विश्वास, वक्त पड़ने पर भाई द्वारा बहनों की रक्षा, लंबे अन्तराल के पश्चात्, भाई-बहन के अपूर्व मिलन को ही विषय बनाया गया है । भाभी-देवर का निश्चल पवित्र प्रेम "कदम्ब के फूल" में देखने को मिलता हैं । सच्ची मित्रता स्वर्गीय आनन्द प्रदायिनी होती है, इसका साखी है "दो साथी" कहानी ।

सुभद्राजी ने अपनी कई कहानियों में नारी को परम प्राकृत नारी भावना का मार्मिक चित्र उपस्थित किया है । अविवाहित गौरी मातृत्व भावना के वशीभूत कांग्रेस सेक्रेटरी सीताराम के बच्चों के पास जाने केलिए तड़प उठती है । माँ के मना करने पर भी वह कहती है, "नहीं माँ नहीं मैं पागल नहीं हूँ । बच्चों को तुम भी जानती हो । उनके पिता को राजद्रोह के मामले में साल भर की सजा हो गयी है । बच्चे छोटे हैं, मैं जाऊँगी माँ, मुझे जाना ही पड़ेगा ।"[1] मातृत्व के मनोवेग का विरोध करने की ताकत न समाज में थी, न माँ में । "हींगवाला" की सावित्री दंगे के कारण अपने बच्चों को ले अत्यन्त भयभीत हो उठता है । उनके शुभ माँगल्य केलिए वह सभी देवी-देवताओं की मनुहार करती है । "सावित्री पागल सी हो गयी, उसे रह रह कर ताशों के बीच अपने बच्चे तड़पते दिखाई पड़ते । बच्चों की मंगल कामना केलिए उसने सभी देवी-देवता मना डाले ।"[2] इस प्रकार मातृत्व हृदय का जितना सजीव, स्वाभाविक, मार्मिक चित्रांकन आप कर सकी हैं, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है । सुभद्राजी ममतामयी माँ थी । भारत की माँ की ममता अत्यंत दृढ होती है । हमारा समाज इससे अपरिचित नहीं । "सन्तान केलिए हिन्दु नारी क्या नहीं कर सकती । उनके कल्याण केलिए अपना तन-मन सभी कुछ निछावर कर सकती है - प्रसन्नता से ।"[3]

सुमित्राकुमारीसिन्हा की "गृहलक्ष्मी", "शीला का पति", "कुवला मातृत्व" आदि कहानियों में संयुक्त परिवार प्रणाली का जर्जर स्वरूप ही देखने को मिलते है । संयुक्त परिवारों में होनेवाले द्वेष, संघर्ष तथा गृह-कलह, मध्यवर्गीय परिवारों में

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, सीधे सादे चित्र, पृ-13
2. " पृ-54
3. " पृ-29

बच्चों की देख-भाल की समस्या आदि भारतीय परिवारों की प्रमुख समस्याएँ हैं । संयुक्त परिवार के विघटन के कारणों का विश्लेषण करते हुए लेखिका ने लिखा है, "इस संयुक्त परिवार की योजना के नीचे हो क्या एक-एक व्यक्ति तिल-तिलकर नहीं मिट रहा है ? कितना पहाड़ सा असन्तोष, कितनी गंभीर अपरिवर्तनशीलता और औचित्य दबा पड़ा है । हमारे बाह्य रूप से सुखी, सन्तुष्ट और सभ्य दीखने वाले गृहस्थ परिवारों में । हर अपना-अपना दायरा बनाए हुए जीवन के भयंकर खेल में दाँव लगाये दे रहा है । कौटुंबिक प्रथा का प्रपंच खड़ा कर प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की हत्या करने केलिए मज़बूर है । अपने व्यक्तित्व का विकास अस्तकर सम्मिलित परिवार का भार लादे हुए जीवन को गाड़ी अवरूद्ध दिशाओं की ओर घसीट ले चलने को विवश है । अपनी महत्ता का मिथ्या-प्रदर्शन, अपनी श्रेणी के मानव-अधिकारों की झूठी विडम्बना स्वतंत्र व्यक्तित्व की आहुति देकर भी कायम रखना कितना बड़ा ढोंग है । इस बोसीदा किले की रक्षा करना अब असंभव है । इस विशाल अट्टालिका की नींव खोखली हो चुकी - वह गिरेगी, और शीघ्र ही गिरेगी - आर्थिक इंटों में लोना लग गया है । हमें अब नई इमारत का निर्माण करना है जिसमें स्वतंत्र व्यक्ति पल सके, मानवता का स्वस्थ-विकास साँस ले सके । आर्थिक व्यवस्था पर यह बलिदानों की प्रथा हमें नष्ट करनी ही होगी ।"[1] "शीला का पति" कहानी की शीला, "कुचला मातृत्व" की जमुना, की मृत्यु केलिए परिवार के व्यक्ति ही उत्तरदायी हैं । शीला हरीश की पत्नी है । घर में चार-चार देवर है, चार-चार ननदें हैं, सास-ससुर है । उसके एक बच्चा साल भर का हो कर और दूसरा छः महीने का मर चुके थे । उनकी मृत्यु के संबंध में शीला कहती है - "हाय । सर्दी में भीग भीग कर मैं ने काम किया, बच्चों की परवाह न की । मेरे लाल खो गये । किसी का क्या गया ?"[2] जब एक बार शीला रोगी हो कर कोठरी में पड़ी रही तब परिवार के किसी का ध्यान उसकी ओर न आया । शीला पत्र लिखकर भाई के साथ मायके चली गयी । तीसरे दिन चिट्ठी आयी कि शीला को चेचक निकल आयी । संयुक्त परिवार के सदस्य हरीश के पास जा न सका ।

---

1. संपादक अजितकुमार, सुमित्राकुमारी सिन्हा:रचनावली, पृ- 287
2. पृ-279

इसलिए उसने तार दिया कि वह आ रहा है । तार देकर घर पहुँचा ही था कि पिताजी ने दूसरे आये हुए तार का लिफाफा पकड़कर पढा :"शीला का देहान्त हो चुका था ।"[1] समाज तथा परिवार के क्रूर तथा कठोर नियमों में जकड़ी नारी अपनी अतृप्त वासनाओं की पूर्ति केलिए किसी अन्य पुरूष की ओर आकृष्ट हो जाती है । यह अवैध प्रेम-समस्या भी सुमित्राजी की कहानियों का विषय है । गृहलक्ष्मी की माया पति के अत्याचारों से पीडित है । उनके मन में पति के प्रति विद्रोहात्मक भावना तो जागृत होती है, परन्तु प्राचीन परंपराओं में वह बुरी तरह फँस जाती है कि उनका विरोध करने का साहस उसमें नहीं हो जाता । जब माया पति की तिर्क्तता एवं उपेक्षा से व्याथित हो जाती है तब पड़ोस के युवक महेन्द्र की सहानुभूति पाकर न चाहने पर भी उसके प्रति आकर्षण का अनुभव करती है । माया स्वयं सोचती है - "जीवन-यात्रा के लंबे पथ पर जिस अचल-अटल जीवन संगी के साथ वह चल पड़ी है, क्या उसने भी कभी एक दिन उसकी जी की बात पूछी है ? कभी हार्दिक स्नेह तथा सहानुभूति की बूँदों ने उसके मरूस्थल बने जीवन को सिंचित किया है ? किन्तु ओह । कैसा है यह युवक महेन्द्र, बरबस अपनी ओर इसकी बातें आकर्षित कर लेती है ।"[2] विवाहित नारी की दयनीय स्थिति का चित्रण भी इस कहानी में खींचा गया है । माया के मन के विद्रोहात्मक विचार देखिए - "हर साल बाल-बच्चों के पैदा करने की वह मशीन हो गयी । दूसरों की स्वतंत्र इच्छा पर अपनी समस्त आकांक्षाओं को न्योच्छावर करने में ही उसकी सार्थकता रह गयी।"[3] "मैं नहीं जाऊँगी" कहानी की कमरा सामाजिक बन्धनों की अवहेलना कर पति को त्याग कर प्रेमी चन्दन के साथ चली जाती है ।

श्रीमती होमवती देवी ने अपनी कहानियों में मुख्य रूप से पारिवारिक संवेदनाओं को अपनाया है । आपकी पारिवारिक कहानियाँ नारी की विवशता, नारी के फूहडपन, तीज-त्यौहार, पारिवारिक संबंध की झाँकियाँ प्रस्तुत करती है।

---

1. संपादक अजितकुमार, सुमित्राकुमारी सिन्हा रचनावली, पृ-287
2. संपादक अजितकुमार, सुमित्राकुमारी सिन्हा रचनावली, पृ-264
3. " पृ-265

"राव की मटकी" कहानी में एक साधारण ग्रामीण किसान परिवार की आर्थिक विशेषताओं का चित्रण है। निर्धनता के थपेड़ों ने उन्हें यह सोचने केलिए विवश किया कि "इससे अच्छा होता कि दीवारें भी गिर पड़ती और हम तीनों यहीं दब कर रह जाते, घर-गृहस्थी सभी तो उजड़ गयीं।"[1] "बिसाती" में जीवन के अभावों और व्यथा के कारण सागर में डूबे उस अभागिनी नारी की कथा है जिसे अपना कहने योग्य कोई भी दिखाई नहीं देता, फिर भी अपनी संतान केलिए वह अपने परिश्रम के बल पर जीती है। आर्थिक विषमता ही उसकी पुत्री की मृत्यु का कारण बना है। इसी प्रकार देखें तो "बिसाती" कहानी में आर्थिक विवशताओं से पीड़ित अभागिनी नारी से संबंधित करूणाजनक चित्र अंकित है। "गृहणी", "विडम्बना", "शशांक" कहानियों में ऐसी नारियों के जीवन की झाँकी प्रस्तुत की गयी है जो पति, संतान तथा पारिवारिक उत्तरदायित्वों की उपेक्षा करती है। ऐसी नारियों के प्रति लेखिका के मन में सहानुभूति का अभाव है, इसी से कहीं कहीं उनकी अत्यन्त निर्मम आलोचना की गयी है। "माथे पर लगी हुई सिन्दूर की बेंदी बिगाड़ कर नाक पर एक चौड़ी रेखा खींचती हुई फैल गयी थी। आँखों में काजल के साथ-साथ दीठ भी कम न थी और पान की लाली होठों की सीमा को पार करके ठोड़ी तक आ गयी थी।"[2] विधवा बहू के प्रति परिवार के अन्य रिश्तेदारों का बर्ताव किस तरह का होता है इसे "गोटे की टोपी" की मंजरी-पार्वती तथा "अन्तिम सहारा" की लीला आदि पात्रों के द्वारा चित्रित किया गया है। "प्रायश्चित्त" कहानी में देवर प्रफुल्ल तथाभाभी गौरा का प्रेम, पति पत्नी के प्रेम में ईर्ष्या का कारण बन जाता है। इनकी कहानियों में अधिकत: असहाय अबला दुखी नारी को जहाँ स्त्री वर्ग से उपेक्षा, निरादर एवं ताने मिले वहाँ उसे पुरूष वर्ग से सहानुभूति, करूणा, दया आदि का सहारा भी मिला है। फलत: पुरूष के प्रति उनके मन में गुप्त प्रेम का जन्म हुआ। "स्वाभिमानिनी" में ऐसी स्नेहमयी सास का चित्रण मिलता है जो अपनी विधवा बहू को अपने पुत्र की

---

1. होमवती देवी, धरोहर, पृ-13

2. पृ-103-104.

मृत्यु का कारण समझ कोसती नहीं, बल्कि जिसके मन में अपनी विधवा बहू के प्रति प्यार, दुलार, ममता की कमी नहीं । होमवती की कहानियों में मित्र का मित्र के प्रति सच्चा सहानुभूतिपूर्ण संबंध ही मिलता है । "आधार" में कैप्टन कुमार जब ही शांन्तिपूर्वक मौत की गोद में विश्राम कर पाते हैं तब वह अपनी पत्नी प्रतिभा और पुत्र अनिल का भार स्वयं अपने मित्र डाक्टर कासलीवाल के हाथ सौंप देते हैं । वचनबद्ध डाक्टर कासलीवाल प्रतिभा को अपने जीवन संगिनी बना देता है और अनिल का भार स्वयं ले लेता है । "बिसाती", "युगान्तर", "अपना घर", आदि कहानियों में माता-पिता के वात्सल्य का मार्मिक स्पांकन हुआ है । "भगवंती", "जीवन-क्रम", "नंदी" कहानियों में एक ओर परिवार के नौकरों की बेईमानी का चित्रण है तो दूसरी ओर ईमानदार कर्तव्य-निष्ठ, अज्ञाकारी एवं कर्मपरायण नौकरों का भी उल्लेख किया गया है ।

महिला कहानीकारों की सामाजिक कहानियाँ :-

सामाजिक कहानियों का संबंध होता है समाज से । समाज के मनुष्यों के पारस्परिक संबंध, सामान्य हित तथा उन हितों की पूर्ति के मार्ग में आई अडचनें, उनको दूर करने केलिए किये गये प्रयत्न तथा परिणाम सामाजिक कहानियों के विषय बनते हैं । जिन कहानियों में देश की सामाजिक कुप्रथाओं पर प्रकाश डाला जाता है और उनका अनुशीलन किया जाता है तथा समाज का स्पन्दन रहता है, उन्हें सामाजिक कहानियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है । इन में सामाजिक यथार्थ को उद्घाटित कर आधुनिक भावबोध और युग-बोध को उनके विस्तृत आयामों में अभिव्यक्त करने का प्रयत्न किया जाता है । देश की सामाजिक कुप्रथाओं की सूची में दहेज-प्रथा, बाल-विवाह, बहु-पत्नी समस्या, वेश्या-समस्या, भिखारी-समस्या, अन्तर्जातीय विवाह-समस्या, परित्यक्ता नारी-समस्या, विधवा-समस्या, अछूत-समस्या, अवैध प्रेम-समस्या, अनमेल विवाह, वर्ण-व्यवस्था, उत्तराधिकार समस्या आदि सामाजिक विकृतियाँ थीं । श्रीमती उषादेवी मित्रा, श्रीमती शिवारानी प्रेमचन्द, तेजरानी पाठक, चन्द्रवती ऋषभ सेन जैन, कमला चौधरी, सुभद्राकुमारी चौहान,

होमवती देवी, सुमित्राकुमारी सिन्हा, रामेश्वरी देवी "चकोरी" और सत्यवती मल्लिक इस वर्ग की प्रमुख कहानी लेखिकाएँ हैं ।

उषादेवी मित्रा की सामाजिक कहानियाँ स्त्री संबंधी समस्याओं की ओर केन्द्रित हैं । अन्तर्जातीय विवाह समस्या, वेश्या एवं विधवा जीवन की समस्याएँ, परित्यक्ता नारी-समस्या, दहेज प्रथा, छुआछुत तथा जातिभेद की समस्याएँ आदि विषय इनकी कहानियों में हैं । "पिऊ कहाँ"[1], "बहता फूल"[2] में अन्तर्जातीय विवाह-समस्या को उठाया है । "पिऊ कहाँ" के साँवलिया द्वारा विवाह प्रस्ताव सुनते ही परंपराओं और रूढियों में जकडी सीता उत्तर देती है "छि: ऐसा कहीं हुआ है । तुम ग्वाले हो, हम ब्राह्मण हैं । मामा कहते हैं - सजातीय के सिवा ब्याह नहीं होता ।"[3] साँवलिया साहस कर यद्यपि सीता से विवाह कर लेता है, परन्तु समाज के विरोध के कारण अन्त में मुनिया से शादी कर जात में मिल जाता है और दुखिनी सीता सागर में कूद कर आत्महत्या कर लेती है । "बहता फूल" कहानी द्वारा समाज की कामवासना वृत्ति और उसके मिथ्या जात्याभिमान पर लेखिका ने चोट की है । "मन की देन" में[4] उसने बतलाया है कि विवाह मार्ग में उँच-नीच कुल की भावना स्त्री जन्य नहीं पुरूष जन्य है । नारी का सबसे बडा अभिशाप है पति से तिरस्कृत एवं अपमानित होना । "पुतली जी उठी"[5] की ललिता बन्धनों में बन्धी परित्यक्ता नारी है । दीपावली का पति प्राण से अधिक प्रिय पत्नी को उसकी माँ के कलंक के कारण परित्याग कर देता है । दीपावली का दुख चरम सीमा पर पहुँच जाता है जब कि उसकी एकमात्र पुत्री पुष्पा को भी उसी से ले लिया जाता है । परंपराओं, धार्मिक रूढियों से बंधी नारी अपने अन्दर इतना साहस नहीं जुटा सकी थी कि पति के विशेषाधिकारों को चुनौती देती तथा विद्रोह करती, वह गिड़गिड़ाती भी नहीं, वरन् आत्मशक्ति के बल पर अपनी भावनाओं और विचारों का दमन करती है । "मन का दीप"[6] कहानी सावित्री वेश्या के विलासमय जीवन में अप्रत्याशित परिवर्तन की बात उठाती है । अकालग्रस्त बंगाल के कंकालों की दुर्दशा देखकर सावित्री

---

1. उषादेवी मित्रा, पिऊ कहाँ, हंस, दिसंबर 1933, पृ-32;
2. " रागिनी, पृ-72. 3. उषादेवी मित्रा, पिऊ कहाँ, हंस, दिसंबर 1933 पृ-32
4. " पृ-83 5. " रागिनी, पृ-83.
6. " माया, सितंबर 1945,

त्याग और करूणा से भर उठती है । "बेकार पूल"[1] कहानी में वेश्या पुत्री के जीवन की विडंबना विशदता से अंकित है । वह नारी भी है, इस बात को पुरूष समाज नहीं समझ पाता । क्योंकि वह नारी-जीवन से खेलना मात्र जानता है । उसकी दुर्दशा का दायित्व उस पर नहीं । दरिद्र परिवारों की भूखी लड़कियाँ अपना सतीत्व बेचने को किस प्रकार बाध्य हो जाती है, यह "जीवन का एक दिन"[2] में दिखाया गया है ।

उषादेवी ने मध्यवर्गीय परिवारों की विधवाओं के दयनीय जीवन का अत्यंत प्रभावपूर्ण वर्णन किया है । भारतीय समाज में वैधव्य एक अभिशाप है । हर पल, पग-पग पर उसे समाज की तथा परिवार की यातनाएँ सहन करनी पडती हैं । निस्सान्तान विधवा का जीवन और भी दूभर हो जाता है । विधवा नारी की समस्या केवल आर्थिक एवं सामाजिक ही नहीं, वैयक्तिक तथा आन्तरिक भी हैं । "उन्नीस सौ पैंतालीस"[3] "गोधूली"[4] "मातृत्व"[5] "मृत्युंजयी"[6] में विधवा नारी की वैयक्तिक, पारिवारिक तथा सामाजिक समस्याओं को उषादेवी मित्रा ने गंभीरता-पूर्वक उठाया है । सविता, सीता, शान्ता आदि उनकी ऐसी नायिकाएँ हैं जो विधवा हो जाने पर सारे सुखों को प्राप्त करके भी स्वर्गवासी पति को नहीं भुला पाती और असहनीय पीड़ा में हमेशा पीड़ित रहती है । "गोधूली" की शान्ता पति की मृत्यु के पश्चात् मेहनत-मज़दूरी करके अपनी एकमात्र पुत्री नमिता का पालन पोषण करती है । भाग्यवश एक धनी परिवार का पुत्र प्रभात स्वयं ही नमिता से विवाह करने केलिए तैयार हो जाता है । परन्तु हिन्दु समाज यह सहन न कर सकता है । रायबहादुर शान्ता और नव वधु नमिता को अपमानित कर विवाह मण्डप से उठकर चल देते हैं । "मृत्युंजयी" कहानी में विधवा सीता हेमन्त

---

1. उषादेवी मित्रा, बेकार पूल, हंस, जनवरी 1937, पृ-360
2. " रागिनी, पृ-15
3. " मेघमल्लार, पृ-100
4. " गोधूली, हंस, अक्तूबर 1936
5. " मातृत्व, हंस, सितंबर 1933, पृ-18
6. मृत्युंजयी, विश्वामित्र, नवंबर, 1940, पृ-38.

से विवाह कर लेती है । विधवा पात्रों का विवाह करवाकर लेखिका समसामयिक कथासाहित्य में एक नयी क्रांति उपस्थित कर पाठक को पुन: चिन्तन केलिए प्रेरित करता है । भारतीय समाज में पति की मृत्यु हो जाने पर पत्नी को ही पापिन, कलंकिनी तथा अभागिन घोषित किया जाता है । "मातृत्व" की हशमत ऐसी ही अभागिन, पापिन, कुलकलंकिनी स्वीकार की गयी दस वर्षीय विधवा बालिका है । "छोटा प्रश्न"[1] कहानी में छुआछूत समस्या के पीछे निहित सामाजिक कारणों पर प्रकाश डाला गया है । बेकारी की समस्या का प्रमाणिक चित्रण हमें"बेकारी का भूत[2] नामक कहानी में मिलता है । पाश्चात्य सभ्यता तथा संस्कृति के प्रभाव ने आधुनिक भारतीय समाज में आमूल परिवर्तन उपास्थित किया है । उनके समाज में नारी पर कोई अंकुश नहीं । "समझौता"[3] कहानी में पाश्चात्य संस्कृति में पली कुसुम और भारतीय संस्कारों से ओतप्रोत परेश के बीच वैवाहिक बन्धन के कारण उत्पन्न समस्याओं का चित्रण मिलता है ।

कमलादेवी चौधरी ने अपनी सामाजिक कहानियों में समाज के विविध पक्षों और उनसे संबंध रखनेवाली समस्याओं का चित्रण किया है । इनकी कुछ कहानियों में वर्ण-व्यवस्था ही मुख्य आधार शिला के रूप में वर्णित है । स्वतंत्रता से पूर्व हमारे समाज में निम्न वर्ग की दशा अत्यन्त ही शोचनीय थी। उनके साथ प्रेम करना तो दूर की बात थी । कोई सहानुभूति के दो शब्द भी नहीं बोलता था । उन्हें सिर्फ निकृष्ट कार्यों के योग ही समझा जाता था । इन्हीं की दयनीय दशा का वर्णन "भिखमंगी की बिटिया"[4]"प्रायश्चित"[5] "पागल"[6] आदि कहानियों में इन्होंने किया है । "पागल" में एक अछूत परिवार की निस्सहायता और उच्चवर्गीय वैद्य की हृदयहीनता का वर्ण करके अछूतोद्धार के प्रश्न को सामने रखा गया है । मृत्यु

1· उषादेवी मित्रा, महावर, पृ-32 2· उषादेवी मित्रा,नीम चमेली, पृ-74

3· " पृ-125· 4·कमलादेवी चौधरी,उन्माद,पृ-95

5· कमलादेवी चौधरी,उन्माद,पृ-177 6· " " पृ-111

शय्या पर पड़े एक अछूत शिशु की परिचर्या केलिए उच्चवर्गीय वैद्य नहीं आता, जिसके परिणाम स्वरूप शिशु की मृत्यु हो जाती है और उसका पिता पागल हो जाता है। अछूतों की पारिवारिक समस्याओं और उनके कष्टों का वर्णन उन्होंने व्यापक रूप से किया है किन्तु उनके उद्धार के मार्ग का निर्देश नहीं किया है। इनके पात्र इतने साहसी नहीं कि अछुतोद्धार जैसे प्रश्न को सुलझाने में समाज से टक्कर ले सकें।

"साधना का उन्माद"[1] कहानी नारी की सामाजिक स्थिति का चित्र देती हैं। पढ़ी-लिखी "अपटूडेट" लड़की जिसे जीवन में सारा सुख मिला है फिर भी पारिवारिक सीमाएँ उसकी स्वतंत्रता में बाधक हैं। वह मुँह खोलकर अपने पति के साथ बातचीत तक नहीं कर सकती है, उसके भीतर पति का प्रेम पाने की उत्सुक प्रतीक्षा है। पर परिवार और समाज की मर्यादा उसे उपर्युक्त अवसर नहीं देती और प्रेम के अभाव की मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया उसके मन में क्रोध बन कर उत्पन्न होती है। कहानी का अन्त उसके पातिव्रत-धर्म के निर्वाह की सचेष्टता में दिखाया गया है। कमलाजी की कहानियों में एक ओर हिन्दु समाज के कुचक्र में फँसी हुई पतित, दुखी विधवा की करूण कथा है, दूसरी ओर जागरूक समाज के व्यक्तियों द्वारा पुनर्विवाह कर विधवा समस्या का समाधान सम्मुख रखा गया है। अच्छे वस्त्राभूषणों से हीन, त्योहारों और उत्सवों पर अछूत मानी जानेवाली बहिष्कृत, अनादृत, हिन्दु विधवा की स्थिति ही "करूणा" कहानी में चित्रित है। आई·सी·एस· परीक्षा उत्तीर्ण होकर देश लौट आनेवाले देवर का स्वागत करने केलिए घर के बच्चे बूढे सब स्टेशन जा रहे थे। चलते समय जेठानी जी का विधवा करूणा के प्रति उपदेश देखिए - "लल्ला के घर में आने पर कहीं पहले तुझ कुलक्षणी पर ही दृष्टि न पड़ जाय।"[2] विधवाओं को क्या करना चाहिए, क्या नहीं, समाज के हाथों में इसकी लंबी सूची थी। संक्षेप में कहें तो विधवा-जीवन तप का जीवन है। "गीता"[3] भी हिन्दु समाज के कुचक्र में फँसी हुई दुखिया विधवा नारी की कसक भरी कहानी है। "स्वप्न"[4] में गुरू द्वारा शेखर के पास सुरीला के साथ विवाह-

---

1· कमला देवी चौधरी, साधना का उन्माद, विशाल भारत, अगस्त 1934, पृ-170
2· " पिकनिक, पृ-21
3· उन्माद, पृ-110
4· पिकनिक, पृ-1·

प्रस्ताव भिजवाकर विधवा-पुनर्विवाह समस्या का समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है । "कन्यादान"[1] के जज तारापतराय अपनी विधवा पुत्रवधु "सुनीता" का कन्या के समान विवाह कर ही सुख एवं शान्ति का अनुभव करते हैं । लेकिन यह मार्ग हृदय में पति की चुभती हुई यादें रखकर दिल में उठती हुई हूक को दबाये रात के सन्नाटे और अन्धकार में चुपचाप रोनेवाली विधवा के बस का नहीं । विधवा जीवन से लाभ उठानेवाले घर के सदस्य विधवा-विवाह के विरुद्ध भी हैं । इसलिए "करूणा" कहानी की करूणा सोचती है - "रात दिन बहनेवाले इन आँसुओं में भी कोई सार नहीं रह गया है । क्या करूँ ? विवाह। एक ही उपाय है । किन्तु यह उपाय मेरे बस का नहीं ।"[2] इनकी विधवाएँ पुनीता और पतिता दोनों प्रकार की हैं । चरित्रहीन विधवा परिवार केलिए अभिशाप है, ऐसा समझकर उन्होंने विधवाओं द्वारा आत्महत्या कराई है अथवा उनको पागल हो जाते चित्रित किया है ।

"भ्रम"[3] शीर्षक कहानी में अन्जातीय विवाह का समर्थन किया गया है । "मेरी कहानी"[4] में धनी-गरीब युवक-युवती की प्रेम समस्या का चित्रण हुआ है । "लोकाचार" कहानी में लेखिका ने सामान्य रीति-रिवाजों की अनिवार्यता पर बल दिया है । इसके अतिरिक्त लेखिका ने मजदूरों की समस्या, पुत्र-पुत्री में भेद करने की समस्या, सौतेली माँ की समस्या, अनाथ बच्चों की समस्या, विवाह समस्या आदि को भी अपनी कहानियों में स्थान दिया है ।

श्रीमती कमला त्रिवेणी शंकर की अधिकाँश कहानियाँ आधुनिक भारतीय समाज के शिक्षित, संपन्न, उच्च वर्ग के सामाजिक जीवन के किसी न किसी मार्मिक समस्या का सूक्ष्म चित्रण तथा त्याग, करूणा एवं आदर्शवादिता के आधार पर उसका सुन्दरतम समाधान है । "त्याग का सौदा", "प्रायश्चित" तथा अपराजिता" शीर्षक कहानियों में पुरूष द्वारा दो विवाह करने की घटना को स्थान देकर लेखिका ने

---

1. कमलादेवी चौधरी, पिकनिक, पृ-1
2. " पृ-20
3. उन्माद, पृ-49
4. " " पृ-143

सपत्नी की समस्या का चित्रण किया है । किन्तु इन कहानियों की पात्राओं को ईर्ष्या, द्वेष आदि नारी सुलभ संभावित प्रवृत्तियों से अलग रखकर उस समस्या का सुन्दर आदर्शवादी समाधान प्रस्तुत किया है । लेखिका की कुछ नारी पात्र नवयुग की शिक्षित महिलाएँ हैं, अत: रूढिवादी प्राचीन नारी की भाँति पति की जूतियाँ चाटना उनका ध्येय नहीं । पति यदि पत्नी की आवश्यकता से अधिक उपेक्षा एवं अवहेलना करे तो पत्नी की उचित प्रत्युत्तर देती है । "अमीर की बेटी" में जब दहेज कम मिलने के कारण नीलिमा के पति तथा उनके अन्य संबंधी उसकी अवहेलना करके उसके मायके भेज देते हैं तब वह भी अपने पिता से स्पष्ट कह देती है - "पिताजी आज के युग में स्त्रियाँ सम्बलहीन नहीं हैं । मैं पढूँगी और नौकरी करूँगी । पर ऐसे घर में शायद अब लौटकर नहीं जा सकूँगी, जहाँ के लोगों ने मुझे मिट्टी के खिलौने की भाँति ठुकरा दिया ।"[1] जब पति और सास अपनी भूल स्वीकार करके उससे स्नेहपूर्वक लौट आने की याचना करते हैं तब वे सब क्रोध एवं आत्माभिमान भुलाकर ससुराल लौट जाती हैं । किन्तु "नारी का स्वाभिमान" की शीला पति द्वारा चौदह वर्षों तक त्यक्ता रहकर पति के आग्रह पर भी पुन: घर लौटने को तैयार नहीं हुई; क्योंकि जब पति ने तनिक से सन्देह पर उसका त्याग कर दिया तब वह स्वाभिमानी नारी चौदह वर्ष बाद उनके पश्चाताप और आमंत्रण को क्यों स्वीकार करें ? यदि पति अत्याचारी हो, क्रोधी हो, चरित्रहीन हो, शराबी हो तो भी उसे भी परमेश्वर मानना, उसे छोड़ने या किसी और को प्यार करने की अनुमति समाज नें स्त्री को प्रदान नहीं की । लेकिन यह निर्विवाद सत्य है कि युगों से अनेक संघर्षों के पश्चात् प्राचीन सामाजिक रूढ़ियों में जकड़ी नारी समानाधिकार प्राप्त कर चुकी है । "मातृत्व की छाया" में अछूतों के प्रति कुलीन वर्ग की घृणा की चर्चा है । "कर्तव्य" में दहेज की पूर्ण राशी न मिलने पर सुधीर के पिता बहू को अधब्याही छोड़ देने का आदेश देते हैं ।

चन्द्रकिरण सोनरेक्सा की कहानियों में शोषण की चक्की में पिसते हुए सर्वहारा वर्ग की पीड़ा के दयनीय चित्रण के साथ ही साथ सामाजिक यथार्थों की

---

1. कमला त्रिवेणी शंकर, जयमाल, पृ-115

तीव्र कटु और गतिशील अभिव्यक्ति हुई है । "अफसर का बेटा" में उन्होंने पाश्चात्य सभ्यता तथा संस्कृति में रंगे आज के उच्च वर्ग का बड़ा ही सजीव रूप प्रस्तुत किया है साथ ही उच्च वर्ग द्वारा निम्न वर्ग के उपर किये गये शोषण पर तीव्र प्रहार है । जैसा कि उन्होंने स्वयं बताया है - "अफसर का बेटा" कहानी मेरी प्रतिनिध कहानी कही जा सकती है अथवा नहीं, मैं स्वयं नहीं कह सकती । किन्तु मेरी अधुनातन कहानियों में इसने पाठक वर्ग का विशेष ध्यान आकर्षित किया है । निम्न मध्य वर्ग में जन्मी मैं निम्न मध्य वर्ग के ही जीवन की ही गाथा गाती रही हूँ । उच्च मध्य वर्ग इस कहानी को पढ़ कर तिलमिला उठा है और उसने मुझे बहुत बुरा-भला भी कहा है । आज के अफसर वर्ग में निष्पाप, अकलुष मानव की आत्मा किस प्रकार घुट घुटकर मर रही है, और कितनी खतरनाक है, इस वर्ग की प्रभुता आज भी हमारे भारतीय जीवन पर, इसी तथ्य की भावना का चित्रण मैं ने अपनी इस कहानी में करने की चेष्टा की है । ----------"[1] "कमीनों की ज़िन्दगी", "आदमखोर" आदि कहानियों में निम्न वर्ग की आर्थिक यातनाओं से भरी स्थिति का चित्रण उसकी दयनीय दशा तथा कष्टों का विवरण दे कर लेखिका ने अपनी प्रगतिशील चेतना को प्रकाशित किया है । "बेजुबाँ" की नन्दों की सारी ममता तथा सारा वात्सल्य पेट की भट्टी में आत्मसात् हो गयी । नन्दों अपने और बच्चे का पेट भरने केलिए काम करती है । उसके पास समय नहीं कि वह अपने बच्चे की देखभाल ठीक से कर सके । अन्त में विवश नन्दो बच्चे को अफीम दे हमेशा केलिए सुला देती है । नन्दो आज के समाज के उस वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है जो पेट भरने केलिए अपना सब कुछ लुटा लेने को मज़बूर है - "भीड़ की अधिकांश रोगिणियों ने, जो नन्दो जैसी ही लुटते पतझड़ सा यौवन लिए थीं, उसी की भाँति मैली, कुचैली फटे हुए लहंगे ओढ़नी या चूड़ीदार पैजामे और पैबंद लगे बुरके लादे थी, जिसके हाथ-पाँव और गले में चाँदी और गिलट के घिसे हुए, मैले से काले कड़े-छड़े और हँसुलियाँ पड़ी थीं, जिनके बच्चों के सूखे हाथ-पाँवों और बढ़े हुए पेट पर तावीज़ों की मालाएँ मढ़ी हुई थीं ।"[2]

---

1. स्व.योगेन्द्रकुमार लल्ला, श्रीकृष्ण-हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ-13
2. श्रीमती चन्द्रकिरण सोनरेक्सा, आदमखोर, पृ-142-143.

लेखिका की दृष्टि सामाजिक क्षेत्र में पीड़ित, उपेक्षित स्त्रियों की दीन-दशा की ओर पूर्ण रूप से सजग रही है। "दो रोटियाँ" की उमा रात-दिन सास-नन्दों के अत्याचार सहन करती है। गृहस्थी के अनेकानेक उत्तरदायित्वों के साथ साल या डेढ़-डेढ़ साल के व्यवधान में सन्तान उत्पन्न करती है। साथ ही गरीबी की दिशा में उचित भोजन और दूध आदि न पा सकने के कारण उमा का शारीरिक स्वास्थ्य गिर जाता है। उसकी रुग्णता उसकी मृत्यु का कारण बन जाता है। "दूसरा बच्चा" में भिखारिन गुलाबी को एक बच्चे के साथ भीख-माँगते देखकर वीरेश्वर ने यह कहकर उसकी भर्त्सना की कि भिखारिन होकर बच्चा पैदा करने की क्या आवश्यकता थी ? बाद में स्वयं उसका सतीत्व अपहरण करके उसे एक के स्थान पर दो बच्चों की माता बनाकर वह पलायन कर गया। इस घटना द्वारा लेखिका ने यह व्यक्त किया है कि समाज के सफेदपोश ही समाज के पापों केलिए उत्तरदायी हैं, निर्धन तो केवल उनके भारवाहक बनकर कलंक का बोझ ढोते हैं। "अच्छा लड़का अच्छी लड़की" में समाज में प्रचलित दहेज-कुप्रथा के कारण माता-पिता की परवशता का चित्रण है। "रूपया" में हरिशंकर के द्वारा विवाह को एक सौदा माननेवाले तथा धनलोलुपता की तीव्र ज्वाला में झुलसते हुए समाज के ठेकेदारों का चित्रण किया गया है। "गृहस्थी का सुख" कहानी का परिवार नारी को बच्चे पैदा करनेवाले यंत्र का रूपेण देता है। शिव सहाय महज़ सन्तानोत्पत्ति केलिए दूसरा विवाह करता है और इस महान कर्तव्य को निबाहने में ही एक दिन उसकी पत्नी चल बसती है। नारी की अधिकार विहीन सामाजिक स्थिति को सोरेक्साजी की कहानियों में बड़ी सफलता से चित्रित की गयी है। नारी के उत्थान केलिए नए धरातल की तलाश इनकी अनेकों कहानियों का मूल स्वर है।

चन्द्रवती ऋषभसेन जैन ने अपनी कहानी "वे तीन दिन" में समाज में प्रचलित वेश्या समस्या को प्रस्तुत किया है। इसमें वेश्याओं की जीवन स्थिति का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करने के साथ-साथ पुरुषों की चारित्रिक हीनता का भी विश्लेषण किया है। वेश्या चंचल और सुन्दर के बीच का वार्तालाप चंचल की निरीह स्थिति और सुन्दर की चारित्रिक हीनता पर प्रकाश डालता है। "एक दिन

सुन्दर ने हँसते हुए बाहर से आ कर कहा -"लो चंचल, पता नहीं अब तुम कब मिलो । मेरा तबादला हो गया है और परसों मुझे जाना है । कमबख्त । बहुत याद आएगी तु ।

चंचल चोट खाये ह्याई जहाज सी जैसी आसमान से गिर पडी - ऐं । और मेरा क्या होगा ?

तुम्हारा वहीं होगा जो सब वेश्याओं का होता है । सुन्दर गया, सुन्दर आया, चलाये जाओ अपना बिजनेस ।"[1]

चन्द्रवती ने इसमें यह तथ्य प्रस्तुत किया है कि घृणा का पात्र चंचल नहीं वरन् वह समाज है जिसने उसे वेश्या बनाने केलिए बाध्य किया है । "झींकती भिखारिन" में भिखारियों के जीवन और उनकी समस्या का निदर्शन कराया गया है । इसमें लेखिका ने यह सिद्ध किया है कि मानव, नियति के हाथ का खिलौना है । "है न यही बात" की शबनम मर्यादाओं के कारण अपने बाल-साथी, बाल्य-प्रेमी रहमत से विवाह नहीं कर सकी, उन्हें माता-पिता द्वारा चुने वर से विवाह करना पड़ा । इस संबंध में शबनम के पिता का कहना है - "प्रेम, मुहब्बत ये सब बचपन की बातें हैं । लड़की जिस घर जाएगी, उसे ही मुहब्बत करेगी ।"[2] नारी स्वतंत्रता, नारी शिक्षा, संबंधी आन्दोलनों ने व्यक्तित्व के प्रति जागरूक नारी में आत्मसम्मान, अधिकारों और आत्मनिर्भरता की भावना भरी । परन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि समाज में उनकी स्थिति सुधर गयी थी ।

तेजरानी पाठक ने मुख्य रूप से समाज के आर्थिक वैषम्य और तज्जन्य कुरूपताओं को अपनी कहानियों में स्थान दिया है । जमीन्दारों के शोषण और अत्याचार से त्रस्त पीड़ित किसानों-मजदूरों का जीवन्त रूप है "लाल कुरता", "परिचित हृदय", "श्यामा" आदि कहानियाँ । लेखिका ने जमीन्दारी व्यवस्था को गहराई से पकड़ा है । जमीन्दार मानवीय संबंधों को भूल किसानों मजदूरों का शोषण करता

---

1. चन्द्रवती जैन, नींव की ईंट, पृ-89
2. " पृ-79

था, उनके साथ अत्याचार करता था और वह उस वक्त और भी भयंकर रूप धारण करता था जब कि आर्थिक शोषण के साथ-साथ उनसे बेगार में काम लिया जाता अथवा लगान न देने के दण्ड स्वरूप उनकी प्रियवस्तु नीलाम कर दी जाती । "परिवित हृदय" के रामधन द्वारा लगान न दे पाने के कारण उसे बेगार करनी पड़ती है । ज़मीन्दार साहब की लड़की का अन्न प्रश्न है । घनघोर बरसात में तेज़ ज्वर से पीड़ित रामधन घास छिल रहा है । अचानक ही एक पेड़ के गिर जाने से वह पेड के नीचे दबकर मर जाता है । "श्यामा" में गोपाल के पिता द्वारा पैसा न चुकाये जाने के कारण उसका घर-बार नीलाम कर लिया जाता है । साथ में ज़मीन्दार द्वारा गोपाल की भैंस को भी ले लिया जाता है । "लाल कुर्ता" में एक ऐसी औरत की कहानी है जो सारी दिक्कतों के बावजूद पेट भरने केलिए मज़दूरी करती है और कभी विलंब से आने पर उसके लाख अनुनय-विनय करने पर भी उसकी मज़दूरी में से पैसा काट लिया जाता है और दया की भीख माँगने पर उसे मिलता है, मालिक की फटकार और दारोगा की मार । मालिक गरजते हुए कहता है - "चुप रहो । शोर मत करो । मुझे बहुत परेशान करोगी तो कुछ नहीं दूँगा । जाओ, मेरे उमर दावा करो । अगर जीती तो वे नौ पैसे ले लेना । बस मैं तुम्हें एक पाई भी नहीं दूँगा ।"[1] अन्त में सुलोचना द्वारा पुलिस की सहायता माँगने पर, सुलोचना की बातों पर ध्यान न देकर पुलिस उसे घसीटता हुआ पुलिस स्टेशन की ओर रवाना हुआ । वहाँ थानेदार ने उसके वे पैसे रख लिए और उसे पीट-पाट तथा गालियाँ देकर छोड़ दिया । "एक तो थकी हुई, दिन भर की भूखी हार्दिक वेदना और उमर से थानेदार की मार ------ । अभागिनी सुलोचना बेहोश होकर गिर पड़ी और कब तक पड़ी रही उसे कुछ मालूम नहीं ।"[2] इस प्रकार "लाल कुरता", "अपराधी कौन" द्वारा तेजरानी ने तत्कालीन न्याय व्यवस्था पर करारा प्रहार किया है जो सिर्फ धनिकों केलिए बनी न कि गरीबों अनाथों केलिए । "अपराधी कौन है" में चपला की धनी माँ अपने निर्दोष नौकर पर चोरी का आरोप लगा उसे जेल भिजवा देती है । अपने पिता के अपमान के बदले की अग्नि में जलता महादेव

---

1. तेजरानी पाठक, अंजली, पृ-7
2. " "

चोरी करते करते एक दिन कुख्यात डाकू बन जाता है । अपनी कहानियों में तेजरानी ने इस तथ्य को साबित करने का प्रयास किया है कि कभी-कभी समाज ही व्यक्तियों के चारित्रिक स्खलन केलिए बाध्य हो रहा है ।

"दो शब्द" की कुमुद के माता-पिता उसका विवाह उसकी इच्छा के विरुद्ध कहीं और करना चाहते हैं जब कि वह प्रेमी अजय के साथ रहना चाहती है । लेकिन दोनों ही आत्महत्या कर ऐसे लोक में चले जाते हैं "जहाँ व्यर्थ में सतानेवाला, आशा को हनन करनेवाला, जीवन को आरंभ होते ही नष्ट करनेवाला कोई समाज नहीं होगा ।"[1] "गुप्ताकर्षण" में भी इन्होंने इसी समस्या को उठाया है । स्पष्ट है कि इन्होंने इन कहानियों के द्वारा उस समाज पर करारा प्रहार किया है । अपने ही बनाये समाज के नियमों को तोड़ पाने की ताकत हम में नहीं है । "अपना घर" में सास-बहू के झगडों तथा "विमाता" में विमाता और सौतेले पुत्र के विषम संबंधों के कारण का अन्वेषण किया गया है । "दो शब्द" मे समकालीन समाज की धार्मिक संकीर्णता का उल्लेख है - "तब विदेश यात्रा करनेवाले को जाति च्युत कर दिया जाता था और कूपमण्डूकता को श्रेष्ठ गुण माना जाता था ।"[2] भारतीय समाज में स्त्रियों का सोने के आभूषणों के प्रति जो मोह है और छोटे बच्चों को आभूषण पहनाने की जो प्रथा है और जिसके कारण, अकसर बच्चों का अपहरण होता है, इन्हीं का चित्रण "सन्यासी" कहानी में मिलता है ।

महादेवी वर्मा ने अपने अधिकांश रेखाचित्रों में निम्न वर्गीय पात्रों की विशेषताओं, दुर्बलताओं और समस्याओं का वर्णन किया है । इस वर्ग की नारियों को सामाजिक कुरीतियों तथा पुरुष जाति की हृदय हीनता के कारण कितना सहना पड़ता है इसके अनेक करुण-मार्मिक चित्र लेखिका ने अंकित किए हैं।पारिवारिक अत्याचारों से पीडित मूक रहकर घुट-घुटकर अपना जीवन बितानेवाली तिरस्कृता विधवा है बाल-विधवा मारवाडिन । उसकी करुण आँखें ही उसके जीवन की समस्त वेदना को स्वत: व्यक्त कर देती है । सबिया एक गरीब मेहतरानी थी ।

---

1. तेजरानी पाठक, अंजली, पृ-85
2. " " पृ-76

अशिक्षित और पीडित होते हुए भी उत्सर्ग तथा कर्मठ सबिया उपेक्षित भारतीय नारीत्व के रूप में दलित समाज की नारी का प्रतिनिधित्व करती है । एक स्त्री के साथ भागे हुए अपने पति नाम के व्यक्ति जब लौट आता है तो सबिया उसे और नववधू को अपने साथ बसाने का निश्चय करती है । भंगियों के पारिवारिक जीवन का चित्रण और दलित नारी सबिया के अनोखे व्यक्तित्व का संदर्भ देती हुई लेखिका समाज की क्रूर प्रवृत्ति पर व्यंग्य करती है - "पुरुष भी विचित्र है, वह अपने छोटे से छोटे सुख केलिए बडे से बडा दुख डालता है और ऐसी निश्चिंतता से मानो वह स्त्री को उसका प्राप्य दे रहा है ।"[1] ऐसी सलज्ज और कर्तव्यनिष्ठ सबिया को लक्ष्य करके जब एक परिचित वकील पत्नी ने महादेवी वर्मा से कहा - "आप चोरों की औरतों को क्यों नौकर रख लेती है ?"[2] तो उन्होंने जो उत्तर दिया था देखिए वह समाज पर कैसा कठोर व्यंग्य है - "यदि दूसरे के धन को किसी न किसी प्रकार अपना बना लेने का नाम चोरी है तो मैं जानना चाहता हूँ कि हम में से कौन संपन्न महिला चोर पत्नी नहीं कही जा सकती ? "[3] महादेवी के इस कथन में हमारी वर्तमान व्यवस्था पर बडी गहरी चोट हुई है ।

बिट्टो का जीवन प्रकरण अनमेल विवाह जैसी ज्वलन्त समस्या उठाता है । भारतीय पुरुष-प्रधान समाज में 64 वर्षीय पुरुष सोलह वर्षीया बालिका की अपेक्षा रखता है । ऐसी स्थिति में बिट्टो केलिए कम आयु का वर उसके संबंधी खोजते हैं । नारी की यह परवश स्थिति उसकी आर्थिक दशा के ही कारण हुई है । लेखिका ने कहा है - "स्त्री जब किसी साधना को अपना स्वभाव और किसी सत्य को अपनी आत्मा बना लेती है तब पुरुष उस केलिए न महत्व का विषय रह जाता है, न भय का कारण ।"[4] छठे संस्मरण की बाल-विधवा माँ के द्वारा वेश्या समस्या पर लेखिका ने अपना गंभीर चिन्तन प्रस्तुत किया है । संभवत: समाज की ओर से सहानुभूति का अभाव ही वेश्या वृत्ति के प्रादुर्भाव का कारण रहा है । उन्होंने

---

1. महादेवी वर्मा - अतीत के चलचित्र, पृ-45
2. " -47
3. " " "
4. " -54

वेश्या वृत्ति को जघन्य अपराध समझनेवाले पुरूष समाज केलिए अन्तर में भरे हुए गहरे विक्षोभ की अभिव्यक्ति केलिए व्यंग्य और तीखेपन को स्वर दिया है । पुरूष जाति से वह कह उठती है - "यदि ये स्त्रियाँ अपने शिशु को गोद में लेकर साहस से कह सकें कि बर्बरो । तुम ने हमारा नारीत्व, पत्नीत्व सब ले लिया पर हम अपना मातृत्व किसी प्रकार न देंगी, तो इनकी समस्याएँ तुरन्त सुलझ जावें ।" आठवें रेखाचित्र में समाज द्वारा पीड़ित पर आत्म-सम्मान केलिए जीनेवाली एक ऐसी अभागी वेश्यापुत्री का विवरण है जो अपनी माँ के पेशे की अवहेलना कर एक विद्रोही पुरूष से विवाह कर लेती है । परन्तु बीच में ही उसके पति की मृत्यु हो गयी । पति का क्रिया-कर्म संपन्न हो जाने के उपरान्त जब उसने ससुर के साथ ले चलने की प्रार्थना की तो ससुर ने अत्यन्त कठोर स्वर में कहा कि वह अपनी माँ के पास लौट जाय । महादेवी जी ने इस मान्यता पर प्रहार करते हुए लिखा है - वह पतित कही जानेवाली माँ की पुत्री है और बिना समाज के प्रवेश पत्र के साध्वी स्त्रियों के मंदिर में प्रवेश करना चाहती है ।"[2] वेश्या और उनकी पुत्रियाँ हमेशा वेश्या ही बनी रहेंगी - इस समाज का ऐसा ही नियम है । यहाँ महादेवीजी समाज के इस घिनौने नियम पर कठोर व्यंग्य कर रही है । प्रबुद्ध तथा निडर लछमा बेमेल विवाह की शिकार, उत्पीडित पर जुझारू व्यक्तित्ववाली पहाड़ी नारी है । वह परिस्थितियों से समझौता नहीं करती, सामाजिक बन्धनों के प्रति समर्पित नहीं होती वरन् अकेली जीवन से संघर्ष करती है । "लछमा" में निर्धनों की दरिद्रता तथा विपन्नता के उल्लेख का एक चित्र देखिए - "मार्ग में तीन दिन तक कुछ खाने को न मिल सका । लछमा हँसकर कहती है - जब बहुत भूखा हुआ, तब पीली मिट्टी का एक गोला बना कर मुँह में रखा और आँख मूँदकर सोचा - लड्डू खाया, लड्डू खाया, बस फिर बहुत सा पानी पी लिया और सब ठीक होगया ।"[3]

"स्मृति की रेखाएँ" में भक्तिन के चित्रण के माध्यम से पुरूष वर्ग के नारी पर

---

1. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ-6।
2. " -77
3. " -107

होनेवाले अत्याचारों का सजीव चित्रण है । बाल-विवाह जैसी कुरीतियों के संबंध में महादेवी का मार्मिक कथन भी दर्शनीय है । दूसरा रेखाचित्र पेरीवाले का है । इसमें चीनी बालक की विमाता किस प्रकार बालक की बहिन के सुकोमल कौमार्य से व्यापार करती है और उसे अपनी वासना पूर्ति एवं लौकिक भोग का उपादान बना डालती है, इसी का चित्रण है । तीसरे रेखाचित्र में पीड़ित एवं शोषित कुली वर्ग का चित्रण है । "बिबिया"पुरुष समाज द्वारा पीड़ित नारी की एक करुण कहानी है । गूँगी गूँगिया तो उत्पीड़ित स्त्री पात्र है जिसे ससुराल का अमानुषिक अत्याचार भोगना पड़ता है ।

रामेश्वरी देवी चकोरी "आलमगीर" कहानी में समाज में प्रचलित व्यावसायिक ईर्ष्या-द्वेष की समस्या के साथ-साथ आदर्श प्रेमी के रूप में "पन्त"को प्रस्तुत किया है । "माता की ममता" में लेखिका सुधा के अवैध बालक को समाज के अत्याचार का परिणाम मानती है । "आँखों का कौतुक" में दहेज समस्या से उत्पन्न विषमताओं का चित्रण है तथा "दीदी का मन्दिर" में ज़मीन्दार के कारिन्दों द्वारा निर्धन कृषकों पर अत्याचार का मार्मिक चित्रण है ।

शिवरानी देवी प्रेमचन्द ने अपनी सामाजिक कहानियों में प्रचलित कुरीतियों का बहुविध उल्लेख किया है । "साहस","वधू", "परीक्षा","नर्स", नामक कहानियों में दहेज प्रथा संबंधी समस्याओं को उठाया है । "नर्स" कहानी की बाल विधवा का विवाह उसके पिता इस बात पर राजी कर सके कि वर को विलायत जाने को पाँच हज़ार रुपये दिये जाएं। ऊँचे दहेज की लोलुप इच्छा रखनेवाला वह प्रस्ताव क्षमा को विवाह से विमुख कर देता है । क्षमा की मन:स्थिति का परिचय देती हुई लेखिका कहती है - "असन्तोष ने विद्रोह का जामा पहन लिया था"[1] इस प्रस्ताव की प्रतिक्रिया में "उसका नारीत्व जैसे धुल गया और भीतर से कठोर पत्थर निकल आया ।"[2] संयोगवश पिता की मृत्यु के बाद जीवन-निर्वाह केलिए

---

1. शिवरानी प्रेमचन्द, हंस, पृ-8।
2. "

क्षमा नर्स की आजीविका स्वीकार कर लेती है और एक दिन उसे उस व्यक्ति की सेवा करनी पडती है जो उसका विफल परिणय-प्रार्थी रह चुका था । क्षमा की सेवा से अत्यन्त प्रभावित होकर वह उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखता है । तब क्षमा शर्त रखती है कि जो पुरूष उसे दस हज़ार रूपये देगा उसी से उसे विवाह करना है । वह रूपये भी देने को तैयार हो जाता है । बाद में क्षमा अपना परिचय देती है - यह वही बाल-विधवा है जिस केलिए पुरूष ने दहेज की माँग की थी । "विश्वास" कहानी विवाह की वास्तविकता से अपरिचित भोली बालिका की कहानी है । बाल-विवाह ही बाल-विधवा होने का कारण बनता है । नौ साल की माया को सजधज कर विवाह मंडप में लाया गया । तब माया ने जब देखा कि वर को बैठाने को अच्छा खूबसूरत पीढा मिला और उसे बैठने को केवल एक पत्तल मिला तो वह वर से बोली, मेरा पीढा दे दो, नहीं तो मैं गिरा दूँगी ।"[1] बहु-विवाह समस्या भारत वर्ष की एक निजी कठिन समस्या है । "सौत" कहानी में बहु-विवाह समस्या को ही लेखिका ने दिखाया है । "स्मृति" की सरोज को माँ की मृत्यु के पश्चात् रात-दिन विमाता की झिड़कियों को सहन करना पड़ता था । ज़रा से अपराध केलिए "मालती ने सरोज को उठाकर ज़मीन पर पटक दिया और कसकर तीन-चार तमाचे लगाये"[2] लेखिका ने "विजयी" नामक कहानी में वेश्या समस्या को उठाया है । शिवरानी ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरूष और नारी के समानाधिकारों का समर्थन किया है । पुरूष और समाज के अन्याय को मौन भाव से सहन करना वे भारतीय नारी का आदर्श नहीं मानती हैं । "साहस" की रामप्यारी का विवाह पिता एक चालीस वर्षीय बूढे से निश्चित कर देते हैं । रामप्यारी इसी प्रकार अपनी बलि देने की अपेक्षा स्वतंत्र रूप से जीविका आर्जित करना श्रेयस्कर समझती है । इसी से जब पिता कन्यादान केलिए मंडप में उपस्थित हुए ही थे कि "रामप्यारी" तडातड दस पन्द्रह जूते वर महोदय के सिर पर लगाकर चली जाती है ।"[3] "वधु-परीक्षा" की निर्मला अपना मत स्पष्ट शब्दों में कह देती है "विवाह

---

1. शिवरानी प्रेमचन्द, "साहस" कहानी, चाँद, जून 1936, पृ-127.
2. " "स्मृति" कहानी, चाँद, जून 1940, पृ-128
3. "साहस" कहानी, चाँद, जून 1936, पृ-127.

में करूँगी । जैसे इस विषय में आप स्वाधीन हैं वैसे ही मैं भी स्वाधीन हूँ ।"[1] "ऋण" कहानी कर्ज के भार से दबे किसान की करूण कहानी है जो अपने जीवन-काल में ऋण से मुक्त नहीं हो पाता ।

सत्यवती मल्लिक ने अपनी सामाजिक कहानियों में विवाह समस्या, बेकारी की समस्या, देहाती जीवन की कठोरताओं एवं संकीर्णताओं का उद्घाटन, वहाँ के रीति-रिवाजों, पर्दा-प्रथा आदि का चित्रण किया है । हिन्दू समाज में जाति-भेद ने विवाह की समस्या को कितना जटिल बना दिया है यह "श्यामा" कहानी से पता चलता है । लेखिका ने यह कहानी इस समस्या के समाधान स्वरूप ही लिखी "बेकारी में" नौकरी न मिलने के कारण भारत के नवयुवकों की जो दुर्दशा होती है उस पर प्रकाश डाला गया है । "बुत" नामक कहानी देहाती जीवन का दुख-सुख भरा काल्पनिक चित्र उपस्थित करती है जिसमें प्रचलित रीति-रिवाजों, पर्दा-प्रथा, आचार-विचारों का जीवन्त चित्रण है । इनकी "दृष्टि" कहानी में बेमेल विवाह का चित्र दिया गया है । "नायिका एक निहायत गँवार किस्म की लड़की है, जिसके खुले नेत्रों में उस समतल भूमि का स्मरण हो आता, जिसमें पहाड़ों की भाँति तरल नदी, नाले, वृक्ष, झरने, खेत आदि सा कटा-छटा सौन्दर्य नहीं होता बल्कि दूर-दूर तक फैली हुई उबड-खाबड भूमि का स्वच्छन्द मुक्त विस्तृत भाव ।"[2] पति के दूसरे विवाह कर लेने के बाद परित्यक्ता नारी की जो मनोदशा होती है, उसका सुन्दर चित्र इस कहानी में है ।

सुभद्राकुमारी चौहान ने अपनी सामाजिक कहानियों के माध्यम से नारी का शोषण, विधवा-विवाह, वेश्योद्धार, नारी स्वतंत्रता आदि विभिन्न समस्याओं को समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया है । हिन्दु समाज की विधवाओं के शोषण, यातनाओं पीडाओं की मूकव्यथा अपने करूणतम रूप में "किस्मत", नारी हृदय", "एकादशी", "कल्याणी" आदि कहानियों में चित्रित है । एक तरफ "किस्मत" की बाल-विधवा किशोरी अपनी सौतेली सास मुन्नी की माँ के अत्याचारों को सहने केलिए बाध्य

---

1. शिवरानी प्रेमचन्द, चाँद, पृ-195
2. सत्यवती मल्लिक, दृष्टि, पृ-253

है तो दूसरी तरफ "नारी हृदय" की विधवा प्रमिला एक व्यभिचारी की बातों में आ यौवन के उन्माद में अपना सर्वनाश कर लेती है । यद्यपि लेखिका विधवा पुनर्विवाह की समर्थिका है तो भी विधवा के तपोमय जीवन के सम्मान एवं गौरव की रक्षा के कारण विधवा पुनर्विवाह का समर्थन नहीं कर सकी है । "कल्याणी" में जयकिशन के पूछने पर कल्याणी उत्तर देती है - "पुनर्विवाह" । विवाह से सुख मिलनेवाला होता तो मेरे पति उस दिन रेल से कट कर न मर जाते ------ आप के साथ मेरा पुनर्विवाह असंभव है ।"[1] "असमंजस" को कुसुम वसन्त द्वारा विवाह प्रस्ताव रखने पर कहती है - "इतना सब होते हुए भी वसन्त मैं ने निश्चय किया है कि मैं कभी पुनर्विवाह नहीं करूँगी । अपना माता-पिता और अपने स्वामि की स्मृति में कलंक न लगाऊँगी । तुम्हारा और मेरा शुद्ध प्रेम है, उसमें वासना और स्वार्थ की गंध नहीं ।"[2] "उन्मादिनी", "असमंजस", "गौरी", "प्रोफेसर मित्रा", "मंगला" आदि कहानियों में आप ने कन्या-विवाह समस्या को उठाया है । लेखिका का स्पष्ट मत है कि पति-वरण का अधिकार कुमारियों को मिलना चाहिए । नारी स्वतंत्रता, नारी शिक्षा संबंधी आन्दोलनों से आप के पात्र भी बल संचित कर सके हैं । "गौरी" अपने माता-पिता द्वारा निश्चित वर तहसीलदार को ठुकराकर राष्ट्र-प्रेमी सीताराम को पति रूप में वरण करती है ।

भारतीय पुरुष प्रधान समाज में नारी की कोमल भावनाओं केलिए कहीं स्थान नहीं है । पुरुष अपनी पत्नी पर अत्याचार करता हुआ उसकी असामयिक मृत्यु का भी कारण बनता है । "अंगूठी की खोज" में योगेश अपनी पत्नी से असन्तुष्ट होकर नवलकिशोर की पत्नी व्रजांगना से व्यभिचार भी करता है जिसके प्रायश्चित स्वरूप व्रजांगना आत्महत्या कर लेती है । "होली", और "मझली रानी" कहानियाँ स्त्रियों की तत्कालीन सामाजिक स्थिति का करूण चित्र उपस्थित करती हैं । "दृष्टिकोण" में नारी के अधिकारों की सीमा-रेखा दिखाई जाती है । वह पुरुष के समान अधिकार यदि पाना चाहे भी, तो उसे नहीं मिल सकता । क्योंकि कहानी लेखिका

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, सीधे-सादे चित्र, पृ-34-35
2. " उन्मादिनी, पृ-34

का युग कर्कशा सासुओं और कठोर पतियों की छाया में अपनी स्वतंत्र चेतना खोकर सिमटे रहनेवाले नारी जीवन का युग है । "कदम्ब के फूल" कहानी में सास के कर्कश व्यवहार और पति की सन्देह वृत्ति का चित्र दिया गया है । साथ ही पास पडोस की औरतों की आग में घी डालकर तमाशा देखने की मनोवृत्ति का सुन्दर अंकन मिलता है । "ग्रामीणा" में ग्रामीण बालिका सोना के उन्मुक्त जीवन का शहरी सभ्यता के धुएँ में घुट-घुट कर करूण अन्त दिखाया गया है ।

सुमित्राकुमारी सिन्हा की सामाजिक कहानियों का प्रमुख विषय है, आधुनिक समाज में प्रचलित अवैध प्रेम समस्या।पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित आधुनिक भारतीय नारी की विचारधारा ने नया मोड़ लिया और वह अनुभव करने लगी क्या पुरूष के समान ही हर क्षेत्र में हमारा अधिकार नहीं ? - इस विचार के आते ही समाज के क्रूर कठोर नियमों में जकड़ी नारी अपनी अतृप्त वासना की पूर्ति केलि किसी अन्य पुरूष की ओर आकर्षित हुई । इनकी "व्यक्तित्व की भूख", "विवाहित मेरी जाँ लुट गयी", "भाभी" आदि कहानियों में इस समस्या को उठाया गया है । "व्यक्तित्व की भूख" की इला की अतृप्त इच्छा ही कई युवकों के प्रति आकर्षण का कारण बनी और इला के जीवन में एक नहीं चार पुरूष आये । "मेरी जाँ लुट गयी' की करूणा स्पष्ट शब्दों में अपने मानसिक अन्तर्द्वंद्वों को व्यक्त कर देती है, "सब समझती हूँ, सब चाहती हूँ, लेकिन इसमें पाप ही क्या है शुभा ? मनुष्य मात्र में एक अतृप्त सुख की लालसा होती है । क्या यह संभव नहीं कि जिसे जीवन में जो वस्तु एक साथी से न मिल सके वहीं अगर अन्य कहीं मिल पावे तो यह चाहने पर संसार क्यों विद्रोह करने पर तुला दिखता है ।"[1]

आर्थिक परतंत्रता "गृहलक्ष्मी" की माया के अपमान-तिरस्कार का कारण बनती है और उसका हृदय अन्दर ही अन्दर हाहाकार कर उठता है । "सफल नारीत्व" की माला द्वारा लेखिका ने स्पष्ट शब्दों में नारी की आर्थिक स्वतंत्रता का समर्थन कराया है - "सार्थक स्थितियों से दबी पति के व्यक्तित्व में अपना व्यक्तित्व मिटा कर नारीत्व का उपहास कर मातृत्व को अपनाकर भी नारी

---

1. सुमित्राकुमारी सिन्हा, अचल सुहाग, पृ-3।

क्या नारी नहीं रह सकेगी ? तुम अपनी आर्थिक स्वतंत्रता न खोओ और विवाह बन्धन में बन्धने से बची रहो ।"[1] इस प्रकार की कहानियों में लेखिका ने पुरूष जाति के प्रति नारी जाति के मानसिक द्वन्द्व का चित्रांकन प्रस्तुत किया है । भावुक प्रेम ही सब कुछ नहीं है; नारी को दासत्व बन्धन में बलात् इसलिए बाँधना पड़ता है कि वह आर्थिक दृष्टि से परतंत्र है । इसलिए "व्यक्तित्व की भूख" में विद्रोही इला कहती है - "कायर, स्त्री को पालतू पशु से भी गिरा हुआ समझनेवाले पुरूष, तुम अपने को समझते क्या हो ? यह अपमान स्त्री नहीं सह सकती । तुम्हारे टुकड़ों पर ठोकर है । वह दर-दर की ठोकर खायेगी, किन्तु तुम से सहायता नहीं ले सकती ।"[2] वे ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करना चाहती हैं, जिससे नारी पुरूषों का खुला विरोध कर सके, परन्तु क्या नारी जीवन इससे खुशी हो सकेगा, उसे तो ऐसे मार्ग की खोज करनी है जिससे आर्थिक स्वतंत्रता के साथ-साथ उसका गृहस्थ जीवन भी सुखी हो सके। "सफल नारीत्व" को माला पति द्वारा तिरस्कृता है । उसका हृदय विवाह केलिए घृणा और विद्रोह से भर उठता है । उनका मत है:- "विवाह नारी केलिए मृत्यु है । पत्नीत्व अभिशाप है । अपने व्यक्तित्व की हत्या कर नारी रह जाती है केवल पशु अथवा यन्त्र । पत्नी होकर वह मानवी नहीं रह जाती ।"[3]

होमवती देवी सामाजिक परिवेश में मध्यम निम्न वर्ग की नारी की दयनीय स्थिति का अंकन कर उसकी आत्मा को बल प्रदान करने का परिश्रम करती है । सामाजिक रूढ़ियों एवं परंपराओं में जकड़े परिवार में वैधव्य की पीड़ाओं के भार से लदी नारी को अपने पारिवारिक संबंधियों से प्रतारण, अपमान, अनादर के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलता था । विधवा बहू के प्रति परिवार के अन्य रिश्ते - नातेदारों का बर्ताव किस तरह का होता है इसे "गोटे की टोपी", की मंजरी, पार्वती तथा "अन्तिम सहारा" की लीला आदि पात्रों के माध्यम से चित्रित किया गया है । "पीतल की चूड़ियाँ" में विधवा माँ अपने बेटे तथा बहू के अत्याचारों को सहन न कर सकने के कारण डाक्टर से कहता है - "बेटा । मेरी आँखें अच्छी

---

1. सुमित्राकुमारी सिन्हा, वर्षगाँठ, पृ-18
2. अचल सुहाग, पृ-26
3. वर्षगाँठ, पृ-18.

मत करो और फोड़ दो या जहर दे कर मार ही दो, तुम्हारा बड़ा पुन्न होगा ।[1] "धर्मबहन"[2] में एक भारतीय युवा विधवा के पुनर्विवाह की समस्या उठायी गयी है । "गोटे की टोपी", "आधार", "अन्तिम सहारा" कहानियों में विधवा-पुनर्विवाह समस्या का समाधान प्रस्तुत किया है । "कहानी का अन्त", "अन्तिम सहारा", "मनुष्यता की ओर" आदि कहानियों की पात्राएँ लोक-लज्जा अथवा स्वयं अपने मन की प्रेरणा से पुनर्विवाह की सुविधा होते हुए भी अस्वीकार कर देती है और आत्म-घात कर देती है अथवा घुल-घुल कर मरती है अथवा दृढता से पावन जीवन बिताती है "उत्तराधिकारी" [3] में वृद्ध-विवाह की प्रथा का दारूण परिणाम दिखाया गया है । बूढे लालाजी गिरती अवस्था में पुत्र केलिए चौथा विवाह करते है । उनकी चंचला बहू को उनसे ज़्यादा उनके युवा-संबंधी मोहन का सानिध्य प्रिय लगता है । भगवान की दया से नई बहू को गोद भरती है किन्तु बच्चे का चेहरा मोहन से ही काफी मिलता-जुलता है, लालाजी से नहीं । कहानी का अन्तिम भाग अनमेल विवाह पर करारा व्यंग्य है । "पपीते की चोरी"[4] कहानी में गरीब और अमीर के बीच का फर्क दिखाया गयाहै । गरीब बिजनिया पपीते इसलिए चुराती है कि उनके बच्चों को यह स्वस्थ बनाएगा । "अपना घर" कहानी के द्वारा लेखिका ने उत्तर भारत के होली आदि तीज-त्योहार एवं वैवाहिक रीति-रिवाजों का सुन्दर चित्रण किया है । "माँ" कहानी में बहु-विवाह की समस्या है तो "उत्तराधिकारी" तथा अन्तिम मिलन" कहानियों में नारी के उत्तराधिकारों की समस्या उठायी गयी है ।

महिला कहानीकारों की राजनीतिक कहानियाँ :-

राजनीतिक कहानियों में समाज की राजनीतिक घटनाओं और परिस्थितियों को मुख्य विषय बनाया जाता है ।

1· होमवती देवी, धरोहर, पृ-15

2· " धर्मबहन, विशाल भारत,जून1945

3· " अपना घर, पृ-52

4· पपीते की चोरी, विशाल भारत, अप्रैल 1945, पृ-270·

उषादेवी मित्रा ने "देश-भक्त" कहानी में एक मुसलमान को कांग्रेस का तथा देश का सच्चा भक्त साबित कर समकालीन राजनीतिक परिवेश के प्रति अपनी सजगता का परिचय दिया है। बीसवीं शताब्दी में भारतीय राजनीति में हिन्दु-मुसलमान साम्प्रदायिक संघर्ष राष्ट्रीय आन्दोलन के विकास में बड़ा बाधक तत्व सिद्ध हो रहा था। उषाजी ने इस समस्या को बड़ी सुन्दरता से "देश-भक्त" कहानी में अंकित किया है। इसके अमीर एकता का प्रतीक है। साम्प्रदायिक झगड़े के समय कोई उससे मन्दिर तोड़ने केलिए कहता है तो अमीर कहता है - "नहीं। यह मन्दिर एक भारतीय के वास्तविक प्रेम-प्रीति, श्रद्धा और सचाई का चिह्न है जिसमें कि दुनिया में रंगे हुए एक विशद आत्मा का सिंहासन हो, उस अनन्त के प्रति जिसमें आदमी की श्रद्धा, पूजा, सम्मान बूँद-बूँद चू पड़ा हो - चाहे वह मसजिद हो या मन्दिर, ऐसे एक को मैं ही नहीं, किन्तु मनुष्य मात्र नहीं तोड़ सकता है।"[1] देशद्रोही बनना उसे किसी प्रकार मान्य नहीं। देश की दूसरी समस्या कैदियों की स्थिति में सुधार। "आर्त चीत्कार" का भूपसिंह दयालुता से सब अपराधियों के हृदय पर विजय पा लेता है।

कमला चौधरी की "स्मृति" तथा "पटाक्ष" राजनीतिक कहानियाँ हैं जिनमें स्वाधीनता संग्राम का आन्दोलन प्रधान विषय रहा है। "पटाक्ष" में एक देश-द्रोही भ्रष्टाचारी पुलिस कर्मचारी का वर्णन है। वह एक ओर देश-भक्ति का ढोंग रचनेवाले और दूसरी ओर अंग्रेज़ों के साथ मिल कर देश-भक्त क्रान्तिकारियों की योजना का पर्दाफाश करनेवाले पुरुष की चारित्रिक विश्लेषण को अभिव्यक्त करनेवाली इस कहानी का पटाक्षेप तब होता है जब उसका अपना पुत्र ही सच्ची क्रान्ति के पथ पर आगे बढ़ता है और दमनकारियों के आघात से मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। "पराजय" कहानी का अनाम पुजारी उन देश-प्रेमी, स्वतंत्र विचारवाले व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करता है जो अपनी जन्म-भूमि के सच्चे पूजारी हैं, जिस केलिए उन्हें कठिन से कठिन कारागार दंड भी भोगना पड़ा है। उनका चरम उद्देश्य है -

अधीन होकर बुरा है जीना, है मरना अच्छा स्वतंत्र हो कर।"[2]

---

1. उषादेवी मित्रा, मेघमल्लार, पृ-47
2. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-87

कमला त्रिवेणी शंकर की "ज्योत्सना" में शशिकान्त द्वारा सन् 1942 के राष्ट्रव्यापी आन्दोलन में भाग लेने और फलत: कारावास प्राप्त करने की घटना का उल्लेख है। "लाकेट" में श्रीधर कांग्रेस आन्दोलन में भाग लेकर अनेक बार कारागार जाता है। देश-भक्त" का नायक विनयकृष्ण भी देश सेवा के समक्ष कारावास को तुच्छ समझता है। इसी प्रसंग में एक उक्ति "मूक-सेवा" कहानी से उद्धरणीय है -"सन् 30 में जब गाँधीजी की आँधी चली तभी अजय ने विदेशी वस्त्रों केलिए कसम खायी, चर्खा चलाया, सूत काते, नमक बनाया, खद्दर बेचा और इन सब के बीच किस तरह बि॰ए॰ का पहाड़ लाँघ कर जब अवकाश पाया तो मैं ने मीना को गले ले बाँधा।"[1]

तारा पाँडे की राष्ट्रीय कहानी है "दारोगा की बेटी" नायिका कला पहले विलास प्रिय थी किन्तु गाँधीजी के राष्ट्रव्यापी प्रभाव तथा अपने दारोगा पिता के देश-भक्तों पर लाठी चार्ज करते देखकर उसका हृदय परिवर्तित हो गया। अपनी देश सेविका सखी लीला को देश-भक्ति के अपराध में कारावद्ध होते देखकर वह भी मैदान में कूद पड़ी और एक दिन पुलिस की लाठी का शिकार बनकर मातृ-भूमि पर बलि हो गई।

तेजरानी पाठक ने "सोने का पिंजड़ा" में असहयोग आन्दोलन, नमक कानून को भंग करना, पुलिस का दमन चक्र आदि की चर्चा करके परतंत्र भारत की राजनीतिक स्थिति का दृश्य अंकित किया है। कंजु बिहारीलाल ब्रिटीश सरकार के भक्त है। किन्तु पुत्र मुरारी के स्वतंत्रता युद्ध में मरने के पश्चात् उनमें महान परिवर्तन होता है और वह स्वयं भी ब्रिटीश सरकार के विरोधी हो जाते हैं। इनकी सभी कहानियों में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की प्रधानता है।

"भाई-बहन" कहानी में बंग महिला ने देशभक्ति के भाव व्यक्त किये हैं। साहब और उनकी बहन गंगादेई पिता के साथ मेला देखने जाते हैं। मेले से बेनीमाधव विदेशी रेलगाड़ी और भंगिया एक छोटा सा मिट्टी का देशी खिलौना लाती है।

---

1. कमला त्रिवेणी शंकर, जयमाल, पृ-27

बड़े भाई श्रीराम बच्चों को देशीवस्तु खरीदने का ही उपदेश देते हैं । इस कहानी व लक्ष्य विदेशी वस्तुओं का तिरस्कार और देशी वस्तुंओं की महत्ता को प्रदर्शित करना है । राम कहते हैं - "तुम को चाहिए कि अपने देश की भलाई केलिए उपाय विचारो और उन्हीं को सीखो । ------ तुम अभी से देशी चीजें काम में लाओगे तो मैं स्वदेश की बनी हुई कोई उत्तम चीज़ तुम्हें इनाम दूँगा ।"[1] लेखिका की अनूदित कहानी "अपूर्व प्रतिज्ञापालन" स्वदेशी आन्दोलन में भाग-लेनेवाले देश-भक्त देश-प्रेमी बालक की कहानी है ।

रामेश्वरी देवी "चकोरी"जी ने "दीदी का मंदिर" में उस समय का वर्णन किया है जब विदेशी शासन का अन्त करने तथा स्वतंत्रता प्राप्त करने केलिए प्रत्येक जनमानस व्यग्र हो उठा था । बीर बालिकाओं ने भी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष उसमें भाग लिया । कमला कहती है - "देखो - तुम उसी सत्ता के गुलाम हो, जिसे हम लोग मिटाना चाहते हैं ।"[2] कमल के जीवन का लक्ष्य है निस्वार्थ निष्काम देश-सेवा तथा देश के निर्धन पीडितों की सहायता करना । कमल का स्मारक बनाकर लेखिका ने देश केलिए बलिदान होनेवाले युवकों-युवतियों के प्रति अपनी श्रद्धांजली अर्पित की है ।

राजनीतिक चेतना से अनुप्राणित शिवरानी देवी की कहानियों में पुरूषों की अपेक्षा नारियाँ कई पग आगे हैं । "माता" कहानी के दारोगा पुलिस कर्मचारी है, आन्दोलन का दमन ही उनका मुख्य कर्तव्य है । पिर उनकी पत्नी राधारानी और पुत्र हनुमान सच्चे देशभक्त, देश-प्रेमी हैं । स्वराज्य की समर्थका राधारानी बराबर पति को नृशंतापूर्ण आचरण केलिए भला-बुरा कहती है "तुम्हें तो मैं गुलामी और डण्डे बाज़ी के सिवा और कुछ करते नहीं देखती ।"[3] "हत्यारा" की रामेश्वरी अपने घातक पुत्र को दण्ड दिलवाकर अनेक निर्दोष व्यक्तियों की प्राण-रक्षा करती है । "कुरबानी" में शान्ति तथा"हार का मूल्य" में चन्दा ने आत्म-बली देकर हिन्दु-मुस्लिम वैमनस्य की ज्वार को सदा केलिए शान्त कर दिया । "यशोदा" की नायिका यशोदा ने देश-भक्ति के क्षेत्र में अपने कर्मठ व्यक्तित्व का परिचय देकर अपने

---

1. बंग महिला, कुसुम संग्रह, पृ-111-112
2. रामेश्वरी देवी "चकोरी", धूप-छाँह, पृ-65
3. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, नारी हृदय, पृ-47

पति का भी मुख उज्ज्वल कर दिया । "कुरबानी" कहानी में बकरीद के अवसर पर गो-हत्या के कारण हिन्दु-मुसलमानों के बीच दंगों की आशंका सब को भयभीत करती है । हिन्दु विधवा शान्तिदेवी मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करती है। इस कहानी के द्वारा लेखिका दोनों वर्गों के बीच एकता लाने का परिश्रम करती है । "राशन" में राशन-प्रणाली के कुप्रबन्ध, रिश्वत, ब्लैक, भ्रष्टाचार की वृद्धि, निर्धनों की दुरवस्था आदि का चित्रण है ।

सुभद्राकुमारी चौहान ने अपनी राजनीतिक कहानियों में देश-भक्ति, देश-द्रोह और हिन्दु-मुस्लिम समस्याओं को उठाया है । "अमराई", ताँगेवाला", "गौरी", "गुलाबसिंह" आदि गाँव-गाँव में फैलनेवाली आज़ादी की भावना और विदेशी सरकार के प्रति घृणा की भावना को लेकर लिखी गयी कहानियाँ है । "अमराई" में जागृत तरूणाई के बलिदान के कारण ठाकुर साहब जैसे वृद्धों में भी एक नवीन चेतना एवं उत्साह की लहर आ गयी है । ठाकुर साहब के ही शब्दों में - "मेरा तो यह विश्वास है कि इस शासन विधान में जो प्रजा को हितकर नहीं है, अवश्य परिवर्तन होना चाहिए । हर एक हिन्दुस्तानी का धर्म है कि वह शासन सुधार के काम में पूरा पूरा सहयोग दे । मैं भी अपना धर्म-पालन करने केलिए विवश हुँ और यह मेरी राय साहबी और ओनरेरी मजिस्ट्रेटी का त्याग पत्र है ।"[1] ताँगेवाला उन राष्ट्रप्रेमी अनपढ़ व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करता है जो विदेशियों की चाकरी से परिश्रम की संकल्प कमाई को अधिक श्रेयस्कर समझते हैं । "गुलाबसिंह" में सार्वभौमिक सार्वकालिक युवकों की अमर प्रतिज्ञा चरितार्थ हुई है जो अपने राष्ट्र केलिए दमन, अत्याचार, शोषण के विरूद्ध विद्रोह का झंडा खड़ा करते हैं । लेखिका के शब्दों में, "यह कहानी कहाँ की है ? किसकी है ? हम हत्या बतावें । यह फ्रान्स की राज-क्रान्ति की हो सकती है । यह रूस की राज-क्रान्ति की हो सकती है । यह हिन्दु हिन्दुस्तान की सन् 1942 की क्रान्ति की भी हो सकती है, क्योंकि यह घटना चिरंतन है, अनन्त है । यह जैसे पेरिस में, मास्को में, वैसे जबलपुर में हो सकती है।"[2]

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, बिखरे मोती, पृ-79
2. सीधे सादे चित्र, पृ-65-66.

राजहित केलिए हिन्दु जाति में संगठन और हिन्दु मुसलमानों में एकता की भावना आवश्यक थी । हिन्दु जाति के संगठन का समर्थन "एकादशी" में किया गया है । हिन्दु-मुस्लिम प्रश्न पर "हींगवाला" कहानी महत्वपूर्ण बन पड़ी है । हींगवाला" के पठान में दंगे के समय भी मानवता का मंगलमय रूप प्रदर्शित किया गया है । देश-भक्ति का ढोंग रचनेवाले सत्ता भक्त का चित्रण "राही" से मिलता है । "कल तक जो खद्दर भी नहीं पहनते थे, बात-बात पर काँग्रेस के हाथों में थोडी शक्ति आते ही वे काँग्रेस-भक्त बन गये । खद्दर पहनने लगे । यहाँ तक कि जेल में भी दिखाई पडने लगे । वास्तव में यह देश-भक्ति है या सत्ता-भक्ति ।"[1] सुभद्राजी की राजनीतिक कहानियाँ संख्या में अधिक न होने पर भी अनुभूति और भावना की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है ।

होमवती देवी ने स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व की कहानियों में हिन्दु मुस्लिम ऐक्य-भावना, देश-भक्ति, राष्ट्रीय संगठन का समर्थन आदि विषयों को लिया है । "अब्बा"," जनसेवक", "स्वप्न भंग", "स्पेशल ट्रेन", आदि कहानियाँ इसी कोटी की है । "स्वाभिमानी" का वेदव्रत कहता है - "जेल जाने की क्या बताऊँ ? हम लोगों का जीवन तो हर समय हथेली पर रहता है, न जाने कब असहयोग की आग में कूद जाना पड़े ।"[2] "निसर्ग" तथा "धरोहर" में सत्याग्रह,अहिंसा, असहयोग आदि की चर्चा की गयी है । उस युग में राजनीतिक आन्दोलनोंका प्राबल्य था, देश का नवयुवक पूर्ण रूप से महात्मा गाँधी द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चल रहे थे । "खतरे की घंटी" में राशन प्रणाली, साम्प्रदायिक उपद्रवों, जनता में काँग्रेस के प्रति असन्तोष आदि सामयिक वातावरण की चर्चा की गयी है । "चने" कहानी में शरणार्थियों की समस्या उठायी गयी है । "त्याग" कहानी में विभा एक देश भक्त नारी है जो स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय भाग लेती है ।

महिला कहानीकारों की ऐतिहासिक तथा पौराणिक कहानियाँ :-

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, सीधे सादे चित्र, पृ-59
2. होमवती देवी, निःसर्ग, पृ-108

ऐतिहासिक तथा पौराणिक कहानियों में वर्णित कथाओं या पात्रों का संबंध ऐतिहासिक घटनाओं या पौराणिक कथाओं से होता है। इनमें वातावरण का अधिक महत्व होता है क्योंकि वही कहानी में जीवन संचार करता है।

श्रीमती उषादेवी मित्रा की ऐतिहासिक कहानी कला राष्ट्रप्रेम, आदर्श स्थापन तथा वीर पूजा की भावना से प्रेरित है। "महान की पूजा" में मुगलकालीन एक मेवाडी वीर माधोराव की वीरता का वर्णन किया गया है। भारत के इतिहास में प्रताप के बाद यदि कोई व्यक्ति अपनी वीरता केलिए हो सकता है तो वह माधोराव है। "चम्मच भर आँसु" में मध्यकालीन राजपूती वीरता का नग्न चित्रण किया गया है। मेवाड की कृष्णकुमारी, कुमार अजितसिंह को प्यार करती है। अजित कुमारी को लेकर भागना चाहता है, परन्तु यह कृष्णकुमारी को अच्छी नहीं लगती। अजित मारवाड़ की सेना के साथ मेवाड़ पर आक्रमण करता है। युद्ध में चन्दराव अपने पुत्र अजित का सिर काटता है। कृष्ण कुमारी अपने गौरव की रक्षा केलिए विषपान करके जीवन समाप्त कर लेती है। नारी के बलिदान के उच्चतम आदर्श, जातीय भावना का उत्कर्ष, व्यक्ति के चरित्र के उच्चतर मान इस कथा में प्रकट है। "मन का यौवन" में युवराज चन्द्रपीड और जुलेखा की कहानी है जिसका आधार कादम्बरी में प्राप्त होता है। "नैपेथ्य उर्वशी" में दुष्यन्त और शकुन्तला की प्रेम कहानी में एक अलौकिक उद्भावना यह की गयी है कि शकुन्तला की सखी अनसूया जब दुष्यन्त के पास शकुन्तला का प्रेम पत्र लेकर जाती है तो दुष्यन्त उसका हाथ चूम लेता है। इसी प्रकार प्रियंवदा ने हाथ बढाकर महाराज से अंगूठी लेकर शकुन्तला को दी। ये दोनों तपस्विनियाँ महाराज के अंग स्पर्श की अनुभूति की स्मृति में स्वयं को खोती रहीं।

कमला चौधरी की "बलिदान" कहानी में राणाप्रताप और शक्तिसिंह को गृह कलह से बचाने केलिए राजपुरोहित के प्राणोत्सर्ग की कहानी है। राजपुरोहित के बलिदान के पश्चात पहली बार हल्दी घाटी के युद्ध में ब्राह्मणों ने भी क्षत्रियों की भाँति युद्ध में भाग लेना प्रारंभ कर दिया। "अधूरा चित्र" और "टेक की रक्षा" शीर्षक कहानियाँ वाल्मीकि रामायण से संबद्ध है। "अधूरा चित्र" में सीता की

मानसिक पीड़ा को लक्ष्य करके वाल्मीकि द्वारा रामायण के कुछ अंशों को परिचित कराने का विचार, फिर सीता की दृढ पति-भक्ति के आग्रह से उस विचार का त्याग अन्न-जल त्याग कर एक ही दिन में शेष रामायण की पूर्ति तथा गंगाजल लेकर सीता की सतीत्व-पुष्टि केलिए शपथ-ग्रहण आदि मौलिक प्रसंगों की अवतरणा की गयी है। गुरू की आज्ञा शिरोधार्य करके सतीत्व प्रमाण हेतु यज्ञ-मण्डप में उपस्थित सीता ने पृथ्वी को संबोधित करते हुए कहा - "माता ! पतिव्रत में यदि मैं तेरे ही समान अचल रही हुँ तो मेरी लज्जा और मर्यादा को अचल रखने केलिए मुझे अपने भीतर स्थान दे।"[1]

"कल्याणी" सोनरेक्साजी की ऐतिहासिक कहानी है। कल्याणी के माध्यम से राजपूत नारियों की आदर्श प्रेम-भावना को अंकित किया गया है।

"बदला" तेजरानी पाठक की एकमात्र ऐतिहासिक कहानी है। इसमें माँ के अपमान के बदले के सम्मुख प्रेम को त्याग कर कर्तव्य को चुननेवाले महाराणा प्रताप के वंशज वीर प्रताप की कथा प्रस्तुत है। वीर प्रताप का कथन देखिए - "माँ क्या कहती हो ? यदि मेरे रहते हुए तुम्हें अपने अपमान का बदला अपने आप लेना पड़े तो मेरे जीवन को धिक्कार है। मेरे होते हुए तुम्हें अपने अपमान का बदला लेने केलिए किसी और को ढूँढना नहीं पड़ेगा। तुम्हारे अपमान के आगे प्रेम क्या, मेरे प्राण भी कुछ नहीं।"[2]

<u>महिला कहानीकारों की उपदेशात्मक कहानियाँ</u> :-

इस प्रकार की कहानियों में मनोरंजन के साथ कोई उपदेश या शिक्षा अवश्य मिलती है। बीसवीं शताब्दी के आरंभिक वर्षों में कुछ ऐसी कहानियाँ भी लिखी गयी थीं जिन का उद्देश्य कोई उपदेश या शिक्षा देना रहता था। "भाई-बहन", बंग महिला की उपदेशात्मक कहानी है। भंगिया और बेनी माधव शरण अपने पिता के साथ भरत-मिलाप देखने जाते हैं। मेले से बेनीमाधव विदेशी रेलगाड़ी और भंगिया एक छोटा सा मिट्टी का देशी खिलौना लाती है। बड़े भाई श्रीराम

---

1. कमला चौधरी, यात्रा, पृ-29
2. तेजरानी पाठक, अंजली, पृ-27

बच्चों को देशीवस्तु खरीदने का ही उपदेश देते हैं । राम कहते हैं - "तुम को चाहिए कि अपने देश की भलाई केलिए उपाय विचारो और उन्हें सीखो। लड़कपन में जिस बात का प्रभाव मनुष्य पर पड़ जाता है बड़े होने पर वह उसी के अनुसार व्यवहार करता है । यदि तुम अभी से देशी चीजें काम में लाओ तो मैं स्वदेश की बनी कोई उत्तम चीज़ इनाम दूँगा ।"[1]

महिला कहानीकारों की मनोवैज्ञानिक कहानियाँ :-

इस श्रेणी की कहानियों में मनोविज्ञान कहानी का उद्देश्य बनकर आता है । लेखक पात्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण उसके कार्य-व्यापारों और कर्म प्रेरणाओं के अनुकूल मनोवैज्ञानिक शर्तों पर करता है । "इस कोटी की कहानियों में साधारण चरित्र के स्थान पर विशिष्ट चरित्र, अन्तर्मुखी चरित्र और संश्लिष्ट चरित्रों को प्रधानता मिली है ।"[2]

"समझौता" कहानी में पाश्चात्य शिक्षा और सभ्यता में पली भारतीय नारी के मनोविज्ञान-चित्रण में उषादेवी मित्रा को पूर्ण सफलता मिली है । "समझौता" की नायिका पूर्णत: पाश्चात्य आचार, विचार, तथा संस्कृति में रंगी हुई है । भारतीय वातावरण के परिवार में विवाहित हो जाने पर उसे ऐसा लगता है जैसे उसका स्वप्न बिखर गया है । उसके मन पर इसी की तीव्र प्रतिक्रिया होती है । वह अपनी नारी-सुलभ स्नेह, सहानुभूति के गुणों को दबाकर उद्धत और अविनीत हो उठती है । विडंबना तो तब आती है जब वर्षों से पल रहे गरीब माली को निकाल कर कुसुम नयी नियुक्ति करना चाहती है । किन्तु निर्धनता की पराकाष्ठा पर पहुँचे माली की दयनीय दशा देखकर उसे अपने जीवन में समझौता करने की ज़रूरत महसूस होने लगती है । "मोती की फसल" कहानी की नायिका मन की दुर्बल कामनाओं को दबाकर सन्यासिनी बनने का दृढ प्रण करती है किन्तु एक दिन सन्यासी पीतांबर की बात उसके सामने सत्य होकर उभरती है - "शरीर का भी एक धर्म हुआ करता है । पूजा-पाठ में ऐसी शक्ति कहाँ जो यौवन के उन्माद को

1. बंग महिला, कुसुम संग्रह पृ-111-112
2. डॉ. धीरेन्द्रवर्मा तथा अन्य लेखक, साहित्य कोष भाग-1, पृ-241.

तृप्त कर सके ।"[1] एक कलाकार के अत्यधिक भावुक एवं तीव्र अनुभूतिप्रवण मानसिकता की कथा "अनुभूति की छाया" में व्यंजित है । कलाकार अपनी काल्पनिक कथा-नायिका के चिन्तन में ही विभोर रहता है और उसकी यह मानसिक विस्मृति उसकी सन्तानहीना पत्नी केलिए असह्य है । वह विश्वास ही नहीं कर पाती कि लीना उसके पति की सूक्ष्म कल्पना मात्र है, उसमें सत्य का आभास तक नहीं । कहानी नारी सुलभ ईर्ष्या एवं मनोविज्ञान की सार्थक प्रस्तुती देती है । "रूप का मोह", "स्नेहमयी", "प्रतीक्षा", सान्ध्य तारा", "सुहाग की बिन्दी", "पहचान" आदि कहानियों में नारी हृदय की मनोवैज्ञानिक व्याख्या के साथ उषाजी ने पुरुष की भावनाओं का भी अंकन किया है । इस प्रकार मनोवैज्ञानिक कहानियों के माध्यम से उषादेवी ने दिखाया है कि जीवन में मानसिक अन्तर्द्वन्द्व बाह्य-जीवन-प्रवाह में बाधक सिद्ध होता है ।

कमला-चौधरी ने व्यक्ति, परिवार तथा समाज के अन्तर्सबन्धों का चित्रण करते हुए मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनाया है । पिता और विधवा कन्या की मानसिक प्रवृत्तियों का विश्लेषण "स्वप्न" शीर्षक कहानी में किया गया है । "प्रवृत्तियों के दमन करने से नहीं बल्कि उन्हें अध्यात्मिक रूप में परिवर्तित करने से ही वास्तविक शान्ति की प्राप्ति होगी ।"[2] कहानी का यह अन्तिम वाक्य ही कहानी का उद्देश्य है । दुराचारी पिता विधवा कन्या को आश्रम में विधुर दीक्षित के पास छोड़ आते हैं । दीक्षित महात्मा है, लेकिन नवयौवना सुरीला को सामने पाकर उसकी कामवासना जागृत हो उठती है । स्वाभाविक प्रवृत्तियों को जो शैतान समझ कर मारने की चेष्टा करता है, वह उन्हें मार नहीं पाता, केवल मन के आभ्यन्तरिक कोष में ढकेल देता है । वे प्रवृत्तियाँ समाज और संकल्प के अवरोध से बाहर तो नहीं निकल पाती, पर भीतर-भीतर छिपकर अपना काम करती रहती है । उनकी गुप्त क्रियाओं का फल होता है आत्मप्रतारणा । "स्वप्न" कहानी

---

1. डॉ.उषादेवी मित्रा, मोती की फसल, भाग, 1952
2. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-17.

में कृत्रिम एवं बलात् साधना की निर्मम आलोचना है, स्वस्थ एवं उन्मुक्त मानव प्रेम का साहसिक समर्थन है एवं है सन्यास एवं लोक-संग्रह के बीच से कल्याण पथ के आविष्कार की उत्कट अभिलाषा ।"[1] "वीणा" कहानी मनोवैज्ञानिक धरातल पर गायिका वीणा के नारीत्व भाव को उभारने में सफल सिद्ध हुई है । नारी स्वयं पति के प्रति उपेक्षा दिखा सकती है, किन्तु वह उसे असह्य है कि उसके रहते उसके पति पर किसी अन्य का अधिकार हो । अमर गायिका वीणा के हृदय का सोया नारीत्व उस समय जागता है जब रहस्यमयी भाभी आकर शकुन का चार्ज ले लेती है इस घटना ने एकबारगी वीणा के हृदय में संपूर्ण स्त्रीत्व जागृत कर दिया । "सुधिया में एक वृद्धा की मनोदिशा का मार्मिक चित्रण है । "मातृहीना" कहानी एक मातृहीन बालिका के भरे-पूरे घर में भी एकाकी जीवन की करूण कथा है । बुआ के तीर्थ पर जाने के बाद बालिका की मानसिक स्थिति का करूण-मनोवैज्ञानिक चित्र लेखिका ने दिया है । "कैलाश दीदी" में नारी के ममत्व और ईर्ष्या का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है । कैलाश दीदी सन्तानहीनता के कारण अत्यन्त दुखी है और उसकी यह भावना ही सहोदरा के बच्चों के प्रति ईर्ष्या का कारण बनती है ।

कमला त्रिवेणी शंकर की "माँ" तथा "ममता" शीर्षक कहानियों में नारी में मातृत्व भाव की प्रबलता का चित्रांकन है । "माँ" की गिरिबाला में इसी प्रवृत्ति को लक्ष्य करके उसके पति आनन्द सोचते हैं - "पत्नी बनकर ही नारी ने मातृत्व का पद पाया है, लेकिन पहले वह माता, है तब पत्नी ।"[2]

"अफसर का बेटा" में सुरजीत के माध्यम से चन्द्रकिरण सौनरेक्सा उच्च परिवार के बच्चों कीसमस्याओं एवं मानसिक उलझनों के विविध रूप अंकित किये हैं । "परंपरा" कहानी में पिता अपने पुत्र को शिक्षित तथा सभ्य नागरिक बनाना चाहता है । पिता अपने पुत्र रग्घू को बार बार इसलिए मारता है कि संभवत: वह उसे अपने समान बुरी आदतों की ओर जाने से बचा सके । मारते वक्त उसका कथन है - "साले । हरामी के पिल्ले । फिर पियेगा बीडी ? आज तेरी जान लेकर छोडूँगा । ---------- बापु ने पढ़ाने केलिए मुझे कितना मारा । पर मैं तो नालायक निकल गया । उसी का फल भोग रहा हूँ । तु तो मिडिल कर लो । कहीं चपरासी हो

---

1. ब्रह्मदत्त शर्मा, हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन, पृ-34।
2. कमला त्रिवेणी शंकर, जयमाल, पृ-26

जाएगा । पर नहीं -------- तु तो बीड़ी ।"[1] मनोवृत्तियों का चित्रांकन करने में लेखिका सफल हुई है ।

श्रीमती चन्द्रवती ऋषभ सेन जैन की मनोवैज्ञानिक चरित्रप्रधान कहानी है "पारो" ।[2] इसमें चेचक के प्रकोप से नष्ट हो गये नेत्रोंवाली बालिका पारो का सहज चरित्र दिया गया है । अन्धी होने पर भी उसकी चेतना-शक्ति बड़ी तीव्र है।

तारा पांडे की कहानी "प्यासी" में विनीता की अतृप्त मातृत्व-पिपासा तथा उसके प्रेयसी रूप के लोप से क्षुब्ध उसके पति गोपाल की अतृप्ति का चित्रण है । गोपाल के मित्र के मातृहीन शिशु रंजन के घर में आ जाने से विनीता की अभिलाषा तुष्ट हो जाती है, किन्तु रंजन की मृत्यु से वातावरण और भी क्षुब्ध हो उठता है । इस कथा में पात्रों के आन्तरिक और बाह्य संघर्ष का मनोवैज्ञानिक अंकन हुआ है । माँ की मृत्यु पर एक नन्हीं बालिका के वेदना प्रेरित विलाप तथा क्रियाकलाप का वर्णन है "माँ" कहानी । "पिता और पुत्री" एक मातृहीना बालिका की कहानी है । वह पितृस्नेह की छाया में रहकर माता के अभाव से व्याकुल थी, किन्तु जब एक दिन पिता भी कालकवलित हुए तो उसका हृदय दुखावेग से मानों चीत्कार कर उठा । उक्त दोनों कहानियों में बाल-मनोविज्ञान का आधार ग्रहण किया गया है ।

सत्यवती मल्लिक ने अपने पात्रों के अन्तर्बाह्य व्यक्तित्व का सूक्ष्म विश्लेषण किया है । "भाई-बहन" कहानी अत्यन्त रोचक एवं मनोवैज्ञानिक बन पड़ी है । इसका कथानक इस प्रकार है - निर्मला और कमल बहिन-भाई थे । निर्मला बड़ी थी, वह सदैव कमल को चिढ़ाती-रुलाती थी । माता की डाँट-फटकार का उसपर कोई प्रभाव न पड़ता था । एक दिन जुलूस में कमल खो गया समझकर निर्मला व्याकुल हो उठी, बहुत रोई और उसके लौटने पर प्रेमाश्रु बरसने लगी । सावित्री अपनी पुत्री के मन में छिपी इस स्नेहमयी बहिन का परिचय पाकर मुग्ध हो उठी । "कमल को दृढ पाश में बाँधे निर्मला दुगुने वेग से रो रही है । उसके कोमल गुलाबी गाल मोटे-मोटे आँसुओं से भीगे जा रहे हैं और वह बार-बार कमल का मुख चूम -

---

1. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, आदमखोर, पृ-284
2. श्रीमती चन्द्रवती ऋषभ सेन जैन, पारो, विशाल भारत, जून 1946, पृ-9

घूम कर कह रही है, "पगले । तु कहाँ चला गया था ? गधे । तू क्यों चला गया था ?"[1] बाल-मनोविज्ञान की सहायता से लेखिका ने सामाजिक भेद-भाव का मार्मिक चित्रांकन भी किया है । "माली की लड़की" शीर्षक कहानी का कथानक द्रष्टव्य है - देवकुमार का परिवार गर्मियों में पहाड़ पर गया तो वहाँ उनके नन्हे पुत्र विजय का परिचय माली की नन्ही लडकी मुक्ता से हुआ । विजय ने उसे लूडो, कैरम, ताश आदि सिखाकर उसके नन्हे हृदय को जीत लिया । जब देवकुमार पहाड से लौट आये तो मुग्धा के हृदय को गहरी ठेस पहुँची । विजय जैसे साथी को पाकर उसने अपने चरवाहे साथियों को दुत्कार दिया था, किन्तु अब वह निराश्रिता रह गयी । उधर घर लौटने पर जब विजय को बुआ उसे चिढ़ाने केलिए उसके सामने "माली की लड़की" की चर्चा करती तो वह मुँह फुला लेता, क्योंकि उसकेलिए तो यह अपमान था । बाल-मनोविज्ञान के चित्रण में लेखिका विशेष सफल रही हैं । "दो फूल" में कमला, काशी, भाषी आदि बालकों की बालोचित जिज्ञासा एवं चंचल मनोवृत्तियों में तथा "भाई-बहन" एवं "माली की लड़की" में बालोचित स्नेह के विविध प्रसंगों में बाल-मनोविज्ञान के विविध रूपी सहज-चित्र अंकित किये गये हैं ।

<u>महिला कहानीकारों की प्रगतिशील (समाजवादी) कहानियाँ</u> :-

प्रगतिशील विचारधारा के आधार पर सत्यवती मल्लिक ने समाज के शोषित पीडित, पद दलित वर्ग को लेकर जिन कहानियों की रचना की है उन्हें प्रगतिशील सामाजिक यथार्थ की कहानियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है । "एक सन्ध्या" कहानी ने एक मजदूर को बच्ची के ताँगे के पहिये के नीचे आ जाने से उत्पन्न करूण चीत्कार को स्पंदित किया है । हृदय की इस करूण चीत्कार में "अन्त:करण में न जाने क्यों एक प्रबल दैवी इच्छा उत्पन्न हुई । उसका क्रन्दन मुझे जाने क्यों अपने मोहिनी-कैलाश के रोने की भाँति लगा । मन में हो आया, उसे हृदय से लगा लूँ - उसकी समस्त पीड़ा अपने में कसकर समेट लूँ ।"[2] सत्यवतीजी की भावनाएँ ही उसकी

---

1. सत्यवती मल्लिक, दो फूल, पृ-38
2. " -24.

कहानियों में मुखर हो उठी हैं , "ओह । क्यों मैं आँखें मूँदकर स्वप्न देखता हुँ ? उन रिक्शा-कुलियों से, उस बेकार युवक से, उन गुणहीन भूखे कंकालों से मुझे सहानुभूति क्यों ? "[1] "उलझन" में धनी एवं निम्न वर्ग की अवस्था का तुलनात्मक सजीव चित्रण आर्थिक विषमताओं से पीडित निम्न वर्ग के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के विचार से किया गया है। समाज के पीड़ित एवं उपेक्षित पात्रों केलिए लेखिका ने अपने हृदय की समस्त करूण एवं संवेदना उँडेल दी है । "प्रेमा" में हरिजन बालिका प्रेमा, "इनकी जाति" में बिहारी तथा गोपाल नामक दो पहाडी सेवक, "पर जो चला जाता" में हबीबा नामक पहाडी घोडेवाला, "बेकारी में" की जल्लो मेहतरानी "कैदी" में कैदी, "सुभाना" में घरेलू सेवक सुभाना, "दिन-रात" में गोआ निवासिनी निर्धन युवती आदि पात्र इसी प्रकार के हैं । अभिजात वर्गीय पात्र अपने स्वार्थ केलिए निम्न वर्गीय पात्रों से संपर्क रखते हैं; किन्तु उन्हें अपनाकर अपना गौरव क्षीण करना उन्हें सह्य नहीं । सत्यवतीजी ने उक्त दोनों वर्गों का तुलनात्मक मूल्यांकन करते हुए पीडित वर्ग के प्रति सहानुभूतिपूर्ण एवं अभिजात वर्ग के प्रति व्यंग्यपूर्ण दृष्टिकोण का परिचय दिया है ।

श्रीमती चन्द्रकिरण सोनरेक्सा यथार्थवादी प्रगतिशील कहानी लेखिका है । उन्होंने अपनी प्रगतिशील कहानियों में पूँजीपतियों के विरुद्ध सामाजिक चेतना को जागृत करने का तथा शोषितों के प्रति करूणा भावना को जागृत करने का सफल प्रयास किया है । "आदमखोर", "कमीनों की जिन्दगी" आदि कहानियों में दरिद्रता से अभिशप्त जनता के जीवन का हाहाकार वर्णन है । "आदमखोर" में जीवन नामक एक परिस्थिति-प्रताडित पात्र का जीवन चित्रण है, जिसे अभावों की मार और परिस्थितियों की विवशता ने मानव से पिशाच बनाकर रख दिया । जीवन के माध्यम से समाज के उस वर्ग का चित्रांकन प्रस्तुत किया गया है जो रात-दिन जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति केलिए संघर्ष करता है । उसकी विवशता का चित्रण देखिए - " थकावट, निराशा, और दर्द से देह चूर हो रही थी । वह लेटा - उस कोठरी की कच्ची धरती पर जहाँ अनगिनती चींटें - चींटियाँ उसके स्वागत को

---

1. सत्यवती मल्लिक, दो फूल, पृ-55.

आँखें बिछाये थे। भूखे पेट के अधूरे सपनों में वह डूब गया।"[1] एक ओर समाज का अभावग्रस्त वर्ग है तो दूसरी ओर समाज का पूँजीपति वर्ग है जो मज़दूरों का शोषण कर ऊँची अट्टालिकाओं का निर्माण कर वैभवपूर्ण जीवन व्यतीत करता है। इधर सेठानी की "सुरमई रंग की क्रेप की साडी पर चमकता, रूपहला चौडा बार्डर और सलमें जडा ब्लाउज़ जीवन की पटेहाली पर विद्रुप हँसी दिये। जीवन बेडरूम में घुसा। फ्रेमदार शीशे-जडे दो पलँग, जिन पर राजहँस-सी श्वेत रेशम की चादरें। सिरहाने की ड्रेसिंग टेबिल पर खुली पडी इत्र की शीशे ने कमरा तर कर रखा था।"[2] "बेज़ुबाँ" में शोषित सर्वहारा वर्ग के आर्थिक अभावों, विवशताओं एवं कष्टों से अभिज्ञात वर्ग के सुख-सामर्थ्य एवं संपन्नता का तुलनात्मक चित्र अंकित किया गया है। "दो रोटियाँ" में गृहकार्यों की चक्की से पिसती एक मध्यवर्गीय परिवार की वधु उमा का करूण जीवन चित्रित है जो "दो रोटियों" के नाम पर घर का सारा काम करती, सब की फटकार सहती और इसी तरह घुलते घुलते एक दिन मृत्यु की गोद में समा जाती है।

"कमीनों की ज़िन्दगी में" शीर्षक कहानी में मध्यवर्ग की सपेद्पोशी के ढोंग में छिपी उन नक्ली स्थितियों की यंत्रणा है जिनके सामने गाली-गलौज करनेवाले छोटे वर्ग के लोग ज़्यादा साफ-सुथरे दिखाई पडते हैं। "रूपया" कहानी में रूपये को एक प्रबल शक्ति के रूप में दिखाया गया है। रूपयों के बल पर क्षण भर में ही सारी सामाजिक मान्यताएँ बनाई-बदली जा सकती हैं। अपनी प्रसिद्ध कहानी "इज्ज़त हतक" में ज़मीन्दारों की रईसी और शान-बान के लटकों का बडा ही व्यंजनापूर्ण चित्र इस कहानी में है। प्रतिष्ठा केलिए ज़मीन्दार का बेटा किसानों के रूपयों से मुकदमा लडता है। शोषण गरीबों का और शोक अमीरों का - यही इस कहानी का कथ्य है। "गृहस्थी का सुख" के शिवसहाय चालीस रूपये का नौकर है। इसी थोडी सी आय में लंबी चौडी गृहस्थी चलानी पडती है। सन्तान के अधिक होने तथा पुष्ट भोजन के अभाव में उनकी पत्नी लक्ष्मी का शरीर रूग्ण और जर्जर हो जाता है और अन्त में प्रसव पीडा में ही वह काल-कवलित हो जाती है। इसी प्रकार

---

1. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, आदमखोर, पृ-172
2. " -173

लेखिका ने निम्न वर्ग की आर्थिक यातनाओं से भरी स्थिति का चित्रण कर उनकी दयनीय दशा तथा कष्टों का विवरण देकर अपनी प्रगतिशील चेतना को प्रकाशित किया है ।

"इक्लाई" कहानी में लेखिका ने शोषित निम्न वर्ग के अभावों और हीनता को दिखाते हुए उनके मन में भी पूँजीपतियों के विरुद्ध सामाजिक चेतना को प्रबुद्ध करने का प्रयास किया है । 16 रुपये में दिन भर दौड-धूप करने पर "इक्लाई" न मिलने पर बिसेसर के हृदयोद्गार फूट पड़ते हैं, "जब तक इन चोर बाजारी करने और काला मुनाफा करनेवालों का सत्यनाश न होगा, कोई चीज़ मिलना कठिन है । जानती है बाज़ार में किसी ने भी सूती बोढ़िया इक्लाई होने की हामी ही नहीं भरी ----- भला मंजूर के मैले-फटे कपडे क्या इक्लाई खरीद सक्ते हैं ?"[1] ऐसी कहानियों द्वारा लेखिका ने मार्क्सवादी दृष्टिकोण से समाज और व्यक्ति के जीवन की समस्याओं का मूल कारण वर्ग वैषम्य मानकर इसे दूर करने की चेतना का स्वर देनेवाली कहानियों की परंपरा को अपनाकर, हिन्दी कहानियों को नया मोड़ देने का प्रयास किया है ।

होमवती देवी ने "दो आँखें", "वे तीनों", "जीवन क्रम", "गुब्बारा", "नया पेशा", "वारण्ट" आदि कहानियों में शोषितों, पीड़ितों एवं अभावग्रस्त निर्धनों का संवेदनापूर्ण चित्रण किया है ।

महिला कहानीकारों की प्रतीकात्मक कहानियाँ :-

प्रतीकात्मक कहानी में मनोरंजन के साथ कोई उपदेश रहता था तथा रूपक का सहारा लेकर किसी गंभीर समस्या का प्रतिपादन होता था ।

उषादेवी मित्रा की प्रतीकात्मक कहानियाँ हैं "प्रथम छाया", "कलाकार", "बुलबुल", "नीम चमेली" आदि । नीम चमेली के माध्यम से मित्राजी ने यह स्पष्ट किया है कि इस क्षणभंगुर संसार में कुछ भी चिरस्थायी नहीं है । इसलिए मनुष्य को गर्व नहीं करना चाहिए । चमेली के वृद्ध पौधे का मनोभाव देखिए - " यदि सच पूछो तो पृथ्वी पर चिरस्थायी कुछ भी नहीं है । फिर गर्व किस बात का ?

---

1. भगवती प्रसाद वाजपेयी, हिन्दी कहानी संग्रह, पृ-133

मेरे हो चार हाथ आगे जो कामिनी हरे-भरे पत्ते और सफेद फूलों से लदी, यौवन के मद से तनी खड़ी है, मुझे बूढ़ी नीम चमेली की ओर देखकर भी नहीं दिखती, क्या उसकी नसों में कभी सिकुड़न आवेगी ही नहीं ? क्या उसकी डालें कभी स्थूल होकर झुलेंगी ही नहीं ? अभी कल को छोकरियाँ मुझ से घृणा करें । आश्चर्य । कल नहीं तो क्या ?"[1] प्रतीकात्मक श्रेष्ठ कहानियों के उदाहरणस्वरूप उषाजी की "सभ्यता की देन" और "जानवरों का देश" कहानियाँ देखी जा सकती हैं । "जानवरों का देश" कहानी में पुरा सत्य की व्यंजना केलिए देवी-देवताओं का सहारा लिया है । स्वर्ग लोक में एक कान्फरेन्स होता है जिसमें सभी देवता उपस्थित होते हैं तथा दूत सूर्यकान्ति विश्व भ्रमण कर आता है और ब्रह्मा को बताता है कि हिन्दुस्तान तो दुर्भिक्ष से पूर्ण है । विभिन्न देवता इसका कारण बताते हैं । वे कारण इस प्रकार है - 1· शिक्षा का अभाव 2· जागृति एवं राष्ट्रीय एकता का अभाव, 3·अधिकार लिप्सा 4·नारी का वास्तविक सम्मान न होना 5· स्वार्थ, बेईमानी और पार्टी पालिटिक्स के कारण मनुष्य का पशु बन जाना 6· इस देश में चार तरह के जानवरों का पाया जाना - श्रृंगाल, गुलबाघ, काली नागिन और गधा । कहानी में चारों जानवर प्रतीक रूप में आये हैं ।

श्रृगाल :- ऐसे लोगों केलिए यह शब्द प्रयुक्त है जो किसी एक व्यक्ति के कुछ बोलने पर उसी की हाँ में हाँ मिलाते जाते हैं । उसी की भाषा में बोलने लगते हैं ।

गुलबाघ :- षड्यंत्रकारियों केलिए है ।

काली नागिन :- ऐसे स्वभाव के व्यक्तियों केलिए है जिनका अपना कोई व्यक्तित्व नहीं होता । जिसका पलडा भारी होता है उसी ओर झुक जाते हैं । जो उन्हें दूध पिलाता है, आराम देता है उसी के रहते हैं लेकिन अवसर पर उन्हें भी डसने से नहीं चूकते ।

गधे :- बेवकूफ तथा मूर्ख लोगों केलिए है।उपर्युक्त चार श्रेणी के पात्रों के कारण भारत का पतन हुआ है और होता जा रहा है - इसी सत्य की व्यंजना "जानवरों का देश" में की गयी है ।

समसामयिक सत्य की व्यंजना का एक अन्य रूप "सभ्यता की देन" कहानी

1· उषादेवी मित्रा, नीम चमेली, पृ-5·

में मिलता है, जिसकी नायिका श्वेत देश की रानी जिगिषा है और जो गोरांग प्रभुओं की प्रतीक है । भारती के राजा शिवसुन्दर इससे विवाह कर नई सभ्यता सीखते हैं और यह नई रानी राजा को निर्धन बनाडालती है । इस कहानी में शिवसुन्दर और नारी जिगीषा के माध्यम से भारत में आती हुई पाश्चात्य सभ्यता, उसका प्रभाव और परिणाम दिखाया गया है । वस्तुत: इस श्रेणी की कहानियाँ अपने उद्देश्य में पूर्णत: सफल रही हैं, किन्तु इनकी संख्या बहुत कम है ।

सत्यवती मल्लिक ने अपनी प्रतीकात्मक कहानियों में पात्र एवं घटनाओं के माध्यम से प्रतीकों का चित्रण किया है । "दो फूल", "नारी हृदय की साध ", "बसन्त है या पतझड़", आदि लेखिका की प्रसिद्ध प्रतीकात्मक कहानियाँ हैं । सत्यवतीजी की कहानियों के उद्देश्य अथवा गुणों को अज्ञेयजी ने "दो फूल" शीर्षक कथा संग्रह की समीक्षा करते हुए इन शब्दों में व्यक्त किया है - "दो फूल एक ऐसे व्यक्ति के मनोभावों का प्रतिबिंब है जिसकी सौन्दर्यानुभूति औसत से काफी ज़्यादा है । मानव जीवन के खासकर नारी जीवन के दुख क्लेश का जिक्र पुस्तक में है, किन्तु उनसे लेखिका का संबंध सौन्दर्य की खोज करनेवाले का ही संबंध है; सुधारक का नहीं; दार्शनिक का नहीं; निरे रूखे यथार्थ सत्य की खोज करनेवाले का नहीं । यही सत्यवतीजी की कहानियों की विशेषता है ।"[1] "दो फूल" में फूलों के द्वारा मानव जीवन की अनिश्चयता एवं क्षणिकता की ओर संकेत किया गया है । कहानी के अन्त की ये पंक्तियाँ अवलोकनीय हैं - "ओह मैं ने तुझे अपने भाषी से बचाया था । मगर फिर भी मैं महाकाल से तेरी रक्षा नहीं कर पायी । एक क्षण तक बडे गंभीर भाव से मैं ने उस मुरझाये गुलाब के फूल की ओर देखा । उसके बाद मेरे शरीर में कंपकंपी सी दौड़ गयी मानों वह मुझसे कह रहा था - क्या तुम्हारे मानव जीवन का इतिहास भी मेरे समान नहीं है ।"[2] "नारी हृदय की साध" में नदी के प्रतीक का निर्वाह करने में लेखिका सफल रही हैं । इस कहानी में लम्बोदरा तथा शेषनाग नामक नदियों में बहिन-भाई के संबंध की कल्पना करके लेखिका ने उनके मानवीकरण द्वारा सुन्दर भावनाओं को व्यक्त किया है । जिस प्रकार नदी की

---

1. अज्ञेयजी, त्रिशंकु, पृ-107
2. सत्यवती मल्लिक, दो फूल, पृ-4

सार्थकता सागर से मिलने में ही है, उसी प्रकार नारी जीवन की सार्थकता पति से मिलने में ही है, इसी बात को प्रतीकात्मक ढंग से इस कहानी में लेखिका ने कहा है । "वसन्त है या पतझड़" में युवावस्था एवं वृद्धावस्था के प्रतीकों का निर्वाह सुन्दर शैली में हुआ है ।

महिला कहानीकारों की भावप्रधान कहानियाँ :-

श्रीमती उषादेवी मित्रा की अधिकांश कहानियों में भावों का प्राधान्य है, फिर भी जिन कहानियों में भावाभिव्यक्ति के समक्ष कथानक, चरित्र-चित्रण आदि मुख्य तत्व प्राय: नगण्य हो गये हैं, उन्हें "भावपूर्ण कहानियाँ :" शीर्षक से पृथक वर्ग में रखना अधिक उपयुक्त होगा । इनमें पात्रों के भावपूर्ण उद्गारों, बाह्य एवं आन्तरिक वातावरण के भावात्मक वर्णनों एवं तदनुरूप भावविह्वल संवाद-योजना के द्वारा कहानियों की कलेवर-वृद्धि की गयी है । ऐसी कतिपय कहानियों में प्राकृतिक पदार्थों के मानवीकरण की प्रवृत्ति भी लक्षित होती है । "वसन्त कोकिला" "दिल्लीवाला", "बीच भँवर में", "आर्त चीत्कार", "लाल लिफाफा", "मुनिया", आदि उषाजी की भावपूर्ण कहानियाँ हैं । "लाल लिफाफा" में बहिन का भाई के प्रति प्रेम और "मुनिया" में बाबु का मुनिया के प्रति अगाध प्रेम दर्शनीय है । इस स्नेह की व्यंजना केलिए ही घटना के सूक्ष्म तन्तुओं द्वारा कहानी की सृष्टि की गयी है । "लाल लिफाफा" में तारा नाम की छोटी सी बालिका फूल बेचते समय साइकिल से टकराकर गिर पडती है । मनोहर नाम का युवक बालिका को न केवल उठाता है वरन् उससे एक माला भी खरीद लेता है । दूसरे दिन फूल बेचते समय बालिका को फिर मनोहर मिलता है और बालिका उससे कहती है , "कल आप भूल से एक रूपया दे गये थे, यह सादे पन्द्रह आने लीजिए ।"[1] युवक का मन श्रद्धा से तर गया, उसने पैसे वापस नहीं लिये तथा एक माला खरीद कर पाँच रूपये का नोट उसे दे दिया । बालिका द्वारा अस्वीकार किये जाने पर बोला - मुझे अपना भाई समझो ।"[2] तब बालिका चुप गयी और उसने मनोहर से कहा कि उसे पढ़ना नहीं आता, अत: मनोहर उसके घर चलकर उसके भाई का पत्र पढ़ दे । लेकिन बालिका के साथ घर

---

1. उषादेवी मित्रा, नीम चमेली, पृ-62
2. " "

आकर मनोहर आश्चर्यचकित रह गया, जब बालिका ने एक लाल रंग का लिफाफा निकाल कर उसका एक-एक अक्षर पढ़ डाला । मनोहर के पूछने पर बालिका की माँ ने बताया कि सचमुच उसे पढना नहीं आता, उसे इस पत्र के अक्षर ज्यों के त्यों याद हैं, क्योंकि वह हर किसी से इस पत्र को पढ़वाती रहती है । युवक विस्मयाभिभूत हो जाता है । बालिका तारा नित्य पोस्टमैन से पूछा करती थी कि मेरे भाई का पत्र आया ? और बहुत दिनों बाद जब एक पत्र आया तो मनोहर उसे कैसे बताता कि उसका भाई इस दुनिया में नहीं रहा । उसके हाथ से लिफाफा गिर पड़ता है, फिर भी वह बड़े संयत स्वर में उत्तर देता है कि "वे अच्छे हैं ।"[1] तारा लिफाफा उठाकर अपने हृदय से लगा लेती है । इस कहानी में बालिका तारा की सरलता तथा अगाध स्नेह भावना की अभिव्यक्ति केलिए ही वातावरण एवं घटना के सूक्ष्म तन्तु की अवतरणा की गयी है । भाव-प्रधान कहानियों में श्रीमती उषादेवी मित्रा की "तो वह कौन था" कहानी भी अत्यन्त महत्व की है । "सुन्दर" एवं "मूर्त मृदंग" शीर्षक कहानियों में दार्शनिकता का प्राधान्य है ।

कमलादेवी चौधरी स्वयं कहती है - "यात्रा" में संग्रहीत "चित्रकार", "ममता" एवं "महान", "यात्रा", उस श्रेणी की कहानियाँ हैं जिन्हें कहानी न कहकर कुछ और भी कहा जा सकता था, कारण कि साधारणत: कहानी के रूप से इनका रूप कुछ भिन्न जा पड़ता है । इन कहानियों में कथानक की उपेक्षा है, घटनाओं का लगभग अभाव है, पात्रों के रंग-रूप, वेष-भूषा का नाम मात्र का भी उल्लेख नहीं है । चरित्र-चित्रण की भी उपेक्षा है, केवल मन: भाव का विश्लेषण मात्र है । किन्तु यह विश्लेषण ही कथानक का संकेत करता प्रतीत होता है, पात्रों के चरित्र-चित्रण का भी आभास देता है । एक तरह से कथानक और चरित्र-चित्रण का कहानी के अन्तरंग में ही समावेश हो गया है और कहानी की शैली गद्य काव्य न बनकर कहानी ही की अभिव्यक्ति करती जान पडती है । मेरे विचार से ये कहानियाँ भी भावात्मक कहानियों की श्रेणी में स्थान पा सकती हैं, किन्तु कहानी के साथ इन्हें भाव-कथा चित्र भी कहा जा सकता है ।"[2] "चित्रकार", "ममता", "महान", "यात्रा" आदि गल्पों में पात्रों

---

1. उषादेवी मित्रा, नीम चमेली, पृ-68
2. कमला चौधरी, यात्रा, कुछ शब्द से, पृ-3

के व्यक्तित्व अथवा चरित्र-चित्रण की उपेक्षा की गयी है । लक्ष्य के अनुरूप इन कहानियों में मनोभावों का दार्शनिक विश्लेषण हो हुआ है, किन्तु इनमें जिन प्रवृत्तियों का उल्लेख हुआ है, वे व्यक्ति विशेष की सम्पत्ति न होकर मानव मात्र की प्रवृत्तियाँ हैं । "दिग्विजय" कहानी में राजा ने दिग्विजय केलिए अथक प्रयास किया, किन्तु सफलता तब मिली जब आचार्य के हृदय को लक्ष्य बनाया अर्थात् ब्रह्मा को भेदकर ही आत्मा मोक्ष-लाभ करती है । "चित्रकार" कहानी जीवनगत सत्य का उद्घाटन करती है । वायव्य कल्पना को प्रश्रय देनेवाली कला को वास्तविक कला नहीं कहा जा सकता । सत्य के नग्न रूप का निदर्शन करनेवाली कला हो वास्तविक कला है । चित्रकार सौन्दर्य के प्रति आकर्षित होता है किन्तु जीवन के कड़वे सच मानव के कंकाल रूप से घृणा होती हैं किन्तु सत्य वहीं है । "यात्रा" कहानी में यह दिखाया है कि नौका-यात्रा की तरह की जीवन-यात्रा में भी सागर के थपेडों सी कई बाधाएँ आती हैं, पर उन्हें पार करते हुए जीवन-तट पर फैले प्रकाश की ओर बढ़ते जाना ही सार्थकता है । श्रीमती सत्यवती मल्लिक की भाव-प्रधान कहानियाँ हैं "नीलम", "वंशी और चिट्ठी", "वैशाख की रात","स्मृति" आदि ।

महिला कहानीकारों की हास्य-व्यंग्य प्रधान कहानियाँ :-

हास्य-व्यंग्य प्रधान कहानियाँ हिन्दी में बहुत कम मिलती हैं, स्त्रियों द्वारा रचित ऐसी कहानियों की संख्या और भी कम है । इन कहानियों में सरस शैली में तीखे व्यंग्यों के माध्यम से किसी सामाजिक यथार्थ को उभारने का यत्न किया जाता है ।

कमला चौधरी ने "पिकनिक" कहानी में साली, सलहेज, जीजा के पारस्परिक मज़ाक द्वारा हास्य की सृष्टि की है । साथ ही अनाम वकील साहब के माध्यम द्वारा समाज के उन पाखंडी व्यक्तियों पर करारा व्यंग्य किया गया है जो समाज के सामने अपने आप को ब्रह्मचारी घोषित करते हैं, परन्तु वास्तव में ब्रह्मचारी नहीं । "मिज़ेस चोपडा" में नारी की मेकअप की प्रवृत्ति के प्रति तीखा व्यंग्य है । "गंण्डूषा" में एक खाँ साहब द्वारा विचित्र ध्वनियों में कुल्ला करने की हास्यरसपूर्ण घटना अंकित है ।

"छलिया", "चाय में नींबू", "रूपया", "जीजी", "अफसर का बेटा", "बर्थडे", "टोटका" आदि चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की व्यंग्यात्मक कहानियाँ हैं । इनमें समाज के किन्हीं विशेष वर्गों अथवा किसी विशिष्ट वातावरण के प्रति व्यंग्य अथवा उपहास की भावना प्रमुख रही है । उदाहरणार्थ "चाय में नींबू" में नागरिक ललनाओं की कोमलता एवं शारीरिक असमर्थता का उपहास करके ग्रामीण नारी की शक्ति एवं आत्मनिर्भरता की श्रेष्ठता का प्रतिपादन किया गया है । "अफसर का बेटा" कहानी अफसर वर्ग की तमाम आधुनिकता परस्ती के भीतर स्थित खोखलेपन और घुटन के प्रति तीखा व्यंग्य है । बहुत बडे अफसर जिसकी मुलाकियतों की संख्या बहुत अधिक हैं और जिसकी मेम साहब साढे सात बजे सोकर उठती है - का बच्चा आया के हाथों पलता है - उसी के द्वारा तैयार होकर स्कूल जाता है और कुत्ते के साथ खेलकर अपना मन बहलाता है । "आया" प्रधान इस पेशनेबुल समाज में बच्चे के मनोविज्ञान से बेखबर माता-पिता अपनी धुन में मस्त केवल बच्चे की प्रोग्रस रिपोर्ट देखकर और उसे डॉट-फटकार कर ही छुट्टी पा जाते हैं । इस तरह वह अफसर का बेटा अपने मनोभावों को कुचलता हुआ स्टीन के अनुसार जीने केलिए बाध्य होजाता है । "रूपया" में उन स्वार्थी वंशजों पर व्यंग्य है जो धन की लिप्सा में गिरगिट की भाँति रंग बदल डालते हैं । "जीजी" में आधुनिक सभ्यता पर व्यंग्य किया गया है । "बर्थडे" कहानी का शिल्प अपनी अद्भुत सहजता और व्यंग्य क्षमता के कारण बडा ही मोहक हो उठा है । पढे-लिखे मध्य वर्ग की खोखली मानसिकता जो अभिजात वर्ग की नकल में अपने आप को अधुनातन पैशन का सिद्ध करने के प्रयत्न में किस हद तक अपनी बेचारगी प्रमाणित करती है, इसका बडा ही तीखा एहसास कहानी में पसरा हुआ है - "कोई भी आधुनिक महिला बिना मेकअप किए किसी से भेंट नहीं कर सकती, चाहे आगन्तुक मरण शैया पर पडे प्राणी केलिए तुलसी-गंगाजल लेने ही क्यों न आए ।"[1] बच्ची का बर्थडे मनाने के पीछे जो आधुनिकता की ऐंठ है, वह मूर्खता से भरी हुई है । तीन वर्ष की बच्ची को अंग्रेजी रइम्स और गिनती की क्वायद कराने में व्यस्त पति-पत्नी और तथा कथित सभ्य तरीके से "बर्थडे" मनाते हुए परिवार की सारी सभ्यता पर तब पानी फिरू जाता है जब मोमबत्तियाँ

---

1. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, बर्थडे, कहानी, जनवरी, 1956, पृ-66.

बुझाने के असफल प्रयास में बच्ची का छुरा चेहरा झुलस जाता है । "टोटका" में अशिक्षित नारी के अन्धविश्वास का उपहास है तो "इक्लाई" में द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त बढनेवाली महँगाई के सन्दर्भ में निम्न-मध्य वर्ग के परिवारों की आर्थिक विपन्नता का करूण किन्तु व्यंग्य पूर्ण चित्र अंकित किया गया है ।

श्रीमती चन्द्रवती ऋषभसेन जैन की कुछ कहानियों में हास्य रस का सुन्दर समावेश हुआ है । "गुलाबी चुनरिया" में कामुक पुरूषों के पर-नारी-आकर्षण का जो व्यंग्य पूर्ण सजीव चित्र अंकित किया गया है उसमें तद्वत् पुरूषों के प्रति उपहास का भाव मानों छलका पडता है । "धवल छत्र की छाया में" शीर्षक कहानी में सामाजिक वातावरण का व्यंग्य पूर्ण चित्र देखिए - "इंगलैंड की स्त्रियाँ चाहे नाज़ियों के बंबार्डमेंट से बच जाएँ और टपाटप ओलों की वृष्टि में खडे पके खेतों के बचाव का भी चाहे कोई वैज्ञानिक प्रबन्ध कर दें, पर हिन्दुस्तान की स्त्रियाँ पुरूषों को घूर से नहीं बच सकती । कम से कम अभी बहुत दिनों तक ।"[1]

श्रीमती तेजरानी पाठक की "पिलासोफर" हास्य प्रधान कहानी है । "गरीब की बू" में व्यक्ति और समाज का व्यंग्यपूर्ण चित्रण किया गया है । इसमें ऐसे व्यक्तियों के प्रति व्यंग्य है जो थोडी सी ऊँची पदवी पाने पर अहंकार से मदमस्त हो अपने निकट से निकट मित्र एवं संबंधियों को पहचानने तक से इनकार कर देते हैं । बाबु चन्द्रभूषण इसी के प्रतीक हैं ।

बंग-महिला की बहुचर्चित "दुलाईवाली" कहानी में एक रोचक यात्रा के वर्णन द्वारा हास्य-व्यंग्य के उपकरण जुटाये गये हैं । वंशीधर को बनारस से अपनी पत्नी से बिदा कराके इलाहाबाद लौटना था । उनके ममेरे भाई नवलकिशोर ने पत्र द्वारा उन्हें सूचित किया कि वे भी अपनी नव परिणीता पत्नी सहित उनके साथ यात्रा करेंगे । मित्र से परिहास करने केलिए नवल किशोर "दुलाईवाली" के रूप में उसी डिब्बे में उपस्थित रहे । उनकी अनुपस्थिति में उनकी पत्नी तथा वंशीधर ने जिस आकुलता का अनुभव किया, उसका वे आनन्द उठाते रहे । इलाहाबाद स्टेशन पर जब "दुलाईवाली" ने अपने मुख से आवरण को हटाया तब संबंधित पात्र परिहास के

---

1. चन्द्रवती ऋषभसेन जैन, नींव की ईंट, पृ-143

इस स्वरूप को देखकर विस्मय तथा प्रसन्नता से भर उठे । लेखिका ने कथानक में सजीवता लाने केलिए विस्मय, कौतूहल तथा हास्य की सुन्दर छटा प्रस्तुत की है । "हृदय की परीक्षा" के डॉ·सुशील अपनी ससुराल अपनी बीमार पत्नी को देखने जाते हैं, इसलिए नहीं कि वह उनके पति हैं बल्कि डाक्टर के रूप में । डॉ·सुशील कुमार अपनी पत्नी सरला से किसी मामूली सी घटना पर नाराज़ हो जाते हैं । सरला भाई के यहाँ चली जाती है और अस्वस्थ है । सरला के भाई योगेन्द्र बाबू डॉ·सुशील कुमार से सरला को देखने का आग्रह करते हैं । डॉ·सुशील कुमार पत्नी को डॉक्टर के नाते देखने तैयार होते हैं । सालियाँ, डॉ·सुशील कुमार को डाक्टर के रूप में खूब इकाती है । इस में सालियों का परिहास मनोरंजनात्मक एवं स्वाभाविक है ।

सत्यवती मल्लिक की "गुड्स ट्रेन" में हास्यपूर्ण घटनाओं का चित्रण हुआ है । सुमित्रा कुमारी सिन्हा की "माँगते " कहानी आधुनिक सभ्यता पर एक व्यंग्य है । आज के धनिक निर्धन याचकों को कुछ भी न देकर दुत्कार देते हैं, उनसे मर्मान्तक घृणा करते हैं और स्वयं रमणियों से चुम्बन-याचना करने केलिए पैसा पानी की भाँति बहाते रहते हैं, यही इस कहानी का मुख्य विषय है । "वर्षगाँठ" में एक ज़मीन्दार का व्यंग्य पूर्ण चित्रांकन हुआ है जो रियाया पर अपनी उदारता का सिक्का बैठाने केलिए परोपकार के अनेक कार्य करता था, किन्तु वस्तुत में तो वह उदारता थी नहीं । फलत: कृत्रिम उदारता का ढोंग बनाये रखने केलिए एक बार जब आवश्यकता से अधिक व्यय करना पड़ा तो बेचारे की हृदयगति रूक गयी ।

निष्कर्ष

स्वातंत्र्यपूर्व युग की महिला कहानीकारों के सम्यक अध्ययन से निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त होते हैं -

विवेच्य काल के साहित्यिक वातावरण से प्रेरणा प्राप्त कर महिला कहानीकारों ने हिन्दी कहानी की वस्तु को नारी सुलभ अनुभूतियों तथा कोमल भावनाओं से समृद्ध किया । इस काल में समाज में नारियों की स्थिति का चित्र

अंकित करने में ही लेखिकाओं की ऐकान्तिक रूचि लगी - यही उनकी वस्तु का आधार था, यही था उनका ध्येय । साथ ही उनका ध्यान जीवन की विविधता की ओर भी गया । उन्होंने पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, उपदेशात्मक, प्रतीकात्मक, भाव-प्रधान तथा हास्य-व्यंग्य प्रधान कहानियाँ लिखी हैं । इनकी कहानियों में आदर्श की अपेक्षा यथार्थ चित्रण के प्रति प्रबल आग्रह रहा है ।

होमवती देवी, सत्यवती मल्लिक, कमला-चौधरी, महादेवी वर्मा, चन्द्रवती ऋषभसेन जैन जैसे लेखिकाओं ने यथार्थवादी बुनियादो के आधार पर ही नारी के नैतिक एवं पारिवारिक जीवन के आदर्शों की स्थापना की है । सुमित्रा कुमारी, शिवरानी देवी, चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, होमवती देवी आदि की कहानियों में चित्रित स्त्री पात्र सामाजिक व आर्थिक बन्धनों को लाँघने का प्रयत्न करने के अतिरिक्त राजनीतिक विद्रोह भी चलाता दिखाई देती है । महिला कहानीकारों ने नारी पात्रों के द्वारा सामाजिक व आर्थिक शोषण का चित्रण कर उसका खण्डन करने के साथ साथ उनके अन्तर्भावों को प्रकट करने केलिए हृदय की गहराइयों को टटोलने का स्पष्ट प्रयत्न किया है । नारियों की आर्थिक परवशता को मूल स्वर बनाकर लिखी गयी कुछ कहानियाँ निस्सन्देह नारी के भीतर पनपते आक्रोश-बीज और जागृति की सुलगती चिनगारियों का संकेत देती हैं । कहानी में दीन-दलित निर्धन किसान की ओर उनकी दृष्टि गयी और पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति विद्रोहकी भावना जाग उठी । मार्क्सवाद से प्रभावित होकर उसने पूँजीपति के अत्याचार के विरूद्ध आवाज़ उठायी और फ्रायड के प्रभाव को ग्रहण करके मनोवैज्ञानिक कहानियाँ लिखीं । कहानी में मन:विश्लेषण एवं सूक्ष्म निरीक्षण तथा तर्क की, उसने अपार क्षमता प्रदर्शित की है । सामाजिक जीवन की अन्याय निष्ठा पर कटु व्यंग्य भी किए ।

यह ठीकहै कि इनकी कहानियों में समाज सुधार के प्रति विशेष आग्रह रहा है । पीडित नारियों तथा शोषित वर्गों के प्रति संवेदना इन कहानियों का प्रमुख स्वर है, फलत: पतितों के उत्थान की आकांक्षा सबमें समान रूप से दृष्टिगत होती

है । इस प्रकार जीवन पक्षों और अनुभूतियों को अपनी कहानी में व्यक्त करके आलोच्य कालीन महिला रचिताओं ने नारी की क्षमता और बुद्धि वैभव के प्रति अटूट आस्था उत्पन्न की ।

"""""""""""""

अध्याय चार

अध्याय चार

महिला कहानीकारों की कहानियों में चित्रित नारी

नारी : स्वरूप विकास :-

सृष्टि के उष:काल से ही नारीत्व की चिरन्तन-धारा पुरूष के आकर्षण और उपेक्षा के दो कगारों के बीच कभी द्रुत कभी मंथर गति से प्रवहमान रही है । उसने मानव-जीवन के सभी क्षेत्रों को अपनी दया, माया, ममता, मधुरिमा, अगाध विश्व और समर्पण से अभिषिक्त किया है । इतिहास के किसी काल-खंड में यदि उसने पुरू की कोमल भावनाओं को उभारा है, तो कभी उसे जीवन-संग्राम में जूझने का दृढ संकल्प और आत्मोत्सर्ग की प्रेरणा भी दी है । यही कारण है कि भारतीय समाज में ना की स्थिति युगीन आदर्शों और जीवन-मूल्यों के साथ-साथ परिवर्तन होती रही है

नारी समस्त मानवीय सौन्दर्य एवं चेतना की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति है, साथ ही सृष्टि का मूल भी । साहित्य की प्रत्येक विधा के सर्जन में नारी-हृदय की पुल उसकी अनुरक्ति एवं जीवन प्रदायिनी ऊष्मा सक्रिय रही है । आचार्य हजारी प्रसा द्विवेदी ने सृष्टि एवं सर्जन में नारी की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करते हुए कह है - "पुरूष स्वभावत: नि:सर्ग व तटस्थ होता है, नारी ही उसमें आसक्ति उत्पन्न उसे नव-निर्माण के प्रति उन्मुख करती है । पुरूष अपने पुरूष प्रकृति के कारण द्वंद्वरहित हो सकता है, लेकिन नारी अतिशय भावुकता के कारण सदैव द्वंद्वोन्मुखी रह है । इसलिए पुरूष मुक्त है और नारी बद्ध ।"[1]

यदि जयशंकर प्रसाद नारी को केवल श्रद्धा स्वरूप मानते हैं तो गुप्तजी केलिए वह "आँचल में दूध और आँखों में पानी" लिये त्याग की साकार प्रतिमा है ।महादे

---

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, बाणभट्ट की आत्मकथा, पृ-110.

वर्मा का कथन है कि "नारी का मानसिक विकास पुरूष के मानसिक विकास से अधिक द्रुतगति से होता है । उसका स्वभाव कोमल और प्रेम-घृणा आदि भाव अधिक तीव्र और स्थायी होते हैं । - - - इन दोनों प्रकृतियों में उतना ही अन्तर है जितना विद्युत् और झड़ी में है । एक से शक्ति उत्पन्न की जा सकती है - - - परन्तु प्यास नहीं बुझायी जा सकती । दूसरी से शान्ति मिलती है, परन्तु पशु-बल की उत्पत्ति संभव नहीं ।"[1] डॉ॰ सूतदेव हंस का विचार है कि "भारतीय वाङ्मय में प्रयुक्त नारी विषयक विभिन्न अभिधानों से उसके समग्र स्वरूप का बोध होता है ।"[2] यथा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में वह पुरूष के समान कार्य करने में सक्षम है, अत: उसे सहचारी और सहधर्मिणी कहा गया है । अतुल गोस्वामी ने नारी के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए कहा है -- "समस्त मानवीय सदाचार निष्ठ मानव धर्म्या स्त्री को नारी कहते हैं । वपु, प्रकार, प्रकृति, प्रत्यक्ष, वर्ण, गुणादि भेद होने पर भी नारीत्व की अभेदता से ही यह संज्ञा नारी मात्र की है ।"[3] कहने का तात्पर्य यह है कि नारी-जगत् में दृष्टिगत विभिन्नता का आधार केवल बाह्य उपादान है, आभ्यंतर प्रकृतिगत विभेद नहीं हैं । यही कारण है कि प्रत्येक नारी के भावना-संसार में लगभग एक जैसा औदार्य, सहनशीलता व ममत्व-भाव परिलक्षित होता है । यहाँ हमारा उद्देश्य महिला कहानीकारों की कहानियों में चित्रित नारी तथा तद् विषयक विभिन्न सन्दर्भों में उसकी स्थिति स्पष्ट करने तक ही सीमित रहा है ।

महिला कहानीकारों की कहानियों में चित्रित अधिकाँश नारियों का जीवन वैविध्यपूर्ण है । भारतीय समाज-व्यवस्था इन महिलाओं के प्रति कितनी क्रूर, अमानवी एवं संवेदनहीन है, यह सब वैधव्य के असीम कष्ट से जूझती हुई नारियों को देखकर ही पता लगता है । उनकी कहानियों की मूल प्रेरणा में कहीं न कहीं समाज को परंपरा प्रथाओं द्वारा प्रताडित नारी ही विद्यमान है और उनका संपूर्ण रचना-कर्म नारी-उद्ध की प्रबल कामना से उद्वेलित है । महिला कहानीकारों की कहानियों के नारी पात्र

---

1. महादेवी वर्मा, श्रृंखला की कड़ियाँ, पृ-10-11
2. डॉ॰ सूतदेव हंस, उपन्यासकार चतुरसेन के नारी पात्र, पृ-3
3. डॉ॰ बाबुराम गुप्त, नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित नारी, पृ-49.

अनेक चारित्रिक विशेषतायें लिये हुए हैं । अध्ययन की सुविधा केलिए उनके नारी पात्रों की विशेषताओं को निम्न प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है :-

1· प्रताडित एवं शोषित नारी-पात्र ।

2· विद्रोही नारी-पात्र ।

3· प्रगतिशील नारी-पात्र ।

4· उदात्त एवं उच्च भावनाओं से प्रेरित नारी-पात्र ।

5· नारी के विविध पारिवारिक रूप ।

6· नारी के वैवाहिक जीवन-समस्यायें ।

7· महिला कहानीकारों के नारी संबंधी दृष्टकोण ।

प्रताडित एवं शोषित नारी-पात्र

भारतीय नारी कैसी उपेक्षित, अपमानित और प्रताडित है इसका प्रमाण है महिला कहानीकारों की कहानियाँ । अनुदार, अन्धविश्वासों, कुरीतियों, कुप्रथाओं से जकडे भारतीय समाज में नारी की स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी । वस्तुत: भारती नारी से अधिक दयनीय प्राणी संसार में कठिनाई से प्राप्त होगी । इस पुरूष प्रधान समाज में उसे न पुत्री के रूप में अधिकार है, न माता के रूप में, न बहिन के रूप में, न पत्नी के रूप में । छोटी सी उम्र में ही उसकी शादी करायी जाती है ।

"पुतली जी उठी" कहानी में उषादेवी मित्रा ने प्रभावपूर्ण ढंग से परित्यक्ता नारी का चित्रण किया है । नारी का सबसे बडा अभिशाप है पति से तिरस्कृत एवं अपमानित होना । दीपावली के सुखी दाम्पत्य जीवन में एकाएक वज्रघात होता है दीपावली का पति प्राण से भी अधिक प्रिय पत्नी को उसकी माँ के कलंक के कारण परित्याग कर देता है । दीपावली का दुख चरम सीमा पर पहुँच जाता है जब उसकी एकमात्र पुत्री पुष्पा को भी उससे लिया जाता है । पति को यह सहन नहीं कि उसकी बच्ची कलंकिनी माता के साथ रहे । परंपराओं, धार्मिक रूढियों से बन्धी नारी अपने अन्तर इतना साहस नहीं जुटा सकी थी कि पति के विशेषाधिकारों को चुनौती देती तथा विद्रोह करती, वह गिडगिडाती भी नहीं वरन आत्मशक्ति के बल पर अपनी भावनाओं और विचारों का दमन करती है । "ललिता की डायरी"[1] की ललिता

1· उषादेवी मित्रा, मेघमल्लार, पृ-110·

बन्धनों में बन्धी परित्यक्ता नारी है । "आवाज़"[1] कहानी में पुरूष की क्रूरता का शिकार बनी एक भोली-भाली युवती की मर्म कथा दी गयी है जो आवाज़ की दुनिया से अपरिचित बारह वर्षों तक एक खंडहर में अकेली रहती है, इस आशा में कि उसका छली प्रणयी लौट आयेगा । "गहरी नदिया नाव पुरानी"[2] में संध्या की कथा के माध्यम से जातिगत विभिन्नता के कारण सन्ध्या का ससुरालवालों ने परित्याग कर दिया था । सामाजिक विधि निषेधों द्वारा सतायी गयी नारी का चित्र प्रस्तुत किया है जो कि केवल सन्ध्या का ही नहीं वरन् उन कोटिक नारियों के जीवन का प्रतिनिधित्व बन आया है जिन्हें सामाजिक रूढ-मान्यताओं का शिकार बनना पड़ता है ।" श्रमी की अभिलाषा"[3] में उच्च वर्ग और निम्न वर्ग की नारी की विवशता का चित्रण है । धन की अभिलाषा में पति मस्ता अपनी पत्नी मोहनिया की आबरू तक उतारने केलिए तैयार है । दुखिया मोहनिया क्या करे, "पति की बात मानती है तो स्त्री की सब से प्यारी संपत्ति-सब से कीमती चीज़-आबरू जाती है, नहीं मानती है तो डंडों की मार पड़ती है । अबला ठहरी क्या करे, क्या करें ? किसी की शरण में जाय ? मार से दुखिया के शरीर पर नीली-नीली परतें पड गयी हैं, हड्डी में दर्द है और रूपये के लोभी मस्ता को उस पर ज़रा भी दया नहीं है ।"[4] दूसरी ओर जेठानी कैद है । दुश्चरित्र पति को अवहेलना करने की सामर्थ्य उसमें नहीं । दोनों की स्थिति एक सी है -- कुछ भी अन्तर नहीं । अत: स्पष्ट है कि सभी वर्ग की नारियां विवशता का अनुभव करती है ।

"कर्तव्य"[5]में दहेज की पूर्ण राशी न मिलने पर सुधीर के पिता अपने पुत्र को, माया को अधब्याही छोड देने का आदेश देता है । "दो रोटियां"[6] में गृहकार्यों की चक्की से पिसती एक मध्य वर्गीय परिवार की वधु उमा की करूण जीवन चित्रित है जो दो रोटियों के नाम पर घर का सारा काम करती, सब की फटकार सहती

---

1. उषादेवी मित्रा, माया, जनवरी 1950
2. " नीम चमेली, पृ-24
3. कमला चोधरी, उन्माद, पृ-128
4. " " पृ-134
5. कमला त्रिवेणी शंकर, कहानी, मार्च 1940, पृ-110-114.
6. चन्द्र किरण सौनरेक्सा, आदमखोर, पृ-181.

और इसी तरह घुलते घुलते एक दिन मृत्यु की गोद में समा जाती है । "गृहस्थी का सुख"[1] कहानी का परिवार नारी को बच्चे पैदा करनेवाले यंत्र का ही भेष देता है । शिव सहाय महज़ सन्तानोत्पत्ति केलिए दूसरा विवाह करता है और इस महान कर्तव्य को निबाहने में ही एक दिन उसकी पत्नी चल बसती है । "दूसरा बच्चा"[2] में भिखारिन गुलाबी को एक बच्चे के साथ भीख माँगते देखकर वीरेश्वर ने यह कहकर उसकी भर्त्सना की कि भिखारिन हो कर बच्चा पैदा करने की क्या आवश्यकता थी ? बाद में स्वयं उसका सतीत्व अपहरण करके उसे एक के स्थान पर दो बच्चों की माता बनाकर वह पलायन कर जाता है । सामाजिक दृष्टि से तिरस्कृत, हेय और घृणित जीवन जीने को अभिशप्त नारी समाज के सफेदपोश भ्रष्ट भेडियों की काम-वासना का निशान बन, बगैर मुँह खोले गर्भ का भार वहन करने को बाध्य है ।

इस पुरूष प्रधान समाज में नारी के प्रति जो उपेक्षा भाव है, प्रताडना है, उसे स्त्री वर्ग को झेलना पडता है, नारियों की इस दिशा का बडी बेबाकी के साथ भावपूर्ण चित्रण महादेवी वर्मा ने किया है । "लछमा" एक ऐसी ही निपति की मारी बेमेल विवाह की शिकार, उत्पीडित पर जुझारू व्यक्तित्ववाली पहाडी नारी है । ससुरालवालों ने लछमा को इतना मारा कि वह बेहोश हो गयी । उन्होंने उसे मृत समझकर वहीं एक खड्ड में फेंक दिया । लेकिन वह खड्ड में से निकल कर किसी तरह लड़खड़ाते हुए कदमों से अपने गाँव आ गयी । मार्ग में तीन दिन तक कुछ खाने को न मिल सका । लछमा हँसकर कहती है - "जब बहुत भूखा हुआ, तब पीली मिट्टी का एक गोला बनाकर मुँह में रखा और आँख मूँदकर सोचा - लड्डू खाया, लड्डू खाया । बस फिर बहुत सा पानी पी लिया और सब ठीक हो गया ।"[3] लछमा का कथन नारी-हृदय की संपूर्ण वेदना को एक साथ ही पाठकों के समक्ष उजागर कर देता है । भक्तिन के द्वारा भी लेखिका ने समाज से प्रताडित नारी के उज्ज्वल चरित्र को दिखाया है और समाज की ओर तीखा व्यंग्य भी छोड़ दिया है । विधवा भक्तिन के जेठ

---

1. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, आदमखोर, पृ-18.
2. वीणा, सितंबर 1941, पृ-949-952.
3. महादेवी, अतीत के चलचित्र, पृ-107

तथा ससुराल के अन्य लोग उसकी संपत्ति को हड़पना चाहते हैं । उनके द्वारा किये गये प्रपंच के कारण वर्षों से संभालकर रखे उनकी सारी संपत्ति पानी में मिल जाती है और उसे अपमानित होकर गाँव भी छोड़ना पड़ता है । निर्धनता में पले, समाज के द्वारा प्रताड़ित इस पात्र में आभिजात्य वर्ग में भी दिखाई न देनेवाले मानवीय गुण हैं । महादेवी के रेखाचित्र के कर्मठ सबिया उपेक्षित भारतीय नारीत्व के रूप में दलित समाज की नारी का प्रतिनिधित्व करती है । सबिया एक गरीब मेहतरानी थी, जिसका पति उसे छोड़कर, अपने जात-भाई की नव-वधु को लेकर किसी परदेश भाग गया था । तब सबिया प्रसूतिगृह में थी । धैर्य धारण कर भूख से लड़ती जीवन-मरण से संघर्ष करती हुई वह अपना जीवन आगे बढ़ाने लगी । बाद में जब उसका पति लौट आता है तब सबिया उसके सुख-दुख में लिपट जाती है और उसको चिन्ता में खोई दिखाई पड़ती है ।

शिवरानी देवी प्रेमचन्द की कहानी "आँसु" का जगन अपनी पत्नी रधिया को पीटता है । लेकिन पति द्वारा तिरस्कृत एवं अपमानित होने पर भी उसका कहना है - "भाभी वह मर्द है, निर्दय हो सकते हैं । मैं उनका सा मन कहाँ से लाऊँ ।"[1] यह कथन भारतीय समाज में नारी की विवशता और पनपते हुए असंतोष को व्यक्त करता है । सत्यवती मल्लिक की अधिकाँश नायिकाएँ समाज द्वारा उपेक्षित एवं परिस्थितियों द्वारा प्रताड़ित है । "आँसु" की मातृ-पितृ हीना शोभा किसी प्रकार उपेक्षित सी पल कर बडी हुई तो विवाह के बाद भरसक प्रेम करने पर भी पति ने उसका त्याग कर दिया । "दृष्टि" की नायिका सौन्दर्यहीना होने के कारण पति को रिझा न पायी तो पति ने उससे उत्पन्न पुत्री को एक मित्र के घर भेज दिया और स्वयं दूसरा विवाह कर लिया । इस प्रकार सामाजिक तिरस्कार अपमान एवं घुटन के कारण शोभा का संपूर्ण जीवन, एक दुखद गाथा बनकर रह गया है ।

हिन्दु समाज आदर्श रूप में पत्नी को अर्धांगिनी, गृहस्वामिनी एवं सम्माननीय माना गया है, किन्तु व्यावहारिक रूप में परिवार में उनकी स्थिति अत्यन्त

---

1. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, नारी हृदय, पृ-145

दयनीय थी । नारी मानवी न रहकर केवल उपभोग्य - सामग्री मात्र थी, उसका अपना कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं था । नारी केवल पुरूष के हाथों की कठपुतली मात्र थी । पुत्री का जन्म दुख तथा अभाग्य का प्रतीक समझा जाता था । अपनी कहानियों के माध्यम से सुभद्राकुमारी चौहान ने परिवारों में नारी की रात-दिन की विवशताओं, समस्याओं के विभिन्न पहलुओं का अत्यन्त भावुक, करूण एवं हृदय द्रावक चित्रण किया है । "बिखरे मोती" की भूमिका में स्वयं लेखिका ने लिखा है - "रूढियों और सामाजिक बन्धनों की शिलाओं पर अनेक निरपराध आत्माएँ प्रतिदिन ही चूर चूर हो रही है । उनके हृदय-बिन्दु जहाँ-तहाँ मोतियों के समान बिखरे पडे हैं । - - - - समाज और गृहस्थी के भीतर जो घात-प्रतिघात होते रहते है, उनकी यह प्रतिध्वनियाँ मात्र हैं ।"[1] "भग्नावशेष", "होली", "दृष्टकोण", "कदम्ब के फूल", "ग्रामीणा" आदि कहानियों में पुरूषों की निरंकुश उद्दण्डता तथा स्त्री की प्रतिकारहीन असमर्थता का सच्चा मर्मान्तक चित्र खींचा है । "होली" में शराबी पति जुए के रूपयों को न ग्रहण करने के अपराध में अपनी पत्नी का सिर फोडकर उसे सिसकने, भूख-प्यास से छटपटाने केलिए छोडकर स्वयं वेश्या के संगीत का आनन्द लेने और धन लुटाने केलिए चला जाता है । "ग्रामीणा" में वधु सोना को पति की शंकालु वृत्ति की तृष्टि केलिए आत्म-बलिदान करना पड़ा । इस प्रकार स्त्री परिवार तथा समाज द्वारा शोषित व प्रताडित हो कर दारूण नारकीय यातना भोगने केलिए विवश होती है ।

विद्रोही नारी-पात्र :-

भारतीय समाज और परिवार के परंपरागत ढाँचे ने व्यक्ति के शोषण को मजबूत किया है । अत: इस ढाँचे में आमूल परिवर्तन केलिए महिला कहानीकारों की कहानियों में कुछ विद्रोही प्रकृति के नारी-पात्रों को भी महत्वपूर्ण स्थान मिला है । ऐसे नारी-पात्रों में कमला चौधरी की "प्रायश्चित" कहानी की सुखिया, "त्याग की सरोज, "त्याज्या" की सावित्री आदि के नाम लिए जा सकते हैं । पंडितजी से तिरस्कृत सावित्री पति के पैरों पर नहीं पडती वरन् विद्रोही स्वर में

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, बिखरे मोती, भूमिका भाग, पृ-15

रमेश से कहती है "ज़रा ठहरो, मैं भी चलती हूँ। कुत्तों की भाँति केवल रोटी केलिए अब मैं इस घर में नहीं रहूँगी।"[1] सावित्री रूढिवादी प्राचीन नारियों की भाँति पति की जुतियाँ चाटना उनका ध्येय नहीं समझती। पति यदि पत्नी की अवहेलना एवं उपेक्षा आवश्यकता से अधिक करें तो पत्नी भी उचित प्रत्युत्तर देती है

कमला त्रिवेणी शंकर की "अमीर की बेटी" कहानी में जब दहेज कम मिलने के कारण नायिका के पति तथा उनके अन्य संबंधी उसकी अवहेलना करके उसे मायके भेज देते हैं तब वह भी अपने पिता से स्पष्ट कह देती है - "पिताजी, आज के युग में स्त्रियाँ सम्बलहीन नहीं हैं। मैं पढूँगी और नौकरी करूँगी। पर ऐसे घर में शायद अब लौट कर नहीं जा सकूँगी, जहाँ के लोगों ने मुझे मिट्टी के खिलौने की भाँति ठुकरा दिया।"[2] नीलिमा अपनी निजी यातना के माध्यम से इस तथ्य को भली भाँति समझती है कि आर्थिक निर्भरता ही उन्हें इस अमानवीय नरक से बाहर निकाल सकती है। इसलिए वह अपने संकल्प पर दृढ रहकर एक कालेज में प्रिंसिपल का पद प्राप्त करके सामाजिक रूढियों को चुनौती देती है। चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की "सुभद्रा" कहानी में मातृ-पितृहीना सुभद्रा ने मामा-मामी के हाथों अनेक कष्ट सहे, किन्तु जब वे धन के लोभ में उसका विवाह एक वृद्ध से करने लगे तो विवाह के समय उसने वृद्ध को अस्वीकार कर दिया और उसका विरोध भी किया। इस प्रकार सुभद्रा का वृद्ध से अनमेल विवाह केलिए असहमत होना समाज में व्याप्त रूढियों के प्रति विद्रोह का ज्वलन्त प्रमाण है। अनेक कष्ट सहकर ही उसने अपने योग्य वर ज्ञानु को फिर प्राप्त किया। "दीमक" कहानी की ललिता में चन्द्रकिरण जी ने अत्याचार के प्रति विद्रोह भावना को अभिव्यक्त किया है। गले तक कर्ज में डूबे होने पर भी रामकिशन कुल की मर्यादाओं की टेक निभाते हैं और उसकेलिए अपने चौदह वर्षीय पुत्र का विवाह एक धनी परिवार की अनपढ लंगडी लडकी तक से करने केलिए तैयार हो जाते हैं। ललिता के मन में समाज की इन रूढियों, अन्यायों, अत्याचारों के प्रति विद्रोह-भावना जागती है और वह स्पष्ट शब्दों में पिता से कह देती है, "आप यह सब मेरे कारण कर रहे हैं न, पर मैं कह देती हूँ कि चन्दर

---

1. कमला चौधरी, यात्रा, पृ-49
2. कमला त्रिवेणी शंकर, जयमाल, पृ-115

का जीवन नष्ट करके आप मेरा ब्याह करना चाहें सो नहीं होगा । - - - - अपना भला-बुरा मैं आप देख लूँगी । आप तो बस झूठी मान-मर्यादा के पीछे मरी मिट रही हैं ।"[1] यह कथन विवाह के संबंध में उसकी विद्रोह चेतना का परिचायक है । "अच्छा लडका अच्छी लडकी" (चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की कहानी) में समाज में प्रचलित दहेज कुप्रथा के कारण माता-पिता की परवशता का चित्रण है । दया का अपने पिता को यह लिखना - - - - "मैं सुन्दर नहीं हूँ, यह न आप का दोष है, न मेरा । किन्तु आप दहेज नहीं दे सकते थे, इस दशा में भी मैं अच्छे वर की प्रतीक्षा में अब तक आप का और अपना खून जलाती रही "[2] समाज के ठेकेदारों केलिए भयंकर प्रताइना है ।

हमारे देश में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं जब कि धनी व्यक्ति अपने धन के सहारे निर्धन एवं निर्दोष व्यक्तियों को दोषी ठहरा कर मनमाना दण्ड दिलवा देते हैं । तेजरानी पाठक की "लाल कुरता" कहानी की सुलोचना को जब बिना चोरी किए ही चोर घोषित कर दिया जाता है तो वह सोचती है "चोरी तो मुझे लग ही गयी । चाहे कुछ पाप करे या न करे, इस संसार में गरीब होना ही बडा भारी पाप है । जब कलंक मुझे लग गया है, तब फिर उस बच्चे की इच्छा ही क्यों न पूरी करूँ ? दूकानें अभी खुली होंगी । मैं उस कुरते को अवश्य चुराऊँगी ।"[3] यद्यपि देश में न्याय व्यवस्था इसलिए की जाती है कि अपराधी को दण्ड और निरपराधी को मुक्ति प्रदान की जाये, परन्तु निष्पक्ष न्याय के उदाहरण एक दो ही मिल सकेंगे, अपितु न्याय अपराध के आधार पर नहीं धन के आधार पर किया जाता है । "बदला" (तेजरानी पाठक की कहानी) के प्रताप की माँ प्रतिहिंसा की भावना रखनेवाली नारी ही है । महादेवी के रेखाचित्र की बिबिया घोबिन को दुबारा शादी करने पर एक जुआरी तथा शराबी पति प्राप्त होता है । पहले ही दिन से उसे पति से अपमानित होना पडता है । बिबिया सामान्य नारियों की भाँति इस अपमान को झेलने केलिए तैयार नहीं होती है, बल्कि इसके विरुद्ध

1· दीमक कहानी, कथाकौमुदी,, पृ-240
2· क्षेमचन्द्र सुमन, मनोरंजक कहानियाँ, पृ-116
3· तेजरानी पाठक, अंजली, पृ-10

प्रतिक्रिया भी करती है । जब वह अपने जुआरी पति के उसे दाँव पर रखने की शर्त का अनुमोदन करने की बात सुनती है तब उस की प्रतिक्रिया अपनी पराकाष्ठा तक पहुँचती है । इसके संबंध में महादेवी कहती है - "दुर्भाग्य से उसने एक दिन करीम मियाँ को अपने द्वार पर देख लिया । बस फिर क्या था - भीतर से तरकारी काटने का बड़ा चाकू निकाल कर और भौहें टेढ़ी कर उसने उन्हें बता दिया कि रमई के ऐसी हरकत करने पर वह उन दोनों के पेट में यही चाकू धोंप देगी । - - - - वह ऐसी गाय बछिया नहीं है जिसे चाहे कसाई के हाथ बेच दिया जावे, चाहे वैतरणी पर उतरने केलिए महाब्राह्मण को दान कर दिया जावे ।"[1] "पुरूषों की भाँति नारी का भी अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व और निकाय है । स्त्रियों का केवल पुरूषों की सेवा का साधन बना रहना ही अलम् नहीं है ।

"व्यक्तित्व" (सुमित्रा कुमारी सिन्हा की कहानी) की इला पति द्वारा त्यक्त होकर समाज-सुधार को अपना लक्ष्य बनाती है । जब उसके पूर्व प्रेमी मृदुल ने लिखा कि वह उसे आर्थिक सहायता दे सकता है तब उसकी मुद्रा कठोर हो गयी और होठों को क्रोध से दो बार चबा कर उसने कहा - "कायर, स्त्री को पालतू पशु से भी गिरा हुआ समझनेवाले पुरूष, तुम अपने को समझते क्या हो ?"[2] "प्रतिक्रिया" की लीला उसकी उपेक्षा करके अन्यत्र विवाह करेनेवाले प्रेमी के क्षमा-प्रार्थी होने पर उसे धक्का दे देती है । "विद्रोहिनी" की सरला एक ओर नारी को मात्र उप-भोग्या माननेवाले अपने प्रेमी मदन को बुरी तरह दुत्कार देती है और दूसरी ओर जब उसके पति, उसके और अपने प्रेम के विषय में उससे प्रश्न करते हैं तब निधड़क हो कर कह देती है कि "प्रेम समान स्तर पर ही होता है । पुरूष जब अपने को पूज्य समझता है तो नारी दासी की भाँति उससे केवल श्रद्धा कर सकती है, प्रेम नहीं"[3] महिला कहानीकारों की अनेक नारी-पात्र सामाजिक रूढ़ियों को चुनौती देती हैं तथा विद्रोही एवं क्रान्तिकारी कदम भी रखती हैं ।

---

1. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ, पृ-109
2. सुमित्राकुमारी सिन्हा, अचल सुहाग, पृ-26
3. "

प्रगतिशील नारी-पात्र :-

महिला कहानीकारों की कहानियों में नारी-चरित्र सामाजिक स्तर पर रूढियों, शोषण व अन्याय के विरूद्ध संघर्ष करते हुए अपने प्रगतिशील व्यक्तित्व की छाप पाठकों के मन पर छोड़ जाते हैं । भारत में अंग्रेज़ों के आगमन के पश्चात् चतुर्दिक परिवर्तन लक्षित होने लगे और धीरे धीरे नारी में प्रगतिशीलता की भावना ने जन्म लिया । समाज की कठोर रूढ़ियाँ एवं नियमों का विरोध कर नारी ने अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व बनाने का प्रयास प्रारंभ कर दिया । चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की "गृहस्थी का सुख" की अनाम बहू, लक्ष्मी, "रेणु" कहानी की रेणु" अच्छा लड़का, अच्छी लड़की" की दया, "दीमक" की ललिता आदि प्रगतिशील नारियाँ हैं ।

न खुदा ही मिले न विसा" की राधा विश्वासघाती पति से तिरस्कृत होकर त्रस्त दु:खी नहीं होती, अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व निर्माण करती है । राधा दूसरा विवाह कर अपनी प्रगतिशीलता का परिचय देती है और पुरूष जाति को अच्छा पाठ सिखा देती है जो नारी का कोई स्वतंत्र व्यक्तित्व नहीं मानते । "अच्छा लड़का", अच्छी लड़की" की दया परिवार तथा समाज की अवहेलना कर स्वयं अहीर के लड़के से विवाह कर लेती है । "दीमक" की ललिता समाज के कठोर बंधन दहेज के कारण अपने भाई के भविष्य के सुख केलिए माता-पिता का विरोध करती है - "पर मैं कहती हुँ कि चन्दर का जीवन नष्ट करके आप मेरा ब्याह करना चाहें सो नहीं होगा । जिसको गरज हो वह खाली लड़की ले ले, नहीं तो मौज करे ।"[1] लेखिका ने ललिता में नारी की प्रगतिशील चेतना को अभिव्यक्त किया है ।

बिबिया धोबिन के द्वारा जीवन में दु:ख, अपमान तथा बदनामी मिलने पर भी किसी के आगे न झुकनेवाली, पराजित होने पर पराजय को स्वीकार करनेवाली संघर्षशील बिबिया का चित्र खींच कर नारी की प्रगति चेतना की भूमिका महादेवी ने तैयार की है । दूसरी बार जब बिबिया की शादी होती है तो उसको एक अत्यन्त जुआरी और शराबी पति उपलब्ध होता है । वह शौर्य करने में भी दक्ष है तथा नित्य डकैती संपन्न करनेवाला है । जब वह अपने जुआरी पति के उसे दाँव

---

1. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, दीमक कहानी, कथा कौमुदी, पृ-240

पर रखने की शर्त का अनुमोदन करने की बात सुनती है तब उसकी प्रतिक्रिया अपनी पराकाष्ठा तक पहुँचती है । जब बिबिया करीम मियाँ को देखती है तो भीतर से तरकारी काटने का बड़ा चाकू निकाल कर और भौहें टेढ़ी कर उसने उन्हें बता दिया कि रमई के ऐसी हरकत करने पर वह उन दोनों के पेट में यही चाकू धोंप देगी ।"[1] इस विरोध के परिणाम स्वरूप उसे पीहर लौटना पडता है । बिबिया के चरित्र द्वारा महादेवी वर्मा आजीवन विपरीत परिस्थितियों से टक्कर लेती हुई प्रगतिशील नारियों का अभूतपूर्व उदाहरण प्रस्तुत करती है ।

पुरूष शासन करते समय यह भूल जाता है कि उसके अनाचार की कोई प्रतिक्रिया भी हो सकती है - बदलते हुए सामाजिक सन्दर्भ में नारियों की मुखर चेतना चुपचाप सहते जाने की विवशता नहीं हो सकती । लेखिकाओं की कुछ कहानियों में पुरूषों के बराबर उन्हें स्थान दिया जाना एक शुभ लक्षण है जो बदलती हुई मानसिकता को सार्थक अभिव्यक्ति देता है । चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की "छोटे कमीन: बडे कमीन" में उच्च वर्गीय सुधा और निम्न वर्गीय सल्मो अपने पतियों के दुर्व्यवहार से तंग आकर ससुराल छोड देती हैं । सुधा अपने पुराने प्रेमी विपिन के साथ और सल्मो अन्य जाति के एक व्यक्ति के साथ पुन: गृहस्थी बसाती हैं ।

शिवरानी देवी प्रेमचन्द की कहानी "नर्स" की विधवा क्षमा दहेज के लालची पुरूष की उपेक्षा करके नर्स बनने को पढती है । वह सामाजिक परंपरा के प्रति विद्रोह कर स्वावलंबी बन समाज के सम्मुख एक आदर्श उपस्थित करती है । सुभद्राकुमारी चौहान का स्पष्ट मत था कि पति-वरण का अधिकार कुमारियों को मिलना चाहिए । नारी स्वतंत्रता, नारी शिक्षा संबंधी आन्दोलनों ने व्यक्तित्व के प्रति जागरूक नारी में आत्म-सम्मान, अधिकारों और आत्मनिर्भरता की भावना भरी । इसी से सुभद्राजी के नारी-पात्र भी अपने अन्दर बल संचित कर सके । "गौरी" कहानी की गौरी अपने माता-पिता द्वारा निर्वाचित वर को ठुकरा कर राष्ट्रप्रेमी सीताराम को पति रूप में वरण करती है । "प्रोफेसर मित्रा" की मृणाल स्वयं ही कान्ति से विवाह करने का निश्चय करती है । "मंगला" की मंगला यद्यपि अपनी माँ के अनुरोध से सुदर्शन से विवाह करना स्वीकार कर लेती है, फिर भी अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करने में लज्जा व संकोच का अनुभव नहीं करती ।

---

1. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ, पृ-109.

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि पुरूष अथवा समाज के अन्याय को मौन भाव से सहन करना कुछ महिला कहानीकार भारतीय नारी का आदर्श नहीं मानती, अपितु ऐसी स्थिति में उन्होंने अपनी पात्राओं को विशेष सशक्त एवं क्रान्तिकारी व्यक्तित्व से अनुप्राणित किया है। और यही कारण है कि उनके प्रमुख नारी पात्र अपने प्रगतिशील व्यक्तित्व की रक्षा करते हुए टूटने को तैयार हुई, झुकने को नहीं।

उदात्त एवं उच्च भावनाओं से प्रेरित नारी-पात्र :-

महिला कहानीकारों की ये नारी पात्र समाज द्वारा त्रस्त होने पर भी सदैव कर्तव्यरत हैं। पुरूष वर्ग द्वारा प्रताड़ित ये नारी-पात्र अपने हृदय की उदात्तता के कारण अपना मार्ग प्रशस्त करती हैं। ये सभी अपने कर्तव्य का निर्वाह करते हुए क्षण भर को भी विचलित नहीं होती। ऐसे पात्रों में कमला चौधरी की "साधना का उन्माद" की साधना, "कर्तव्य" की उषा, "पतन" की कुसुम", "त्याज्या" की सावित्री आदि सहनशील एवं आत्मविरोध रहित पात्रायें हैं जो पति केलिए बड़े से बड़ा त्याग करने केलिए प्रस्तुत रहती हैं। साधना स्वयं "अशान्ति की चक्की में पिसना चाहती है, अपने हृदय में आग सुलगाना चाहती है और खुद भी उस आग में जल जाना चाहती है, परन्तु अपने प्रियतम पर ज़रा भी आँच आने देना नहीं चाहती। "कर्तव्य" की उषा पति का जीवन बचाने में अपने जीवन का भी बलिदान कर देती है। "त्याज्या" की सावित्री पति द्वारा तिरस्कृत, अपमानित तथा निकाले जाने पर भी पति का अहित नहीं सोचती - "बहन, अपने हृदय पर हाथ रख कर देखो। तुम्हें अपने पति की जीत की इतनी इच्छा है। यदि पति की जीत से तुम्हें सम्मान गौरव और हर्ष प्राप्त होगा, तो मैं भी तो तुम्हारी भाँति स्त्री ही हूँ। भले ही रंजीदा हो कर घर से चली आयी हूँ तो क्या मैं उनकी स्त्री नहीं रही या वे मेरे पति नहीं है ? बहन, तुम तो हिन्दु स्त्री हो, क्या नहीं जानती, हमारे यहाँ विवाह-संबंध अटूट होता है, वह संबंध केवल शरीर ही से नहीं, आत्मा से है और जन्म-जन्मान्तर तक स्थिर रह सकता है।"[2] इस संपूर्ण प्रकरण में सावित्री की आदर्श पतिव्रता नारी की साकार प्रतिमा दृष्टिगत होती है।

---

1. कमला चौधरी, उन्माद, पृ-47
2. यात्रा, पृ-227

"वन्ध्या" कहानी में तारा पाँडे ने वन्ध्या रेणु के आग्रह से उसके पति और मीना का विवाह, पति तथा सास द्वारा रेणु की उपेक्षा, रेणु का मीना के शिशु की देख-भाल में लीन रहना आदि घटनाओं द्वारा रेणु के निस्वार्थ स्नेह का अंकन किया है। "मन का दीप" (उषादेवी मित्रा की कहानी) की सावित्री वेश्या रूप गर्विता होने के कारण अन्य लोगों को हेय दृष्टि से देखनेवाली है। लेकिन अकाल का भयंकर क्षुधा पीडितों का दृश्य देखकर सहसा ही इतनी उदार और करुणाभिभूत हो जाती है कि नोटों का बण्डल गरीबों को थमा देती है तथा अपने अलंकार इत्यादि भी दरिद्र जनों को दे देती है। शिवरानी देवी प्रेमचन्द की "जेल में" कहानी की गंगा खूनी पति के अपराध को स्वच्छा से अपने सिर पर ओढ कर स्वयं जेल-यातना सहती है, किन्तु पति पर आँच नहीं आने देती। महादेवी जी की पात्राएँ पुरुषों के अत्याचारों को सहकर भी उनकी मंगल कामना करती हैं। भंगिन सबिया का पति मैकू उसकी उपेक्षा कर गेंदा को ले आता है, फिर भी सबिया उसकी तथा पत्नी की निष्ठापूर्वक सेवा करती है। सलज्ज और कर्तव्यनिष्ठ सबिया का जीवन एक दीपशिखा की तरह है, जो स्वयं जलकर दूसरों केलिए प्रकाश फैलाती है। मुन्नू की माँ बूढा निठल्ले पति से बँधकर भी अपने दुर्भाग्य पर आँसु नहीं बहाती, अपितु पति और ससुर की तन-मन से सेवा करती है। धोबिन बिबि अपने पहले पति चरित्रहीन रमिया तथा दूसरे वृद्ध पति झनकू की गृहस्थी संभाल कर भी पुरुष-समाज की हृदयहीनता के कारण लाँछित होती है और अन्त में आत्महत्या कर लेती है। रधिया अभावों में भी अपने भोले पति को सांत्वना दे कर प्रसन्न रखती है। "लछमा" एक प्रबुद्ध तथा निडर स्त्री है जो अपनी ममता में सरल एवं निरीह है। वह अपने पागल पति के साथ गुज़ारा कर सकती है, परन्तु ससुराल-वालों ने एक बार तो उसे इतना मारा कि वह बेहोश हो गयी तो उसे मृत समझ कर एक खड्ड में फेंक दिया। वह खड्ड में से निकल कर किसी तरह लड़खड़ाते हुए कदमों से अपने गाँव आ गयी। गाँव आकर उस देवी ने अपने ससुरालवालों के विरोध में एक शब्द भी मुँह से नहीं निकाला। क्योंकि वह मानती है कि ऐसा करने से अपने घर की मर्यादा जाती रहती है। रामेश्वरी देवी "चकोरी" की "आँखों का कौतुक" कहानी में दाम्पत्य प्रेम के आदर्श रूप का चित्रण देखने को मिलता

है । मीना ने नेत्रहीन पति को अपने नेत्र देकर जिस आदर्श-प्रेम को प्रकट किया, उसके पति ने उसकी उपेक्षा करके उतने ही विश्वासघात का परिचय दिया । इन नारियों ने सामाजिक एवं दैनिक कष्टों के प्रति जिस अद्भुत सहनशक्ति का परिचय दिया है, उससे भारतीय नारी के गौरव का भलि-भाँति बोध हो जाता है ।

नारी के विविध पारिवारिक रूप :-

परिवार समाज की महत्वपूर्ण इकाई है । वह व्यक्ति के व्यक्तित्व और सामाजिक संबंधों का मूलाधार है । क्योंकि व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त विभिन्न रूपों में समाज से जुड़ा रहता है । इस प्रकार सामाजिक ढाँचे का प्रमुख आधार परिवार ही है । समाज में व्याप्त विभिन्न असंगतियों एवं परिवारों में गहरी जड़ें जमाये रूढ़ियों एवं प्रथाओं के परिप्रेक्ष्य में नारी संबंधों का जो चित्रण महिला कहानीकारों ने किया है, उसका विश्लेषण करना यहाँ हमारा अभीष्ट है ।

माँ-सन्तान :-

जीवन में माँ और सन्तान का संबंध सर्वाधिक मधुर और अटूट होता है । व बच्चों का लालन-पालन, खान-पान, शिक्षा-दीक्षा, वर्तमान और भविष्य के निर्माण की चिन्ता करती है । बच्चों के विवाह की चिन्ता सबसे अधिक माँ को रहती है यह चिन्ता लड़की केलिए समय से पूर्व ही हो जाती है । माँ का अपनी सन्तान से न केवल रक्त-संबंध होता है, वरन् वह उसे अतिशय स्नेह भी देती है । वह स्वयं दु:ख सहकर सन्तान को सुख पहुँचाने की सतत चेष्टा करती है ।

सत्यवती मल्लिक की "जीवन सन्ध्या" कहानी नारी की मातृत्व भावनाओं से पूर्ण है । इसमें विधवा गंगा अपने एकमात्र पुत्र मनोहर को अपने सारे प्यार और स्नेह से सिंचित कर पढा लिखाकर एक प्रोफसर बनने योग्य बना देती है । अपने पुत्र के प्रोफसर बन जाने पर वह असीम आह्लाद और उल्लास से अपनी नयी गृहस्थी बसाती है । लेकिन कभी-कभी पुत्र वधु के आने पर अपने अधिकारों से वंचित हो जाने की कल्पना मात्र से भाव विह्वल हो उठती है "तो क्या मुझे 'बच्चा की संपूर्ण चिन्ता संपूर्ण देखभाल एक नये व्यक्ति के हाथों में सौंप देना होगा ? यहाँ

तक कि उसके आने-जाने के समय गहरी उत्सुकता और अनन्य प्रतीक्षा का मेरा संपूर्ण अधिकार भी मुझसे छिन जाएगा । जिस नन्हे पौधे को वह लगातार बाइस वर्षों से बिना किसी की सहायता के सिंचती आयी है, क्या आज एकाएक किसी कोने में बैठ कर सिर्फ उसकी छाया का ही आनन्द उठाया करें ।"[1] यह चिन्ता गंगा के वात्सल्य-आपूरित माँ के हृदय का ही परिचायक है । "गोधूली" (उषादेवी मित्रा की कहानी) की विधवा शान्ता पति की मृत्यु के बाद मेहनत-मजदूरी कर अपनी पुत्री का पालन-पोषण करती है । आर्थिक विवशता के कारण अपने जीवन का एकमात्र आधार अपनी पुत्री को खो बैठने वाली स्त्री की मर्मस्पर्शी कहानी है होमवती देवी की "बिसाती" कहानी ।

हमारा समाज माँ की ममता से अपरिचित नहीं कि सन्तान केलिए हिन्दु नारी क्या नहीं कर सकती । सुभद्राकुमारी चौहान ने अपनी कहानियों में कुछ अविस्मरणीय माँ-बेटे संबंधों का चित्रण किया है । "हींगवाला" की सावित्री दंगे के कारण अपने बच्चों के अभीष्ट भय से आतंकित हो उनकी मंगल कामना केलिए सभी देवी-देवता मनाने लगती है । "सावित्री पागल सी हो गयी, उसे रह रहकर लाशों के बीच अपने बच्चे तड़पते दिखाई पडते । बच्चों की मंगल कामना केलिए सभी देवी-देवता मना डाले ।"[2] "राही", "स्वा", कहानियों की नायिकाओं में सन्तान की ममता-वात्सल्य ने उनके मातृत्व को कलंकित बना दिया है । सन्तान केलिए उन्होंने चोरी, आत्महत्या जैसे दुष्कर्म किए और परिणाम स्वरूप उन्हें जेल की यातनाएँ सहन करनी पड़ी । "राही" अपने बच्चों की भूख न देख सकने के कारण चोरी करती है और जेल जाती है । "स्वा" में बच्ची गोपा के स्पष्ट न बोल सकने के कारण माँ स्वा को अपमानित होना पडता है । पुत्री की भावी भयावह कल्पना मात्र से माँ-बेटी के साथ कुएँ में कूद पडती है । दुर्भाग्यवश बेटी तो मर गयी किन्तु माँ को आजीवन कारावास नरक भोगना पड़ा ।

तेजरानी पाठक की "बदला" कहानी में महाराणा प्रताप का वंशज वीर

---

1. सत्यवती मल्लिक, दो फूल, पृ-19
2. सुभद्रा कुमारी चौहान, सीधे सादे चित्र, पृ-54

प्रताप माँ के अपमान के बदले के सम्मुख प्रेम का त्याग कर कर्तव्य को चुनता है "माँ", क्या कहती हो ? यदि मेरे रहते तुम्हें अपने अपमान का बदला अपने आप लेना पडे, तो मेरे जीवन को धिक्कार है । मेरे होते हुए तुम्हें अपने अपमान का बदला लेने केलिए किसी और को ढूँढना नहीं पड़ेगा । तुम्हारे अपमान के आगे प्रेम क्या, मेरे प्राण भी कुछ नहीं हैं । क्षत्रियों केलिए मान से बढकर संसार में कुछ नहीं होता । माँ, एक नहीं, हज़ार विजया भी मुझे मेरे कर्तव्य से नहीं हटा सकती ।"[1] इसमें वर्णित माँ-बेटा संबंध में अन्याय के विरूद्ध लड़ने का निश्चय और दृढ संकल्प है ।

भाई-बहिन :—

एक ही माँ की सन्तान होने के कारण भाई-बहिन के मन में सहज स्नेह का भा रहता है । भारतीय परिवार में बहिन और भाई का प्रेम सात्विक प्रेम है जो वासना से कोसों दूर है । पिता के अभाव में भाई अपनी बहिन का भरण-पोषण ही नहीं करता, बल्कि इसकेलिए योग्य पति की खोज करके सुखी दाम्पत्य जीवन की मंगल कामना भी करता है ।

उषादेवी की "लाल लिफाफा" में बालिका तारा फूल बेचते समय साइकिल से टकरा कर गिर पडती है । एक युक्क मनोहर बालिका को न केवल उठाता है वरन् उससे एक माला भी खरीद लेता है । दूसरे दिन फूल बेचते समय बालिका मनोहर से कहती है कि आप भूल से एक रूपया दे गये थे, बाकी साढे पन्द्रह आने लीजिए । युवक ने एक माला खरीद कर पाँच रूपये का नोट उसे दे दिया । बालिका द्वारा अस्वीकारकिए जाने पर बोला-मुझे अपना भाई समझो । तब बालिक चुप हो गयी और उसने मनोहर से कहा कि उसे पढना नहीं आता, अत: मनोहर उसके घर चलकर उसके भाई का पत्र पढ़ दे । लेकिन बालिका के साथ घर आकर मनोहर आश्चर्यचकित रह गया जब बालिका ने एक लाल रंग का लिफाफा निकाल कर उसका एक एक अक्षर पढ डाला । मनोहर के पूछने पर बालिका की माँ ने बताया कि सचमुच उसे पढना नहीं आता, उसे इस पत्र के अक्षर ज्यों के त्यों याद है, क्योंकि वह हर किसी से इस पत्र को पढवाती रहती है । युवक विस्मयाभिभूत

---

1. तेजरानी पाठक, अंजली, पृ-27

हो जाता है । "मातृत्व" (उषादेवी मित्रा की कहानी) में गरीब मंजुरअली की एकमात्र बहिन हशमत दस वर्ष की अवस्था में विधवा होकर पितृालय लौट आती है तो अपनी बहिन का आदर के साथ स्वागत करते हुए मंजुर ने अपनी पत्नी कुलसुम से कहा - "इस अभागिनी को लड़की के समान प्यार करना । यदि इस में तुम्हारे लड़कों को थोड़ा-बहुत कष्ट भी हो तो उनकी परवाह न करना ।"[1]

भाई-बहन का प्रेम सब से पवित्र माना गया है । बहिन भाई को चाहे कितना ही सताये किन्तु अपने भाई की अनिष्ट की आशंका मात्र से ही उसके मन को विचलित बना देती है । पवित्र-प्रेम सूत्र में बँधे भाई-बहन का चित्र"भाई-बहन" (सत्यवती मल्लिक की कहानी) में मिलता है । निर्मला का छोटा भाई कमल जुलूस देखने चला जाता है । निरंतर लड़ाई-झगडे के बावजूद भी कमल के खो जाने पर निर्मला अत्यन्त व्याकुल हो उठती है । उसकी आँखों से निरन्तर आँसु बहता रहता है । अचानक भाई के मिल जाने पर वह भाव विह्वल हो उसे सीने से लगा लेती है, कमल को दृढ पाश में बँधे निर्मला दुगुने वेग से रो रही है । उसके कोमल गुलाबी गाल मोटे-मोटे आँसुओं से भीगे जा रहे हैं, और वह बार बार कमल का मुख चूम रही है - "पागले तु कहाँ चला गया था ? गधे ! क्यों चला गया था।"[2] कमला त्रिवेणी शंकर ने "भाई", "रक्षाबन्धन", तथा "दृष्टि-भ्रम" शीर्षक कहानियों में नारी के भगिनी रूप की पावनता के मार्मिक चित्र प्रस्तुत किए हैं ।

सुभद्राकुमारी चौहान की कहानियों में भी भाई-बहन के संबंधों का चित्रण किया गया है । "पवित्र-ईर्ष्या" के प्रारंभ में ही भगिनी के निश्चल प्रेम, अपरिमित श्रद्धा और परम विश्वास की मधुर छवि मिलती है । विमला भाई के अभाव में अपने बाल सखा अखिलेश्वर के हाथों में राखी बाँध कर उसे पवित्र स्नेह के बन्धन से बाँध लेती है । "मछुए की बेटी" में भाई-बहन का अपूर्व सम्मिलन दिखाया गया । "दृष्टिकोण" की निर्मला जब अपने घर गर्भवती बाल-विधवा विद्दन को आश्रय नहीं दे पाती तब उसे सहायता केलिए अपने भाई के पास भेज देती है, उसे पूर्ण विश्वास है कि उसका भाई उसकी बात कभी नहीं टालता । "अमराई", "गुलाबसिंह"

---

1. उषादेवी मित्रा, हंस,-मातृत्व कहानी, पृ-18
2. सत्यवती मल्लिक, दो फूल, पृ-38

नामक कहानियों में तेजस्विनी वीर बहिनों का वर्णन है जिनसे भारत माता के बंधनों को काटने केलिए भाइयों ने आत्मोसर्ग की प्रेरणा पायी । "अमराई" में बहिन भाई को राखी बाँधती हुई कहती है, "भाई इस राखी की लाज रखना, लडाई के मैदानों में कभी पीठ न दिखाना ।"[1] कमलादेवी चौधरी की "हार" की नायिका रमला अपने दार्शनिक प्रवृत्तिवाले सहृदय भाई से अधिक स्नेह करती है । भाई को अपने विवाह केलिए चिन्तित देख करवह बिना कुछ सोचे-समझे रंगपुर के विलासी ज़मीन्दार को पति रूप में स्वीकार कर लेती है । विवाह के उपरान्त पति की विलासी प्रवृत्ति तथा पति द्वारा उसके भाई की अवहेलना उसे पति से विमुख कर पुन: भाई के घर ले आती है और भाई की गृहस्थी को व्यवस्थित करने का प्रयत्न करती है । निषकर्षत: कहा जा सकता है कि महिला कहानीकारों की कहानियों में भाई-बहिन संबंध सात्विक प्रेम पर आधृत है ।

<u>पति-पत्नी</u> :-

नारी और पुरूष दोनों एक दूसरे के पूरक हैं । नारी के बिना पुरूष का कोई अस्तित्व नहीं और पुरूष के अभाव में नारी का कोई मूल्य नहीं । दोनों का संबंध अनादि, अखण्ड और अभिन्न है । "स्त्री और पुरूष मिलकर जीवन की एक महत्वपूर्ण इकाई बनते हैं । "दाम्पत्य" शब्द इसकी पुष्टि करता है"।[2] अत: पति-पत्नी संबंध ही पारिवारिक जीवन का मूलाधार है । प्रताप नारायण श्रीवास्तव द्वारा लिखित "विदा" में चपला कहती है - "स्त्री पुरूष दोनों एक होकर रहें, दोनों में मतभेद न होने पावे । स्त्री को यह गर्व न हो कि मैं स्वामी से बड़ी हूँ और न स्वामी को अभिमान हो कि ईश्वर ने सब वृद्धि मेरे ही हिस्से में रखी है । स्त्री घर की मालकिन है और पुरूष बाहर का । लेकिन दोनों में मतैक्य हो । दोनों उस पवित्र-प्रेम-सूत्र में बँधे हो, जहाँ न राज है, न अभिमान, न द्वेष है और न कलह । असीम शान्ति है, अनन्त प्रेम है ।"[3] अत: परिवार को बनाने या बिगाड़नेमें पति-पत्नी के संबंध विशेष रूप से महत्व रखते हैं ।

- -

1. सुभद्राकुमारी चौहान, बिखरे मोती, पृ-94
2. आशारानी व्होरा, नारी शोषण:आईने और आयाम, पृ-22।
3. प्रतापनारायण श्रीवास्तव, विदा, पृ-183

पति को परमेश्वर माननेवाली नारी अपनी संपूर्ण सेवा, त्याग, सहानुभूति पति पर ही केन्द्रित रखती है । "रिक्ता"[1] की कमला तपेदिक की रोगिणी है, वह सदैव शंकित रहती है कि कहीं मेरा रोग मेरे पति को भी न लग जाये । अपने अटूट विश्वास, निष्ठा और प्रेम के फलस्वरूप वह जीवन के अन्तिम क्षण तक अपनी संपूर्ण इच्छाओं-वासनाओं का दमन कर अपने पति से अपने को दूर ही रखती है । "सती"[2] की पति-भक्ति तो ऐसी है कि उसे सती होने से समाज रोक लेता है, लेकिन कुछ समय बाद स्वयं ही मर जाती है । पार्वती पति की मृत्यु के समय सती होने से पुलिस द्वारा रोक ली जाती है, लेकिन आठ दस दिन बाद वह एक दिन सती के चबूतरे पर अलंकृत अवस्था में मृत पायी गयी । अनेक सुधारवादी आन्दोलनों के कारण उस युग में सती प्रथा का घोर विरोध हो रहा था तथा विशेष तौर पर इस अमानुषिक प्रथा को रोकने केलिए कदम उठाये गये थे, लेकिन अन्त में पार्वती का सती के चबूतरे पर बैठे हुए मृत्यु को प्राप्त करना उसकी अपनी वैयक्तिक निष्ठा का परिचायक है । "नग्न सत्य"[3] में निहार पतिव्रता व स्वामिभक्त रूप में चित्रित की गयी है । पति की मृत्यु का समाचार पाकर भी माँग भरती थी । वास्तव में उसका पति मरा नहीं था, पुलिस के भय के कारण अज्ञातवास कर रहा था । निहार के पास रात को आनेवाला पुरूष रमेश उसका पति ही था । एक रात जब वह पकड़ा गया तो अदालत में निहार उसे अपना पति अस्वीकार करके कहती है कि वह उसका बचपन का प्रेमी है, रमेश नहीं है । इस कहानी में यद्यपि अदालत में निहार झूठ बोलती है, लेकिन इस झूठ बोलने में ही उसका पति-प्रेम निहित है । यदि वह सच बोलती और अदालत से भयभीत हो जाती तो रमेश को निश्चय ही जेल होती । अत: पति के प्रति अनन्य प्रेम के कारण वह लोक-निन्दा की भी उपेक्षा करती है । सब कुछ सहती है ।

"कर्तव्य"[4] पति-पत्नी के आदर्श प्रेम और एक दूसरे के प्रति कर्तव्य भावना की

---

1. उषादेवी मित्रा, रागिनी, पृ-48
2. रात की रानी, पृ-26
3. पृ-38
4. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-36

कहानी है । मृत्यु सामने होने पर पत्नी को जिसे वह जी जान से चाहता है, छोड़ कर अपना जीवन बचाना चाहता है, दूसरी ओर पत्नी उषा मृत्यु की अवहेलना करके पति को बचाना चाहती है । पति रोगी है, उठने में असमर्थ है, भूकम्प के कारण सारा घर झूल रहा है, भयभीत पत्नी बच्चे को बाहर छोडकर रोगी पति को अन्दर निकालने आती है, त्यों ही क्षुधित भूमि दोनों को सदा केलिए अपने गर्भ में छिपा लेती है । नारी स्वयं पति के प्रति उपेक्षा दिखा सकती है किंतु यह उसे सह्य नहीं है कि उसके रहते उसके पति पर किसी अन्य का अधिकार हो । "वीणा"[1] कहानी की वीणा के हृदय का सोया नारीत्व उस समय जागता है जब रहस्यमयी भाभी आकर अपना पति शकुन का चार्ज ले लेती है । यह देखकर संगमर्मर की प्रतिमा आलोडित हो उठी । इस एक घटना ने एकबारगी वीणा के हृदय में संपूर्ण स्त्रीत्व जागृत कर दिया । "कब्रिस्तान" (सत्यवती मल्लिक की कहानी) पति-प्रेम संबंधी मार्मिक कहानी है । इसकी नायिका स्टैला भारतीय नारी न होते हुए भी सती-साध्वी आदर्श पत्नी है । युद्ध में गये पति का कुछ पता न मिलने पर अभागी स्टैला को विवश हो यह स्वीकार करना पडा कि उसका पति वीर गति को प्राप्त हुआ है । पति-प्रेम से उन्मत्त स्टैला कब्रिस्तान में एक अज्ञातनामा समाधि को हीअपने पति की समाधि मान उस पर फूल चढाती और दिन भर उस समाधि के पास रहती । विरहिणी स्टैला पाँच वर्ष तक सजल नयनों से समाधि पर फूल अर्पित करती रही । अन्त में उसका अपने पति देव से साक्षात्कार होता है जो वास्तव में मरा नहीं था बल्कि महायुद्ध में एक भयंकर आघात से वालर्स की स्मरण-शक्ति विनष्ट हो गयी थी, ऑपरेशन के पश्चात् उसकी स्मरण शक्ति पुन: लोट आयी थी । स्टैला फिर उसी तरह अपने पति के साथ नित्य पति देव के बन्धु की समाधि पर फूल चढाने जाती है ।

पत्नी-रूप में कमला त्रिवेणी शंकर की पात्राएँ प्राय: भारतीय मर्यादा से अनुप्राणित, पति-परायण, सेवामयी एवं त्यागशीला रही है । "मूक सेवा" की मीना, "एक रात" की ऊर्मिला एवं "तृप्ति" की मीना पति के विचारों को कार्यान्वित करती हैं और उनकी कल्पनाओं को सत्य का रूप देती हैं । इसी

---

1. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-26

प्रकार "मन का मोह" की उमा, "घर की लाज" की ललिता और "कल्पना" की कल्पना आदि पात्राएँ अपने उर की पीडा को अन्तर में ही छिपा कर पति को प्रसन्न रखने केलिए अपने कर्तव्य का पालन करती है । महादेवी वर्मा के रेखाचित्र वे बिट्टो, बिबिया धोबिन,चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की "सौत" कहानी की मोतिया, शिवरानी प्रेमचन्द की कहानी "साहस" की रामप्यारी आदि पात्र अनमेल विवा की शिकार हैं । वे अनमेल विवाहजन्य कटुताओं को दांपत्य जीवन के प्रारंभ से ही झेलती हुई, चाहे-अनचाहे जीवन की गाडी को खींच रही हैं । संक्षेप में कहें तो महिला कहानीकारों की अधिकांश कहानियों में भारतीय पतिव्रता नारी का भव्य रूप ही मिलता है । पति को परमेश्वर माननेवाली नारी अपनी संपूर्ण सेवा, त्या सहानुभूति पति पर ही केन्द्रित रखती है ।

<u>सास-बहू</u> :—

नारी के पारिवारिक संबंधों में कदाचित् सास-बहू का संबंध अधिक महत्त्वपूर्ण है । संयुक्त परिवार की सुख-शान्ति इसी संबंध पर टिकी होती है । गाँवों में ऐसे परिवार विरले ही हैं, जहाँ किसी न किसी कारण से इन संबंधों में तनाव न हो । गृह-क्लेश की आदि-जडें सास-बहू के कलह में ही निहित है । बहू के कर्तव्य के प्रति अतिरिक्त उदासीनता और अधिकार के प्रति अत्यधिक जागरूकता भी सास-बहू के संबंधों को तनावपूर्ण बनाने में महत्त्वपूर्ण रही है ।

महिला कहानीकारों की कहानियों में सास-बहू के संबंधों का चित्रण दो रूप में हुआ है - कटु एवं तनावपूर्ण संबंध एवं सहज, आत्मीय और मधुर संबंध ।

कटु एवं तनावपूर्ण संबंधों में चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की "दो रोटियाँ" कहानी की उमा, "जीजी" की सुरेखा, "गिरती दीवारें" की विमला, महादेवी वर्मा के "अतीत के चलचित्र" के आठवाँ रेखाचित्र के वेश्या-पुत्री, सुभद्राकुमारी चौहान की "किस्मत" की किशोरी आदि पात्र और उनके सास के सबंधों को ले सकते हैं ।

"दो रोटियाँ" कहानी में सास-बहू का वार्तालाप कितना कटु एवं तनावपूर्ण है -

"बहू, अरी, ओ बहू ।"

"जी मैं गुंसलखाने में हुँ । जल्दी जल्दी भीगी देह को बिना पोंछे ही धोती लपेटते हुए गुसलखाने के भीतर से उमा ने उत्तर दिया ।

"बेगम गुसल कर रही है ।" श्यामा ने माँ की पुकार के उत्तर में कहा -

"हुकुम दे गयी है कि मेरे आने से पहले लडके को नहला-धुलाकर काजल-तेल लगाकर, लैस कर दो ।"

"ओहो ।" सास ने चमककर कहा, "कोई उसके बाप का नौकर बैठा है जो नहला धुला देगा । अरी बहु, क्या तेरा नहाना अभी तक नहीं निपटा ?"

"आयी अम्माजी ।" बिना जम्पर पहने धोती से देह छिपाती, गुसलखाने से निकलकर उमा रसोईघर की ओर लपकी । आलू चढा गयी थी, उन्हें देखना जरूरी था ।"[1]

उमा मशीन के समान सास-ननंद की आज्ञा पर नाचती है, फिर भी उनको प्रसन्न रखना असंभव है । गृहस्थी के अनेकानेक उत्तरदायित्वों के साथ साल या डेढ-डेढ साल के व्यवधान में सन्तान उत्पन्न करने तथा गरीबी की दशा में उचित भोजन, दूध आदि न पा सकने के कारण उमा का शारीरिक स्वास्थ्य गिर जाता है । "गिरती दीवारें" में विमला की सास वधू को दूसरों की सिलाई करके पैसे कमाते देखकर अपने कुल की मान-हानि समझती है । कमला त्रिवेणी शंकर की कहानी "सुहाग की डिबिया" में मधुकर का कोई पता न मिलने के कारण वीणा को विधवा समझकर उसकी सास उसके साथ अत्यधिक दुर्व्यवहार करती है, किन्तु पुत्र के लौट आने पर उसी पुत्र-वधु पर सुख एवं आशीषों की वर्षा करने लगती है । "किस्मत"[2] की नायिका किशोरी पति की मृत्यु के उपरान्त भूखे रहकर तथा दिन भर काम करके भी सास की कटूक्तियों से बच नहीं पाती । सुभद्राकुमारी चौहान की अन्य कहानियाँ"दृष्टकोण", "ग्रामीणा", "कदम्ब के फूल" तथा "मझली रानी" में सास की कटूक्तियाँ अथवा शासन प्रवृत्ति का सजीव वर्णन हुआ है । हेमवती देवी की कहानी "पीतल की चूडियाँ " में जीवन की विधवा माँ अपने बेटे के यहाँ बेटे और

---

1. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, आदमखोर, पृ-153
2. सुभद्राकुमारी चौहान, बिखरे मोती, पृ-81.

बहू के अत्याचार एवं अपमान सहकर दासी रूप में रहती है । समाज द्वारा प्रताडित विधवा माँ जीवन से जूझती हुई अपने पुत्र जीवन के विवाह की कल्पना कर आनंदित होती हुई दिखाई देती है । लेकिन उसकी बहू सास के कष्टप्रद अनुभवों में वृद्धि ही करती है । वह अपने पति द्वारा प्रेरित है, अत: सदैव सास की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप करने के अवसर ढूँढती रहती है । सास की रूग्णावस्था में बहू के मन में सास के प्रति उपेक्षा-भाव आ जाता है । यदि पुत्र अपनी माँ की उपेक्षा करने लगे, तो बहू को सास के प्रति दुर्व्यवहार करने की और भी स्वतंत्रता मिल जाती है । जीवन की माँ डाक्टर से प्रार्थना करती हुई कहती है, "बेटा, मेरी आँखें अच्छी मत करो और फोड दो या जहर देकर मार ही दो, तुम्हारा बडा पुन्न होगा ।"[1]

सहज, आत्मीय और मधुर सास-बहू संबंध का उदाहरण है होमवती देवी की "स्वाभिमानी" कहानी । इसमें ऐसी स्नेहमयी सास का चित्रण मिलता है जो अपनी विधवा बहू को अपने पुत्र की मृत्यु का कारण समझ कोसती नहीं, बल्कि जिसके मन में अपनी विधवा बहू के प्रति प्यार, दुलार, ममता की कमी नहीं ।

<u>भाभी-देवर</u> :-

भाभी-देवर के पारिवारिक संबंधों में समय के बदलाव के अनुरूप परिवर्तन होता रहा है । समाज में कभी देवर को पति-तुल्य अधिकार प्राप्त थे, कभी वे संबंध सहज मित्र के रूप में देखे गये । लेकिन कालान्तर में इन संबंधों में उच्चता का विकास हुआ जिसका चरम आदर्श सीता-लक्ष्मण संबंधों को स्वीकार किया गया । आधुनिक समाज में ये संबंध कभी मैत्री-भाव में परिलक्षित होते हैं, तो कभी देवर के प्रति भाभी का स्नेह-वात्सल्य छलकते भी देखा जा सकता है ।

कमला चौधरी की "करूणा" कहानी में वर्णित देवर-भाभी संबंध हिन्दी कहानी साहित्य की अमर निधि है । माता और भाई की मृत्यु के बाद ही देवर नवकुमार ऐ·सी·एस· परीक्षा उत्तीर्ण होकर विलायत से आता है । जेठानीजी के निर्देशानुसार देवर के आते समय कुलक्षणी विधवा भाभी अपने को छिपाकर खडी रहती है । लेकिन

1· होमवती देवी, धरोहर, पृ-15

भाभी को देखने की उत्कट अभिलाषा से सब के रोकने पर भी नवकुमार अपनी प्रिय भाभी करूणा का चरण-स्पर्श करता है । करूणा का हृदय जब देवर के ममत्व भरे शब्दों को सुन कर उमड पडता है - "भाभी, इसलिए तो मैं विवाह नहीं करना चाहता । तुम्हारे प्रति मैं ने जो अपना कर्त्तव्य निश्चय कर लिया है, संभव है विवाह के बाद में उससे डिग जाऊँ । भैया के रहते हुए तुम केवल भाभी ही थीं, किन्तु अब तो तुम मेरी माता के स्थान पर हो ।"[1] बाद में भाभी के वचन पर ही नवकिशोर, विवाह करने को भी तैयार हो जाता है । विवाह के बाद भाभी को अपने यहाँ घर का सारा अधिकार सौंप कर रख देता है । यह देवर के विकासमान आत्मीय एवं घनिष्ठ संबंध का प्रतीक है । "गीता"[2] में देवर-भाभी का प्रेम कलुषित हो गया है । धनाढ्य घराने की बेटी गीता बाल्यावस्था में ही विधवा ह गयी थी । जब वह युवती हुई तब यौवन संबंधी इच्छाएँ उसके मन में उभर कर आ लगती हैं । वह अपने को काबू में न रख सकती है । इसलिए लखनऊ में पढनेवाले अपने देवर विनोद को पत्र लिखकर उसी रस में लीन होकर वह शान्ति, सन्तोष और तृप्ति पाती है । जब विनोद शिक्षा समाप्त कर घर आता है तब अपनी भाभी की मीठी वाणी, हँसी-खुशी और रूप-सौन्दर्य की ओर इतना आकृष्ट हो जाता है कि उससे विवाह करने का वचन भी देता है । गीता विनोद पर विश्वा रखकर प्रेम की सरिता में डूब जाती है । बडे घर का रहस्य खुल जाने पर सास गीता को कुलटा, कुल-कलंकिनी आदि कहकर घर से निकाल देती है । देवर अपने को निष्कलंक ठहराने के प्रयत्न में विलायत जाता है ।

परिवार में भाभी-देवर का मज़ाक प्रसिद्ध है । चन्द्रवती ऋषभसेन जैन की कहानी "है न यही बात" में देवर-भाभी का पारस्परिक हास्य-विनोदपूर्ण संवाद देखने को मिलता है ।

"तुम दिल्ली की सैर करते रहे मियाँ रहमत और तुम्हारी शबनम की शादी भी हो गयी । वो बाजे बजे और दावतें उडीं लुफ्फ आ गया ।"

अपनी दूकान का सामान खरीद कर दस दिन बाद जब देहली से रहमत

---

1. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-25
2. " -110

आया तो चुटकियाँ लेते हुए उसकी भावज ने कहा । रहमत केलिए यह एक मज़ाक था, वैसे ही उसने उत्तर दिया - "और बेचारी शबनम की शादी देखकर तुम जैसी बुढिया को भी शक हुआ । क्यों भाभी, है न यही बात ? "

मुझे क्यों शक होगा । मेरे तो छः फीट का गुड्डा बालो में खिज़ाब लगाये घूमता है । शक होगा भैया तुम्हें जो सिर पर मौर बाँधने को पागल हुए फिरते थे, पर शबनम ने जिसकी बात भी न पूछी ।"

"जब मेरे सिर पर मोड बंधे और शबनम दुल्हन बनी शर्माती डाले से उतरे, तब तुम छींक देना और अपने गुड्डे को भी सुँधनी सुंधा देना ।"[1]

भाभी-देवर का यह संवाद इस निष्कर्ष पर पहुँचाता है कि उसके भाभी से संबंध हास-परिहास एवं मनोविनोद की पवित्र एवं निश्चल भावना से अनुप्राणित है । भाभी का पवित्र प्रेम और देवर का निश्चल हृदय "कदम्ब के फूल"[2] में देखने को मिलता है । होमवती देवी की कहानी "नारीत्व" में भाभी और देवर त्रिभुवन का शुद्ध पवित्र प्रेम है । लेखिका की "प्रायश्चित" में देवर प्रफुल्ल और भाभी गौरा का प्रेम पति-पत्नी के मध्य ईर्ष्या का कारण बनता है । निष्कर्षतः महिला कहानीकारों की कहानियों में चित्रित भाभी-देवर संबंध विभिन्न सन्दर्भों में जीवंतता लिए हुए हैं ।

<u>सौतेली माँ-सौतेली सन्तान</u> :-

परिवार में जब सौतेली माँ का पदार्पण होता है तो अनेक पारिवारिक समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं । सौतेले बच्चों के प्रति सौतेली माँ के व्यवहार में एक प्रकार की कटुता पायी जाती है जिसके कारण पारिवारिक शान्ति भंग हो जाती है । सौतेली माँ के कटु व्यवहार को महिला कहानीकारों ने बहुत ही सतही ढंग से देखा है ।

तेजरानी पाठक ने अपनी कहानियों में विमाता की समस्या को नये रूप से

---

1. चन्द्रवती ऋषभचरण जैन, नींव की ईंट, पृ-80
2. सुभद्राकुमारी चौहान, बिखरे मोती, पृ-72

लिया है । विमाता सुनीता के माध्यम से उन्होंने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि केवल विमाता होने के नाते क्रूर, नृशंस नहीं हो जाती है, बच्चे के प्रति (चाहे वह सौतेला ही क्यों न हो) सहज ममता एवं वात्सल्य उसके मन में पाया जाता है, परन्तु विमाता के प्रति परिवार एवं समाज की शंकालू दृष्टि ही बच्चे और माँ के मन में भेदभाव की दीवार खडी करती है । सुनीता को सौतेला पुत्र प्राण से भी अधिक प्रिय है, परन्तु दादी और बुआ को यह कहाँ सहन होगा कि प्रताप विमाता सुनीता के पास रहे । प्रताप को सुनीता के पास देख दादी क्रोध से लाल-लाल आँखें निकाल प्रताप से कहती है "क्या कर रहे हो" प्रताप के हाथ का सेब का टुकडा हाथ में ही रह गया था । उसे छीन कर उन्होंने फेंक दिया और उसका हाथ पकड कर बोली "क्यों राक्षसी, अब क्या जाल रचनेवाली है जो इस तरह दरवाजे बन्द कर प्रताप को सेब खिलाती है, तेरी आँखों में यह बच्चा क्यों इतना खटकता है ?"[1] इस में लेखिका ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि समाज वास्तविकता से आँख मूँद कर चलता है । विमाता होने के नाते ही प्रताप को मातृप्रेम से वंचित कर दिया जाता है । एक ओर सुनीता के उत्तम आचरण और व्यवहार को शंका की दृष्टि से देखती है और दूसरी ओर उस बच्चे को अपनी सौतेली माँ के विरूद्ध नित्य-प्रति उलटी, सीधी बातें सिखलाती रहती है । इस प्रकार, साधारण परिवार के व्यक्ति यह मानकर चलते हैं कि सौतेली माँ का व्यवहार सौत के बच्चों के प्रति अच्छा हो ही नहीं सकता । तेजरानी ने समाज की इस मनोवृत्ति पर तीखा व्यंग्य किया है ।

मातृहीन बच्चों के प्रति विमाताओं के निर्दय व्यवहारों को दिखाना ही महादेवी वर्मा के "अतीत के चलचित्र" के तीसरे रेखाचित्र का उद्देश्य है । नौ बरस की बिन्दा की सौतेली माँ जो प्यार नहीं करती अपितु मारती है । जहाँ दूसरे बच्चों को धूप निकल आने पर जगाया जाता है, गर्म पानी से हाथ-मुँह धुलाया जाता है, फिर सुन्दर उनी कपडों से संवारा जाता है, वहाँ बिन्दा को अपनी माँ से हमेशा ये शब्द सुनने पडते हैं - "उठती है या आऊँ, बैल के से दीदे क्या निकाल रही है; मोहन का दूध कब गर्म होगा, अभागी मरती भी नहीं ।"[2]

---

1. तेजरानी पाठक, अंजली, पृ-45
2. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ-56.

आदि । उस बिंदा को मैली-कुचैली धोती पहन कर सारा दिन काम में जुटना पडता है । झाडू देना, आग जलाना, कभी आँगन के नल से कलसी में पानी लाना, कभी नयी अम्मा को दूध का कटोरा देना आदि सब काम उस अकेली को ही करने पडते हैं । बिन्दा की विमाता बिन्दा को दण्ड देने केलिए कभी उसे आँगन की जलती धरती पर खडा कर देती, कभी चौके के खम्भे से दिन भर बाँधे रखती और कभी सूखी प्यासी हालत में घंटों अपने आपको और खटोले पर सोते हुए मोहन को पंखा झलने का आदेश देती है । "उसे अपराध का ही नहीं अपराध के अभाव का भी दण्ड सहन करना पडता था ।"[1] प्रस्तुत रेखाचित्र की बिन्दा सौतेली माँ के भयंकर अत्याचारों का जीता-जागता प्रमाण है । "स्मृति की रेखाएँ" (महादेवी का रेखाचित्र) की भक्तिन को विमाता की छाया में पलना पडता है । विमाता के दुर्व्यवहार का परिणाम यह हुआ कि उसे अपने पिता के मरणान्तक रोग का समाचार भी नहीं मिलता है । अपने पिता का अन्तिम दर्शन भी वह नहीं कर पाती है । "स्मृति की रेखाएँ" के दूसरे रेखाचित्र के चीनी फेरीवाला और उसके बहिन को विमात से कठोर अत्याचार सहना पडता है । विमाता को बहन के प्रति जो अवज्ञा है, उसका बदला भाई को कष्ट देकर चुकाती है । इसका करूण चित्र महादेवी इस प्रकार खींचती है - "अनेक बार उसने ठिठुरती हुई बहिन की कम्पित अँगुलियों में अपना हाथ रख, उसके मलिन वस्त्रों में अपने आँसुओं से धुल मुख छिपा और उसकी छोटी सी गोद में सिमट कर भूख भुलाई थी ।"[2] उसकी बहिन को विमाता द्वारा शरीर व्यापार केलिए भी विवश किया जाता है और एक दिन षड्यंत्रपूर्वक उसकी बहन का अपहरण भी कर लिया जाता है । बहन की खोज में वह चीनी बालक घर छोडकर चला जाता है ।

शिवरानी देवी की "बूढी काकी" की मन्नो जब पाँच वर्ष की अबोध बालिका थी तब ही माँ का स्वर्गवास हो जाता है । पुत्री की पालन-पोषण-समस्या को आधार बना मुंशी गंगाप्रसाद दूसरी स्त्री महाराणी से विवाह कर लेता है ।"विमाता से ममता, सहानुभूति, दुलार की तो कल्पना करना भी व्यर्थ है, बेचारी मन्नो

---

1. महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ-56
2. " स्मृति की रेखाएँ, पृ-24

को विमाता ने पिता और बूढी काकी के प्रेम से भी वंचित कर दिया । बेचारी मन्नो को तो घर में जाते डर मालूम होता था कि नयी माँ डाँट न बैठे ।"[1] कमला चौधरी की "मातृहीना" की सुधा एक मातृहीना बालिका है । उसके पिता सुधा को भविष्य सुखमय बनाने के उद्देश्य से दूसरा विवाह कर लेते हैं, परन्तु विमाता को भला सुधा में किस प्रकार रूचि हो सकती थी । इसलिए सुधा को माँ का स्नेह, ममता, दुलार तो नहीं मिल सका, पिता के प्यार से भी वंचित होना पडा ।

नारी और संयुक्त परिवार :-

संयुक्त परिवार प्राचीन काल से ही हिन्दु समाज व्यवस्था का आधार स्तंभ रहा है । संयुक्त परिवार में नारी की स्थिति और भी दयनीय हो जाती थी । उसे केवल पति की ही आज्ञा का पालन नहीं करना पडता है अपितु सब ही बातों को सहन करना पडता है । चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की "दो रोटियाँ" में संयुक्त परिवार में बहू की स्थिति देखने को मिलती है । उमा मशीन के समन सास ननंद की आज्ञा पर नाचती है, फिर भी उनको प्रसन्न रखना असंभव है । शिवरानी देवी ने "पछतावा" कहानी में संयुक्त परिवार में भारतीय आदर्श पुत्र-वधु की दयनीय स्थिति का चित्र प्रस्तुत किया है । सरूपा अपनी रोगी ससुर की रात-दिन सेवा टहल करती है, परन्तु उसे उसके बदले में मार, गाली ही सुनने को मिलती है - एक ठोकर सरूपा को लगाते हुए बोले - "डाइन, भाग यहाँ से, क्या मेरे मरने पर ही तुझे खुशी होगी।

परिवार समाज की सब से आवश्यक एवं प्राथमिक इकाई है । व्यक्ति परिवार के संरक्षण में ही सामाजिक प्राणी बनता है । संयुक्त परिवारों में रात-दिन होनेवाले द्वेष, संघर्ष तथा गृह-कलह, मध्य-वर्गीय परिवार में बच्चों की देखभाल आदि भारतीय परिवारों की प्रमुख समस्याएँ हैं । प्राचीन काल में संयुक्त परिवार का बडा महत्व होता था। आज के युग में जब कि प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तित्व के विकास की ओर बढना चाहता है, संयुक्त परिवार में एक घुटन का अनुभव करता है । आज के युग में संयुक्त परिवार व्यवस्था जर्जर हो चुकी है । आपकी कहानियों "गृहलक्ष्मी", "शीला का पति", "कुचला मातृत्व" में संयुक्त परिवार

---

1. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, नारी हृदय, पृ-30
2. पछतावा कहानी, चाँद,जुलाई 1940, पृ-107

प्रणाली का जर्जर स्वरूप ही देखने को मिलता है । संयुक्त परिवारों में द्वेष, संघर्ष तथा गृह-कलह का वातावरण रहता है । "शीला का पति" की शीला, "कुपला मातृत्व" की जमुना की मृत्यु केलिए परिवार के व्यक्ति ही उत्तरदायी है । लेखिका के मत में संयुक्त परिवार व्यवस्था जर्जर हो चुकी है, उस का अस्तित्व मिटना ही अच्छा है । सम्मिलित परिवार के विघटन के कारणों का विश्लेषण करते हुए लेखिका ने लिखा है; - "इस संयुक्त परिवार की योजना के नीचे ही क्या ए व्यक्ति तिल-तिल कर नहीं मिट रहा है ? कितना पहाड सा असन्तोष, कितनी गंभीर अपरिवर्तनशीलता और औचित्य दबा पडा है, हमारे बाह्य रूप से सुखी, सन्तुष्ट और सभ्य दीखनेवाले गृहस्थ परिवारों में । हरेक अपना अपना दायरा बनाये हुए भयंकर खेल में दाँव लगा दे रहा है । कौटुम्बिक प्रथा का प्रपंच खडाकर प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की हत्या करने केलिए मजबूर है । अपने व्यक्तित्व का विकास अस्तकर सम्मिलित परिवार का भार लादे हुए जीवन की गाडी अवरुद्ध दिशाओं की ओर घसीट ले चलने को विवश है । अपनी महत्ता का मिथ्या प्रदर्शन, अपनी श्रेणी के मानव-अधिकारों की झूठी विडम्बना स्वतंत्र व्यक्तित्व की आहुति देकर भी कायम रखना कितना बडा ढोंग है । इस बोसीदा किले की रक्षा करना अब असंभव है । इस विशाल अट्टालिका की नींव खोखली हो चुकी - वह गिरेगी और शीघ्र ही गिरेगी - आर्थिक ईटों में लेना लग गया है । हमें अब नई इमारत का निर्माण करना है जिसमें स्वतंत्र व्यक्ति पल सके, मानवता का स्वस्थ विकास साँस ले सके । आर्थिक व्यवस्था पर इन बलिदानों की प्रथा हमें नष्ट करनी ही होगी ।"

नारी की वैवाहिक जीवन समस्याएँ :-

हिन्दी कथा साहित्य में प्रेमचन्द युग तक आते-आते नारी जीवन से संबंधित समस्याएँ अपनी पूर्णता के साथ चित्रित होना प्रारंभ हो गयी थी । स्वयं प्रेमचन्द ने नारी-जीवन की समस्याओं को पूर्ण सहानुभूति, गंभीरता और सूक्ष्मता से पकडा तथा अपने साहित्य में कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की । वे पहले कथाकार हैं जिन्होंने नारी-व्यक्तित्व एवं जीवन को पूर्ण संवेदना के साथ वाणी प्रदान की है ।

इस काल के कथाकारों का रुझान मध्यवर्गीय नारी की समस्याओं के प्रति ही विशेष रहा । वैसे निम्न और उच्च वर्ग की नारी पर भी इनकी दृष्टि गयी है । इस युग के कथा-साहित्य में नारी-जीवन की विभिन्न समस्याओं के निराकरण की आवश्यकता को सशक्त रूप से रेखांकित किया गया है । इसी समय कई महिला कथा लेखिकाएँ भी उभरकर आयीं जिन्होंने सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, पौराणिक समस्याओं से जुटकर छिटपुट कहानियाँ लिखीं । फिर भी तत्कालीन विषम माहौल में इन लेखिकाओं की दृष्टि मुख्य रूप से अशिक्षा, पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह, आर्थिक-परतंत्रता, विधवा-विवाह-निषेध जैसी समस्याओं पर अधिक ही टिकी । महिला कहानीकारों ने इन कुरीतियों पर तीखे प्रहार कर कतिपय यथार्थ और युगानुरूप सार्थक समाधान प्रस्तुत किये हैं । सर्वप्रथम यहाँ उन सभी समस्याओं का संक्षेप में विवेचन प्रस्तुत करना हमारा अभिप्रेत है ।

अनमेल विवाह :-

रूढियों, अन्धविश्वासों और अशिक्षा से ग्रस्त समाज में बाल-विवाह और दहेज-कुप्रथा अनमेल विवाहों के मूल में सक्रिय रहे हैं । इस प्रकार का विवाह नारी के प्रति अमानवीय व्यवहार और शोषण के चिन्तन का परिणाम है । पुरुष सत्तात्मक भारतीय समाज शाताब्दियों से परंपरा की श्रृंखलाओं में आबद्ध नारी को अनमेल विवाह की भट्टी में झोंकता रहा है । "हिन्दु समाज में जन्म होने के अभिशाप की मुक्ति है विवाह ।"[1] यही भावना उस समय के समाज में काम कर रही थी और आज भी यह भावना थोडी बहुत मात्रा में वर्तमान है ।इसलिए समाज में अनमेल विवाह की घटना साधारण बात है ।

बिट्टो के अभागे जीवन का स्मरण अनमेल विवाह जैसे ज्वलन्त प्रश्न पर चिन्तन करने को बाध्य करता है । महादेवी वर्मा के "अतीत के चलचित्र" के पाँचवें रेखाचित्र में बाल-विधवा बिट्टो का मार्मिक चित्रण है जिस बेचारी को पुन: नई गृहस्थी चलाने केलिए 64 वर्षीय वयोवृद्ध बाबा के पल्ले बाँध दिया जाता है ।

---

1. प्रतापनारायण श्रीवास्तव:विदा: , पृ-220

बिट्टो इस वृद्ध पति की तृतीय पत्नी है। वृद्ध के पुत्र इस विमाता को स्वीकार नहीं कर पाते। कोई चार वर्ष तक बिट्टो विवाहित जीवन व्यतीत करती है। उसका वृद्ध पति जैसे जैसे मृत्यु के पास आ रहा है, उसकी संपत्ति पर उसके दोनों बेटे अधिकार जमाने आते हैं। बिट्टो अकेली रह जाती है और उसका भविष्य पहले से अधिक अंधकारमय हो जाता है। नारी की इस दयनीय स्थिति के मूल में वस्तुत: उसकी आर्थिक परवशता है। वही उसे इतना अकिंचन एवं नगण्य बनाये है। इस सामाजिक संकीर्णता, धार्मिक बन्धन और आर्थिक परवशता में समाज ने अपने सबल अङ्गाङ्ग महीयसी नारी में उन गुणों को नहीं चीन्हा जो उसे इन विषमताओं में भी स्वतंत्र एवं मुक्त बनाये हैं। परिश्रमी, कर्तव्यपरायण बिबिया के जीवन का चित्र खींच कर अनमेल विवाह से प्रताडित नारी-जीवन का यथार्थ चित्र महादेवी ने प्रस्तुत किया है। "स्मृति की रेखाएँ" की बिबिया घोबिन का विवाह संबंध उसके जन्म से पूर्व ही निश्चित कर लिया गया था। गौने से पहले ही वर की मृत्यु हो गयी थी। उसका दूसरा विवाह भी कर दिया गया। उसे मद्यपान करनेवाले झगडालू पति मिलता है। उसकी समस्त गतिविधियों को सूचना पा कर बिबिया स्वयं पलायित हो जाती है। उसके भाई ने एक बार फिर उसका नया घर बसा देने का प्रयत्न किया और पास के गाँव में रहनेवाले एक विधुर अधेड को, जो पाँच बच्चों का बाप था, अपने बहनोई पद केलिए चुन लेता है। उसका तृतीय पति झनकू अपने जीवन का अधिक समय पासी परिवार में बिता देता है। बिबिया उसकी सन्तानों की सेविका मात्र है और कुछ नहीं। बिबिया का अन्तर्मन छटपटा रहा है। बाद में झनकू का बडा लडका जो दुर्व्यसन में घर से निर्वासित है, काफी साफ सुथरा कपडा पहन कर, सजधज कर बाल संवार कर तीतर का पिंजडा लिए आ खडा होता है। वह सौतेला पुत्र विमाता के प्रति दुर्वासनाएँ उंडेलता है। बिबिया उसे समझा बुझाकर ठीक रखना चाहती है, पर वह मानता नहीं, इसलिए नारी को बाध्य होकर मोहिनी विद्या का प्रयोग करना पडता है। बिबिया को अपने ही छल-छद्म के कारण जनापवाद का प्रमाण पत्र मिल जाता है और वह लांछित होती है। यह खबर जब झनकू के कानों में पहुँची तो उसने अपने पुत्र को एक बार बहुत पीटा परन्तु उस बदमाश ने सारा दोष अपनी विमाता पर डाल दिया है।

झनकू बिना कुछ पूछे-सुने उस अभागी बिबिया को लात, घूँसा, थप्पड, लाठी आदि से पीटना शुरू कर देता है । सब कुछ वह सहती है । बिबिया का मौन रहना मानो अपराध की स्वीकृति देता है कि झनकू बिबिया को मार-मार कर घर से बाहर निकाल भी देता है । उम्र की असमानता पति-पत्नी के संबंधों में कितना मानसिक वैषम्य स्थापित कर देती है, यह उपर्युक्त उद्धरण से जाना जा सकता है ।

चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की "सौत" कहानी में मोतिया नामक एक चौदह वर्षीया शरणार्थी बाला की करूण गाथा है, जो पहले अपनी अलहडता में मस्त रहती थी किन्तु एक वृद्ध से विवाह होने के बाद प्रसन्नता ने उससे सदा केलिए विदा ले ली । लेखिका की कहानी "सुभद्रा" में मातृ-पितृ हीना सुभद्रा ने मामा-मामी के हाथों अनेक कष्ट सहे, किन्तु वे धन के लोभ में उसका विवाह एक वृद्ध से करने लगे तो विवाह के समय उसने वृद्ध को अस्वीकार कर दिया और अनेक कष्ट सहकर अपने योग्य वर ज्ञानु को प्राप्त किया । "उत्तराधिकारी"[1] कहानी में वृद्ध विवाह की प्रथा का दारूण परिणाम दिखाया गया है । बूढे लालाजी गिरती अवस्था में पुत्र केलिए चौथा विवाह करते हैं । उनकी चंचला बहू को उनसे ज्यादा उनके युवा संबंधी मोहन का सान्निध्य प्रिय लगता है । भगवान की दया से नई बहू की गोद भरती है किन्तु बच्चे का चेहरा मोहन से ही काफी मिलता-जुलता है, लालाजी से नहीं । कहानी का अन्तिम भाग अनमेल विवाह पर करारा व्यंग्य है । यह कृत्य न केवल अमानवीय व क्रूर है, वरन् समाज के विकास में अवरोध भी पैदा करता है । उम्र की असमानता के कारण जीवन में दाम्पत्य-प्रेम का अभाव रहता है । कम उम्र वाला व्यक्ति अधिक उम्रवाले व्यक्ति का सम्मान कर सकता है, प्रेम नहीं ।

अनमेल विवाह का अर्थ साधारणत: आयु में अन्तरवाले विवाह समझा जाता है किन्तु केवल सामान्य आयु ही तो वैवाहिक जीवन की सफलता का एकमात्र कारण नहीं है । कभी कभी पति-पत्नी का रूचि-भेद तथा स्त्री का फूहडपन भी वैवाहिक जीवन को विषम बना देता है ।

भारतवर्ष में विशेषत: हिन्दु समाज के जाति-भेदने विवाह-समस्या को और

---

1. होमवती देवी, उत्तराधिकारी, प्रतीक, सितंबर, 1947, पृ-85

भी जटिल बना दिया । इस समस्या के निराकरण का केवल एक ही उपाय है कि जातिभेद के सीमित दायरे को त्याग अन्य जातियों से भी विवाह संबंध स्थापित किया जाए । सत्यवती मल्लिक ने "श्यामा" इस समस्या का समाधान स्वरूप ही लिखी है । "श्यामा" का मोहन शहर की अप-टू-डेट पढी-लिखी कन्याओं के प्रस्तावों की परवाह न करके, सुदूर पार्वत्य प्रदेश की एक संस्कृत, गँवार परन्तु सुन्दरतर बालिका से विवाह कर लेता है । लेखिका परंपरागत संस्कारों की जडता को झकझोर कर एक नवीन दिशा का स्पष्ट बोध देता है । इस कुप्रदा की शिकार किशोरियों के प्रति पाठक के हृदय में संवेदना जागृत करने में महिला कहानीकारों को सफलता मिली है । प्रेमचन्द का अभिमत है कि "अब भी अपनी बालिकाओं के लिए मत देखो धन, मत देखो जायदाद, मत देखो कुलीनता, केवल वर देखो । अगर उसकेलिए जोड का वर नहीं पा सकते तो लडकी को कुँवारी रख छोडो, जहर देकर मार डालो, पर किसी बूढे खूसट से मत ब्याहो ।"[1]

वैधव्य जीवन

कहा जा चुका है कि वैदिक युग के पश्चात् मध्यकाल तक आते-आते भारतीय जन-मानस में नारी के प्रति आदरभाव में उत्तरोत्तर ह्रास की स्थिति परिलक्षित होने लगती है । यदि वह नारी विधवा हो, तो उसकी नियति ही अभिशप्त जीवन जीना है । विधवा जीवन के प्रति समाज का दृष्टिकोण परंपरावादी, दकियानूसी और अवमान पूर्ण रहा है । चाहे समाज प्रत्यक्ष में उसके दीन-हीन, कष्टपूर्ण जीवन केलिए मौखिक सहानुभूति प्रदर्शित करे, लेकिन परोक्ष में क्रूर व्यंग्य और प्रताडना ही उसके जीवन को और अधिक त्रासद बना देते हैं ।

भारतीय समाज में वैधव्य एक भारी अभिशाप है । उसे घर का सारा कार्य करने पडते थे, सब की सेवा और खुशामद करनी पडती थी, फिर भी वह आदर और सहानुभूति का नहीं, घृणा का पात्र समझी जाती थी । वह शुभ कार्यों से बहिष्कृत, पतिघातिनी, पापिनीऔर जाने क्या-क्या समझी जाती थी । यही

---

1. प्रेमचन्द, मानसरोवर, भाग-3, पृ-30-31

नहीं, ये बातें उसके मुँह पर कहकर उसका अपमान भी किया जाता था । विधवा की उम्र जितनी कम होती थी, उस पर अत्याचार भी उतना ही ज़्यादा होता था । वह बाल-विधवा हो, या निस्सन्तान युवती, या निराश्रित और अनाथ, किसी भी स्थिति में, समाज की दृष्टि में, उसका पुनर्विवाह वांछित न था । यदि वे किसी प्रालोभन में फँस जाती थी, तो उसकेलिए सिवा आत्महत्या, वेश्या-वृत्ति अथवा धर्म-परिवर्तन के और कोई रास्ता नहीं रह जाता था । निसंतान विधवा नारी की जीवन-समस्या और भी जटिल है ।

कमलादेवी चौधरी की कहानियों में एक ओर हिन्दु समाज के कुचक्र में फँसी हुई पतित, दुखी विधवा की कसक भरी करूण कथा है, दूसरी ओर जागरूक समाज के व्यक्तियों द्वारा पुनर्विवाह करा विधवा समस्या का समाधान सम्मुख रखा गया है । "करूणा" में भारतीय समाज द्वारा पीडित उस दुखिया विधवा की करूण कहानी है जिसका किसी शुभ कार्य के अवसर पर जाना भी समाज द्वारा कलंकित समझा जाता था । आई·सी· एस·परीक्षा उत्तीर्ण होकर देश लौट आनेवाले देवर का स्वागत करनेकेलिए घर के बच्चे-बूढे सब स्टेशन जाते हैं । चलते समय जेठानीजी का आदेश देखिए - "लल्ला के घर में आने पर कहीं पहले तुझ कुलक्षिणी पर ही दृष्टि न पड जाय ।"[1] विधवाओं को क्या करना चाहिए, क्या नहीं समाज के हाथों में इसकी लंबी सूची थी । लोकमत इसके विपरीत कुछ नहीं देख सकता । सन् 1829 ई· के सती-प्रथा-निषेधक कानून से विधवा को ज़िन्दा जलाने से अवश्य बचा लिया था, किन्तु सत्य यह है कि इसके बदले उसे आजीवन चिन्ताग्नि में जलने को भी विवश किया गया । आलोच्य कहानी की करूणा सोचती है - "सारे जीवन में अब एक मिनट की भी आज़ादी मयस्सर होना दुर्लभ है । गुलामी करके पेट पालना, शरीर से मशीन की तरह काम देकर भी गालियाँ खाना, व्यर्थ में लांछित होना, संसार के सारे अवगुणों का खजाना बनना बस, अब यही तो मेरी ज़िन्दगी का प्रोग्राम है ।"[2] वस्तुत: वही स्त्री जो कभी घर की रानी थी, पति की मृत्यु के बाद दासी से भी हेय हो जाती है । उसके अस्तित्व का कोई मूल्य ही नहीं रह जाता । विधवा का

1· कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-21

2· " पृ-19

जीवन तप का जीवन है । विधवाओं के यदि बच्चे हैं और उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है तो समस्या और अधिक जटिल हो जाती है । करूणा के शब्दों में - "यदि आज वह (नवजात शिशु) जीवित होता तो उनकी संख्या भी संसार के असहायों - अनाथों - ही में होती ।"[1] विधवा जीवन से लाभ उठानेवाले घर के सदस्य विधवा विवाह के विरुद्ध थे । क्योंकि करूणा का यह कथन "रात-दिन" बहनेवाले इन आँसुओं में भी कोई सार नहीं रह गया है । क्या करूँ ? विवाह । एक ही उपाय है । किन्तु यह उपाय मेरे बस का नहीं ।"[2] भारतीय समाज-व्यवस्था की नृशंसताओं को अपने समस्त अन्तर्विरोधों के साथ प्रकट कर देता है । लेखिका की "रूपा" एक अभागिन विधवा की कहानी है जो निर्दोष है । होली के अवसर में होली के रंग में मस्त देवर रूपा को अंक में कसकर गालों पर गुलाल मल देता है । रूपा कुलच्छनी, अपराधिनी, कलंकिनी ठहरा दी जाती है और उसे घर से निकाल दिया जाता है । "स्वप्न" के बैरिस्टर दीक्षित अपनी बाल-विधवा पुत्री केलिए सबसे सुरक्षित स्थान "आश्रम" चुनते हैं और गुरू की देखभाल में उसे वहाँ छोड देते हैं । संसार की दृष्टि में महात्मा दीखनेवाले गुरू के मन में बाल-विधवा के रूप सौन्दर्य को देखकर देवासुर संग्राम छिड जाता है और एक दिन भावावेश की स्थिति में गुरू अपना संयम खो बैठते हैं । गुरू द्वारा शेखर के पास सुरीला के साथ विवाह प्रस्ताव भिजवाकर विधवा पुनर्विवाह समस्या का समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है ।

महादेवी वर्मा के "अतीत के चलचित्र" के छठे रेखाचित्र में अकाल वैधव्य की प्रतिमूर्ति एक अठारह वर्षीय लडकी का कारूणिक चित्र है । वृद्ध की पोती आठ वर्ष में मातृ-पितृहीन हो गयी और ग्यारह वर्ष में उसका सुहाग छिन गया था । कई वर्षों तक तो वह अपने कठोर वैधव्य को निबाहती रही, लेकिन अठारह वर्ष की उम्र में किसी स्वार्थी पुरूष ने अपने चुंगुल में फँसा लिया और फिर अपना स्वार्थ पूरा हो जाने पर उसे छोड दिया । पुरूष की वासना को विधवा की निराश्रयता किस प्रकार प्रेरित करती है, यह वृद्ध की पोती की स्थिति से ज्ञात होता है । इस प्रकार के प्रलोभनों से अत्यन्त दृढ चरित्रवाली विधवाएँ ही बचकर रह सकती हैं । "दूसरा

---

1. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-23
2. " पृ-20

बच्चा" (चन्द्रकिरण सोनरेक्सा की कहानी) में भिखारिन गुलाबी को एक बच्चे के साथ भीख माँगते देखकर वीरेश्वर ने यह कहकर उसकी भर्त्सना की कि भिखारिन होकर बच्चा पैदा करने की क्या आवश्यकता थी ? बाद में स्वयं उसका सतीत्व अपहरण करके उसे एक के स्थान पर दो बच्चों की माता बनाकर वह पलायन कर गया । समाज के सफेदपोश ही समाज के पापों केलिए उत्तरदायी है, निर्धन तो केवल उनके भारवाहक बनकर कलंक का बोझ ढोते हैं ।

हिन्दु समाज की विधवाओं के शोषण, यातनाओं, पीडाओं की मूक व्यथा अपने करूणतम रूप में सुभद्रकुमारी चौहान ने "किस्मत", "नारी हृदय", "एकादशी" "कल्याणी", "असमंजस" में व्यक्त किया है । सुभद्राजी विधवा विवाह की समर्थिका है । फिर भी लेखिका विधवा के तपोमय-जीवन के सम्मान एवं गौरव की रक्षा केलिए विधवा पुनर्विवाह का समर्थन नहीं कर सकी । "कल्याणी" में जयकिशन के यह पूछने पर "क्या, पुनर्विवाह करना चाहेगी, कल्याणी उत्तर देती है, "पुनर्विवाह । विवाह से सुख मिलनेवाला होता तो मेरे पति उस दिन रेल से कटकर न मर जाते - - - - आप के साथ मेरा पुनर्विवाह असंभव है ।"[1] "उन्नीस सौ पैंतालीस", "गोधूली", "मातृत्व", "मृत्युंजयी", में विधवा नारी की वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक समस्याओं को उषादेवी मित्रा ने गंभीरतापूर्वक उठाया है । उनकी कहानियों में विधवा विवाह हो जाने के बाद भी संघर्ष की एक स्थिति रह जाती है जिसमें लडाई समाज से नहीं व्यक्ति की स्वयं अपने से अवशिष्ट है और वह नितान्त वैयक्तिक है । "मृत्युंजयी" की सीता का पुनर्विवाह होता है, लेकिन वह अपने पूर्व पति की स्मृति में लिप्त रहने के कारण दुहरा जीवन व्यतीत करती है । वह अपने वर्तमान पति को सन्तुष्ट रखना चाहती है, लेकिन अपने पूर्व पति को विस्मृत न कर पाने के कारण एक अनपेक्षित जिन्दगी का भार ढोती रहती है । लेखिका का मत है कि विधवाओं का पुनर्विवाह आवश्यक है, इसलिए उनकी जीवन-दृष्टि में भी मूलभूत परिवर्तन आवश्यक है ।

होमवती देवी कहती है कि विधवा नारी की दयनीय अवस्था चरम सीमा पर

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, सीधे सादे चित्र, पृ-34-35.

पहुँच जाती है जब कि उसे पुत्र और बहू के अत्याचार एवं अपमान को भी सहन करना पडता है । "पीतल की चूडियाँ" में जीवन की माँ अपने बेटे और बहू के यहाँ ही दासी रूप में रहती है । इस निराशामय जीवन से छुटकारा पाने केलिए माँ डाक्टर से प्रार्थना करती है, "बेटा । मेरी आँखें अच्छी मत करो और फोड दो या जहर देकर मार ही दो, तुम्हारा बडा पुन्न होगा ।"[1] महिला कहानीकारों ने विधवा जीवन की समस्या के सभी पहलुओं का चित्रण तो यथार्थवादी स्तर पर किया है तथा इस समस्या के समाधान के रूप में पुनर्विवाह एवं नारी-शिक्षा ही रख दिया है ।

वेश्या-वृत्ति :-

कहा जा चुका है कि परंपरावादी भारतीय समाज में प्रचलित रूढियों और अन्धविश्वासों-दहेज-प्रथा, बहुपत्नीत्व-प्रथा, अनमेल विवाह तथा विधवा जीवन ने सामाजिक स्तर पर नारियों को इतना अधिक त्रस्त किया कि उनका शेष जीवन-यापन असंभव नहीं तो दुष्कर अवश्य हो गया । ऐसी नारियों केलिए वेश्यालय ही अन्तिम शरण-स्थल है । वेश्या-समस्या के कारणों में प्रमुख हैं आवश्यक आर्थिक आधार का न होना, उचित सामाजिक संरक्षण का अभाव, असंगत वैवाहिक पद्धति तथा विभिन्न प्रकार की मनोवैज्ञानिक जटिलताएँ । लेकिन महिला कहानीकारों ने इस समस्या की मूल जडें समाज में व्याप्त घोर आर्थिक विषमता में देखी है । "भारतीय नारी के समान पद-दलित, लाँछित, अपमानित, पराधीन, निष्क्रिय और निरर्थक जीवन से क्षुब्ध होकर एवं उसके विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में तथा अन्य किसी सुखी जीवन-प्रणाली के अभाव में अनैतिक जीवन व्यतीत करने को प्रेरित होती थी ।"[2] भारतीय समाज में कभी धर्म, कभी नैतिकता और कभी सामाजिक मूल्यों की आड में अनवरत शोषण का सब से घृणित और बीभत्स रूप वेश्यावृत्ति है ।

उषादेवी मित्रा की "जीवन का एक दिन" की परमा द्वारा लेखिका ने यह दिखाने का प्रयास किया है कि किस प्रकार दरिद्र परिवार की भूखी लडकियाँ इच्छा न रहते हुए भी अपना स्त्रीत्व बेचने केलिए बाध्य हो जाती है । परमा आर्थिक कष्टों में पिसी हुई भिखारिणी है । तब एक दिन विनय नाम का एक प्रतिष्ठित

---

1. होमवती देवी, धरोहर, पृ-15
2. सत्यदेव विद्यालंकार, चीन में वेश्यावृत्ति का अन्त, नया समाज, नवंबर 1957, प-422.

व्यक्ति उसे ससम्मान ले आता है । लेकिन जहाँ उसे उतारा गया, वह वेश्याओं का अड्डा था और विनय वहाँ रात में छिप कर आया करता था । पहले तो सीधी सरल परमा इस बात को समझी ही नहीं, जब समझी तब सुख, आराम, वैभव, विलास से उसकी चेतना आच्छन्न हो चुकी थी । उसकी विचित्र स्थिति के माध्यम से विश्लेषणात्मक विधि में जीवन का प्रस्तुतीकरण इस प्रकार हुआ है -

"सुख-आराम ? - परमा का जी जाने कैसा कर उठा । दर्पण के सामने वह खडी थी । आँखें उसकी अपने आप उठीं और दर्पण में गड सी गयी । उस वक्त ? दर्पण में खडी थी एक छलनामयी विलासिनी और दर्पण के सामने खडी थी एक नारी अपने पूर्ण नारीत्व को संभाले हुए ।"[1] वेश्याओं की समस्या केवल वेश्याओं की नहीं है, अन्य पुरूषों की भी है, जो अपनी वासना-तृप्ति केलिए उनके पास जाते हैं । ऐसी स्थिति में वेश्या का मूल्य तभी तक है जब तक उसका सौन्दर्य जीवित है । पुरूषों ने ही स्त्रियों को बाजार में ला खडा किया है, उसकी लोलुपता ने ही नारी की यह दुर्गति की है । स्त्री यदि अनेक के साथ शारीरिक संबंध रखती है तो वेश्या की श्रेणी में परिगणित होती है, लेकिन पुरूष अनेक स्त्रियों से शारीरिक संबंध रखने के बाद भी निर्मल रह आता है । सच तो यह है कि ऐसे पुरूष को पुरूष वेश्या क्यों न कहा जाये ? और समाज में ऐसे लोगों को अलग से परिगणित क्यों न किया जाए ?

परमा तथा अन्य वेश्याओं के बीच वार्तालाप नारी के वेश्या जीवन अपनाने की विवशता को चित्रित कर रहा है -

"हाँ तीन दिन की भूखी हूँ माता ।"

"भूखी हो, और इतने जेवर पहने हुए भी ?" एक स्त्री कह उठी ।

"बाबु ने यह सब मुझे आज ही दिये हैं। "

"बाबू से तुम्हारी कब से पहचान है ?"

"इन से । मैं क्या जानूँ ? दादी के साथ इनके घर भीख माँगने जाया करती थी । एक दिन मैं ने इनको देखा था । बस ।"

"फिर आज कहाँ से मिले ?" कौतुक से प्रश्न हुआ ।

"नदी के किनारे ।"

---

1. उषादेवी मित्रा, रागिनी, पृ-24

"तो वहाँ इनसे मिलने की तैयारी में थी ?"

"इन से नहीं । नदी में जगह लेने गयी थी ।"

"जगह कैसी ? नदी ने क्या तुम से कह दिया था कि मैं तुम्हें जगह दूँगी ?"

"नहीं नदी कहीं बोली है ?" परमा ने सरल स्वर से उत्तर दिया ।"[1]

भूख से बचने केलिए ही परमा वेश्या-वृत्ति अपनाती है । प्रेमचन्द की "वेश्या कहानी में वेश्या माधुरी कहती है - "नारी अपना बस रहते हुए कभी पैसों केलिए अपने को समर्पित नहीं करती । यदि वह ऐसा कर रही है, तो समझ लो कि उसकेलिए और कोई आश्रय और कोई आधार नहीं है । "[2] यह कथन, वेश्यावृत्ति एक आर्थिक समस्या ही है की पुष्टि करता है ।

उषादेवी मित्रा की "सुन्दर" कहानी की मल्लिका, "स्मृति की पूजा" की सुरंगी, "बेकार फूल" की वेश्या पुत्री आदि पात्रों के माध्यम से जीवन के जिस रूप का परिचय प्राप्त होता है उनमें नारियाँ विभिन्न विवशताओं के कारण वेश्या का जीवन बिताने केलिए मजबूर है अन्यथा इनकी रूचि इस कार्य में नहीं है । चन्द्रवती ऋषभसेन जैन की "वे तीन दिन" एक महत्वपूर्ण कहानी है, इसमें एक ओर तो वेश्याओं की वास्तविक जीवन की झाँकी देखने को मिलती है दूसरी ओर उन पुरूषों की चारित्रिक विशेषताओं का उद्घाटन किया गया है जो नारी को केवल वासना की वस्तु समझते हैं और जिनके कारण समाज में वेश्या वृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है । एक दिन सुन्दर ने हँसते हुए बाहर से आ कर कहा - "लो चंचल, पता नहीं अब तुम कब मिलो । मेरा तबादला हो गया है और परसों मुझे जाना है । कमब्बख्त । बहुत याद आयेगी तु ।"

चंचल चोट खाये हवाई जहाज सी जैसी आसमान से गिर पडी - ऐं । और मेरा क्या होगा ?"

"तुम्हारा वही होगा जो सब वेश्याओं का होता है । सुन्दर गया, सुन्दर आया चलाये जाओ अपना बिज़िनेस ।"[3] चन्द्रवती ने इस में यह तथ्य प्रस्तुत किया है कि

---

1. उषादेवी मित्रा, रागिनी, पृ-18-19
2. प्रेमचन्द, मानसरोवर, भाग-2, पृ-23
3. चन्द्रवती ऋषभसेन जैन, नींव की ईंट, पृ-64

घृणा का पात्र चंचल नहीं वरन् वह समाज है जिसने वेश्या बनाने केलिए बाध्य किया है। वेश्या का ऐसा चित्रण करने में महिला कहानीकारों का मुख्य दृष्टकोण यह है कि वेश्या घृणित नहीं, उसका कर्म घृणित है, जो उसे परिस्थिति वश करना पडता है। उनके मन में जीवनोद्धार की अभिलाषा है, किन्तु रास्ता नहीं मिलता। नहीं तो उसकी आत्मा भी उतनी ही पवित्र और महान हो सकती है जितनी किसी अन्य चरित्रवती नारी की।

बहु-विवाह :-

बहु-विवाह की समस्या भी नारी जीवन के वैवाहिक पक्ष से संबंधित और सामंती समाज-व्यवस्था की विलासी मनोवृत्ति की द्योतक है। इस प्रथा के अन्तर्गत नारियों का शोषण हुआ, समाज में अनैतिकता और भ्रष्टाचार को प्रश्रय मिला। वर-पक्ष की कुलीनता के आग्रह ने भी बहु-विवाहों को प्रोत्साहित किया। प्रेमचन्द ने "आगा-पीछा" कहानी में इस दिशा में संकेत दिया है। बहु-विवाह के लोभ में पुरूष या तो स्त्री को उपेक्षा का जहर पिलाकर उसे घुट-घुट मरने को मजबूर कर देता था।"[1] या "उस पर लाँछन लगा कर घर से निकाल देने पर मजबूर कर देता था।"[2]

हिन्दु समाज में पत्नी की मृत्यु के पश्चात् तो पुरूष द्वारा विवाह कर ही सकता है, परन्तु इसके अतिरिक्त स्त्री के जीवित होने पर भी पैतृक संपत्ति की रक्षा केलिए, पुत्र की लालसा के नाम पर, स्त्री के व्याधि युक्त, वन्ध्या, अप्रिय बोलनेवाली, मद्यपान करनेवाली, असाधु आचरणवाली होने पर, आदि अनेकों स्थितियों में पुरूष को कई विवाह करने की छूट दी गयी है। चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की "गृहस्थी का सुख" की अनाम बडी बहू का सब से बडा अपराध यही है कि पच्चीस-छब्बीस वर्ष की होने तक भी वह पूत को जन्म न दे सकी। आखिर शिवसहाय का दूसरा विवाह हो ही गया। बडी बहू को रात-दिन सास की खरी-खोटी सुननी पडती। परिवार में होनेवाले कलह का कितना यथार्थ चित्रण लेखिका ने किया है - "हाँ, हाँ नहीं तो - - - - सास ने गरज कर कहा - "रूक क्यों गयी, कोस

---

1. प्रेमचन्द, मानसरोवर, भाग-2, पृ-315
2. भाग-5, पृ-92

ले जी भरकर । पर कहे देती हुँ जो मेरे बेटे-बहू को कुछ हो गया तो जानेगी कुलच्छनी । राम राम करके अब इस छोटी बहू ने ज़रा बंस-बेल चढाने की आस दिखलाई है, सो तू दिन-रात दाँत पर दाँत बजाकर चढने न दे, डायन कहीं की ।"[1] अन्त में विवश हो बडी बहू आत्महत्या कर अपनी जीवन-लीला समाप्त कर लेती है । दूसरी पत्नी लक्ष्मी साल या डेढ साल के व्यवधान में सन्तानों के उत्पन्न होने के कारण काल-कवलित हो जाती है ।

"माँ" (होमवती देवी की कहानी) में कृपाशंकर के पिता ने तेरहवीं होते ही कहा -"सोच लो, किस लडकी को कितने नम्बर देते हो, देर करने पर तो रूखा-सूखा कूडा-कचडा ही हाथ लगता है ।"[2] शिवरानी प्रेमचन्द ने बहु-पत्नी विवाह की समस्या "सौत" कहानी के दारोगा गयाप्रसाद और रामनाथ के माध्यम से दिखाई है । दारोगा गयाप्रसाद रूपहीना पत्नी रूपा और शिशु प्रभाकर को छोडकर रूपवती स्त्री चन्दा को विवाह कर ले आते हैं । अभागिन रूपा ने चुपचाप इस अपमान को सहन किया और बेचारी अपने शिशु को लेकर शान्तिपूर्वक रहने लगी । "वरयात्रा" (शिवरानी की कहानी) के रामनाथ पन्द्रह साल की ब्याही हुई स्त्री से मुँह मोड दूसरा विवाह करने चलते हैं । रामेश्वरी किसी प्रकार यह सहन करने केलिए तैयार नहीं कि उसके जीते जी रामनाथ विवाह करे । रामेश्वरी अपनी संपूर्ण शक्ति से इस अमानवीय कुप्रथा के विरूद्ध संघर्ष करती है और अन्त में अपना बलिदान तक दे देती है । शिवरानी की "क्षमा" कहानी की प्रभात शिक्षित, सुसंस्कृत आदर्श पत्नी है - पति सेवा ही उसका परम लक्ष्य है । प्रभात के पति महेन्द्र विलायत शिक्षा केलिए जाते हैं । एक अंग्रेज़ महिला से विवाह कर भारत लौटते हैं । भारतीय नारी की असीम सहनशीलता उसके व्यक्तित्व का मूल बिन्दु है । प्रभात पति के सुख एवं प्रसन्नता केलिए अपने को डाक्टर की बहिन बताती है और स्वयं अपने हाथों से सौत का साज-शृंगार करती है । सरल, सुसंस्कृत, शिक्षित, स्वावलंबी प्रभात इसका प्रतिकार नहीं कर पाती वरन् विक्षुब्ध होकर आत्महत्या करने चली जाती है । कमला त्रिवेणी शंकर की "त्याग की सौदा", "प्रायश्चित" तथा "अपराजिता" शीर्षक

---

1. श्रीमती चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, आदमखोर, पृ-20
2. होमवती देवी, अपना घर, पृ-135

कहानियों में पुरूष द्वारा दो विवाह करने की घटना को स्थान दे कर लेखिका ने सपत्नी समस्या का चित्रण किया है किन्तु साथ ही इन कहानियों की पात्राओं को कोई ईर्ष्या, द्वेष आदि नारी सुलभ संभावित प्रवृत्तियों से पृथक रखकर उस समस्या का सुन्दर आदर्शवादी समाधान प्रस्तुत किया है ।

इस प्रकार महिला कहानीकारों ने समाज में प्रचलित बहु-विवाह का यथार्थ स्वरूप अंकित किया है । इसके परिणाम स्वरूप नारी वर्ग की क्या दुर्दशा होती जा रही है यह उद्घाटित करना भी वे नहीं भूलते । संतोष की बात है कि सरकार ने अब कानून बनाकर इसे सदा-सर्वदा केलिए समाप्त कर दिया है । एकाधिक विवाह की कलुषित इच्छा से ही अनेक प्रकार की समस्याओं को जन्म मिलता है । सपत्नियों का कलह, वृद्ध-विवाह के दु:ख, अनमेल-विवाह के दुष्परिणाम, व्यक्ति उत्पीडन तथा गृहस्थ अशान्ति जैसी समस्याओं का एकमात्र कारण बहुविवाह ही है ।

<u>बाल-विवाह</u> :-

बाल-विवाह एक सामाजिक विष है । इस बाल-विवाह पर ही अशिक्षा, अनमेल विवाह और विधवा-जीवन की समस्याएँ आश्रित हैं । उन दिनों आठ-दस वर्ष की अवस्था में बच्चों का विवाह किया जाता है जब कि वे "विवाह" शब्द का अर्थ तक नहीं जानते थे । इस कुप्रथा से नारी की स्थिति बडी शोचनीय हो गयी थी । असमय विवाह से उसका स्वास्थ्य खराब रहता था; संतान नि:सत्व एवं मानसिक दृष्टि से दुर्बल होती थी । बाल-विवाह नारी की शिक्षा में भी बाधक था । इन दुष्परिणामों को देखकर गाँधीजी ने कहा था - "बाल-विवाह से मुझे घृणा है और बाल विधवा बालिका को देखकर मैं काँपने लगता हूँ तथा स्त्री के देहांत के पश्चात् तुरंत विवाह करनेवाले पुरूष को देखकर मैं पागल हो जाता हूँ ।"[1] आज भी भारतीय नारी-समाज इस कलंक एवं नरक तुल्य स्थिति से पूर्ण मुक्त नहीं है । अप्रैल 17,1972 की दैनिक पत्रिका "दि इंडियन एक्सप्रेस" में प्रकाशित आँकडों से पता चला कि बाल विवाह के कारण कई विधवाएँ वेश्याएँ बन जाती हैं । "जब हैदराबाद

---

1. मो.क. गाँधी, महिलाओं से, पृ-29

की वेश्याओं से उनके द्वारा वेश्या-वृत्ति को अपनाने का कारण पूछा गया तो पता चला कि आधे से ज्यादा (55 %) वेश्याएँ वे थीं जिनकी शादी 14 वर्ष की आयु में से पहले हुई थी ।"[1] वास्तव में बाल-विवाह की प्रथा ही उस विष का मूल है जिससे नारी पतन की शाखाएँ पल्लवित होती हैं ।

भारतीय समाज में छोटे-छोटे ऐसे बालक-बालिकाओं को विवाह सूत्र में बाँध दिया जाता था जो विवाह का अर्थ भी नहीं समझते थे । वह विवाह को केवल एक खेल और अच्छे अच्छे वस्त्र और आभूषण पाने का साधन मात्र समझते । बाल-विवाह ही बाल-विधवा होने का कारण बनता । "विश्वास"[2] विवाह की वास्तविकता से अपरिचित भोली-बालिका की कहानी है । मुन्शी शम्भुनाथ की कन्यादान की अभिलाषा को पूर्ण करने केलिए अबोध बालिका माया का विवाह नौ साल में ही कर दिया गया । माया के भोलेपन का सजीव चित्र इस कहानी में मिलता है - "सब रस्मों के बाद ब्याह का समय आया । गहने और कपडे तो माया ने बडी खुशी से लिये और पहने । नाइन सिखा-पढाकर उसे मंडप में लायी, पर माया ने जब देखा कि वर को बैठने को अच्छा खूबसूरत पीढा मिला और उसे बैठने को केवल एक पत्तल मिली, तो वह वर से बोली, मेरा पीढा दे दो, नहीं मैं गिरा दूँगी । बेचारा वर शरमा गया ।

मुन्शीजी बोले - बेटी माया, झगडा नहीं करना होता । माया ने बिगडकर कहा - मेरे ही लिये तो पीढा आया था। मेरा तो पीढा, सो मैं पत्तल पर बैठूँ और यह राजा बनके आये हैं, जो पीढी पर बैठेंगे ।"[3] "प्रेमा"[4] कहानी में बाल्य-काल में की गयी सगायी समस्या को उठाया गया है । बडे होने पर समझदार, शिक्षित प्रेमा माता-पिता द्वारा तय किये गये विवाह संबंध को अस्वीकार कर देती है ।

बाल-विवाह की आज की प्रसन्नता आगे चलकर किस प्रकार दारूण दुख में

---

1. डॉ. के. लीलावती, हिन्दी तथा तेलुगु लेखिकाओं के उपन्यास, पृ-6
2. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, विश्वास कहानी, चाँद, जून 1936, पृ-127.
3. " " "
4. " " " जून 1941, पृ-195.

परिणत हो जाती है, इसका कारूणिक चित्र कमला देवी चौधरी "गीता" कहानी में किया है। धनाढ्य परिवार की गीता बाल्यावस्था में ही विधवा हो गयी। जब युवती हुई तब यौवन संबंधी इच्छाएँ उनके मन में उभरकर आने लगीं कि वह अपने को काबू में न रख सकी। वैधव्य ने उसके जीवन की अभिलाषाओं का दीपक बुझा दिया। इसलिए लखनऊ में पढनेवाला अपने देवर को पत्र लिखकर उसी रस में लीन होकर वह शान्ति, सन्तोष और तृप्ति पाने लगी। जब देवर घर आया तब उस पर विश्वास रख कर प्रेम की सरिता में डूब गयी। बडे घर का रहस्य खुल जाने पर सास ने गीता को कुलटा, कुल-कलंकिनी आदि कह कर घर से निकाल दिया। गर्भवती होने के कारण कहीं से उसे आश्रय न मिला। लेकिन अगले दिन सबेरे ही बेहोश गीता एक सिसकते शिशु को छाती से दबाये अस्पताल पहुँचायी गयी। कई दिनों के बाद विधवा गीता एक पागली की तरह अपने हृदय-स्थल पर ईंट-पत्थरों से चोट करती हुई कानपुर की सडकों पर हिन्दु समाज के प्रतिरूप की तरह घूमती दिखायी पडी। गीता के द्वारा कमला चौधरी बाल-विवाह के दुष्परिणामों पर छींटे कसे हैं।

महादेवी वर्मा के रेखाचित्र "स्मृति की रेखाएँ" की बिबिया का विवाह उसके जन्म के पूर्व ही निश्चित किया जाता है। पाँचवें वर्ष में उसका विवाह संपन्न हो जाता है, परन्तु गौने के पूर्व ही वर की मृत्यु हो जाती है। वह अभी तक यह भी न जान पायी थी कि विवाह का आशय क्या है कि उसका सुहाग उठ गया। यदि वह नयी गृहस्थी बसाती है तो उसे कलंक माना जाता है, और यदि वह अकेली रहती है तो उसे सामाजिक अपराध की संज्ञा दी जाती है। उसका भाई उसकेलिए शहर से वर ढूँढ लाता है और उसका दूसरा विवाह कर दिया जाता है। उसे शादी करने पर एक जुआरी तथा शराबी पति प्राप्त होता है। ससुराल में उसकी अत्यन्त दुर्दशा होती है। पहले ही दिन से पति से अपमानित होने पर वह स्वाभिमानिनी पितृगृह लौट आती है। भाई तो युवती बहन को घर में रखकर आपत्ति मोल लेना नहीं चाहता। इसलिए वह बहिन की शादी एक विधुर अधेड और पाँच बच्चों के बाप से तय करता है। अभागी बिबिया को विवश होकर शादी करना पडता है। वहाँ भी वह पीटी जाती है, गुस्सों की मार खाना पडता है

फलत: वह मायके चली जाती है और अन्त में विवश होकर संसार को त्याग देती है । नारी समाज की दुर्गति करने में, उनके हरे-भरे जीवन को आग लगाने में, उन्हें कुमार्ग की तरफ जाने को विवश करने में बाल-विवाह एक पहलू है । दिनों-दिन शिक्षा के प्रचार से लोग इस कुप्रथा को तिलांजलि देने लगे थे ।

दहेज प्रथा :-

वैवाहिक कुरीतियों का उर्ध्वमुख कारण उस समय की दहेज प्रथा थी जो कोढ़ की तरह समाज में नीचे से ऊपर तक फैली हुई थी । लड़की के गुण और सौन्दर्य का दहेज के आगे कोई मूल्य नहीं है । अत: गरीब घरों की सुन्दर और सुशिक्षित लड़कियाँ, दहेज के अभाव में, कुपात्रों के गले मढ़ दी जाती हैं । कितनी युवतियाँ माता-पिता की चिंता देखकर आत्म-हत्या तक कर लेती हैं । समाज सुधारक नेताओं पत्रकारों तथा लेखकों ने इस प्रथा का खुल कर विरोध किया है, जिसका परिणाम यह हुआ कि लोग खुले आम दहेज लेने में संकोच करने लगे हैं, मगर छिपे तौर पर यह प्रथा फिर भी चल रही है ।

इस कुप्रथा के कारण बेचारे माता-पिता को धनाभाव में प्राय: अपनी भूमि या मकान जो कि उनकी जीविका एवं सुरक्षा का एकमात्र आधार होता उससे हाथ धोना पड़ता है । कन्या की माता को अपनी प्यारी संपत्ति, आभूषणादि, जिसको चिरकाल से गुदड़ी में संभाल-संभाल कर रखती थी, अपने से पृथक करनी पड़ती है और यदि ऐसा कुछ संभव न हुआ तो माता-पिता को अपनी पुत्री का विवाह किसी बाल, वृद्ध अथवा वासनामय दुराचारी से करना पड़ता है । शिवरानी प्रेमचन्द्र ने "साहस", "वधू-परीक्षा", "नर्स", नामक कहानियों में दहेज प्रथा संबंधी समस्याओं को उठाया है । "साहस" के पंडित दीनानाथ धनाभाव के कारण ही बहुत दौड़ धूप करने के पश्चात् भी शिक्षित, सुशील, घर के काम-काज में निपुण पुत्री केलिए सुयोग्य वर न पा सके । विवश 55 वर्ष वृद्ध अमरनाथ से विवाह पक्काकर सके । वर महोदय की दो पत्नियों की मृत्यु हो चुकी थी और चार पुत्र थे । "वधु-परीक्षा" के लाला कालीप्रसाद वर को खोज पाते हैं । परन्तु मुन्शी माधोप्रसाद के दहेज की माँग को पूरा करने केलिए उन्हें अपने घर से हाथ धोना पड़ेगा और

हज़ार पाँच सौ किसी महाजन से उधार लेना पड़ेगा तब कहीं उनकी पुत्री वर के साथ तराजू पर रखी जा सकेगी । "नर्स" के अमरनाथ अपनी बाल-विधवा पुत्री केलिए श्री·जटाशंकर को विवाह इस बात पर राज़ी कर सके कि उसे विलायत जाने केलिए पाँच हज़ार रूपया दिया जाय । ऊँचे दहेज की लोलुप इच्छा रखनेवाला वह प्रस्ताव उसे विवाह से विमुख कर देता है । माता-पिता चाहते भी हैं कि जैसे-तैसे उसकी इच्छा पूरी करके पुत्री का जीवन सुखमय बनाया जाय । लेकिन स्वाभिमानी क्षमा सोचती है जो आदमी इतना स्वार्थी, इतना दंभी, इतना नीच है उसके साथ उसका विवाह न होगा । ऐसी स्वतंत्र और आदर्श चेता नारियाँ अधिक नहीं हैं । संयोगवश पिता की मृत्यु के बाद जीवन-निर्वाह केलिए क्षमा नर्स की आजीविका स्वीकार कर लेती है और एक दिन उसे उसी व्यक्ति की सेवा करनी पड़ती है, जो उसका विफल परिणय-प्रार्थी रह चुका था । क्षमा की सेवा से अत्यन्त प्रभावित होकर वह उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखता है । अब क्षमा की बारी है - यह शर्त रखती है कि जो पुरूष उसे हज़ार रूपये देगा उसी से उसे विवाह करना है । पुरूष पात्र के पास इतने रूपये नहीं किन्तु अचानक उसके नाम पच्चीस हज़ार रूपयों की लोटरी निकल आती है और देने को तैयार हो जाता है । "शादी" (शिवरानी देवी की कहानी) की प्रतिमा के पिता दहेज न जुटा पाने के कारण अपनी पुत्री केलिए वृद्ध वर खोजते हैं तो प्रतिमा मौन भाव से अपने को बलि का बकरा नहीं बनने देती, अपितु विवाह के समय भावी वर को जूते लगा कर और खरी-खोटी सुनाकर विदा कर देती है ।

सुभद्राकुमारी चौहान की "गौरी" कहानी को लें । गौरी माता-पिता की इकलौती बेटी थी । दहेज देने में असमर्थ राधाकृष्ण एक दिन वर के रूप में सीताराम को जो दूसरी शादी करना चाहता है देखने जाता है । पैंतीस वर्ष के सीताराम के दो बच्चे थे । वे अपने बच्चों को माँ देना चाहते हैं, उन्हें बुला लाता है । कन्या का जन्म होते ही उसके विवाह की चिन्ता सिर पर सवार हो जाती है और आदमी उसी में डुबकियाँ खाने लगता है । "अच्छा लड़का अच्छी लड़की" (चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की कहानी) में समाज में प्रचलित दहेज-कुप्रथा के कारण माता-पिता की परवशता का चित्रण है । साथ ही इस कहानी में समाज के उभर गहरी

चोट की गयी है जिसके भयंकर बन्धन दहेज के कारण आज भी अनेक "दया" माता-पिता की हीन आर्थिक अवस्था तथा समाज से बहिष्कृत हो जाने की उनकी दब्बू मनोवृत्ति के कारण या तो लडकी अविवाहित रहती या पर्दे की ओट में विवश हो जाती, कुछ ऊँच-नीच करने केलिए । दया का अपने पिता को यह लिखना - - - -"मैं सुन्दर नहीं हूँ, यह न आप का दोष है न मेरा । किन्तु आप दहेज नहीं दे सकते थे, इस दशा में भी मैं अच्छे वर की प्रतीक्षा में अब तक आप का और अपना खून जलाती रही - - - -।"[1] समाज के ठेकेदारों केलिए भयंकर प्रताडना है ।

आज दहेज की सत्ता महत्ता है । पढे-लिखे युवक इस प्रथा को दूर करने का प्रयास नहीं करते बल्कि वे और अधिक दहेज चाहते हैं । दहेज के कारण आज के समाज में विवाह नहीं प्रत्युत सौदा होता है । इस कुप्रथा के फलस्वरूप नारी अनेक दुष्परिणामों का शिकार होती आ रही है । लगभग भारत की सभी भाषाओं की लेखिकाएँ - भले ही भिन्न प्रान्त व संस्कृतिवाली हो, लेकिन भावधारा में एकता को पेश करते हुए इस दहेज प्रथा के विरूद्ध सब ने अपनी लेखनी चलायी है ।

नारी और प्रेम :-

प्रत्येक मनुष्य में स्नेह केलिए स्वाभाविक आकांक्षा होती है । बाल्यावस्था में इस आकांक्षा की पूर्ति माता-पिता तथा भाई बन्धुओं के बीच होती है । युवावस्था में यही आकांक्षा किसी एक के हो जाने और उसे अपना बना लेने की प्रवृत्ति में परिवर्तित हो जाती है । स्त्री और पुरूष के इसी पारस्परिक स्नेह को "प्रेम" की संज्ञा दी जाती है । यह बात भी निर्विवाद है कि हम प्रेम का स्तर चाहे जितना उच्च रखने का प्रयत्न करें और उसे चाहे जितना आदर्शवादी बनाने का प्रयत्न क्यों न करें, प्रेम की अन्तिम परिणति प्राय: विवाह में ही होती है, कम से कम इसकी लालसा सभी प्रेमियों में होती है । मानव जीवन में प्रेम का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होने के बावजूद भी भारत में उसे सामाजिक मान्यता प्राप्त नहीं थी, विशेष रूप से स्वच्छन्द प्रेम की तो समाज में कोई कल्पना भी नहीं की जा

---

1. क्षेमेन्द्र सुमन, मनोरंजक कहानियाँ - अच्छा लडका अच्छी लडकी, पृ-114-115

सकती थी । वैवाहिक जीवन से बाहर स्त्री और पुरूष का प्रेम समाज को सहन न था, पर समाज के भय से ही तो मानव की स्वाभाविक प्रकृति पूर्णतया परिवर्तित नहीं की जा सकती । उस प्रेम का अन्त सुखान्त इसलिए नहीं होता था कि विवाह का प्रश्न आते ही वर्ग, बिरादरी, जाति, धनी तथा निर्धन होने और सबसे बडी बात माता-पिता की स्वीकृति प्राप्त होने की अनेक समस्याएँ उठ खडी होती थीं । इससे खूब प्रभावित हुए महिला कहानीकारों ने अपनी कहानियों में प्राय: प्रेम का सफल अन्त बहुत कम ही कल्पित किया है ।

चन्द्रवती ऋषभसेन जैन ने "है न यही बात" में असफल प्रेम के प्रश्न को उठाया है । शबनम और रहमत में बचपन से बहुत मेल था । बचपन का उनका यह मेल ही एक दिन प्यार की रंगेलियों में बदल जाता है । भारतीय समाज में विवाह लडके-लडकी के इच्छानुसार न होकर माँ-बाप के इच्छानुसार किया जाता है । अत: शबनम के पिता उसके प्रेम को कोई महत्व न देते । इस संबंध में उनका मत है, "प्रेम मुहब्बत ये सब बचपन की बातें हैं । लडकी जिस घर जाएगी, उसे ही मुहब्बत करेगी।" वह शबनम का विवाह लत्तीफ से कर देते हैं और प्रेम की असफलता रहमत के उन्माद का कारण बनती है । तेजरानी पाठक की कहानी "दो शब्द" की कुमुद अजय से प्रेम करती है । माता-पिता उसकी इच्छा की चिन्ता न कर उसका विवाह मदन से पक्का कर देते हैं । हृदय से एक दूसरे को प्रेम करनेवाले अजय एवं कुमुद में समाज का विरोध करने की सामर्थ्य तो नहीं है, परन्तु दोनों आत्महत्या कर ऐसे लोक में चले जाते हैं, "जहाँ व्यर्थ में सतानेवाला, आशा को हनन करनेवाला, जीवन को आरंभ होते ही नष्ट करनेवाला कोई समाज नहीं होगा ।"[2] प्रेम अपने को दूसरे के प्रति उत्सर्ग करने को प्रस्तुत है । "गुप्ताकर्षण" (तेजरानी पाठक की कहानी) के अजीत और विभा भी इसी प्रेम रोग से ग्रसित है । अजीत की माँ विभा का विवाह कहीं अन्य करना चाहती है, दोनों ही निराश हो हीरे की कनी खा आत्महत्या कर लेते हैं ।

प्रेम जैसे सर्वव्यापी तत्व को सुमित्रा कुमारी सिन्हा ने किसी विशिष्ट वर्ग

---

1. चन्द्रवती ऋषभसेन जैन, नींव की ईंट, है न यही बात, पृ-79
2. तेजरानी पाठक, अंजली, पृ-85

तक ही सीमित नहीं रखा है । मध्यवर्गीय एवं अभिजात वर्गीय नायिकाओं की भाँति उनकी निम्न वर्गीय पात्राएँ भी इस दिशा में क्रियाशील रही हैं । उदाहरणार्थ "सूली ऊपर" कहानी की नायिका सेविका कोइली मधुवन नामक कुलीन एवं विवाहित युवक से प्रेम करती है । इसी कारण वह विवाह होने पर पति को संपूर्ण अनुराग नहीं दे पाती । "मुरली" में दासी गुलबिया अपने समान स्तर के युवक मुरली की प्रेम-मदिरा का आकण्ठ पान करती है और उससे विलग होकर जल वंचिता मीन की भाँति संतप्त होती है । "गृहलक्ष्मी" की माया, "कुचला मातृत्व" की जमुना, "शीला का पति" की शीला और "पत्थर की देवी" की शान्ति पति और प्रेमी के अन्तर्द्वन्द्व को लेकर चाहे व्यथित नहीं है, तो भी सुख और शान्ति उनसे कोसों दूर है । "मैं नहीं जाऊँगी" की नायिका कजरी पति की अपेक्षा देवर चन्दन को अधिक चाहती है, अत:पति, कुटुम्बी, जात-बिरादरी, समाज, पंचायत सब को धत् बताकर अपने प्रिय के साथ भाग निकलती है । "हसीना" की हसीना को समाज के कारण अपने प्रेमी सुलतान से विलग होना पडा। "व्यक्तित्व" की इला तो और भी अस्थिर चित्तवाली नायिका है । उसके जीवन में एक नहीं चार चार पुरुष प्रविष्ट हुए । "एक संगीत था यौवन की सीढी पर पाँव रखते जिसे देखा था दूसरा सुशील मिला, जीवन संगी के रूप में । तीसरा उसकी कलात्मक प्रकृति की भावना को प्रेरणा देनेवाला कलाकार मृदुल आया और चौथा आज यह मनोज-सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति बनकर जीवन की सारी श्रृंखला छिन्न-भिन्न करने आया है ।"[1] इला की आकांक्षाएँ ही कई युवकों के प्रति आकर्षण का कारण बनीं और इला के जीवन में एक नहीं चार-चार पुरुष आये । शारीरिक कामवासना की भूख के सम्मुख सामाजिक बन्धन शिथिल हो जाते हैं ।

रामेश्वरी देवी "चकोरी" की "धूपछाँह" कहानी में सकीना और अहमद की प्रणय-कथा विशेष रूप से देखने को मिलती है । बाल्य-काल से ही सकीना अहम्मद एक दूसरे को चाहते थे और जाने-अनजाने उनका यह बाल्य प्रेम प्रणय में बदल जाता है । लेकिन सकीना रूपवती होने के कारण उसे बादशाह मोती बेगम के नाम से

1.सुमित्राकुमारी सिन्हा, अचल सुहाग, पृ-18-19

अपने अन्त:पुर में स्थान देते हैं । हरम की परतंत्रता से उबकर वह अपने बाल-सहचर अहमद से मिलने केलिए उत्सुक रहती है । उसका मन बारंबार उन्मत्त हो उठता है यह सोचकर "मेरा एक साथी था - बचपन का, मेरे साथ का खेला हुआ - वह बडा अच्छा था ! मगर मैं ने उसे खो दिया - हमेशा केलिए खो दिया ।"[1] उसका यह उन्माद, आत्मपीडन उसे विवश कर देते हैं अपने प्रेमी के पास वापस लोटने केलिए । एक दिन अहम्मद के वंशीनाद से मुग्ध होकर वह अवसर पाकर उसके निकट जा बैठी । बडी बेगम द्वारा पीछा किये जाने का समाचार पाकर दोनों प्रेमियों ने नौका की सहायता से जल-भँवर में अमर समाधि ले ली । जो किसी को सच्चे हृदय से चाहता है, उससे उसका प्रेम-पात्र विमुख नहीं रह सकता ।

नारी और मातृत्व भावना :-

परंपरागत रूपों में नारी का मातृरूप प्राचीन काल से ही अत्यंन्त महत्वपूर्ण रहा है । प्रत्येक नारी की स्वाभाविक इच्छा माँ बनने की होती है । सन्तानहीना नारी अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण समझी जाती है । "नारीत्व का चरमोत्कर्ष मातृत्व में ही संभव है, क्योंकि इसी रूप में नारी अपना "अहं" भूल पाती है और अपना समस्त स्नेह, वात्सल्य, सेवा और त्याग-भाव लुटाती है ।"[2] पालन-पोषण, स्नेह वात्सल्य सेवाभाव आदि मातृरूपा नारी की सर्व प्रमुख विशेषताएँ होती है, जिनसे वह संसार में सुख, सन्तोष एवं उल्लासपूर्ण वातावरण का निर्माण करती है और मानवता उसके बन्धन में सुख प्राप्त करती है, विकसित होती है और अपनी सार्थकता सिद्ध करती है । त्याग ही उसका जीवन होता है और अन्त तक वह अपनी उसी पवित्र त्याग-भावना का प्रदर्शन करती जाती है ।

नारीत्व का चरम विकास मातृत्व में है, जो हमें महादेवी वर्मा के रेखाचित्र की गुँगिया तथा नवजात अवैध शिशु की विधवा माता अठारह वर्षीया बालिका में उपलब्ध होता है । गुँगिया ने मौसी होकर भी हुलासी का इतने स्नेह तथा दुलार से पालन किया कि माँ भी जीवित होती तो संभवत: वैसा न कर पाती । उसकी तत्परता तथा निश्चल प्रेम का चित्र महादेवी इस प्रकार खींचती है - गाँववालों ने

---

1. रामेश्वरी देवी चकोरी, धूपछाँह, तथा अन्य कहानियाँ, पृ-16
2. डॉ.गीतालाल, प्रेमचन्द का नारी चित्रण, पृ-135.

इस गूँगी माँ का सन्तान-पालन देखकर दाँतों तले उँगली दबायी । उसने एक बैल बेच कर बच्चे के दूध केलिए दो बकरियाँ खरीदीं ।"[1] जब हुलसी अपने पिता के साथ रहना चाहता है तब गुँगिया अपना कंगने गिरवी रखकर उसे पिता के पास भेज देने का प्रबन्ध करती है । लेकिन विमाता की कठोर व्यावहारिकता से पराजित होकर हुलसी लौट आता है । उस समय एक सन्यासी उस गाँव आ जाता है । और उस योगी के आकर्षण में हुलसी फँस जाता है और उनके साथ भाग भी जाता है । कई वर्षों बाद पता चलता है कि हुलसी कलकत्ते में काम करता है और उसकी शादी भी हो गयी है । लेकिन माँ की खोज-खबर तक न लेनेवाले बेटे के प्रति उसकी ममता और बढ जाती है । उसकी चिन्ता को महादेवी इस प्रकार उभार देती है "उसका लडका न जाने कितने कष्ट से दिन बिताता होगा । उस परदेश में किसने उसकी भूख प्यास की चिन्ता की होगी, किसने उसके कपडे लत्ते का ध्यान रखा होगा - - - -"[2] वह हुलसी को फिर भी दोषी मानने को तैयार नहीं है । गूँगिया उसी को सर्वस्व मानकर एक दिन अपने पुत्र के खिलौनों के साथ अपनी जीवन-लीला समाप्त कर देती है ।

भारतीय माता की ममता अत्यन्त दृढ होती है । हमारा समाज इससे अपरिचित नहीं कि "सन्तान केलिए हिन्दू नारी क्या नहीं कर सकती । उनके कल्याण केलिए अपना तन-मन सभी कुछ निछावर कर सकती है - प्रसन्नता से ।"[3] सुभद्राकुमारी चौहान ने अपनी कई कहानियों में नारी की इस परम-प्राकृत-मातृत्व भावना का मार्मिक रूपांकन किया है । अविवाहित गोरी मातृत्व भावना के वशीभूत काँग्रेस सेक्रेटरी सीताराम के बच्चों के पास जाने केलिए तडप उठती है । माँ के मना करने पर भी वह कहती है - "नहीं माँ, नहीं, मैं पागल नहीं हूँ । बच्चों को तुम भी जानती हो । उनके पिता को राजद्रोह के मामले में साल भर की सजा हो गयी है । बच्चे छोटे हैं । मैं जाऊँगी माँ, मुझे जाना ही पडेगा।"[4] मातृत्व के मनोवेग का विरोध करने की सामर्थ्य न समाज में थी, और न माँ में । "पवित्र ईष्या" की विमला एकमात्र अन्तिम सन्तान थी । "नई सभ्यता की

---

1. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ, पृ-141
2. " " -150
3. सुभद्राकुमारी चौहान, सीधे सादे चित्र, पृ-29
4. " -

पक्षपातिनी होने पर भी सन्तान केलिए विमला की माँ ने, जिसने जो कुछ बतलाया वही किया ।"[1] "हींगवाला" की सावित्री दंग के कारण अपने बच्चों के अनिष्ट भय से आतंकित हो उनकी मंगल-कामना केलिए सभी देवी-देवता मनाने लगती है । "राही", "रूपा" कहानियों की नायिकाओं में मातृत्व भावना का अभाव नहीं अपितु सन्तान की ममता, वात्सल्य ने उनके मातृत्व को कलंकित बना दिया है । सन्तान केलिए उन्होंने चोरी, आत्महत्या जैसे दुष्कर्म किये और परिणाम स्वरूप उन्हें जेल की यातनाएँ सहन करनी पडीं ।

कमला त्रिवेणी शंकर की "माँ", "माँ का आँचल", "नारी", "नारीत्व", "पुकार", "मातृत्व की छाया में", "नई माँ" तथा "ममता" शीर्षक कहानियों में नारी में मातृत्व भाव की प्रबलता का चित्रांकन है । "माँ" की गिरिबाला में इसी वृत्ति को लक्ष्य करके उसके पति आनन्द सोचते हैं - "पत्नी बन कर ही नारी ने मातृत्व का पद पाया है, लेकिन पहले वह माता, है तब पत्नी ।"[2] गिरिबाला अपने एक वर्ष पूर्व खोये पुत्र मानिक के स्थान पर एक मृत भिखारिन के नन्हे पुत्र को पाकर तृप्त हो जाती है । मातृत्व का वरदान वेश्या के जीवन की दिशा को बदल सकता है (माँ, पुकार, ममता), नारी के निराश एवं मरणासन्न जीवन को पुन: सजीव कर सकता है (माँ का आँचल) और उसके संस्कारजन्य विचारों में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सकता है (मातृत्व की छाया में) । "माँ का आँचल" की प्रभा सपत्नी के अवैधशिशु को अपनाकर इतनी सन्तुष्ट हो जाती है कि उसकी तपेदिक-जैसी भयंकर बीमारी भी स्वत: दूर हो जाती है । "नारी" की सरोजनी अपने विश्वासघाती प्रियतम प्रमोद को चाहकर भी अवहेलना नहीं कर पाती, क्योंकि उसकी दिवंगता पत्नी के नवजात शिशु ने उसके मातृत्व को वशीभूत कर लिया । "ममता" की नर्तकी पुत्री रमा प्रभात के तीन मातृहीन बच्चों के स्नेह में अपना व्यवसाय छोडकर प्रभात की पत्नी बन गयी ।

सत्यवतीजी का सर्वोच्च गुण है, उनकी मातृत्व भावना । इसी से "दो फूल"

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, उन्मादिनी, पृ-67
2. कमला त्रिवेणी शंकर, जयमाल, पृ-26.

"जीवन सन्ध्या", "हसन" आदि कहानियों में वात्सल्य और मातृप्रेम का स्वच्छन्द निर्झर प्रवाहित है। "जीवन सन्ध्या" की विधवा गंगा जीवन की उलझनों को सहन करते हुए अपने एकमात्र पुत्र मनोहर का पालन-पोषण कर उसे शिक्षित बनाती है। एक दिन मनोहर कालेज में प्रोफेसर बन जाता है। मनोहर माँ की स्नेहमयी छाया में अपूर्व शान्ति प्राप्त कर अपने जीवन को कृतकृत्य समझता है। मनोहर का विवाह निश्चित हुआ, परन्तु आह्लाद और उल्लास में भी केवल इस विचार मात्र से कि विवाह उपरान्त पुत्र का संपूर्ण कार्यभार पुत्रवधु के अधिकार में हो जाएगा, माता विह्वल हो उठती है, "तो क्या मुझे "बच्चे" की संपूर्ण चिन्ता, संपूर्ण देखभाल एक नये व्यक्ति के हाथों में सौंप देने होगी ?"[1] इस प्रकार सत्यवती ने नारी हृदय की व्यक्त और अव्यक्त मातृत्व भावनाओं एवं धडकनों को चित्रित किया है। रामेश्वरी देवी "चकोरी"जी ने नारी जीवन की सफलता मातृत्व में देखी है। वास्तव में मातृत्व में ही नारी का चरम विकास और वात्सल्य में प्रेम की पूर्णता है। "माता की ममता" की सुधा पाप के भय से अपने हृदय के टुकडे को एक भिखारिन को सौंप देती है, परन्तु उसको बच्चे की ममता के कारण पीडामय क्षण व्यतीत करने पडते हैं। "वन्ध्या" में वन्ध्या रेणु का सपत्नी के शिशु के प्रति अपार प्रेम तथा "विमाता" में रजनी का सौतेले पुत्र के प्रति ममत्व दिखाकर श्रीमती तारा पाण्डे ने नारी के मातृत्व रूप की महिमा प्रकट की है।

नारी को सभी कुछ सह्य है परन्तु सभी कुछ सहन करने की शक्ति के बावजूद भी उसे असहनीय है कि वह समाज में वंध्या कहलाये। "कैलाश दीदी" कहानी में इस बात को बडे मनोहर ढंग से कमला चौधरी ने प्रस्तुत किया है। कैलाश दीदी सन्तान हीनता के कारण अत्यन्त दुखी है और उसकी यह भावना ही सहोदरा के बच्चों के प्रात ईर्ष्या का कारण बनती है। एक दिन अकस्मात् अज्ञात बच्चों को ग्रहण कर किसी प्रस्तर खण्ड के नीचे दबा मातृत्व-निर्झर एकबारगी ही बाहर आ जाता है और अन्त में वास्तविकता से परिचित होने पर भी उसका मातृत्व ईर्ष्या में नहीं बदलता।

---

1. सत्यवती मल्लिक, दो फूल, पृ-19

महिला कहानीकारों का नारी संबंधी दृष्टकोण :-

स्वातंत्र्य प्राप्ति से पूर्व महिला कहानीकारों ने पारिवारिक और सामाजिक भूमिका पर नारी चित्रण प्रस्तुत किया है। इन्होंने विधवा-विवाह-निषेध, दहेज-प्रथा, बाल-विवाह, स्त्री-शिक्षा-विरोध, वृद्ध-विवाह आदि कुरीतियों की भरपूर निन्दा की है। सामाजिक व्याघातों से उत्पन्न व्यक्तिगत पीडाओं और कुंठाओं का चित्रण करके इन लेखिकाओं ने सामाजिक गतानुगतिका के प्रति अनास्था व्यक्त की है। इस युग की कहानियों में आदर्श की अपेक्षा यथार्थ चित्रण के प्रति प्रबल आग्रह रहा है। समाज में विधवा की दुर्दशा, पुरूष-वर्ग की दुराचारी प्रवृत्ति, पतियों की उपेक्षा तथा विश्वासघात के परिणामस्वरूप विवाहिता नारियों की आत्मपीडा, वर्णाश्रम व्यवस्था की निस्सारता, स्वच्छन्द प्रेम के सफल तथा असफल परिणाम आदि इन कहानियों के प्रमुख विषय हैं। लेखिकाओं ने स्थिति के यथार्थ चित्र अधिक प्रस्तुत किये हैं तथापि इनकी कहानियों में समाज-सुधार के प्रति विशेष आग्रह रहा है। पीडित नारियों के प्रति संवेदना इन कहानियों का प्रमुख स्वर है। पतितों के उत्थान की आकांक्षा सब में समान रूप से दृष्टगत होती है। लेखिकाएँ अपनी कृतियों में नारी को रूढियों से मुक्त कराकर पुरूष के समकक्ष सम्मानपूर्ण स्थान दिलाने की प्रबल पक्षधर हैं। उनकी दृढ आस्था है कि इस लक्ष्य को प्राप्त करने केलिए नारी की वर्तमान स्थितियों में पर्याप्त बदलाव लाने की आवश्यकता है। यह अपेक्षित बदलाव नारी-समानता, नारी-स्वातंत्र्य, राजनीति में नारी की सक्रिय एवं रचनात्मक भूमिका तथा नारी को स्वतंत्र आर्थिक आधार मिलने पर ही घटित हो सकता है। आशय है कि महिला कहानीकारों ने भारतीय नारी के विषय में जो दृष्टकोण अपनी कृतियों के माध्यम से व्यक्त किया है, वह यथार्थपरक, प्रासंगिक एवं वांछनीय है। यहाँ हम उसे स्पष्ट करने का प्रयास करेंगे।

नारी-समानता :-

स्त्रियों और पुरूषों में सामाजिक और कानूनी दृष्टि से बहुत अन्तर था। जहाँ पुरूष अपनी पत्नी के जीवित रहते हुए भी कई विवाह कर सकता था, वहाँ स्त्री केलिए चाहे वह बाल-विधवा ही क्यों न हो, पुनर्विवाह पाप था। हिन्दु समाज का पुरूष के प्रति यह बहुत बडा पक्षपात था। समाज के न्याय का मानदंड

स्त्री और पुरूष केलिए एक नहीं था । नैतिक भूलें पुरूषों की अपेक्षा स्त्रियाँ कम ही करती थीं, किन्तु समाज की दृष्टि में पुरूष का जो कार्य क्षम्य था, या कम से कम सह्य तो था ही, वही स्त्री के लिये बिलकुल गर्हिता था और उसकेलिए कानूनी और सामाजिक दंड का विधान था । सब से क्रूर दंड तो यह था कि वह स्त्री फिर समाज में किसी प्रकार स्वीकृत नहीं होती थी, सभी उसे घृणा की दृष्टि से देखते थे । सन् 1920 के असहयोग आन्दोलन के बाद, भारत में एक नवीन सामाजिक और राजनीतिक चेतना का उदय हुआ । गाँधीजी ने स्त्री और पुरूष की इसी असमानता को लक्ष्य करके एक बार कहा था, "कानून को चाहिए कि उन्हें {स्त्रियों को} पुरूषों की अपेक्षा किसी प्रकार शक्तिहीन नहीं रखें । मैं तो लडकों और लडकियों के बीच पूर्ण समानता का व्यवहार करना चाहता हूँ ।"[1]

शिवरानी प्रेमचन्द की कहानियों में स्थान-स्थान पर इस विषमता का चित्रण मिलता है । "पुनर्मिलन" का नायक यदुनाथ अपनी पत्नी को कुरूपा कहकर मायके भेज देता है, तो यदुनाथ की सातों बहिनें भी यह कहकर उसके घर आ बैठती है कि हम भी अपने कुरूप पतियों के घर नहीं रहेंगी । नारी-जाति के प्रतिकार का यह अद्भुत रूप देखकर अन्तत: यदुनाथ को परास्त होना पडता है । पति पागल, कोढी, क्रोधी, लूला, लँगड़ा, कुरूप जैसा भी हो, स्त्री का प्रथम कर्तव्य था कि वह पति की इच्छाओं और आज्ञाओं के आगे सर झुकाए और उसके संरक्षण में रहे । पुरूष को इसके विपरीत, अनेक सुविधाजनक अधिकार प्राप्त थे । स्त्री केलिए नैतिकता के निर्वाह का दोहरा मानदंड था । उपर्युक्त कहानी नारी में विकसित समानता के भाव का द्योतक है । शिवरानी प्रेमचन्द नारी के अधिकारों की सच्ची समर्थिका रही हैं । "वधु-परीक्षा" की निर्मला विवाह से पूर्व "प्रदर्शनी" बनना पसन्द नहीं करती थी, अत: जब गंगाप्रसाद विवाह की स्वीकृति दे देता है तब वह उसे अस्वीकार करके यह सिद्ध कर देती है कि नारी पुरूष से किसी प्रकार भी कम नहीं है । "समझौता" की नायिका ललिता पति के समक्ष विभिन्न तर्क-वितर्क प्रस्तुत करके नारी के समानधिकारों को सिद्ध करती है और अन्त में मोहन को पत्नी की विचारधारा से सहमत होना पडता है । "वधु-परीक्षा" की निर्मला विवाह के संबंध में अपना मत स्पष्ट शब्दों में कह

---

1. मो.क. गाँधी, महिलाओं से, पृ-24

देती है - "विवाह मैं करूँगी । जैसे इस विषय में आप स्वाधीन है, वैसे ही मैं भी स्वाधीन हूँ ।"[1]

सुभद्राकुमारी चौहान नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व की पक्षपातिनी है । उनका सिद्धान्त था कि नारी की अपनी इच्छाएँ, आकांक्षाएँ हैं, उनकी पूर्ति का उसे पूर्ण अधिकार है । उनका कथन है, - "मनुष्य की आत्मा स्वतंत्र है, फिर चाहे वह स्त्री शरीर के अन्दर निवास करती हो, चाहे पुरूष शरीर के अन्दर । इसी से पुरूष और स्त्री का अपना-अपना व्यक्तित्व अलग रहता है ।"[2] सुभद्राजी का स्पष्ट मत था कि पति-वरण का अधिकार कुमारियों को मिलना चाहिए । "गौरी", "प्रोफ्सर मित्रा", "मंगला" कहानियाँ कुमारियों के पति-वरण अधिकार भावना को लेकर ही रची गयी है । "गौरी" अपने माता-पिता द्वारा निर्वाचित वर तहसीलदार को ठुकराकर राष्ट्र प्रेमी सीताराम को पति रूप में वरण करती है । "प्रोफसर मित्रा" की मृणाल स्वयं ही कान्ति से विवाह करने का निश्चय करती है । "मंगला" की नायिका मंगला चाहे बाद में अपनी माता की इच्छा से उनके द्वारा निर्वाचित वर सुदर्शन से विवाह कर लेती है, किन्तु विवाह के पूर्व वह माँ से स्पष्टत: कह देती है कि "वह पुरूष की इच्छाओं की दासी नहीं बनना चाहती ।"[3] अत: स्पष्ट है कि इन कहानियों में लेखिका ने नारी अधिकार सजगता की ओर विशेष ध्यान दिया है । "सुभद्राजी ने प्रथम बार नारी को सच्ची मानवी रूप में देखकर समाज में उसकी प्रतिष्ठा की स्थापना केलिए ज़ोरदार आवाज़ उठाई है ।"[4]

सुमित्राकुमारी सिन्हा की कहानियों में हमें नारी-विरोध के प्रथम दर्शन परिलक्षित होते हैं । उन्होंने व्यंग्य की भूमिका पर नारी-पुरूष की समानता की प्रतिष्ठा की है । पति द्वारा पत्नी से यह पूछे जाने पर कि वह उसे प्यार करती है या नहीं, "विद्रोहिणी" की सरला का यह व्यंग्यपूर्ण कथन द्रष्टव्य है - "पति परमेश्वर है, पत्नी उसकी दासी ही बन कर उसे पूज सकती है । ऐसा हमारे हिन्दु

---

1. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, नारी हृदय, पृ-156
2. सुभद्राकुमारी चौहान, उन्मादिनी -निवेदन भाग से,
3. सीधे-सादे चित्र, पृ-118
4. ऊर्मिला कुमारी गुप्ता, हिन्दी कथा साहित्य के विकास में महिलाओं का योग, पृ-149

धर्म और ज्ञान ने सिखाया है ? तो फिर स्वामी और दासी में प्यार कैसा । प्यार तो स्वतंत्र होता है । समानता चाहता है ।"[1] यथार्थ परिवेश में नारी-जीवन में व्याप्त वैषम्य का कारण लेखिका ने आर्थिक ही माना है । सुश्री ऊर्मिला गुप्ता के शब्दों में "सुमित्राकुमारीजी ने अपनी कहानियों में कटु यथार्थ का चित्रण किया है । मर्यादा की परंपरागत श्रृंखलाओं में बद्ध पुरूष और समाज के अत्याचारों में पिसती हुई भारतीय नारी के अन्तर में कितनी अशान्ति, कितना विद्रोह एवं कटुता भरी है - यह सब उन्होंने अनावृत करके दिखा दिया है । - - - वे समाज का पुनर्निमाण चाहती है जिसमें नारी आर्थिक दृष्टि से आत्म-निर्भर रह कर समानाधिकार प्राप्त कर सके ।"[2] महिला कहानीकारों की कृतियों में नारी समानता के महत्व को अनेक सन्दर्भों में रेखांकित किया गया है ।

नारी-स्वातंत्र्य :-

स्वातंत्र्यपूर्व युग में नारी-स्वतंत्रता का प्रश्न महत्वपूर्ण बनकर सामने आया । इस युग के साहित्यकारों ने नारी की व्यक्तिगत स्वतंत्रता और उसकी आर्थिक स्वतंत्रता दोनों पर ही विचार किया है । नारी समानाधिकार के इस युग में भी नारी ने व्यावहारिक रूप से अपने अन्दर स्वतंत्रता का अनुभव नहीं किया । सैद्वान्तिक रूप से नारी स्वतंत्रतावादी होने पर भी, रूढियों से जकडे शिक्षित भारतीय मनुष्यों के दृष्टिकोण में परिवर्तन संभव न हो सका था । सुभद्राकुमारी चौहान ने "मझली रानी", "आहुति", "उन्मादिनी", "पवित्र ईर्ष्या", "दो साथी" नामक कहानियों में अत्यन्त सहानुभूतिपूर्ण ढंग से इस प्रश्न को उठाया है । "मझली रानी" में पति की उदासीनता और पारिवारिक बन्धनों के तप्त वातावरण में मास्टरजी का सद्व्यवहार, सहानुभूति मझलीरानी का उनके प्रति आकर्षण का कारण बनता है । इसी पाप के कारण उसे घृणित आरोप लगा कर घर से निकाल दिया जाता है । और अन्त में उसे भिक्षावृत्ति का सहारा लेना पडता है ।

उषादेवी मित्रा की कहानियों में व्यक्ति-स्वातंत्र्य की स्थापना करनेवाले

- -

1· सुमित्राकुमारी सिन्हा, अचल सुहाग, पृ-117

2· ऊर्मिला कुमारी गुप्ता, हिन्दी कथा साहित्य के विकास में महिलाओं का योग, पृ-222

पात्र मिल जाते हैं । "छोटा प्रश्न" में ललिता रात में जब कुए पर पानी भरती हुई पकड़ी जाती है तो वह समस्त सामाजिक रूप से मुक्त होकर धर्म के ठेकेदारों के सामने यह कहकर "जल मनुष्य का प्राण है ? तो जीवन भी कहीं छुआछूत के भीतर आ सकता है ? और जीवन भी कहीं अपवित्र हुआ है"[1] एक प्रश्न चिह्न लगा देती है । "पहचान" में बेटी पुत्री डिना और पति के होते हुए भी रोले से विवाह कर लेती है । "सुमित्रा कुमारी सिन्हा की नारी-पात्राओं की मौलिक विशेषता यह है कि वे अन्याय को मौन भाव से ग्रहण नहीं करतीं बल्कि वे पुरूषों को सक्रिय प्रत्युत्तर भी देती है । उदाहरणार्थ "व्यक्तित्व" की इला पति द्वारा त्यक्त होकर समाज-सुधार को अपना लक्ष्य बनाती है । जब उसके पूर्व प्रेमी मृदुला ने लिखा है कि वह उसे आर्थिक सहायता दे सकता है तब उसने कहा - "कायर, स्त्री को पालतू पशु से भी गिरा हुआ समझने-वाला पुरूष, तुम अपने को समझते क्या हो ?"[2] "मैं भी जाऊँगी" {सुमित्राकुमारी सिन्हा की कहानी} की नायिका कजरी पति की अपेक्षा देवर चन्दन को अधिक चाहती है, अत: पति, कुटुम्बी, जात-बिरादरी, समाज, पंचायत सब को धता बताकर अपने प्रिय के साथ भाग निकलती है । "व्यक्तित्व की भूख" में मृदुल पति द्वारा त्यक्ता अपनी प्रेमिका इला को आर्थिक सहायता देकर ही अपने कर्तव्य की इतिश्री मान लेना चाहता है, तभी तो वह क्रुद्ध सर्पिणी की भाँति फुफकार उठती है और उसकी सहायता के प्रस्ताव को अस्वीकार कर देती है ।

कमला त्रिवेणी शंकर की "नारी का स्वाभिमान" की शीला पति से त्यक्त होकर मायके वापस आ जाती है । चौदह वर्षों तक त्यक्ता रहकर पति के आग्रह पर पुन: घर लौटने को वह तैयार नहीं हुई, क्योंकि जब पति ने तनिक से सन्देह पर उसका त्याग कर दिया तब वह स्वाभिमानिनी नारी चौदह वर्ष बाद उनके पश्चाताप और आमन्त्रण को क्यों स्वीकार करें ? जहाँ पति सद्भावों का परिचय देता है वहाँ नारी पीछे नहीं रहती । लेखिका की "समझौता" में नायिका कामना द्वारा अपने पति को लिखे गये पत्र की अधोलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य है - "आज इस बीसवीं सदी में नारी से केवल पत्नीत्व की ही माँग करना अन्याय है । आज नारी से देश की

---

1. उषादेवी मित्रा, महावर, पृ-28

2. सुमित्राकुमारी सिन्हा, अचल सुहाग, पृ-26

भी कुछ माँग है । उस माँग को पूरा करना, कम से कम मेरा विचार है, प्रत्येक नारी का कर्तव्य है ।"[1] स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय भाग लेने का, उसका विचार लेखिका के नारी के प्रति प्रगतिशील दृष्टिकोण का ही परिचायक है । "अमीर की बेटी" में जब दहेज कम मिलने के कारण नीलिमा के पिता तथा उनके अन्य संबंधी उनकी अवहेलना करके उसे गायके भेज देते हैं तब वह भी अपने पिता से स्पष्ट कह देती है - "पिताजी आज के युग में स्त्रियाँ सम्बलहीन नहीं है । मैं पढ़ूँगी और नौकरी करूँगी । पर ऐसे घर में शायद अब लौट कर नहीं जा सकूँगी , जहाँ के लोगों ने मुझे मिट्टी के खिलौने की भाँति ठुकरा दिया ।"[2] नीलिमा का यह कथन उसका परंपरा सामाजिक मान्यताओं में अनास्था और नवीन विचारों में उसके विश्वास को प्रकट करता है । महिला महानीकार नारी-स्वातंत्र्य एवं समानाधिकार के पक्षधर रहे हैं

नारी और आर्थिक स्वावलंबन :-

आधुनिक युग में यह विचार बडी तीव्रता से विकसित और सर्वस्वीकृत है कि बिना आर्थिक स्वतंत्रता के स्त्री समाज को पुरूष वर्ग के शोषण और दासता से मुक्ति दिलाना असंभव है । आर्थिक आधार का विकास और स्थायित्व ही नारी के करूण और भोग्या रूप का समापन कर उसे समाज में अपेक्षित प्रतिष्ठापूर्ण स्थान की प्राप्ति कराने में सहायक हो सकता है । परावलंबता ने नारी के सर्वांगीण विकास को अकल्पनीय रूप से बाधित किया है । पति की मृत्यु होते ही नारी को आर्थिक संकट का सामना करना पडता है । आर्थिक संघट मध्यवर्गीय विधवा नारी के सम्मुख और भी विकट रूप में आता है ।

श्रीमती उषादेवी मित्रा का संपूर्ण साहित्य इस बात की उद्घोषणा करता है कि बिना आर्थिक मुक्ति के नारी किसी भी प्रकार की मुक्ति नहीं पा सकती, अतः स्वाभिमानपूर्ण जीवन-यापन तभी संभव है जब कि आर्थिक दृष्टि से पराधीन नहीं रहने पायेगी । अत: जीवन के साथ जुडी हुई अन्य समस्याओं के साथ-साथ उसका आर्थिक पहलू भी अत्यधिक विचारणीय है । तभी तो "बहता फूल" कहानी की विधवा पुष्पा निराश्रित होकर पान की दूकान खोल बैठती है । पुष्पा महत्वाकांक्षाओं के कारण

---

1. कमला त्रिवेणी शंकर, पुकार, पृ-83
2. जयमाल, पृ-115

निर्धन सिरिराम का अपमान कर अमीर हरीसिंह के घर चली जाती है । लेकिन वहीं रहने पर भी जब हरिसिंह की माँ उसे पुत्र-वधू के रूप में स्वीकार नहीं कर पाती, तब वह पछताकर आर्थिक दृष्टि से आत्म-निर्भर होने केलिए पान की दूकान खोलकर बैठ जाती है, लेकिन वहाँ लोगों की कामुक दृष्टि का शिकार होने के कारण पुन: सिरिराम की शरण में आती है । मध्यवर्गीय नारी के आर्थिक संकट को उषादेवी ने "पिया" नामक उपन्यास की नीलिमा के चरित्र में भली प्रकार चित्रित किया है । वह भद्र ब्राह्मण परिवार में पैदा हुई है, इसलिए गरीबी की दिशा में भी उसे न तो कहीं काम करने दिया जाता है और न उसके पहनने-ओढने का कोई प्रबन्ध होता है । नीलिमा अपनी माँ के सम्मुख इन थोथी मान्यताओं का भण्डाफोड करती हुई कहती है - "भद्र घर के सम्मान ने ही तो हमें बेकाम बना दिया है । यदि मैं नाई, धींवर, चमार, मेहतर के घर पैदा हुई होती तो कहीं मजूरी कर पेट भर भोजन तो कर लेती ।"[1] विधवा नारी का यह अर्थाभाव उसे पतन की ओर ले जाने का भी प्रमुख कारण होता है । "जीवन का एक दिन" (उषादेवी मित्रा की कहानी) की परमा आर्थिक कष्टों में पिसी हुई भिखारिणी बन जाती है । तब एक दिन विनय नाम का एक प्रतिष्ठित व्यक्ति उसे ससम्मान ले आता है । लेकिन जहाँ उसे उतारा गया वह वेश्याओं का अड्डा था और विनय वहाँ रात में छिपकर आया करता था। पहिले तो सीधी सरल परमा इस बात को समझी ही नहीं, जब समझी तब सुख आराम वैभव, विलास से उसकी चेतना आच्छन्न हो चुकी थी ।

सुमित्राकुमारी सिन्हा ने अपनी कहानियों में आर्थिक परतंत्रता में जकडी हुई नारियों की समस्याओं को अंकित किया है । आर्थिक परतंत्रता ही "गृहलक्ष्मी" की माया के अपमान, तिरस्कार का कारण बनती है और उसका हृदय अन्दर ही अन्दर हाहाकार कर उठता है । पति की कटूक्तियाँ सुनकर ग्लानी और वितृष्णा से उसकी छाती उच्छ्वसित हो उठती है, "कहते हैं अपनी दूकान खोल बैठो न ? अभी करके दिखा दे तो सारी हेकडी निकल जाए ? क्या वह नहीं कमा सकती ? लेकिन मुश्किल तो यह है, स्त्री को यह पुरूष हमेशा गुलामी में ही रखना चाहते हैं, हमारा स्वतंत्र होकर रहना उन्हें फूटी आँखों नहीं सुहा सकता ।"[2] "सफल नारीत्व" की माला

---

1. उषादेवी मित्रा, पिया, पृ-20
2. सुमित्राकुमारी सिन्हा, वर्षागाँठ, पृ-3

द्वारा लेखिका ने स्पष्ट शब्दों में नारी की आर्थिक स्वतंत्रता का समर्थन कराया है, "आर्थिक स्थितियों से दबी, पति के व्यक्तित्व में अपना व्यक्तित्व मिटाकर, नारीत्व का उपहास कर मातृत्व को अपना कर, नारी क्या नारी रह सकेगी ? तुम अपनी आर्थिक स्वतंत्रता न खो और विवाह बन्धन में बँधने से बची रहो ।"[1] "पत्थर की देवी" की शान्ति जिसे उस दिन एक सामान्य सी बात पर उसके पति ने मारा - पीटा था, किसी घटना के प्रसंग में धोबिन से संभाषण करते हुए कहती है कि "वह तथा उसके वर्ग की अन्य नारियाँ तो इसलिए पति की धौंस सहती है कि वे आर्थिक दृष्टि से पति पर निर्भर है, किन्तु धोबिन के वर्ग की नारियाँ जब अर्थोपार्जन में बराबर का योग देती है, तो पति का अनुचित रौब क्यों सहें ?"[2] लेखिका का मत है कि आर्थिक पराधीनता ही नारी-शोषण का मूल कारण है । "बेजुबाँ"[3] की नन्दो की संपूर्ण दया, माया, ममता, स्नेह, प्यार, हृदय की समस्त कोमल भावनाएँ पेट की भट्टी में भस्मात हो गयी । नन्दों अपना और बच्चे का पेट भरने केलिए काम करती है । उसके पास समय नहीं कि वह अपने बच्चे की देखभाल ठीक से कर सके । अन्त में विवश नन्दों बच्चों को अफीम दे हमेशा केलिए सुला देती है । नन्दों के समान कितनी ही माताएँ इस आर्थिक विषमता के कारण अपने बच्चों को खो बैठी है ।

नारी का परावलंबन, जिसका प्रमुख रूप आर्थिक है, उसके शोषण का मूल कारण है । "अमीर की बेटी" में जब दहेज कम मिलने के कारण नीलिमा के पति तथा उनके अन्य संबंधी उसकी अवहेलना करके उसे मायके भेज देते हैं तब वह भी अपने पिता से स्पष्ट कह देती है - "पिताजी, मैं पढ़ूँगी और नौकरी करूँगी । पर ऐसे घर में शायद अब लौट कर नहीं जा सकूँगी, जहाँ के लोगों ने मुझे मिट्टी की खिलौने की भाँति ठुकरा दिया ।"[4] "गिरती दीवारें" (चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की कहानी) की विमला ने अपनी करूण स्थिति में किंचित सुधार कर लिया । विधवा

---

1. सुमित्राकुमारी सिन्हा, वर्षोगाँठ, पृ-18
2. " " पृ-48-49
3. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, आदमखोर, पृ-140
4. कमला त्रिवेणी शंकर, जयमाल, पृ-115.

हो जाने पर उसे भार समझकर सास, जेठ, जिठानी सभी उससे और उसकी पुत्री शीला से दुर्व्यवहार करते थे, अत: उसने पडोस की सिलाई करके जीविका प्राप्त की और लोक-लाज को तिलांजली दे दी । तीव्र वेदना में जलती हुई नारियाँ सामाजिक रूढियों और सामंती अत्याचारों की शिकार हैं । चाहे युवावस्था का वैधव्य हो या पति द्वारा त्यक्ता, अपनी निजी यातना के माध्यम से वे इस तथ्य को भलि-भाँति समझती हैं कि आर्थिक निर्भरता ही उन्हें इस अमानवीय नरक से बाहर निकाल सकती है ।

नारी और वर्ण व्यवस्था; अन्तर्जातीय विवाह :-

यद्यपि विभिन्न सामाजिक कुप्रथाओं का निवारण करने केलिए अनेकों कानूनों की व्यवस्था हो गयी थी परन्तु इससे बुराइयाँ नहीं मिटीं केवल कानून व्यवस्था की तुष्टि हुई । हिन्दु समाज-संगठन का मुख्य आधार था, सामाजिक वर्ण-व्यवस्था। संपूर्ण समाज चार वर्णों में विभाजित है, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र । ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य को समाज में अधिकार, आदर और प्रतिष्ठा प्राप्त थी, शूद्र वर्ण को अस्पृश्य घोषित कर दिया गया था। स्वतंत्रता से पूर्व तक देश में उनकी स्थिति शोचनीय थी । सामाजिक और व्यावहारिक दृष्टि से किसी की ओर से न तो उनके प्रति वास्तविक सहानुभूति हो, प्रदर्शित की जाती थी और न इनको सेवा के अतिरिक्त किसी अन्य के योग्य ही समझा जाता था ।

उषादेवी मित्रा की कहानी "छोटा प्रश्न" में छुआछूत समस्याको व्यापक सन्दर्भों में उठाया गया है जिससे इस समस्या के वैयक्तिक और सामाजिक दोनों रूपों का एक दूसरे पर पडता हुआ प्रभाव चित्रित होता है । ललिता शूद्र है । उसे कुओं से पानी भरने की और मन्दिर में प्रवेश करने की मनाही है । गर्मी में समस्या और भी बढ जाती है । वह अपने जीवन की विडम्बना पर विचार करने को विवश होती है । वह सोचती है - "देवता ने मुझे जैसी भंगिन को किसलिए और क्यों कौन कौन से उद्देश्य से रचा है ? वह ऐसी घृणित, ऐसी अछूत है कि दूर से देव दर्शन तक निषिद्ध है । ऐसे जीव की सृष्टि ही ईश्वर ने क्यों की ?"[1] लेकिन यह

---

1. उषादेवी मित्रा, महावर, पृ-33

चिन्तन ललिता को भाग्यवादी न बनाकर विद्रोही बना देता है । वह कहती है - "नहीं मैं उनके सुख आराम केलिए कुछ नहीं कर सकती, जो लोग मुझ से ऐसी घृणा करें । सुनो लल्लू भैया, चलो हम सब घर बैठे रहें । बनिया महाजन जब अपने अपने हाथ से पारखाना साफ करने लगेंगे, वे भी भंगी कहलाने लगेंगे, तब मुझे ठाकुरजी के दर्शन से कोई नहीं रोक सकेगा ।"[1] यहाँ ललिता का असन्तोष निम्न वर्गीय नारी में व्याप्त असन्तोष का प्रतिनिधित्व कर रहा है । लेकिन विभिन्न विवशताओं के कारण वह अभी समाज से खुली टक्कर नहीं ले पा रही है यह विडम्बना उसे पाप (सामाजिक दृष्टि से जिसे हम पाप कहते हैं) की ओर प्रवृत्त करती है । वह गर्मी में चुपचाप रात के गहरे अंधेरे में कुए पर पानी भरने जाती है लेकिन जिस दिन वह पकडी जाती है उसी दिन वह अपने संपूर्ण साहस का परिचय देकर युगों से चली आ रही व्यवस्था के आगे प्रश्न चिह्न लगा कर सब को स्तब्ध कर देती है । उसके द्वारा उठाया गया प्रश्न यह है - "मनुष्य का प्राण जल है ? तो जीवन भी कभी छुआछूत के भीतर आ सकता है ? और जीवन भी कभी अपवित्र हुआ है ।"[2]

कमला चौधरी की "पागल" "भिखमंगे की बिटिया" और "प्रायश्चित" शीर्षक कहानियों में अछूत परिवारों की समस्याओं का चित्रण है । 'भिखमंगे की बिटिया" की अछूत कन्या परवतिया अपमानित-तिरस्कृत होने पर मृत्यु द्वारा मार्ग से हटा दी जाती है । "प्रायश्चित" में अछूत कन्या सुखिया के हाथ का पानी पीने मात्र से सनातन पंथियों का धर्म भ्रष्ट हो जाता है । उच्च एवं कुलीन होने का दंभ करनेवाले धर्म धुरंधर व्यक्ति समाज की आँखों में धूल झोंक कर अछूतों के साथ हर तरह का संबंध रख लेते हैं । "प्रायश्चित" में सेठजी, चमारिन बुद्धो से अवैध संबंध स्थापित करते हैं, किन्तु प्रत्यक्ष में प्रायश्चित करके पावन बनने का ही ढोंग करते हैं । लेखिका को ऐसे समाज से घृणा है । इसी कारण उन्होंने इस कहानी का अन्त इन शब्दों में किया है - ऐसे समय में, निर्जन मैदान में, तीन प्राणी चले जा रहे थे - शहर की गन्दी गलियों से दूर प्राकृतिक सौन्दर्य का सत्संग करने केलिए, समाज की सडी-गली कुरीतियों से स्वाभाविक जीवन व्यतीत करने केलिए - उस समाज के पापों का प्रायश्चित करने केलिए, जो सदियों से मनुष्यों के साथ पशुओं से भी गया-बीता व्यवहार करता आ

---

1. उषादेवी मित्रा, महावर, पृ-33
2. -36

रहा है, जो वास्तविक गुणों का तिरस्कार करके दम्भ और आडम्भर की पूजा करता आ रहा है, और जिसने मनुष्यों और मनुष्यों के बीच असमानता की एक भयंकर दीव खडी कर दी है।"[1] यह कथन जर्जर जाति-वर्ण-व्यवस्था के बन्धनों पर सीधा प्रहार करता है। चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की कहानी "स्पर्श" में हरिशंकर अपने भतीजे मणिशंकर की बहू कल्याणी को इसलिए घर से निकाल देते हैं कि बहू की माँ नायन थी। "मातृत्व की छाया" (कमला त्रिवेणी शंकर की कहानी) में अछूतों के प्रति कुलीन वर्ग की घृणा की चर्चा है। यह सब उच्च-नीच का भेद है जो धर्म, धर्म के बी मानव, मानव के बीच एक जहर फैला रही है।

वास्तव में हिन्दु सामाजिक वर्ण-व्यवस्था एक धार्मिक रूप धारण कर चुकी थी। उस समय अन्तर्जातीय विवाह अवैध था। उषादेवी मित्रा ने "पिऊ कहाँ", "बहता फूल" में अन्तर्जातीय विवाह समस्या को उठाया है। "पिऊ कहाँ" के साँवलिया द्वारा विवाह प्रस्ताव सुनते ही परंपराओं एवं रूढियों में जकडी सीता उत्तर देती है, "छि: ऐसा कहीं हुआ है। तुम ग्वाले हो, हम ब्राह्मण हैं। मामा कहते हैं - सजातीय के सिवा ब्याह नहीं होता, तभी न पारिजात दीदी केलिए वर ढूँढ-ढूँढ कर वे हैरान हो बैठे हैं।"[2] आर्यमत का समर्थक साँवलिया साहस कर यद्यपि सीता से विवाह कर लेता है, परन्तु समाज के विरोध के कारण अन्त में साँवलिया मुनिया से शादी कर जात में मिल जाता है और दुखिनी सीता सागर में कूद आत्महत्या कर लेती है। साँवलिया और सीता को अन्तर्जातीय विवाह सूत्र में बाँधकर लेखिका ने यद्यपि क्रान्तिकारी कदम उठाया है तथापि उसका अन्त दुष्परिणा में दिखाया है।

भारतवर्ष में विशेषत: हिन्दू समाज के जातिभेद ने विवाह समस्या को और जटिल बना दिया है। इस समस्या के निराकरण का केवल एक ही उपाय है कि जाति-भेद के सीमित दायरे को त्याग अन्य जातियों से भी विवाह संबंध स्थापित किया जाए। जागरूक लेखिका सत्यवती मल्लिक ने "श्यामा" कहानी इस समस्या के समाधान स्वरूप ही लिखी है। "श्यामा" का मोहन शहर की पढी-लिखी अप-टू

---

1. कमला चौधरी, उन्माद, पृ-194-195
2. उषादेवी मित्रा, पिऊँ कहाँ, हंस, दिसंबर 1933, पृ-32.

डेट कन्याओं के प्रस्तावों की परवाह न करके सुदूर पार्वत्य प्रदेश की एक विजातीय बालिका से विवाह कर लेता है। लेखिका अन्तर्जातीय विवाह के पक्ष में हैं। उनके विचार में अन्तर्जातीय विवाह राष्ट्र की भावात्मक एकता उत्पन्न करने की एक कड़ी है।

नारी-शिक्षा :-

आधुनिक समाज में नारी के सर्वांगीण विकास केलिए नारी-शिक्षा का महत्व अपरिमेय है। महिला कहानीकारों ने नारी के उत्थान के सन्दर्भ में नारी-शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया है। कारण यह है कि शिक्षा मानवीय गुणों को विकसित कर व्यक्तित्व को पूर्णता की ओर अग्रसर करती है। नारी शिक्षा की दिशा के संबंध में प्रेमचन्द की आद्यन्त यह धारणा रही है कि स्त्रियाँ शिक्षित हो और उसके साथ-साथ स्त्रियों को वे अधिकार मिल जायें, जो सब पुरूषों को मिले हुए हैं।"[1] स्त्री सब केलिए जीती है और मरती है। यदि स्त्री का स्वतंत्र सत्ता न है तो वह स्वतंत्र रूप से सोच भी न सकती। नारी का विवेक विकसित न होने के कारण वह अपनी स्वार्थ-भावना में ही डूबी रहती है और कर्कशा या कलहमयी बन जाती है। प्रेमचन्द युगीन कहानियों में जहाँ भी कर्कशा नारी का चित्रण हुआ है, चाहे वह सास के रूप में हो या देवरानी या जिठानी, ननंदा, भौजाई या पत्नी के रूप में हो, वहीं अशिक्षा को मूल कारण माना गया है।

चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की "गृहस्थी का सुख" में लक्ष्मी की सास रूढिवादी विचारों की अशिक्षित वृद्धा है जो निर्धनता के अभिशाप से ग्रस्त होकर भी यह नहीं चाहती कि उसकी पुत्रवधू का आपरेशन कराके घर में बाल-गोपालों का होना बन्द करा दिया जाए। "दो रोटियाँ" में उमा की सास निरीह वधू से सारा गृह-कार्य कराके उस पर रौब गाँठना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझती है। अशिक्षित गृहिणी का फूहडपन, आभूषण प्रियता, पति के प्रति दुर्व्यवहार आदि का चित्रण होमवती देवी की कहानियों में विशेष रूप से हुआ है। अशिक्षित और फूहड स्त्री घर को कैसा नरकतुल्य बनाये रखती है, यह "कहानी का विषय" आख्यायिका में द्रष्टव्य है - "घर

---

1. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, प्रेमचन्द घर में, पृ-196

में सब वस्तुएँ इधर उधर फैली पडी थीं । खाट पर कपडों का ढेर और आँगन में जूतों की नुमायश-सी लग रही थी । सामने ही नहाने की संगमरमर की चौकी पर साबुनदानी में "पियर्स सोप" की टिकिया पानी में डूबी पडी थी । पास ही तेल की शीशी लुढक रही थी । कपडे कुछ निचोडे हुए पडे थे, कुछ गीले - - - - मुझे ऐसा लग रहा था कि मानो यह भूषण भैया का घर न होकर कोई सराय है ।"[1]

प्रेमचन्द के अनुसार नारी को ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिए , जिससे वह पत्नी, माता और गृहिणी के अपने दायित्वों को समझे और पति के सहधर्मिणी बने ।"[2] "अपना घर" (तेजरानी पाठक की कहानी) में उस समय की शिक्षित स्त्रियों की दशा का वास्तविक परिचय मिलता है । प्रतिभा शिक्षित, सहनशील, और घर के काम-काज में निपुण बहू है । प्रतिभा की सास उसके साथ निर्दयता का व्यवहार करती है, परन्तु प्रतिभा सास के साथ कोई अनुचित व्यवहार करती है, परन्तु प्रतिभा सास के साथ कोई अनुचित व्यवहार नहीं करती । एक दिन प्रतिभा का पति विजयकुमार रोज़-रोज़ के हाहाकार कलह से तंग आकर अलग होने लगता है, उस समय प्रतिभा ही उसे ऐसा करने से रोकती है । प्रतिभा के माध्यम से लेखिका का उद्देश्य व्यक्तियों की उस धारणा का खंडन करना है जो पढी-लिखी लडकियों की टीका-टिप्पणी करते नहीं थकते थे । उनके ऊपर किसी भी प्रकार कलंक लगाना साधारण सी बात थी । "शिक्षित नारियाँ जब अपने ज्ञान और अनुभव का उपयोग पारिवारिक या सामाजिक जीवन में करेंगी, तभी वे भारतीय समाज का प्रतिनिधित्व कर सकेंगी ।"[3]

भारतीय नारियों की हीन दशा का कारण उनकी अशिक्षा और पुरुषों की तुलना में उनकी अधिकार शून्यता ही है तथा उनकी दशा के सुधार केलिए शिक्षा एवं पुरुषों के बराबर अधिकार को आवश्यक माना जाता है । बहुतेरी पढी-लिखी स्त्रियों को वैवाहिक जीवन में नारी की पराधीनता दिखाई पडती है और वे विवाह करने की अपेक्षा नौकरी करके आर्थिक स्वालंबन प्राप्त करना तथा स्वतंत्र जीवन व्यतीत करना ज़्यादा अच्छा समझती है । "अमीर की बेटी" (कमला त्रिवेणी शंकर की कहानी) में जब दहेज कम मिलने के कारण नीलिमा के पति तथा उनके अन्य संबंधी उनकी अवहेलना करके उसे मायके भेज देते हैं तब वह भी अपने पिता से स्पष्ट कह देती है - "पिताजी,

---

1. होमवती देवी, स्वप्न भंग, पृ-97
2. डॉ.गीतालाल, प्रेमचन्द का नारी-चित्रण. पृ-319
3. " " -320

आज के युग में स्त्रियाँ सम्बल-हीन नहीं हैं । मैं पढ़ूँगी और नौकरी करूँगी । पर ऐसे घर में शायद अब लौट कर नहीं जा सकूँगी, जहाँ के लोगों ने मिट्टी के खिलौने की भाँति ठुकरा दिया।"[1] अपने संकल्प पर दृढ रहकर वह एक कालेज में प्रिंसिपल का पद प्राप्त करती है । नारी की मुक्ति आर्थिक रूप से स्वनिर्भर और शिक्षित होने पर ही संभव है ।

ग्रामीण स्त्री लोगों की अज्ञता महादेवी वर्मा ने अत्यन्त तीखी शैली में व्यक्त किया है । गूँगिया के जीवन प्रस्तुत करने से पहले महादेवी भूमिका के रूप में अपने पत्र-लेखन की प्रवृत्ति तथा गाँववालों के भोलेपन तथा अज्ञता का परिचय देती हैं । ग्रामीण लोगों की अज्ञता का लाभ उठानेवाले बाबाओं के चित्र भी महादेवी खींचने को नहीं भूलती हैं । अपनी अज्ञता के कारण ये लोग जीवन की साधारण से साधारण सुविधाओं से वंचित हो जाते हैं, और साधारण सी बात से भी अनजान रहते हैं । "गूँगिया" के रेखाचित्र में इनकी अज्ञता का यथार्थ स्वरूप निखर उठता है । गाँव के लोग अपने सगे संबंधियों को पत्र लिखाने हेतु महादेवी के पास जाते हैं । पत्र लिखते समय वे उनके उपनाम से ही पत्र का संबोधन करना चाहते हैं, उन्हीं नामों को पता के संदर्भ में भी व्यक्त करते हैं । उनका विश्वास है कि शहर में उनके संबंधियों को सभी जानते होंगे, उनके पत्र उन्हीं के हाथ लग जाएगा । पत्र का उत्तर शीघ्र नहीं मिलता है तो वे दुखी हो जाते हैं । उनके मन में अनेक प्रकार के सन्देह जागृत हो जाते हैं ।किसीके मन में सन्देह है कि टिकट पुराना होने के कारण डाकबाबू ने पत्र को रद्दी में फेंक दिया होगा । किसी का विश्वास है कि चिट्ठी भारी हो जाने के कारण बैरंग होकर निरूद्देश घूम रही होगी । उनकी अज्ञता तथा नासमझी का इससे बेहतर चित्र मिलना दुर्लभ है । इसी प्रकार अज्ञता का चित्र बिबिया के रेखाचित्र में भी प्राप्त होता है । अपनी अज्ञता के कारण ही गाँव के लोग बिबिया पर बुरे आचरण का आरोप करते हैं । अज्ञता के कारण ही वे दूसरों की मन:स्थिति जानने की कोशिश नहीं करते हैं । जो उनके कानों में पडे, उसी पर विश्वास कर लेते हैं । बिबिया पर बुरे आचरण का आरोप-भीखन की बातों में आकर सब लोग करते हैं । उस पर लाच्छन लगानेवाले भीखन के आचरण में कोई त्रुटि नहीं देखी जाती है । इन

---

1. कमला त्रिवेणी शंकर, जयमाल, पृ-115

लोगों को उसके बुरे आचरण पर इतना विश्वास है कि उसकी आत्माहुति होने पर भी उसके संबंध में अपवाद फैलते रहते हैं ।

निष्कर्ष यह कि महिला कहानीकारों के नारी-पात्र बहुत अधिक पढे-लिखे नहीं, फिर भी वे नारी शिक्षा के प्रति सचेत है । उनके मत में शिक्षित नारी ही युगों से अन्धविश्वास और रूढि से जकडे जड भारतीय समाज को जागृत कर देश के विकास और उन्नति में अपना सहयोग-सहकार दे सकती हैं ।

नारी और राजनीति :-

भारतीय जनता पर महात्मा गाँधी के सिद्धान्तों और आन्दोलनों का प्रभाव सन् 1920 के बाद से ही पडने लगा था । घर से बाहर निकल कर नारी ने सन् 1920 और 1930 के राष्ट्रीय आन्दोलनों में सक्रिय रूप से भाग लिया था । इस क्षेत्र में जो काम पुरूष नहीं कर सका था, उस काम को नारी ने त्याग, सहृदयता, लगन, दृढता और सचाई द्वारा बडी सफलतापूर्वक किया । नारी की इस छिपी शक्ति को देखकर उस समय की प्रबुद्ध जनता भी चकित हो रही थी ।

तारा पाँडे की "दारोगा की बेटी" राष्ट्रीय कहानी है । नायिका कला पहले विलासप्रिय थी, किन्तु गाँधीजी के राष्ट्रव्यापी प्रभाव तथा अपने दारोगा पिता को देश-भक्तों पर लाठी-चार्ज करते देखकर उसका हृदय परिवर्तित हो गया । अपनी देश-सेविका सखी लीला को देश-भक्ति के अपराध में कारावद्ध होते देखकर वह भी मैदान में कूद पडी और एक दिन पुलिस की लाठी का शिकार बनकर मातृ-भूमि पर बलि हो जाती है । "दीदी का मन्दिर" (रामेश्वरी देवी चकोरी" की कहानी) की कमला कहती है - "देखो, तुम उसी सत्ता के गुलाम हो, जिसे हम लोग मिटाना चाहते हैं ।"[1] कमला का जीवन सेवा के आदर्श से अनुप्राणित है, कमला के जीवन का लक्ष्य है निस्वार्थ निष्काम देश-सेवा तथा देश के निर्धन दुखी वर्ग की सहायता। वह समाज के धनी व्यक्तियों का धन लूट कर निर्धन पीडित दुखी व्यक्तियों की सहायता में लगा देती है । कमला का स्मारक बनाकर लेखिका ने देश केलिए बलिदान होनेवाले युवक-युवतियों के प्रति अपनी श्रद्धांजली अर्पित की है । कमला त्रिवेणी

---

1. रामेश्वरी देवी "चकोरी", धूपछाँह, तथा अन्य कहानियाँ, पृ-65

शंकर की "समझौता" कहानी में नायिका कामना द्वारा अपने पति को लिखे गये पत्र की अधोलिखित पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं - "आज इस बीसवीं सदी में नारी से केवल नारीत्व की ही माँग करना अन्याय है। आज नारी से देश की भी कुछ माँग है। उस माँग को पूरा करना, कम से कम मेरा विचार है, प्रत्येक नारी का कर्तव्य है।"[1]

शिवरानी देवी प्रेमचन्द की राजनीतिक चेतना से अनुप्राणित कहानियों में पुरूषों की अपेक्षा नारियाँ कई पग आगे हैं। उदाहरणार्थ "हत्यारा" की रामेश्वरी अपने घातक पुत्र को दण्ड दिलवाकर अनेक निर्दोष व्यक्तियों की प्राण-रक्षा करती है अन्यथा शासन-व्यवस्था में उन्हें निर्दोष होने पर भी दंड मिलना निश्चित था। इसी प्रकार "कुरबानी" में शान्ति तथा "हार का मूल्य" में चन्दा ने आत्म-बलि दे कर हिन्दु-मुस्लिम वैमनस्य की ज्वार को सदा केलिए शान्त कर दिया। "माता" के दारोगा पुलिस कर्मचारी है, आन्दोलन का दमन ही उनका मुख्य लक्ष्य है, फिर भी उनकी पत्नी राधारानी और पुत्र हनुमान सच्चे देश-भक्त और देश-प्रेमी हैं। स्वराज्य की समर्थिका राधारानी बार-बार पति को नृशंसतापूर्ण आचरण केलिए भला-बुरा कहती है, "तुम्हें तो मैं गुलामी और डण्डेबाज़ी के सिवा और कुछ करते नहीं देखती। असहयोगियों पर झूठे इलजाम लगाते हो, झूठे गवाह बनाते हो।"[2] "कुरबानी" की शान्ति देवी, "गिरफ्तारी" की राजकुमारी, "हत्यारा" की रामेश्वरी, "जेल" की अम्बा, "सौत" की रामप्यारी राष्ट्रीय आन्दोलनों का नेतृत्व करनेवाली देशभक्त नारियाँ हैं।

अपनी कविताओं के राष्ट्रीयता-परक सन्दर्भों की तरह ही सुभद्राकुमारी चौहान ने अपनी कहानियों में भी राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति की है। स्वाधीनता प्राप्ति केलिए आयोजित सत्याग्रह-आन्दोलन जैसे देश-व्यापी राजनीतिक सन्दर्भों ने इस देश की सामान्य मानसिकता को कितना दूर तक प्रभावित किया था, इसका सहज साक्षात्कार"तीन बच्चे" कहानी देती है। छोटे-छोटे बच्चों की मन:स्थिति भी राष्ट्रीयता के इस उल्लसित प्रभाव से किस कदर भरी-पूरी है, इसका एक चित्र कहानी के प्रारंभ में ही लेखिका ने दिया है - "माँ के बिना जिनका एक भी काम

---

1. कमला त्रिवेणी शंकर, पुकार, पृ-83
2. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, नारी हृदय, पृ-47

नहीं हो सकता, वही मेरे बच्चे जी से चाहते थे कि मैं सत्याग्रह करूँ और जेल जाऊँ।"[1] अपनी राजनीतिक कहानियों में लेखिका ने देश-भक्ति, देश-द्रोह, और हिन्दु-मुस्लिम समस्याओं को उठाया है। "अमराई", "ताँगेवाला", "गौरी","गुलाबसिंह" आदि गाँव-गाँव में फैलनेवाली आज़ादी की भावना और विदेशी सरकार के प्रति घृणा की भावना को लेकर लिखी गयी कहानियाँ हैं। "अमराई" में बहिनें भाइयों को राखी बाँधती हुई कहती हैं, "भाई इस राखी की लाज रखना, लडाई के मैदान में कभी पीठ न दिखाना।"[2] गुलाबसिंह की बहिन शहीदी गौरव के साथ भाई को विदा देती है और उसके जूझ जाने पर स्वयं उसका झंडा ले आगे बढती है। "गौरी" कहानी की गौरी अपने माता-पिता द्वारा निर्वाचित वर तहसीलदार को ठुकराकर राष्ट्रप्रेमी सीताराम को पति-रूप में वरण करती है। राज-सेवकों के प्रति उमडता हुआ स्नेह ही गौरी की उदात्त मानवता का परिवायक बन जाता है। परतंत्र राष्ट्रकी समस्त वेदना श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान के प्राणों की हूक बनकर कविता और कहानी में उतरी थी। यह पहली नारी है जिन्होंने पराधीन और परतंत्र भारत में वीरों की सी हुंकार भरी।

पुरूषों के साथ-साथ अनेकों भारतीय बालिकाओं ने देश की स्वतंत्रता केलिए प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग प्रदान किया है। उषादेवी मित्रा की "देश भक्ति" कहानी में देश में आज़ादी की लडाई की पुकार सुन नव-विवाहिता स्त्री अपने पति को स्वतंत्रता संग्राम केलिए भेज देती है। "केवल पुरूषों में राजनीतिक चेतना आने से ही देश स्वतंत्र नहीं हो सकता। नारी का सहयोग उसकेलिए अपेक्षित ही नहीं अनिवार्य भी है।"[3]

निष्कर्ष

स्वातंत्र्यपूर्व महिला कहानीकारों ने पारिवारिक और सामाजिक भूमिका पर नारी-चित्रण प्रस्तुत किया है। नारी जीवन और उससे संबंधित अनेक महत्वपूर्ण

---

1. सं॰डॉ॰महेन्द्र भटनागर, आदर्श कहानियाँ, पृ-146.
2. सुभद्राकुमारी चौहान, बिखरे मोती, पृ-94
3. लक्ष्मणदत्त गौतम, आधुनिक हिन्दी कहानी साहित्य में प्रगति-चेतना, पृ-104

समस्याओं का न केवल सामान्य निरूपण उन्होंने किया हैं, अपितु उनके संबंध में जीवन्त निष्कर्ष और युग-सापेक्ष समाधान भी प्रस्तुत किये हैं । उन्होंने एक ओर नारी-जीवन से संबंधित प्रमुख समस्याओं, जैसे दहेज, बाल-विवाह, अनमेल-विवाह, वेश्यावृत्ति, अन्तर्जातीय-विवाह, विधवा-विवाह, पारिवारिक-संबंध, सामाजिक-स्थिति आदि का निरूपण किया है, तो दूसरी ओर नारी के स्वाभिमान, प्रतिशोध भाव, चरम सहनशीलता, मातृत्व, ममत्व, मर्यादा और महत्ता का भी सशक्त चित्रण किया है । यदि हम केवल धर्म की रूढ-दृष्टि से पतित नारियों को देखते हैं तो पर्याप्त रूप से वे मानवीय नहीं पाएँगी। हमें उन परिस्थितियों को भी देखना और समझना चाहिए जो नारी को गर्हित कार्य करने केलिए विवश करती हैं । नारी की मुक्ति आर्थिक रूप से स्वनिर्भर और शिक्षित होने पर ही संभव है । महिला कहानीकार अपनी कहानियों में नारी के हिमायती बन कर उपस्थित हुए हैं । इस प्रसंग में उन्होंने सर्वप्रथम पुराने आचारों पर आश्रित नारी नैतिकता पर प्रहार किया है । वे नारी-जीवन की समस्याओं का अध्ययन करते हुए तथा उनके जीवन को स्वतंत्र एवं आत्मनिर्भर बनाने का समर्थन करते हुए इस तथ्य तक पहुँचे हैं कि नारी की आर्थिक परतंत्रता ही नारी की वैयक्तिक स्वतंत्रता के मार्ग में रोडा बनी हुई है । अत: उन्होंने नारी की स्वतंत्रता का समर्थन किया है । उनकी नारी-स्वतंत्रता का यह अर्थ नहीं कि वे व्यभिचार को प्रश्रय देना चाहते हैं । वास्तव में स्वतंत्रता से तात्पर्य साथी के चुनाव से है, जिसमें समाज न तो कोई हस्तक्षेप कर सकता है और न किसी को बाध्य ही । उनकी नारी की स्वतंत्रता को सामाजिक मर्यादा एवं उत्तरदायित्व की सीमाओं से परे देखना-परखना संकीर्णता होगी । वे नारी के प्रति युगों से चले आ रहे पुरूषों के अत्याचार को रोक कर उसको समाज में उचित स्थान दिलाने के प्रबल हिमायती हैं । उनकी कामना है कि नारी समाज का उपयोगी अंग बने । इस के मूल में भी सुधारवादी दृष्टि काम कर रही है, जो वस्तुत: उस युग की विशेषता थी ।

अध्याय पाँच

अध्याय पाँच

स्वातंत्र्यपूर्व महिला कहानीकारों की कहानियाँ : भाषा शिल्प और शैलीगत अध्ययन

शिल्प की रचनात्मक सार्थकता :-

संवेदनाओं की अभिव्यक्ति केलिए एक रचनात्मक ढाँचा होना अनिवार्य है । इस ढाँचे को कृति की रचना-प्रक्रिया या शिल्प-विधि कही जा सकती है । "अपनी मनोगत भावनाओं को स्थापित करने केलिए जो विधि, ढंग या तरीका अपनाता है, वही उस कला की शिल्प-विधि के नाम से प्रख्यात हो जाती है ।"[1] दूसरे शब्दों में कहें तो रचना का बाह्य रूप-विधान ही उसका शिल्प है । अर्थात् "अनुभव का घनीभूत स्फुरण अभिव्यक्ति के समय जो भी रूप धारण कर लेगा - वही उसका शिल्प बन जाता है ।"[2] वर्ण्य-विषय की महत्ता मानकर उसे कुछ प्रभावात्मक ढंग पर प्रस्तुत करना शिल्प की रचनात्मक सार्थकता है । शिल्प-संरचना का वैविध्य सृजक की प्रतिभा पर निर्भर रहता है ।

भाषा की संप्रेषणीयता :-

कलाकार साहित्य में अपनी अमूर्त संवेदनाओं को मूर्त रूप देने की कोशिश करता है, जिस केलिए भाषा के अलावा कोई माध्यम नहीं है । भाषा और संवेदना का

---

1. डॉ.ओमशुक्ल, हिन्दी उपन्यास की शिल्पविधि का विकास, पृ-18
2. सूर्यनारायण मा.रणसुभे, कहानीकार कमलेश्वर:संदर्भ और प्रकृति, पृ-43

अन्तर्संबन्ध जितना गहरा होगा, वह रचना भी उतनी सफल निकलेगी । इसलिए डॉ॰रामस्वरूप चतुर्वेदी ने कहा है - "भाषा जितनी सर्जनात्मक होगी, कलाकृति उतनी ही विशुद्ध और प्रमाणिक होगी ।"[1] अनुभूति की सशक्त अभिव्यक्ति केलिए बहुत ही प्रभावात्मक भाषा की जरूरत पडती है जिसकी खोज हर एक युग का लेखक करता है । रचनाकार की संवेदनाओं की गतिशीलता भाषा की संप्रेषणीयता पर आधारित होती है । इसलिए "कहानीकार केलिए यह बहुत मुश्किल होता है कि वह अपनी भाषा का चुनाव कहाँ से और कैसे करें - - - - जिन्दगी जो परिदृश्य सामने उपस्थित करती है वह सब भाषा में नहीं होता । कुछ दृश्य हैं, कुछ मूक क्षण हैं, कुछ संवेदनाएँ हैं, कुछ अत्याचार और कुछ संत्रास हैं - - - - कहने का मतलब यह कि भाषा के होते हुए भी लेखक के पास भाषा नहीं होती । हर एक लेखक को भाषा की खोज करनी पडती है क्योंकि आदमी के अन्दर और बाहर जो खामोशी है और उसके अन्दर और बाहर जो शोर है, वह हर समय एकसा नहीं होता और उसी को कथाकार शब्द देता है । अपने वक्तव्य को सही सही प्रस्तावित कर सकने से ही उसका अर्थ प्रकट हो पाता है । "[2] कभी कभी लेखक संवेदनाओं को संप्रेषित करने में असमर्थता का अनुभव करता है । ऐसे संदर्भों में शब्द उस केलिए अर्थ-हीन बन जाते हैं और अर्थों को नये अर्थों की खोज करनी पडती है । जहाँ परंपरागत अर्थ शब्दों के प्रेम से निकल जाते हैं वहाँ नये अर्थों को बैठाने केलिए परिवेश एवं प्रासंगिकता का सहारा लिया जाता है । जब रचनाकार अपनी साधना में सफल निकलता है तब उसकी संवेदनाएँ समसामयिकता के बोध से जुड़कर एक ऐसी रचनात्मक प्रक्रिया के अन्दर संगुफित हो जाती है कि जिसके परिणाम स्वरूप अनुवाचक के भाव-मंडल में नया बोध जन्म ले जाता हैं ।

भाषा भावाभिव्यक्ति का प्रधान साधन है । काल और परिस्थिति के अनुसार यह विकास को प्राप्त होती है । प्रत्येक साहित्यिक रचना को महत्व प्रदान करनेवाली प्रमुख साहित्यिका उनकी भाषा है । यही कारण है कि भारतीय विद्वानों

1॰ डॉ॰रामस्वरूप चतुर्वेदी, भाषा और संवेदना, पृ-9

2॰ कमलेश्वर, नयी कहानी की भूमिका, पृ-200॰

ने भाषा को काव्य एवं साहित्य का शरीर मानकर उसे सौष्ठव प्रदान करनेवाले हेतुओं पर गंभीर रूप से विचार किया है । कहानी का संबंध जीवन के निकटतम यथार्थ से होने के कारण इनकी भाषा भी यथार्थ के स्पन्दनों से गुंफित भाषा है । उनके भाषागत प्रयोग का कैनवास बडा व्यापक एवं विविधोन्मुख है । यह विविधोन्मुखता कहानी की बदली हुई संवेदना का परिणाम है । फलत: भाषा वैविध्यपूर्ण हो रही है । संप्रेषणीयता की सूक्ष्मता केलिए कभी कभी रचनाकार बिंबों, प्रतीकों एवं पैंटसी से भाषा के स्वरूप को संवार कर मन के अमूर्त भावों को मूर्त करने की कोशिश करता रहता है । इस कारण भाषा की संप्रेषणीयता पर विचार करते समय प्रतीक, बिंब एवं भाषा की अन्य विश्लेषणात्मक शक्तियों पर भी विचार करना आवश्यक बन जाता है । इन शक्तियों का प्रयोग रचनाकार भाषागत सौन्दर्य को बढ़ाने या चमत्कारिकता को बनाये रखने या भाषा को अलंकारिकता प्रदान करने केलिए नहीं करता अपितु मानसिक गुत्थियों को सुलझाने एवं भावानुवृत्ति में सूक्ष्म ऐंद्रिकता का विस्तार करने केलिए करता है । राजेन्द्र यादव के अनुसार कहानी मूलत: चित्रों की भाषा है । घटनाओं, स्थितियों, भावनाओं, संवेदनाओं, विचारों के सरल-जटिल चित्र उनमें है ।"[1] सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से कहानी में भाषा तत्व के सफल आयोजन केलिए यह आवश्यक है कि उसमें कतिपय विशेषताओं का समावेश किया जाय । भाषा के तीन प्रधान गुण माने गए हैं, माधुर्य, ओज और प्रसाद । इन गुणों के अन्तर्गत कुछ अन्य गुण भी लिये जा सकते हैं, जैसे - भावात्मक, रसात्मक, अभिव्यंजनात्मक, प्रवाहमयी, प्रांजल, मुहावरेदार, कहावतों से युक्त, अनुप्रासमयी एवं आलंकारिक भाषा इत्यादि ।

भाषाके गुण :-

माधुर्य की मुख्य विशेषता हृदय को आह्लादित और द्रवित करना है, इसलिए संयोग श्रृंगार, करूण एवं शान्त रसों में इसकी विशेष रूप से स्थिति होती है । माधुर्य के बाद भाषा में ओज का महत्व होता है । चित्त में उत्साह के भाव को उद्दीप्त

---

1. मधुमती, फरवरी 1968, पृ-57

करना ओजगुण का मुख्य ध्येय होता है । प्रसाद-गुण का प्रयोग रसविशेष की सीमा में आबद्ध नहीं रहता वरन् उसकी स्थिति लगभग सभी रसों में रहती है । इसका मूल कारण यह होता है कि ओज और माधुर्य का भाषा के बाहरी रूप-शब्दों से ही संबन्ध रहता है जब कि प्रसाद का अर्थ से अधिक संबंध होता है । प्रवाहमयी प्रांजल भाषा में मुहावरों का प्रयोग अधिक होता है । भाषा के अन्तर्गत शब्दों की ध्वन्यात्मक शक्ति के साथ अर्थ की दृष्टि से भी शब्दों की विशिष्ट योजना की जाती है । कुछ क्रिया-व्यापारों का आश्रय लेकर भाषा के अन्तर्गत लाक्षणिक शैली का प्रयोग किया जाता है । शब्द की लाक्षणिक-शक्ति को मुहावरों एवं कहावतों के अन्तर्गत विशेष रूप से किया जाता है । लोकोक्तियों, कहावतों एवं सूक्तियों का भी सहज प्रयोग भाषा की विशेषता है ।

मुहावरों का प्रयोग

"मुहावरा" अरबी भाषा का शब्द है और इसका अर्थ है - "लाक्षणिक या क्वचित् व्यंग्यार्थ में रूढ़ वाक्य या वाक्यांश का प्रयोग ।"[1] मुहावरों के प्रयोग से लेखन-शैली में अर्थ का चमत्कार आ जाता है और भाषा प्रभावमयी बन जाती है । सुगम मुहावरे, भाषा की सरसता को बढाने और उसको सजीव बनाने में सहायक होते हैं । भाषा के अन्तर्गत मुहावरे की महत्ता को वर्णित करते हुए प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने लिखा है - "मुहावरे एक प्रकार के लाक्षणिक प्रयोग ही हैं । प्रयोजन को लेकर जो लाक्षणिक प्रयोग होते हैं, उन्हें चाहे कोई भाषा के घर से हटाकर भाव की संपत्ति कहे, पर रूढ प्रयोग तो भाषा का ही वैभव है ।"[2] इससे स्पष्ट है कि मुहावरों का निर्माण अनुभवों को लेकर होता है । भाषा के अर्थ में चमत्कार उत्पन्न करने के साथ ही मुहावरे भाषा को भावों की अभिव्यक्ति की दृष्टि से भी सफल बनाते हैं । मुहावरों का प्रयोगभाषा में प्रवाह ला देता है । साथ ही सुगमता से स्पष्टीकरण भी करता है ।

---

1. संपादक कालिकाप्रसाद तथा अन्य; बृहत् हिन्दी कोश, पृ-1095
2. डॉ०सुरेन्द्र माथुर, यात्रा-साहित्य का उद्भव और विकास, पृ-355.

लोकोक्तियों का प्रयोग :-

मौखिक लोक साहित्य में लोकोक्तियों का भी वरिष्ठ स्थान है। लोकोक्ति में गागर में सागर भरने की प्रवृत्ति काम करती है। इसे ग्रामीण जनता का नीतिशास्त्र कहा जाता है। लोकोक्ति के माध्यम द्वारा, जीवन के सत्य बड़ी कुशलता से अभिव्यक्त होते हैं। "सांसारिक व्यवहार-पटुता तथा सामान्य बुद्धि का जैसा निदर्शन कहावतों में मिलता है, वैसा अन्यत्र नहीं।"[1] कथन को विशेष प्रभावपूर्ण बनाने तथा भाषा में सौन्दर्य उत्पन्न करने के हेतु, महिला कहानीकारों ने अपनी कहानियों में लोकोक्तियों का भी समावेश किया है। हिन्दी लोकोक्तियों के अतिरिक्त उन्होंने कहीं कहीं ग्रामीण एवं फारसी लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया है

सूक्तियों का प्रयोग :-

सूक्तियों का प्रयोग, अर्थ को प्रभावशाली तथा भाषा को चमत्कारपूर्ण बनाने के लक्ष्य से किया जाता है। सूक्तियों के प्रयोग से भाषा में सरसता एवं सजीवता उत्पन्न होती है। सूक्तियों में साहित्य तथा लोक-अनुभव का सम्मिश्रण होता है। सूक्तियाँ नीतिपरक होती हैं। इनमें कवियों, लेखकों तथा विद्वज्जनों के जीवन-अनुभवों का सार चेतावनी के रूप में अभिव्यक्त होता है। लोकोक्तियों का प्रयोग कथन को अधिक कलात्मक तथा प्रभावपूर्ण बनाने के उद्देश्य से किया जाता है और सूक्तियों का प्रयोग कथन को नीतिपरक बनाने केलिए किया जाता है।

पात्रानुकूल भाषा वैविध्य :-

कृति के स्वाभाविक सौन्दर्य केलिए जैसा भाषागत रूप लेखक आवश्यक समझता है उसी प्रकार की शब्दावली का प्रयोग भी करता है। इसीलिए कभी कभी तो लेखक के पात्रों की शिक्षा, संस्कृति एवं मानसिक धरातल के अनुकूल पांडित्यपूर्ण, व्यंग्यात्मक भाषा से लेकर ठेठ प्रादेशिक और ग्राम्य भाषा तक का प्रयोग करना पडता है। इससे कृति की सरलता एवं प्रभावात्मकता में वृद्धि होती है। कहानीकारों की भाषा में पात्रानुकूल भाषा वैविध्य आवश्यक है। कहानियों में परिष्कृत भाषा का प्रयोग करने के साथ पात्र और परिस्थिति की सापेक्षता के कारण विदेशी और

---

1. संपादक:धीरेन्द्र वर्मा तथा अन्य, हिन्दी साहित्य कोश,भाग-10, पृ-692-693

आँचलिक शब्दों का भी प्रयोग होता है । कहानीकारों ने अपनी कहानियों में डॉक्टर, प्रोफेसर, हरिजन, शास्त्री, जुआरी, भिखारी, अनपढ ग्रामीण, किसान, नौकरी करनेवाले ग्रामीण, शहरी मज़दूर, सुशिक्षित, अशिक्षित सभी के जीवन्त चरित्रों को उभारता है, जिससे उनकी भाषा में उक्त विविध वर्ग के पात्रों के सहज स्वर का भी आ जाना स्वाभाविक है । अत: हिन्दी कहानीकारों की भाषा नगरों, महानगरों, प्रदेशों, आँचलों के चारों ओर की आब-हवा को अपने में समेटे हुए है । उनकी भाषा में संस्कृत के शुद्ध एवं सुबोध शब्दों के साथ-साथ अरबी, फारसी, अंग्रेज़ी भाषाओं के प्रचलित शब्द तथा अंग्रेज़ी के शब्दों से लोक निर्मित शब्द और ग्राम्य जीवन में प्रचलित शब्दों का प्रयोग मिलता है ।

उर्दु, अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग :-

"उर्दु खड़ीबोली का वह आधुनिक अथवा साहित्यकरूप है जो फारसी लिपि में लिखा जाता है और जिसमें फारसी-अरबी शब्दों का बाहुल्य रहता है ।"[1] कहानी साहित्य में कई पात्रों के द्वारा अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग कराया गया है । कहीं तो मुसलमान पात्र ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हैं और कहीं अन्य पात्र भी दैनिक व्यवहार के अभ्यास में ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हुए दिखाई पडते हैं । अत: कहानी में अरबी-फारसी के शब्दों का प्रयोग अधिक स्वाभाविक है ।

अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग :-

आधुनिक कहानीकार भाषा में अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग बेधड़क करते हैं । अंग्रेज़ी भाषा की मानसिक दासता के कारण अंग्रेज़ी बोलनेवाले की भाषा का प्रभाव लोगों पर अधिक पड़ता है । "अंग्रेज़ी भाषा को शक्ति एवं आदर का साधन माना जाता है ।"[2] अंग्रेज़ी न जानना बड़प्पन के विरूद्ध समझा जाता है । लेखिकाओं की कहानियों में अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग कर उन्होंने यह दर्शाया है कि हमारी संस्कृति एवं सभ्यता पर अंग्रेज़ी का प्रभाव किस हद तक व्याप्त है । बातचीत के दौरान अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग करना आधुनिक लोगों का लक्षण है । लेखिकाओं ने पाश्चात्य

---

1. डॉ. प्रभाशंकर मिश्र, राहुल सांकृत्यायन का कथा साहित्य, पृ-236
2. डॉ. चन्द्रभानु सीताराम सोनवणे, यशपाल की कहानियाँ:कथ्य और शिल्प, पृ-96

सभ्यता से प्रभावित वातावरण के चित्रण में तथा पाश्चात्य सभ्यता से प्रभावित पात्रों के कथोपकथन में यत्रतत्र अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग किया है । ये शब्द जन साधारण के हैं, विशेष कठिन नहीं हैं ।

ग्रामीण शब्दों का प्रयोग :-

ग्रामीण पात्रों के वार्तालाप को खड़ी बोली में लिखते समय महिला कहानीकार पात्रों की वास्तविक भाषा के कुछ शब्दों और वाक्यों का भी प्रयोग करती हैं । इ के प्रयोग से ग्रामीण पात्रों की भाषा स्वाभाविक एवं सजीव बन जाती है । कभी कभी ग्रामीण पात्रों की भाषा में स्थानीय बोली का भी प्रभाव है । "ठेठ बोलचाल की स्थानीय भाषा के प्रयोगों से कहानी में देशकाल और वातावरण का चित्रण अच्छा उभरता है, रोचकता भी बहुत बढ़ती है । किन्तु वह रचना प्रादेशिकता के घेरे में बँध जाती है ।"[1]

संस्कृत तत्सम शब्दों से युक्त हिन्दी :-

किसी भी काल की भाषा क्यों न हो वह उस काल की भाषा के चार रूपों में शब्दों को अपनाती है । वे हैं तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी । "तत्सम शब्द वे होते हैं जिन्हें किसी काल की भाषा अपने पूर्ववर्ती साहित्य में प्रयुक्त शुद्ध रूपों को ज्यों-का-ज्यों अपना लेती है । वे संस्कृत से निकलकर अपने विशुद्ध और वास्तविक रूप में हिन्दी साहित्य में व्यवहृत होते हैं । ऐसे शब्दों की संख्या दिनों दिन बढ़ती जा रही है ।"[2] सुशिक्षित पात्रों के तर्क-वितर्क एवं उनके जीवन संबंधी सिद्धान्तों के प्रकाशन के समय महिला कहानीकारों ने प्राय: संस्कृत तत्सम शब्दों का प्रयोग किया है । ऐसे स्थलों की भाषा अधिक परिष्कृत एवं परिमार्जित है ।

भाषागत प्रयोगों के अन्य आयाम :-

भाषा के पारदर्शी सौन्दर्य को बढ़ाने एवं उसे बोधगम्य बनाने केलिए साहित्य

1. श्री.रघुवरदयाल, समकालीन हिन्दी कहानी परिदृश्य, पृ-7।
2. डॉ.सुरेन्द्र माथुर, पात्रा-साहित्य का उद्भव और विकास, पृ-351

में प्रतीक, बिंब एवं संकेत का प्रयोग किया जाता है । इनके द्वारा भाषा को नयी अर्थवत्ता मिलती है । साथ-साथ युग की बिखरी हुई अनुभूतियों को समेटने में भी इनका प्रयोग अत्यधिक सहायक होता है ।

प्रतीक :-

"प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य (अथवा गोचर) वस्तु केलिए किया जाता है जो किसी अदृश्य (अगोचर या अप्रस्तुत) विषय का प्रति-विधान; उसके साथ अपने साहचर्य के कारण करती है ।"[1] सादृश्य और साहचर्य के आधार पर ही प्रतीकों का सफल प्रयोग किया जा सकता है । प्रतीक रचनाकार के बोधमण्डल पर छायी हुई अमूर्त भावना को मूर्त एवं साकार बनाने में विशेष रूप से सहायक होते हैं । आग्डन और रिचर्ड्स के अनुसार "प्रतीकों के द्वारा निदर्शन, व्यवस्थापन, आलेखन और संप्रेषण के कार्य संपन्न होते हैं ।"[2] Encyclopaedia Britanica में प्रतीक का विवरण देखिए - प्रतीक उस दृश्य वस्तु केलिए प्रयुक्तशब्द है जो दृश्यात्मकता के कारण नहीं परन्तु सहधर्मिता के कारण मन में उत्पन्न होनेवाले बोध का प्रतिनिधित्व करता है । यह प्रतीक के साथ साधारणतया जुडे हुए भावों के माध्यम से संप्रेषित किया जाता है इस तरह खजूर विजय का प्रतीक बनता है और "लंगर" आशा का ।"[3] इस प्रकार साहित्य में प्रतीकों के सार्थक प्रयोग से अप्रस्तुत अथवा अमूर्त का चित्रण अधिक स्पष्ट एवं प्रभावात्मक हो पाता है । "मानव-मन की सूक्ष्म और अकथनीय अनुभूतियों की अभिव्यक्ति का वह सफल साधन है ।"[4]

---

1. संपादक : धीरेन्द्रवर्मा तथा अन्य, हिन्दी साहित्य कोश, पृ-471.
2. "Symbols direct and organise, record and communicate". G.K. Ogden And I.A. Richards; The Meaning of Meaning; Page 8.
3. Symbol (a sign) "The term given to a visible object representing to the mind the resemblence of something which is not shown but realised by association with it. This is covered by the ideas usually associate with the symbol thus the palun brand is the symbol of victory and anchor of hope"; Encyclopaedia Britanica, Vol.XXVI; Page 284.
4. डॉ.एस.टी.नरसिंहाचारी, सौन्दर्य तत्व निरूपण, पृ-119.

बिम्ब :-

प्रतीक की तरह बिंबों का भी आधुनिक साहित्य में सार्थक प्रयोग हो रहा है। बिम्ब सूक्ष्म मनोभावों को अभिव्यक्त कर उनको उर्वरता प्रदान करते हैं। "बिम्ब विधान केलिए स्मृति सर्वाधिक आवश्यक तत्व है, क्योंकि बिम्ब एक प्रकार का स्मरण-निर्भर मानसिक पुनर्निर्माण है, जिसमें अतीत की संवेदनात्मक अनुभूति सुरक्षित रहती है।"[1] कभी कभी अन्वेषण पटु कलाकार अपने मन की बातों को व्यक्त करते समय भाषा की असमर्थता का अनुभव करता है। ऐसी स्थितियों में बिम्ब उसके मन की अमूर्तता को मूर्तता प्रदान करने में सहायक सिद्ध होते हैं। अत: बिम्ब अमूर्त भावना की पुन: सर्जना है जो पूर्ण रूप से व्यक्ति की चेतना पर निर्भर रहती है। हिन्दी साहित्य कोश में बिम्ब की परिभाषा इस प्रकार है। "मनुष्य जीवन में बिम्ब विधान अथवा कल्पना विधान का बडा महत्व है। प्रस्तुत परिवेश के संवेदनाओं और प्रत्यक्ष के अतिरिक्त उसके मानस में अतीत की तथा कभी अस्तित्व न रखने, न करनेवाली वस्तुओं और घटनाओं की अरसद प्रतिमायें भी रहती हैं। बिंब शब्द इसी मानस प्रतिमा का पर्याय है।"[2] साहित्य में बिंबात्मक प्रयोग के द्वारा संवेदनाओं का सार्थक चित्र उभर आता है जिस कारण सूक्ष्मातिसूक्ष्म अर्थों की गहराई स्पष्ट हो जाती है। सौन्दर्यानुभव के सूक्ष्म और पारदर्शी रहस्यों को मूर्त करने में भी बिंब सहायक होते हैं। कहानी में बिम्बों का व्यापक एवं घनत्वपूर्ण प्रयोग हो रहा है। युग की उलझन भरी स्थितियों की जटिलता को व्यक्त करने केलिए साहित्य में बिंबों के सार्थक प्रयोग पर विशेष बल दिया जा रहा है।

सांकेतिकता :-

सांकेतिकता कहानी साहित्य की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। बिम्ब और प्रतीक की भाँति संकेत भी भाषा के सौन्दर्यात्मक वैशिष्ट्य को बढाता है। साथ ही साथ उसकी संवेदनशीलता को भी गहन बनाता है। संकेत और प्रतीक एक से लगने पर भी उसमें कुछ अन्तर अवश्य है। "संकेत और प्रतीक दोनों में व्यापकत्व और संकोचन का अन्तर है। प्रत्येक प्रतीक संकेत हो सकता है, पर प्रत्येक संकेत प्रतीक नहीं हो

---

1. डॉ. कुमार विमल, सौन्दर्य शास्त्र के तत्व, पृ-198
2. संपादक:धीरेन्द्र वर्मा, तथा अन्य, हिन्दी साहित्य कोश -भाग-1, पृ-558

सकता । संकेत का साँचा प्रतीक से अधिक अनिश्चित और अनेकविध होता है ।"[1] प्रतीक के द्वारा जहाँ अप्रस्तुत विषय को प्रस्तुत किया जाता है वहाँ संकेत के माध्यम से अप्रस्तुत की ओर इशारा ही किया जाता है ।

प्रेमचन्द युगीन कहानियों से लेकर संकेत देने की परंपरा चलती आ रही है । जब कहानीकार स्थितियों एवं पात्रों की अन्दरूनी बारीकियों को सहज ढंग से चित्रित करने में असफल हो जाते हैं तो वे अनेक संकेतों से इनको अभिव्यक्त करने में सफल हो जाते हैं । मनुष्य-जीवन इतना जटिल एवं संश्लिष्ट है कि इसके अनेक ऐसे पहलू हैं, जिनकी अभिव्यक्ति केवल भाषा के स्वरूप के द्वारा संभव नहीं है । अत: कहानीकार को विवश होकर भाषा को साँकेतिक बनाना पडता है । ये संकेत जटिलतम संवेदनाओं की अभिव्यक्ति में काफी हद तक मदद करते हैं । इस संदर्भ में पाँडेय शशिभूषण शीतांशु का यह कथन सही है कि - "नयी कहानी की साँकेतिकता कथाकार की विवशता है।"[2]

शैलीगत प्रयोग :-

शैली तत्व कहानी-कला की वह रीति है जो उसके अन्य तत्वों को प्रभावपूर्ण ढंग से पाठकों तक संप्रेषित करता है । "कला-पक्ष के अन्तर्गत शैली-तत्व ही सबसे महत्वपूर्ण है, क्योंकि कहानी-कला में लाघव और विधानात्मक सफलता इसी पर निर्भर रहती है ।"[3] साहित्य में भावों, विचारों अथवा तत्वों को प्रकट करने की रीति को सामान्यत: शैली कहा जा सकता है । डॉ॰श्यामसुन्दरदास के अनुसार "किसी कवि या लेखक की शब्दयोजना, वाक्यांशों का प्रयोग, वाक्यों की बनावट और उनकी ध्वनि आदि का नाम ही शैली है ।"[4] पंडित करुणापति त्रिपाठी के शब्दों में शैली को हम निम्न रूप से परिभाषित कर सकते हैं - "शैली उस साधन का नाम है जो रमणीय, आकर्षक एवं प्रभावोत्पादक रूप से वाक्यशक्ति के समस्त सरस

---

1. पाण्डेय शशिभूषण, "शहितांशु", नयी कहानी के विविध प्रयोग, पृ-143
2. " " " -137
3. डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल , हिन्दी कहानियों की शिल्प विधि का विकास, पृ-340
4. डॉ॰श्यामसुन्दरदास, साहित्यालोचन, पृ-249

तत्वों की अभिव्यक्ति में अभिनव तथा उचित शक्ति का संचार करे ।"[1] मैथलीशरण गुप्त भावों की कुशल अभिव्यक्ति को ही शैली मानने के पक्ष में हैं । परन्तु पाश्चात्य विद्व चेस्टरफील्ड के मत से "शैली विचारों का परिधान है ।"[2] बफन ने शैली की परिभाषा करते हुए यहाँ तक कह दिया है कि शैली ही स्वयं व्यक्ति है ।"[3] मरे के अनुसार "शैली भाषा की वह विशेषता है जिस के सहारे लेखक भावों और विचारों का यथार्थ प्रेषण कर में समर्थ हो सके ।"[4] मरे ने एक दूसरे स्थान पर लिखा है कि - "शैली व्यक्तिगत अनुभू की स्पष्ट अभिव्यंजना है ।"[5] शैली मुख्य रूप से एक वैयक्तिक प्रयोग है । प्रत्येक लेखक अपनी अभिव्यक्ति का एकविशेष ढंग होता है । इसी कारण समग्र साहित्य की एक निश्चित शैली नहीं हो सकती और प्रत्येक लेखक की शैली भिन्न होती है ।

एक ही विषय शैलीगत विभिन्नता के कारण अधिक या कम प्रभावात्मक बन सकता है । इसका यह तात्पर्य है कि रचनाकार का औचित्य बोध शैली की आकर्षणीयता को घटा भी सकता है और बढा भी सकता है । वैसे कहा जाता है कि - "शैली की श्रेष्ठ एक महान व्यक्तित्व की प्रतिध्वनि हो ।"[6] शैली को वैयक्तिक प्रतिभा की देन मानते हुए भी कुछ इनी-गिनी प्रयोगात्मक शैलियों को साहित्य में स्थान प्राप्त हुआ है । "वार्ता दृष्टान्त, साँकेतिक और प्रतीकात्मक शैली से लेकर ऐतिहासिक, आत्मकथात्मक, डायरी, रूपात्मक, नाटकीय, पत्रात्मक, स्वगत भाषण और मिश्रित शैली तक इसका वि हुआ है ।"[7] व्यावहारिक दृष्टिकोण से आकर्षक एवं कलात्मक शैली कहानी को अधिक सफल बनाती है । शैली की प्रमुख विशेषताओं के अन्तर्गत आलंकारिकता, प्रतीकात्मकता

---

1. पं॰करुणापति त्रिपाठी, शैली, पृ-29
2. "Style is the dress of thought"-Chesterfield; Lord Chesterfield's Letters To His Son; Page 133
3. "The style is the man himself"-Dictionary Of World Literatur Edited by J.T. Shipley; Page 398.
4. "Style is a quality of language which communicate precisely emotions or thoughts or a system of emotions or thoughts, peculiar to the author"-J.M. Murry, The problem of style Pag
5. "Style is the direct expression of individual mode of experience"-J.M. Murry, The problem of style, Page 19.
6. "Height of style is the echo of a great personality"-F.L. Lucas; Style, Page 40.
7. डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल, हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, पृ-293.

भावात्मकता, आँचलिकता, व्यंग्यात्मकता आदि का समावेश वाँछनीय है । कहानिय का विश्लेषणात्मक अध्ययन करते समय शैलियों के प्रकारों पर विचार करना भी आवश्यक है ।

शैलियों के प्रकार :- वर्णनात्मक शैली :-

कहानी कहने की यह शैली सबसे अधिक प्रचलित है तथा इसे सरलतम भी मान जाता है । "इस शैली के अन्तर्गत कहानीकार एक कथावाचक की भाँति पूर्णत: तटस्थ होकर कहानी की सृष्टि करता है । यह सृष्टि पूर्ण वर्णनात्मक ढंग की होती है, अत: समूची कहानी का सूत्रधार स्पष्ट रूप से कहानीकार होता है और इसका नायकत्व किसी अन्य पुरूष को दिया जाता है ।"[1] कहानीकार कथावाचकों की तरह कहानी के समस्त तत्वों को अपनी वर्णनात्मकता में समेटता है । स्थान-स्थान पर बौद्धिक विवेचन, भावात्मक वर्णन और विश्लेषण आदि को भी स्थान मिलता है ऐतिहासिक शैली में वर्णनात्मकता के माध्यम से कहानी की समूची गतिविधि तथा कार्य-व्यापार अन्य पुरूष में अभिव्यक्त होता है । अत: हम इसे वर्णनात्मक अथवा अन्य पुरूषात्मक शैली कह सकते हैं ।

लेखिकाओं की प्राय: सभी कहानियाँ वर्णनात्मक हैं । वर्णनात्मक शैली में कथा प्रस्तुत करते समय भी लेखिकाओं का अपना अपना व्यक्तित्व अलग से उभरने लगता है । वर्गीकरण की दृष्टि से यद्यपि वर्णनात्मक शैली एक विशिष्ट कोटी में आ जाती है, फिर भी वैयक्तिक प्रतिभा की मुद्रा उस शैली में अनेक अनदेखे क्षितिजों का उद्घाटन कर बैठती हैं ।

आत्मकथात्मक शैली :-

आत्मकथात्मक शैली में कहानीकार आत्मपरिचय के द्वारा कहानी कहकर पाठकों में आत्मीयता स्थापित कर लेता है । कहानी की सारी घटनाएँ एवं सारी परिस्थितियाँ एक ही पात्र के अर्थात् कहानीकार के ईर्द-गिर्द घूमती रहती है, जिस कारण कहानी के दूसरे पात्र अनदेखे रह जाते हैं । इस शैली के अन्तर्गत चरित्र का

---

1. डॉ॰लक्ष्मीनारायण लाल, हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, पृ-312

आत्मविश्लेषण उत्कृष्ट ढंग से होता है । आत्मकथात्मक शैली को अपनाते समय लेखक को बड़ी सुविधा मिलती है । मन के सूक्ष्म से सूक्ष्म कोनों में झांकने की कोशिश वह सफलतापूर्वक करता है । इस कारण उसकी अनुभूति ज़्यादा यथार्थपूर्ण बनती है ।

आत्मकथात्मक शैली में कहीं कहीं पाठक को ऐसा आभास होने लगता है कि प्रतिपाद्य विषय से संबंधित अनुभूतियाँ लेखक की अपनी ही है । कहीं कहीं भोगे हुए क्षणों की अभिव्यक्ति का आभास होने लगता है । ऐसे प्रसंगों में अनुभूति की सक्षमता आत्माभिव्यंजनात्मक स्थिति से जुड़कर हमारे सम्मुख प्रस्तुत हो जाती है । इस कारण आत्मकथात्मक शैली में लिखी कहानियाँ गहरी आत्मीयता के बोध को लेकर पाठक के मन में प्रभाव की सृष्टि करती है । इस शैली को उत्तम पुरूषात्मक शैली भी कहा गया है ।

पत्रात्मक शैली :-

इसमें कहानीकार पत्रों को माध्यम बनाकर कहानियों का रूप-विधान करता है । इस शैली के अन्तर्गत कहानीकार एक या एक से अधिक पत्रों के माध्यम से कहानी प्रस्तुत करता है । पत्रात्मक शैली तभी प्रभावात्मक बनती है जब किसी विशेष परिस्थिति के दबाव से उत्पन्न मानसिक संघर्ष की स्थिति में लेखक लिखने को विवश होता है । इस शैली में कभी कभी स्वाभाविकता उत्पन्न होती है । क्योंकि बहुत सारी अन्तरंग बातों को और पूर्वघटनाओं की स्थितियों को व्यक्त करने में कठिनाई उत्पन्न होती है । इस कारण कोई एक विशेष मानसिक अवस्था के प्रतिपादन से और तज्जन्य प्रतिक्रियाओं के अंकन में कहानीकार को ध्यान देना पड़ता है । वैसे पत्रात्मक कहानी उतनी लोकप्रिय नहीं है । विद्वानों ने इस शैली के कुछ दोष बताते हुए लिखा है कि "विभिन्न पत्रों में कहानी की संवेदना बिखरी होने के कारण कहानी की एकसूत्रता नष्ट हो जाती है और कहानी में वातावरण का निर्माण नहीं हो पाता ।"[1]

चेतना प्रवाह शैली :-

चेतना प्रवाह शैली का आधार मनोविज्ञान तथा यथार्थवाद है । मानसिक

---

1. रघुवरदयाल, समकालीन हिन्दी कहानी, परिदृश्य से

अर्न्तद्वन्द्व जैसे मनोवैज्ञानिक स्थितियों की अभिव्यक्ति में चेतना प्रवाह शैली सक्षम है । "इस शैली की विशेषता यह है कि इसमें पात्र की मानसिक घटनाओं, स्थितियों, संघर्षों और प्रतिक्रियाओं के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा कहानी में गतिशीलता पैदा की जाती है । पश्चिमी साहित्य में इस पद्धति का सूत्रपात जेम्स, वर्जीनिया वुल्फ, डारथी रिचार्डसन आदि ने किया । हिन्दी कहानियों में इसके प्रयोग का श्रेय अज्ञेय को है । "[1]

पात्रों के मन में उठनेवाले स्वच्छन्द विचारों को ज्यों का त्यों व्यक्त करने में यह शैली समर्थक निकलती है । नदी की धारा की तरह प्रवाहित मानव की विभिन्न अनुभूतियों की सफल अभिव्यक्ति में चेतना प्रवाह शैली अति उत्तम है । चेतना प्रवाह के मूल में व्यक्ति को व्यक्ति द्वारा समझने का प्रयास किया जाता है ।

पूर्व दीप्ति (फ्लेश बैक) शैली :-

पूर्व दीप्ति शैली हिन्दी कहानी की एक विशिष्ट शैली है । लेकिन कहानियों में इस शैली को पूर्ण रूप से स्वीकृति नहीं मिली है । कहानी के आदि या मध्य कहीं इसका प्रयोग किया जाता है । "पूर्व दीप्ति शैली में कथा-सूत्र अतीतोन्मुख होता है, वर्तमान से संबद्ध घटनाचक्र पात्रों की स्मृति से जुडकर किसी विगत घटना का अंग बनता है और इसी स्मृति खण्डों में कहानी का रूप-विधान किया जाता है । इस पद्धति का मूलाधार अतीत की वे घटनाएँ तथा स्थितियाँ है जो स्मृति के सहारे वर्तमान से जुडती है और उससे एकमेव होकर कहानी में जीवन्तता लाती है ।"[2] कहानीकार एक छोटी सी साधारण सी घटना या प्रसंग को लेकर चलता है । बीच-बीच में पूर्व घटित हुई बातों के या मनोविश्लेषणात्मक सन्दर्भों के सूत्र लेकर बढता है । सूत्रों की यह धूप-छाँह कहानी के अन्त तक चलती रहती है । इन्हीं सन्दर्भों में कहानीकार कथ्य केन्द्रीय रखता है और क्रमश: आगे बढता है ।

नाटकीय शैली :-

नाटकीय शैली के अर्न्तगत दो प्रमुख शैलियाँ आती है प्रथम संलाप शैली,

---

1. डॉ.सुरेश सिन्हा, हिन्दी कहानी उद्भव और विकास, पृ-69
2. डॉ.शिवशंकर पाण्डेय, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी; कथ्य और शिल्प, पृ-165

दूसरी, वह शैली जो एकांकी नाटक के विधान को लेकर चलती है । वस्तुत: इस दूसरी शैली का प्रचलन आधुनिक कहानी-कला की देन है । इस में संवादों की प्रमुखता रहती है । कहानी का आरंभ तथा विकास संवादों द्वारा ही किया जाता है तथा अन्त भी कथोपकथन के माध्यम से ही होता है । इन कथोपकथनों के बीच-बीच में आवश्यकतानुसार वर्णन -विवरण भी देता चलता है । वर्णन-विवरण कहानी को नाटक होने से बचा लेते हैं और उसके कहानीपन को बनाये रखते हैं । संवादों की प्रधानता से कहानी में आत्मीयता, कौतूहल तथा आकर्षण की सृष्टि होती हैं ।

डायरी शैली :-

यह शैली पत्रात्मक शैली से पर्याप्त समानता रखती है । इसमें एक या दो पात्रों की डायरी के माध्यम से सारी कहानी की रचना की जाती है । "इस शैली में अतीत का वर्णन पूर्ण अनुभूति तथा भावुकता से किया जाता है । आत्मचरित्र शैली और इस शैली में बहुत सामीप्य है । इसमें भी आत्मविश्लेषण और विवेचन की सारी स्थितियाँ उत्पन्न मिलती है ।"[1] कुछ कहानीकारों ने संपूर्ण कहानी डायरी शैली में न लिखकर कहानी के प्रारंभ या अन्त में डायरी शैली का प्रयोग किया है ।

प्रतीकात्मक शैली :-

शैली का यह रूप भी आधुनिक कहानी कला की देन है । इस प्रकार की शैली में पशु, पक्षी, वृक्ष, पत्ते आदि के प्रतीकों द्वारा मानव-जीवन कोसमस्याओं तथा मानवीय अनुभूतियों का चित्रण किया जाता है । वस्तुत: आज का कहानी लेखक केवल स्थूल सौन्दर्य का दर्शन नहीं चाहता वरन् वह एक ऐसी प्रेरणा चाहता है जिसमें सौन्दर्य की झलक हो और जिसके द्वारा पाठकों की भावनाओं का स्पर्श किया जा सके । इस शैली में लिखित कहानियों में भावपक्ष तथा कलापक्ष का उत्कट सामंजस्य लक्षित होता है ।

मिश्रित शैली :-

इस शैली में ऐतिहासिक, पत्रात्मक, डायरी, संलाप और आत्मचरित्र आदि

---

1. डॉ.लक्ष्मीनारायणलाल, हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, पृ-315

अनेक शैलियों का सहारा लिया जाता है । कहानीकार अपनी कहानी में प्रभाव, चरित्र-चित्रण, और विश्लेषण आदि केलिए उक्त समस्त शैलियों का उपयोग कर सकता है । "इस प्रकार की शैली में किसी नवीन प्रयोग का प्रयास नहीं रहता, किसी नयी शैली का आकर्षण नहीं रहता, वरन् कहानी अपने समस्त भावों को समेटे हुए गंभीरतापूर्वक आगे बढती जाती है और पाठक के मस्तिष्क में विशेष प्रकार के प्रभाव की सृष्टि करती है । निश्चय ही मिश्रण शैली कहानी को शक्ति प्रदान करती है ।"[1]

चित्रात्मक शैली :-

इसमें कहानीकार एक फोटोग्राफर का रूप धारण कर लेता है और किसी स्थान विशेष के रीति-रिवाजों, संस्कृति, सभ्यता, लोक-जीवन, आचार-व्यवहार, राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों, धार्मिक रूढ़ियों, नये अंकुरित होनेवाले प्रगतिशील तत्वों, नारी और पुरूषों की दृढ इच्छाओं, उद्देश्यों, संघर्षों, पराजय एवं विजय, अतृप्त इच्छाओं एवं वासनाओं आदि के स्नैपशाट्स प्रस्तुत करता चलता है । इस प्रकार की कहानियाँ एक एलबम की तरह होती है जिनमें कई छोटे-बडे स्नैपशाट्स होती है और आपस में असंपृक्त सी प्रतीत होने पर भी कुल मिलाकर विराटता का बोध देती है ।

स्वगत भाषण शैली :-

मनोवैज्ञानिक भूमि पर चरित्र-विश्लेषण और सूक्ष्म अध्ययन करने केलिए नुगीन कहानीकारों ने स्वगत भाषण शैली को अधिक अपनाया है । वास्तव में अधिकांश कहानीकारों ने इस शैली को अपनाया क्योंकि इस में कहानीकार की विधानात्मक स्वतंत्रता रहती है । कभी कभी आकस्मिक ढंग से कहानी का विकास और अन्त

---

1. श्रीमती गिरीश रस्तोगी, हिन्दी कहानी सिद्धांत और विवेचन, पृ-86
2. डॉ. शिवशंकर पांडेय, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी कथ्य और शिल्प, पृ-165.

करने केलिए भी कहानीकार इस शैली का प्रयोग करता है । इस शैली के उपयोग से कहानीकार की अभिव्यक्ति सहज और शक्तिशाली बन जाती है ।

भाषा तथा शैलीगत प्रयोग के सन्दर्भ में महिला कहानीकारों की कहानियाँ :-

कला-शिल्प की दृष्टि से उषादेवी मित्रा की सारी कहानियाँ प्रेमचन्द-परंपरा में आती हैं । वंगवासी होने तथा बंगला-साहित्य के संस्कारों के कारण भावुकता का अतिरेक कभी कभी प्रसाद और शरचन्द्र के प्रभाव की याद दिला देता है । सभी कहानियाँ अन्य पुरूष शैली में लिखी गयी हैं । "नीम चमेली" में आत्मकथन की शैली तथा "ललिता की डायरी में" शीर्षक के अनुरूप डायरी शैली का प्रयोग किया गया है । उषा जी का हृदय कवि का था । वे बंगाल में कविता लिखा करती थीं अत: स्थान स्थान पर काव्यात्मक स्थलों का होना स्वाभाविक ही है । यथा "जीवन भर जिस रूप को देखकर तृष्णा नहीं मिटती, मन को सन्तोष नहीं होता, जो सदा नूतन ही बना रहता है , उसका वही शान्त, स्निग्ध, आकर्षक रूप था । षोडशी नर्मदा लाज- रक्तिम भाव से नवोढा वधू की तरह घूँघट से मुँह ढाँके उसके हृदय पर थिरक रही थी - लहरों की वह मीठी झंकार नूपुर-ध्वनि की तरह प्रतीत होती थी । "[1]

कथावस्तु प्रस्तुतीकरण केलिए मुख्य रूप से कहानियों में वर्णनात्मक शैली का प्रयोग हुआ है ।

वर्णनात्मक शैली का उदाहरण :-

"भूपसिंह के इस बीस-पच्चीस वर्ष की अवस्था बीती थी, उल्लास आमोद के भीतर । लिखने में वह प्रथम श्रेणी का था । संगीतज्ञ था । वह जीवन को एक उडती चिडिया सा खुशी समझता । न चिंता थी, न भावना । प्रात:काल गपशप में कटता, दस बजे कालेज जाता, घर लौटकर जलपान करता, फिर हाकी क्रिकेट खेलता ।"[2]

---

1. उषादेवी मित्रा, आँधी के छन्द, पृ-2
2. सान्ध्यपूरवी, पृ-75-76.

संलाप शैली का उदाहरण

सावित्री झुंझला पडी - "मेरी कार पर मरता हुआ कुत्ता तुम पागल हो गए हो क्या ?"

"बेचारा मर रहा है सावित्री ।"

"तो मैं क्या करूँ ? उस बदसूरत कुत्ते का मरना ही अच्छा है ।"

"नहीं नहीं गाड़ी रोको ।"

"मत रोको गाडी ।"

"सचमुच तुम बडी कठोर हो, बहुत घमण्डी हो सावित्री ।"[1]

आत्मकथात्मक शैली का उदाहरण

"यदि सच पूछो तो पृथ्वी पर चिरस्थायी कुछ भी नहीं है । फिर गर्व किस बात का ? मेरे ही चार हाथ आगे जो कामिनी हरे हरे पत्ते और सफेद फूलों से लदी, यौवन के मद से तनी खडी है, मुझ बूढी नीम चमेली की ओर देखकर भी नहीं देखती, क्या उसकी नसों में कभी सिकुड़न आयेगी ही नहीं ? क्या उसकी डालें कभी स्थूल होकर झूलेंगी ही नहीं ? अभी कल की छोकरियाँ मुझे घृणा करें । आश्चर्य।"[2]

डायरी शैली का उदाहरण :-

"1939 - दीपावली मध्य रात्री । तो रात्री भी आज ही की तरह दीप खचित थी । केवल मेरी झोंपडी के चहुँ ओर था अन्धकार का कुण्ड । चली गयी वह रात्री - जगत् की थाली में नव-जीवन की शक्ति भरकर, भारत के ललाट पर जय-दीप का टीका लगाकर । मैं ? केवल मैं रह गयी अचूकी, नित्य के अन्धकार में सनी, नित्य की भिखारिन । मेरी ओर उसने लौटकर भी न देखा और न मेरे उस छोटे सुरेश की ओर ।"[3]

---

1. उषादेवी मित्रा, रात की रानी, पृ-3
2. " नीम चमेली, पृ-5
3. " मेघ मल्लार, पृ-113

ध्वन्यात्मक शैली का उदाहरण

"दूर पथ पर कोई बैलगाडी का पहिया कभी धरधराता, बैलों की घण्टियाँ टिनटिनाती । कोई विकृत स्वर से विरहा गा उठता और टेसु फूल झर पडते ।"[1]

चित्रात्मक शैली का उदाहरण :-

"अति साधारण वस्त्र पहिने तपस्विनी सी वसन्तिका अपूर्व भाव-भंगी से शिव मूर्ति के सामने खडी हो गयी । रूखी, लंबी जटा से जल बिन्दु झरने लगे, गेरूए रंग की चुनरी के बीच गोल बाँह में सोने के मोटे कडे और बाजूबन्द उस गुलाबी रंग की आभा में म्लान हो उठे । रूप देखकर पत्थर के शिव कदाचित् वाँङ्मय से हो गये । भक्ति स्थिर नेत्र से वसन्तिका ने पहिले शिव को प्रणाम किया, फिर राजा को प्रणाम कर वह तन कर खडी हो गयी ।"[2]

आपकी कहानियों की व्यंग्यात्मक शैली पाठकों को अनायास आकर्षित कर लेती है । व्यंग्यात्मक शैली का उदाहरण - "कहा - चलाओ मोटोर ।" कहाँ कौन दरिद्र मरा या जिया, इससे उसका क्या संबंध ? उसे तो ठीक छः बजे पार्टी में जाना था । ऊँचे समाज में रहता है, मस्तिष्क शिक्षा-ज्ञान का भण्डार बन चुका है । उस शिक्षा का समाज की देन भी तो उसे देना है न । दरिद्र की बात समझे वही अशिक्षित और दरिद्र । वह तो एक पढा लिखा शिक्षित व्यक्ति है ।"[3]

शैली के उपर्युक्त विभिन्न रूप अपनाने के कारण ही कथा शिल्प में एकरसता नहीं आने पायी है । "प्रथम छाया", "कलाकार", "बुलबुल", "नीम चमेली", आदि उषादेवी की प्रतीकात्मक कहानियाँ हैं । इनमें विभिन्न प्रतीकों के द्वारा जीवन के सूक्ष्म तत्वों को ग्रहण किया गया है । "नीम चमेली" में प्रतीक का स्पष्ट प्रयोग है, जैसे -

"यदि सच पूछो तो पृथ्वी पर चिरस्थायी कुछ भी नहीं है । फिर गर्व किस बात का ? मेरे ही चार हाथ आगे जो कामिनी हरे हरे पत्ते और सफेद फूलों से लदी, यौवन के मद से तनी खडी है, मुझ बूढी नीम चमेली की ओर देखकर भी नहीं

---

1. भारती, जुलाई 1955, पृ-23
2. उषादेवी मित्रा, मेघ मल्लार, पृ-52.
3. " पृ-83-88

देखती, क्या उसकी नसों में कभी सिकुडन आवेगी ही नहीं ? क्या उसकी डालें कभी स्थूल हो कर झूलेंगी ही नहीं ? अभी कल की छोकरियाँ मुझसे घृणा करें । आश्चर्य।"[1]

वृद्ध नीम चमेली को प्रतीक रूप में लेकर मित्राजी ने स्पष्ट किया है कि मनुष्य को गर्व नहीं करना चाहिए । इस क्षणभंगुर संसार में कुछ भी थिर-स्थायी नहीं है ।

उषादेवी ने कहानियों में प्रभाविष्णुता एवं संवेदनशीलता लाने केलिए विविध रूपी वार्तालापों का विधान किया है - कहीं लघु, कहीं दीर्घ, कहीं भावपूर्ण, कहीं तर्क पूर्ण, कहीं सरस, कहीं नीरस, कहीं सारगर्भित, कहीं शिथिल, कहीं सोद्देश्य, कहीं निरुद्देश्य अर्थात् केवल संवादों केलिए रचे गये संवाद।अनेकश: लेखिका ने प्रयत्नपूर्वक ऐसे संवादों का आयोजन किया है जहाँ पात्रों की भावविह्वलता को प्रधानता दी गयी है । इन संवादों को सुनने में हमें यह आभास हो जाता है कि मानों हम कोई संवादात्मक कविता सुन रहे हैं । यथा -

लाखों आये, लाखों गये ।" सखियाँ हँस पडी ।

"रूप नदी में बहते फिरे ।"

"युग-युगान्त तक प्यासे फिरे ।"

"हठी तू कहना मान ।"

"मेरी बातें सुन दे कान ।"

"हजारों आये, प्यासे गये ।"

"मैं दासी हूँ, तुम्हारी ।" रानी ने गले का हार कुँवर को पहना दिया ।"[2]

उषादेवी मित्रा ने अपनी कहानियों में प्राय: तत्सम बहुला गंभीर भाषा का प्रयोग किया है । इससे कहीं कहीं भाषा में भारीपन आ गया है । कहानियों में प्रयुक्त कुछ तत्सम शब्द निम्नांकित है - उभय, आच्छन्न, ताम्बूल, गुल्म, आगन्तुक,[3] व्यवधान, नास्तिक, अन्त:पुर, उलंग, उपशिरा, सर्वशान्ता, दिनावशेष, सीमन्तिनी[4]

तत्सम शब्दों के अतिरिक्त उषाजी ने अंग्रेजी, फारसी, अरबी इत्यादि के प्रचलित शब्दों का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग किया है । अत: बोलचाल के अति

---

1. उषादेवी मित्रा, नीम चमेली, पृ-5
2. " मेघ मल्लार, पृ-18
3. उषादेवी मित्रा,मेघ मल्लार,पृ-38, 32,33,34,54
4. उषादेवी मित्रा,महावर,पृ-1,14,14, 154, 158, 166, 40,41.

प्रचलित शब्दों के समावेश के कारण भी भाषा में सहजता आ गयी है । यथा -

"द्वितल-गृह की खुली खिडकी के सामने टेबुल, पेपर पर गंभीर विचार में बैठा हुआ था अनाडी । डेबुल पर डाक से आये हुए कई पोस्ट कार्ड रखे थे ।"[1]

कहानियों में प्रयुक्त कुछ अरबी-फारसी के शब्द निम्नलिखित है - नायब, मुसाहब, हिसाब-किताब, नशा, खूबसूरती, आरजू, गलीचा, मज़ा[2] मर्तबा, तालीम [3]

अलंकारों का प्रयोग मित्राजी ने यथावसर किया है जो उनके भावुक हृदय का प्रतीक है । भाषा का सौन्दर्य अलंकारों के कारण बढ़ा भी है -

अनुप्रास - "पशु-पक्षी से उन रागों के रंग, रूप, रसों को पूलती और अपने आप मुसकुराती रहती ।"[4]

मानवीकरण - "यमुना के नेत्रों से आँसु की धारा बह चली ।"[5]

मालोपमा - अपरेश-आँधी के छन्द सा, चम्पा की गन्ध सा, हिमालय के श्रृंग सा अपरेश जहाज़ पर पुस्तक खोले बैठा था ।"[6]

उत्प्रेक्षा - "कुमार ने देखा - वर्षण-विरत मेघ से मानो पूर्णचन्द्र निकल आया हो।"

उषाजी ने उपमाओं का बहुत अधिक प्रयोग किया है । विशेष रूप से किसी पात्र का सौन्दर्य-वर्णन करते हुए वह उपमाओं की झडी लगा देती है । उनके द्वारा प्रयुक्त कुछ महत्वपूर्ण उपमाएँ निम्नांकित है -

"श्वेत संगमर्मर से हाथ"[8]

"अपराजिता सी लज्जा, वसन्त उत्सव सी अनुपम सुन्दरी[9]

"चाँदी से सफेद बाल"[10]

---

1. उषादेवी मित्रा, मेघ मल्लार, पृ-28
2. " महावर, पृ-15,15,15,16,17,19,101
3. " रात की रानी, पृ-23,24.
4. मेघ मल्लार, पृ-83
5. " आँधी के छन्द, पृ-6
6. " महावर, पृ-67.
7. " मेघ मल्लार, पृ-32
8. " " पृ-108
9. " " पृ-133
10. " नीम चमेली पृ-8

"बताशे जैसी बूँद [1]

"मार्बल जैसी बाहें "[2]

चीलों की तरह चीखना [3]

"संगमर्मर से हाथ-पैर", "मार्बल जैसी बाहें", कहने में गठन की सुडौलता का बोध निहित है । "बताशे जैसी बूँद" में बूँद की दीर्घता तथा "चीलों की तरह चीखना" कहने में कलह की कटुता मूर्त हो गयी है । इनकी अन्य उपमाएँ भी महत्वपूर्ण है और भाषा शैली के सौन्दर्य को बढाने में सहायक हुई है ।

उषादेवी मित्राजी ने अनेक स्थलों पर न, तो, सा, या, सी आदि चिह्नों के विशिष्ट प्रयोग द्वारा वाक्यों में चमत्कार उत्पन्न करने का प्रयास किया है ।

न का विशिष्ट प्रयोग :-

"परन्तु गगन के बलिष्ट हाथ का प्रहार रामदास सह भी तो न सका न "[4]

सा या सी का प्रयोग :-

(अ) "मानों न वह किसी को लुभाना चाहती, न किसी पर जय पाना, वरन् एक सूर्यमुखी फूल-सी देव-छाया बैठी, पीत-वसन से मुँह निकाल कर केवल वन्दना गान से उन्हें ही स्नान कराना चाहती हो - कभी माता सी, कभी कन्यासी, कभी भार्या सी, बस इतना ही ।"[5]

(आ) "काग की सभा में बगुला सा वृद्ध चकराया खडा रह गया "[6]

तो का विशिष्ट प्रयोग :-

"विजय का जी न जाने कैसा तो कर उठा ।"[7]

उषाजी ने पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग ही किया है । उनके पढे लिखे पात्र

---

1. उषादेवी मित्रा, नीम चमेली, पृ-13
2. " सान्ध्यपूरवी, पृ-104
3. " पृ-132
4. महावर, पृ-5
5. मेघ मल्लार, पृ-42
6. महावर, पृ-15
7. चित्रमय जगत्" कहानी, विश्वामित्र, अगस्त 1945, पृ-13

संस्कृत शब्दों से युक्त भाषा का प्रयोग करते हैं अथवा हिन्दी अंग्रेज़ी की मिली जुली भाषा का । यथा - "खेलना ?, एक्सपेरिमेण्ट कहो । कदाचित यह एक्सपेरिमेण्ट हो । उन्नति का चरम उत्कर्ष शायद एक्सपेरिमेण्ट से होता है ।"[1] साधारण पात्रों की भाषा बोलचाल की साधारण भाषा है । उनकी भाषा में मानवीय भावनाओं को व्यक्त करने की अपूर्व क्षमता है । वाक्य विन्यास सरल है । वाक्य योजना में उन्होंने स्वतंत्र गति को अपनाया है । सामूहिक रूप में उनकी शैली मधुर और प्रवाहपूर्ण है ।

भाषा-शैली की दृष्टि से कमला चौधरी बहुत संपन्न है । आप की अधिकांश कहानियों की शैली अन्य पुरुष-प्रधान है, कुछ में प्रतीकात्मक तथा व्यंग्यात्मक शैली देखने को मिलती है । "भ्रम", "स्वप्न" "डायरी का एक पृष्ठ", "स्मृति" आदि उत्तम पुरुष प्रधान शैली की कहानियाँ है । सामाजिक कहानियों एवं हास्यपरक कहानियों में प्राय: सरल एवं सरस भाषा-शैली का प्रयोग हुआ है, किन्तु मनोवैज्ञानिक एवं प्रतीकात्मक कहानियों में गंभीर तथा परिष्कृत भाषा-शैली को स्थान प्राप्त हुआ है । उदाहरणार्थ "महान" कहानी से यह उद्धरण देखिए - दमन की देवी ने अनुरंजित उद्गारों को, उत्पुल्ल, स्निग्ध वाहनाओं को आहुति के रूप में ग्रहण किया। अत: मन के कोमल, सरल, प्रखर, सुखद, तृप्तिप्रदमय रसों का विनाश होकर वह स्थल मरुभूमि बन गया । हास्य की इतिश्री हुई, कटुता उद्भासित हुई, प्रणय की अनुभूति नष्ट हुई - - - - -"[2] विषय के अनुरूप अभिव्यंजना में भावुकता, व्यंग्य चित्रोपमता आदि विविध विशेषताओं का समाहार हुआ है । व्यंग्य शैली का उदाहरण -

"रही बहू की बात । वह दूसरे घर की बेटी है और स्त्री है, विधवा है, पतिता है । उसके सुख-दुख की चिन्ता व्यर्थ है । उसने पाप किया है और वह पाप पुरुष का थोडे ही है जो अत्याचार, अन्याय से धुल जाय ? वह नारी का पाप है, विधवा का । अबला के पाप का दाग जो चिरस्थायी होता है । कुकर्म तो उसने किया ही है । उससे अब उसका उद्धार कहाँ है ।"[3]

---

1. उषादेवी मित्रा, मेघ मल्लार, पृ-30
2. कमला चौधरी, यात्रा, पृ-122
3. चित्रलिपि, पृ-112-113

भावात्मक शैली :-

"सुन्दर प्रभात के साथ किसी अनुपम आभा से उसका सौन्दर्य चमक उठता है, रात्री के साथ ही उसके हृदय की सारी नीरवता विदा हो जाती है, कोई अद्भुत नाद उसकी अन्तरात्मा में कल्लोल करने लगता है, उसके अंग अंग में चंचलता नाच उठती है।"[1]

पूर्वदीप्ति शैली :-

कमला चौधरी ने "कन्यादान" में पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग किया है। यथा - "मुन्शी तारापतराय जज" ये शब्द मस्तिष्क में पूर्णत: झंकृत हो उठे और अतीत की स्मृतियाँ चित्रपट की भाँति आँखों के सामने आने-जाने लगीं। सर्विस में हम दोनों ही कई स्थानों पर साथ-साथ रहे। जब मैं प्रयाग में था वहाँ भी उनका बंगला मेरे समीप ही था। जज साहब बहुत खुशमिज़ाज व्यक्ति थे। शहर में उनकी जिन्दादिली की धाक थी। हँसी मानो उसपर कुर्बान थी और खुशी को हृदय में समाने का स्थान नहीं था। बात-बात पर ऐसे ज़ोर का ठहाका लगाते कि रोता वातावरण भी हँस उठता।"[2] उक्त प्रसंग कहानी के नायक के अतीत से संबंधित है। जज का नाम सुनते ही उनका मित्र जज के अतीत को अपने स्मृति पटल में साकार करता है। उनके साथ गुज़रे हुए क्षण एक चित्र के समान उसके सामने उभर आते हैं।

नाटकीय संवाद इनकी कहानियों के सौन्दर्य को द्विगुणित कर देते हैं और कहीं कहीं तो लोक भाषा का आश्रय लेने के कारण मार्मिकता अधिक बढ गयी है। यथा - "भला परबत्ता बहिनी, तुम रोटी सेंकै नाहिं जानतियो हो"?

-"हाँ भैया, सेंके नाहीं जानित है। हम का कोउ सिखावा थोडे रहै। रोज़ हम बाबा का बनावत देखी, तैसने दादा खतिर बनाय देई।"

"एक दाँय रोटी तो बहनी हम हुँ का बनाय के खवावौ।"

---

1. कमला चौधरी, उन्माद, पृ-76.
2. पिकनिक, पृ-88

"रोटी तो भेया, हियाँ मालकिन बनावे न दैहें । भेया तुमका आम खवाउब ।" कहानियों में लोक भाषा के इतने सुन्दर प्रयोग अन्य लेखकों में कम ही देखने को आते हैं

शैली में स्वभावत: वर्णनात्मकता का अंश अधिक हैं, किन्तु वर्णन की सजीवता ने उसे प्राय: चित्रात्मकता से विभूषित किया है । उनकी चित्रात्मक शैली यहाँ तक है कि नेत्रों के समक्ष एक सजीव चित्र अंकित हो जाता है । उदाहरणार्थ निम्नलिखित उद्धरण अवलोकनीय है - "गुरू खिडकी पर सर रखे निद्रा में निमग्न थे । यह समय तो उनका वायु सेवन केलिए आश्रम से बाहर जाने का है । सुरीला झाडू लिए गुरू के जगाने की प्रतीक्षा में द्वार पर खड़ी रही । "[2]

पात्रों के मन में उठनेवाले स्वच्छन्द विचारों को ज्यों का त्यों व्यक्त करने केलिए चेतन प्रवाह शैली का प्रयोग कमलाजी ने किया है । नदी के धारा की तरह प्रवाहित मानव मन की विभिन्न अनुभूतियों की सफल अभिव्यक्ति में यह शैली सार्थक निकली है । "सुधिया"में रसोई की रूचि की मोहक आकांक्षाओं में लिप्त सुधिया की चाहनाएँ कुछ ऐसी प्रबल हो गयी थी कि किसी प्रकार की तृप्ति उसे नहीं होती थी । "मन उन व्यंजनों की विवेचना करके ललचता ही रहता था । आशा के सहारे कान रसोई की ओर लगे रहते । सम्भव है, मालकिन पुकारें-ले सुधिया थोडा हलुआ और आधा पापड । ले, तेरे दाँत नहीं है, पराठा कैसे खायेगी, दूध पी ले, परन्तु निराशा ही पल्ले पडती थी । अन्त में वह दीर्घ साँस लेकर उठ खड़ी होती- हे मेरे गोविन्द ।"[3] इच्छाएँ प्रबल होने से सुधिया के मन में उडनेवाले मानसिक संघर्ष का चित्रण इस चेतना प्रवाह शैली द्वारा व्यक्त किया गया है । सुधिया बूढी है तो भी उसको जीभ संबंधी लालसाओं की प्रबलता थी । इसलिए मालिकिन उसकी थाली में जो परस देती थी उन्हीं खाने से किसी प्रकार की तृप्ति उसे न होती थी ।

- -

1. कमला चौधरी, उन्माद, पृ-98
2. " पिकनिक, पृ-16
3. " " -105.

लेखिका ने मानव एवं प्रकृति के सूक्ष्म रहस्यों को रेखांकित करने केलिए बिंब विधान पर विशेष बल दिया है ।

स्पर्श बिंब :-

"कुलफी के दोने का वह स्पर्श सुधिया को ऐसा मधुर, ऐसा मोहक, इतना आकर्षक जान पडा कि उसकी संपूर्ण इन्द्रियाँ झंकृत हो उठी ।"[1] स्पर्श के साथ इन्द्रियाँ झंकृत होने में बिम्बात्मकता है । इस बिंब के माध्यम से सुधिया की मानसिक प्रतिक्रियाओं की स्पष्ट झलक हमें मिल जाती है । सुधिया की अनुभूतियाँ स्पर्श के कारण एक चरम बिन्दु पर केन्द्रित होती दिखायी पडती है ।

दृश्य बिंब :-

"विक्रम को सब से अधिक मृग एकत्रित करने का शौक था । एक लंबा-चोडा मैदान चारों ओर से घिरा था और उसमें सैकडों की संख्या में मृग कैद थे । मैदान के बीच में एक संगमर्मर का चबूतरा था । विक्रमशील अपने प्रसिद्ध संगीतज्ञों सहित रात्री में आकर वहाँ बैठता और कुशल कलाकार अपने संगीत के द्वारा हिरणों को मुग्ध करने की चेष्टा करते ।"[2]

यहाँ लेखिका ने सूक्ष्म विवरणों के माध्यम से हृदय को जीवन्त बनाया है । पढने से ऐसाअनुभव होता है कि सारे दृश्य हमारे सामने छूट रहे हो । यही दृश्य बिंब की विशेषता है ।

ध्वनि बिंब :-

"पक्षियों की चीत्कारों और शेरों की भयभीत करनेवाली दहाडों से आकाश गूँज रहा था, पृथ्वी हिल रही थी । बाँसों की चट-चट चटखने की ध्वनि बादलों की घनघोर गर्जना को भी व्यर्थ कर रही थी ।"[3]

---

1. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-107
2. " -81
3. " " -87

यहाँ पक्षियों की चीत्कार, शेरों की दहाड, बाँसों की चटखने की ध्वनि आदि के स्पष्ट विवरण से ध्वनि बिंब का प्रत्यक्ष चित्रण उभरता है ।

कमला चौधरी ने प्रतीकात्मक भाषा का भी प्रयोग किया है । कहीं कहीं इस तरह के प्रयोग के द्वारा लेखिका ने व्यक्ति-मन की सूक्ष्मातिसूक्ष्म गहराईयों तक पहुँचने का प्रयास किया है । यथा - "मेरे जिगर का टुकडा प्रवीन, मेरी अनेक खण्डित आशाओं का झडा हुआ कण, मेरे जीवन का टिमटिमाता हुआ दीपक प्रवीन भी बीमार है , बताओ क्या करूँ ? मैं अपनी सारी सम्पत्ति लुटाने को तैयार हूँ । कोई मेरे बेटे को बचा ले ।"[1]

इसमें प्रतीकात्मकता का बहुत ही सचेत पुट दिखाई पडता है । प्रवीन को अपने जीवन भाग ही के रूप में जज ने माना है, उसी को व्यक्त करने केलिए ही "जिगर का टुकडा" का प्रतीकात्मक प्रयोग हुआ है । आशाओं की पूर्ति न होने से आगे की ओर देखने में असमर्थ जज के एकमात्र आश्रयदाता और प्रकाशमान मार्ग निर्देशक का प्रतीक है टिमटिमाता दीपक प्रवीन ।

अपनी कहानी "दिग्विजय" में कमलाजी ने अपने ढंग का एक नया प्रयोग किया है । इसको यदि "दार्शनिक रूपक" कहा जाय तो अधिक उपयुक्त होगा ।[2] इसमें उपनिषद् के कुछ वाक्यों को कहानी का रूप दिया गया है और पात्रों का प्रतीक रूप में प्रयोग हुआ है । लेखिका के ही शब्दों में इसमें "आचार्य ब्रह्मा है, राजा आत्मा, शरीर रथ, बुद्धि सारथि, मन लगाम, पाँचों घोडे इन्द्रियाँ है आदि आदि । दिग्विजय की यात्रा आवागमन में विचरण करते हुए संसार रूपी मार्ग से उसपर पहुँचना है । कहानी का अन्त ब्रह्म रूपी लक्ष्य को भेदकर आत्म रूपी बाण का लक्ष्यमय हो जाना है ।"[3] इस प्रकार की आख्यायिकाएँ प्राचीन साहित्य में तो प्राप्त होती है, किन्तु आधुनिक साहित्य में यह एक नवीन प्रयोग है ।

---

1. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-9।
2. डॉ.रामचरण महेन्द्र, प्रतिनिधि कहानीकार, पृ-302
3. कमला चौधरी, यात्रा, पृ-6

कमलाजी की भाषा अत्यन्त प्रौढ और प्रवाहपूर्ण है जिसकी प्रशंसा स्वयं प्रेमचन्द जी ने की है । "मैं उनकी भाषा की प्रौढता और प्रवाह, उनकी भाषा-व्यंजना और मनोरहस्यों की गहराई में उतर जाने की शक्ति पर चकित हो गया हुँ । - - - -"[1] भावानुरूप भाषा इनकी विशेषता है । छोटी छोटी भाव-लहरियों के अनुरूप ही छोटे छोटे वाक्य मन को मोह लेते हैं । उदाहरणार्थ - "बेबस साधना अब क्या करे ? कुछ नहीं । वह निराश हो चुकी है । उसकी सारी सारी उम्मीदें खाक में मिल चुकी है । सारी चेष्टाएँ निष्फल हो चुकी है , सारा साधन निबट चुका है, सारी हसरतें मिट गयी है ।"[2] सूक्तियों और लोकोक्तियों के प्रयोग से भाषा में सौन्दर्य अधिक आ गया है । और प्रेषणीयता बढ गयी है जो भाषा का प्रमुख गुण है । जैसे -

"मुझे अन्धे की लकडी भी छीन लीं।"[3]

"जीवन के आदि में भी रोना है, जीवन के अन्त में भी ।"[4]

"कहते हैं बच्चे और बूढे समान होते हैं ।"[5]

"जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।[6]

उनकी भाषा मुहावरेदार होने के कारण विशेष सजीवता-संपन्न है । उदाहर निम्नलिखित उद्धरण अवलोकनीय है -

"सारे जन्म इसी प्रकार अशान्ति की चक्की में पिसना पडेगा ।"[7]

"कुत्ते के समान उनके घर में गुज़र करती हुँ ।"[8]

"कौमी जोश से रक्त खौलने लगा ।"[9]

"परन्तु राणा का बाल भी बाँका न होने पाये ।"[10]

भाषा में अनुप्रासमयी शैली की सृष्टि करने में उन्हें विशेष रूचि है । उनकी

---

1. कमला चौधरी, उन्माद, भूमिका भाग से पृ-5
2. " " पृ-45
3. " पिकनिक, पृ-91
4. " " -61
5. " " -103
6. " " -87
7. " " -20
8. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-20
9. " " -96
10. " " -100

कहानियों में पग-पग पर ऐसे उद्धरण प्राप्य है । यथा -

"काले काले बादल सारे दिन घिर रहे ।"[1]

"मरकट भी अपना सम्मान, अपना गौरव अमर कर गये ।"[2]

गद्य की शैली में सुवास्ता लाने केलिए रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का भी अत्यन्त सुन्दर प्रयोग किया गया है । जैसे

रूपक अलंकार

वीणा के अलौकिक सौन्दर्य सुधा का पान करते हुए शकुन सोचता है - "यह रक्त मांस का शरीर या श्वेत संगमर्मर की प्रतिमा ।"[3]

"भाभी की आँखों से आँसुओं की झडी लग गयी ।"[4]

उत्प्रेक्षा अलंकार :-

शकुन देव कन्या जैसी वीणा की अपार स्वरराशि को निहारता रहा - उसे ऐसा प्रतीत हुआ मानो इस रागिनी के साथ वीणा का कोमल हृदय टूटा सा जा रहा है ।"[5]

"उन्हें ऐसा जान पडा मानो चन्द्रमा का कुछ भाग टूटकर सुरीला बन गया है

"सुरी के हाथ में मानो किसी ने बिजली का तार छुआ दिया हो ।"[7]

गुडिया खरीदने केलिए दाम देने में असमर्थ सुरिया के मन की वेदना ही इससे व्यक्त हुआ है ।

उपमा अलंकार :-

शकुन "देवकन्या जैसी वीणा का अपार स्वरराशि को निहारता रहा ।"[8]

"दुग्ध जैसी श्वेत शैया पर कोई लेटा है ।"[9]

---

1. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-20
2. " " -95
3. " " -29
4. " " -23
5. " " -35
6. " " -15
7. " " -69
8. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-34
9. " " "

मानवीकरण का उदाहरण

"उस दिन रजनी दुग्ध-स्नान कर रही थी । उसके शरीर से दुग्ध धारा ने बहकर सारी प्रकृति को श्वेत बना दिया था । उसी श्वेत वातावरण में हरी घास की सुकोमल शय्या पर बैठे सुरीला और शेखर वार्तालाप कर रहे थे ।"[1]

कमला चौधरी की भाषा में तत्सम बहुला शब्दावली की प्रधानता है, किन्तु क्लिष्टता के दोष से भाषा प्राय: मुक्त रही है । योगीराज, मृत्युलोक, लज्जावश भक्तवत्सल, भक्ति-सागर, चरण-स्पर्श, हृदयावलोकन, वाक्पटुता, जीवनभर, सर्वाङ्ग कुठाराघात आदि समस्त शब्दों लालन-पालन, मिलना-जुलना, सजधज, रीति-रिवा काट-छाँट, शुभ-अशुभ, पहल-पहल, ओत-प्रोत, नाश्ते-रिश्ते, पिसाई-कुटाई आदि अनुप्रासात्मक शब्द-युग्मों तथा धीरे-धीरे, सोचते-सोचते, कूक-कूककर, हड्डी-हड्डी में, टुकडे-टुकडे, मार-मारकर, सुलग-सुलगाकर आदि पुनरूक्त शब्दों द्वारा भाषा-शैली को सशक्त तथा प्रभावपूर्ण बनाया है । इन्तज़ार, गुफ्तगू, मोहब्बत, गिरफ्तार, सब्रोकरार, मुहरिर, मुवक्किल, खालिस आदि उर्दु शब्दों पस्त, आबरू, खामोश, दुश्वार, बेचैन, साबित, काबू, बेशऊर, सब्ज, साग, तूती, चालाकी, आन, जौहर मियान, आदि फारसी शब्दों कौमी, सुसम्मत, मुरब्बे, फारिग, नीयत, इज़हार, फर्ज, जाहिरा, फकीर, ज़रूरियात, फिक्र, महफिल, नज़ारा, लिहाज़, कुर्बान, कद्र आदि अरबी शब्दों तथा चुपा लिया, लिवाना, बिठाल लिया, मनेली, बरही, बैला, वाये, हमहूँ, हिय, पत आदि देशज शब्दों के यथास्थान प्रयोग से भाषा में सजीवता एवं बोलचाल का गुण आ गये हैं । कमलाजी की भाषा की और विशेषता यह है कि उसमें अंग्रेज़ी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है जैसे पैमानबिल, सोसइटी, पेंशन बोर्डिंग हाउस, मनी आर्डर, रिसीव, सर्विस, ट्रान्सफर, कैश-बाक्स, साइन बोर्ड, कम्पिटीशन, रीटकेट, प्रेक्टिस, सर्टीफिकेट, सोशलिस्ट आदि।पात्र की परिस्थिति और वातावरण की सहजता को चित्रित करने केलिए पात्रों के संवादों के बीच-बीच में अंग्रेज़ी भाषा के शब्दों का प्रयोग बहुत ही स्वाभाविक है । संक्षेप में कहें तो कमला चौधरी की भाषा भावपूर्ण, सशक्त, काव्यात्मक, पात्रानुकूल, मधुर और व्यंग्यपूर्ण है

---

1. कमला चौधरी, पिकनिक, पृ-15

कमला त्रिवेणी शंकर ने अपनी कहानियों में तत्सम बहुला हिन्दी का प्रयोग किया है। ज़िन्दगी, तबादले, मंसूब, बरदास्त, कसम, बसर आदि उर्दु शब्दों के साथ आवश्यकतानुरूप ड्यूटी, प्रोग्राम, एज, इल्जाम, अरसे आदि प्रचलित विदेशी शब्दों का यथावसर प्रयोग करके भाषा को व्यावहारिक रूप देने की सफल चेष्टा की है। उलट-पुलट कर, सिकुड-सिमटकर, मिलना-जुलना, साजती-संभालती आदि क्रिया युग्मों एवं रूखा-सूखा, ताने-बाने, नन्हा-मुन्ना, मान-अपमान, शाक-सब्जी, पथ्य-कुपथ्य आदि विशेषण युग्मों तथा संज्ञा युग्मों के प्रयोग के कारण भाषा में वाँछित सजीवता का समावेश हुआ है। लेखिका ने वाक्यों को आवश्यकता से अधिक दीर्घ नहीं होने दिया। उदाहरणार्थ "समझौता" में नायिका कामना द्वारा अपने पति को लिखे पत्र की पंक्तियाँ द्रष्टव्य है - "आज इस बीसवीं सदी में नारी से केवल पत्नीत्व की ही माँग करना अन्याय है। आज नारी से देश की भी कुछ माँग है। उस माँग को पूरा करना, कम से कम मेरा विचार है, प्रत्येक नारी का कर्तव्य है।"[1]

आपकी कहानियों में वर्णनात्मक, चित्रात्मक तथा नाटकीय शैलियों के संयोग से प्रभावपूर्ण अभिव्यंजनाशिल्प दृष्टिगत होता है। वर्णनात्मक शैली का उदाहरण देखिए - "सन् 1930 में जब गाँधीजी की आँधी चली तभी अजय ने विदेशी वस्त्रों केलिए कसम खाई, चर्खा लाया, सूत काते, नमक बनाया, खद्दर बेचा और इन सबके बीच किसी तरह बि॰ए॰ का पहाड लाँघकर जब अवकाश पाया तो माँ ने मीना को गले ला बाँधा।"[2] चित्रात्मक शैली का उद्धरण अवलोकनीय है - "नन्दा के मौन रहने पर भी पक्षी चहचहा उठे। झबरे मोती ने दो बार भूँककर आनेवाले को अपरिचित घोषित कर दिया, बिल्ली सहमकर स्वामिनी की साडी में जा छिपी और मोर पंख फडफडाकर अलग हो गया।"[3] लेखिका ने कहीं कहीं संवादों में भी चित्रात्मकता का सफल समावेश किया है। उदाहरणार्थ "भुवन विस्मयान्वित दृष्टि से देखकर बोला"[4] "हरिमोहन ने काँपते गले से कहा"[5], "प्रेमा ने क्षीण हँसी के साथ कहा"[6]

---

1. कमला त्रिवेणी शंकर, पुकार, पृ-83
2. " जयमाल, पृ-27
3. " पुकार, -107
4. " जयमाल, -56
5. कमला त्रिवेणी शंकर, जयमाल, पृ-56
6. " -57

आदि वाक्य वक्ताओं की मुद्रा के प्रत्यक्षीकरण में सहायक सिद्ध हुए हैं । प्रसंगानुकूल संक्षिप्त एवं सारगर्भित संवादों की योजना करके अपनी कहानियों को नाटकीय चारुता से विभूषित किया है । उदाहरणार्थ "प्रायश्चित" कहानी में जब आलोक अपनी उपपत्नी अनुराधा से पूछता है कि वह अशोक की सौतेली माँ होकर भी उसे लेकर इतनी व्यस्त क्यों रहती है, तब अनुराधा ने परम शान्त गंभीर स्वर में कहा- "यही तो मैं सोचती हूँ । तुम पति बन कर नारी का, पत्नी का गौरव न निभा सके, पिता बनकर सन्तान का वरदान माथे न चढा सके । मैं सौतेली माँ बनकर भी देखूँ जीजी के साथ किये गए अन्याय का प्रायश्चित कर पाती हूँ या नहीं । तुम पुरूष हो, नारी का मूल्य तुम्हारी दृष्टि में बहुत सीमित है । लेकिन मैं नारी हूँ, नारी का मूल्य, नारी का गौरव नारी ही आँक सकती है ।"[1]

लेखिका ने सशक्त सूक्ति-वाक्यों की रचना में भी सिद्धहस्त है । उनकी सूक्तियों में जीवन संबंधी तथ्यों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है । प्रमाणस्वरूप में निम्न लिखित उद्धरण द्रष्टव्य हैं -

"ठोकर खाने के बाद भी मानव मानव है, यदि उसे मानवता का अवसर दिया जाय

उनकी भाषा-शैली तत्सम प्रधान होकर भी प्रसादगुणान्वित है, सरल होकर भी सक्षम है, सामान्य होकर भी विशेष है ।

चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की कहानियों में ठेठ हिन्दुस्तानी का प्रयोग किया गया है । ग्राम्य वातावरण का चित्रण करते समय उनकी भाषा में अनेक देशज शब्दों को स्थान प्राप्त हुआ है । जासती, मसीन, लेन, चौथ आदि शब्द इसके उदाहरण है । प्रसंगानुकूल उर्दु, फारसी के सर्वप्रचलित शब्दों का खूब प्रयोग किया गया है, जैसे रहम, मुहब्बत, फीरश्ता, शोहदा, यतीम, सलाम, हरज़, मज़ाल, परहेज़, अलहदा, हजम, अजब, परचा, दस्तखत । लेखिका की भाषा में अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग भी काफी अधिक हुआ है । आजकल बोलचाल की भाषा में अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग बढ रहा है । इसलिए पात्रों के संवादों में अंग्रेज़ी शब्दों का आ जाना स्वाभाविक है ।

---

1. कमला त्रिवेणी शंकर, पुकार, पृ-59
2. " जयमाल, पृ-108

यथा - "उसे कोई कहेगा, भला कि "नाइंथ" में पढ़ती है ।"[1] "लेकिन इंगलिश इतनी भी नहीं कि एक मामूली लेटर तो लिख ले ।"[2] स्थान-स्थान पर मुहावरों तथा कहावतों का प्रयोग भाषा में एक अनोखी शक्ति और आकर्षण उत्पन्न कर देता है । उदाहरणार्थ "इतनी देह धरी है," "दाँत पर दाँत बजाकर चढने न दें," "जान लबों पर आ रही है","अरे कम्बख्त की धोडी मरे," "बिछिया के ताऊ", "भाग्यवान की लुगाई, एक गयी दूसरी तैयार, और पहले से चढी हुई" आदि । दलते-दलते, तिनककर-ठसककर, भुन-भुनाती, गर्जन-तर्जन, पूँकते-पूँकते आदि क्रिया युग्मों रंग-ढंग, छाई-मई, कूल-किनारा, साँठ-गाँठ, बुराई-भलाई, कागज़-कलम, पहली-बहली आदि विशेषण युग्मों तथा संज्ञा युग्मों ने भाषा को विशेष निखार प्रदान किया है ।

उनकी शैली में विषयानुकूल वर्णनात्मकता, नाटकीयता एवं चित्रात्मकता का समाहार मिलता है । नाटकीयता केलिए निम्न संवाद उद्धरणीय है -

"बहू, अरी ओ बहू ।"

"जी, मैं गुसलखाने में हूँ ।" जल्दी जल्दी भीगी देह को बिना पोंछे ही धोती लपेटते हुए गुसलखाने की भीतर से उमा ने उत्तर दिया -

"बेगम गुसल कर रही है ।" श्यामा ने माँ की पुकार के उत्तर में कहा-" हुक्म दे गयी है कि मेरे आने से पहले लडके को नहला-धुलाकर, काजल-तेल लगाकर, तैस कर दो ।"

"ओहो ।" सास ने चमककर कहा, "कोई उसका बाप का नौकर बैठा है जो नहला धुला देगा । अरी बहू, क्या तेरा नहाना अभी तक नहीं निपटा ?"

"आयी अम्माजी ।" बिना जम्पर पहने धोती से देह छिपाती, गुसलखाने से निकलकर उमा रसोईघर की ओर लपकी ।

"पहले इसे सम्हाल ।" सास ने पोते की ओर इंगित करते हुए कहा ।"[3]

---

1. संपादक विष्णु प्रभाकर, सप्तदर्शी जीजी कहानी, पृ-142
2. " " -143
3. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, आदमखोर, पृ-153

वार्तालाप करते समय पात्रों की चेष्टाओं का उल्लेख करके लेखिका ने संवादों में विशेष सजीवता का संचार किया है । संवादों की भाषा प्राय: पात्रानुकूल है - अल्पायु बच्चों की भाषा में "मुछमान उथा लेंगै "[1] आदि तुतले शब्दों, पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित शिक्षित पात्रों की उक्तियों में अंग्रेजी शब्दों का मिश्रण अशिक्षित पात्रों के कथनों में "ऐसे सीधे के मुँह पर सातझाडू और हुक्के का पानी "[2] आदि गँवारू मुहावरों, हरामी, कमीना, सुअर आदि गालियों, पंजाबी पात्रों की उक्तियों में माहिया, कुडियाँ, मैनजी, कित्थे आदि पंजाबी शब्दों का प्रयोग उक्त तथ्य का प्रमाण है । लेखिका की चित्रात्मकशैली केलिए निम्नलिखित उद्धरण अवलोकनीय है - "सुरेखा की इच्छा हुई न जाय । फिर जाने क्या सोचकर शीशे के सामने आ खडी हुई बाल संवारा । मुँह पर ज़रा सी क्रीम मली और नीचे उतर आयी ।"[3]

शोषितों की पीडा का वर्णन करते समय उनकी शैली व्यंग्यपूर्ण हो उठी है । आपका व्यंग्य तीक्ष्ण, हृदयस्पर्शी और कटु होता है । उदाहरणार्थ - आध पौन घण्टे की प्रतीक्षा के बाद मिसेज़ मलिक ड्राइंग रूम में पधारी । इसमें उनका कोई दोष न था । कोई भी आधुनिक महिला बिना मेक-अप किये किसी से भेंट नहीं कर सकती, चाहे आगन्तुक मरण शैय्या पर पडे प्राणी केलिए तुलसी-गंगाजल लेने ही क्यों न आये ।"[4]

लेखिका ने ध्वन्यात्मक शब्दों का भी पर्याप्त प्रयोग किया है । जैसे - "लाली ने दस मिनट में सारा घर सिर पर उठा लिया ।"[5]

"बात की बात में एक बोतल ब्रांडी भी आ गयी ।"[6]

मानवीकरण अलंकार के कुछ सुन्दर प्रयोग हमें दिखाई देते हैं । "जेठ की धूप से

---

1. तरूण, अगस्त 1948, पृ-412
2. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, आदमखोर, पृ-121
3. संपादक-विष्णु प्रभाकर, सप्तदर्शी, जीजी कहानी, पृ-144
4. कहानी, जनवरी 1956, बर्थ डे नामक कहानी से, पृ-67
5. संपादक, विष्णु प्रभाकर, सप्तदर्शी जीजी कहानी, पृ-153
6. " " -153

तपी धरती ढेर सा पानी पीकर सीधी साँस ले रही थी । इक्सार कटी हुई घास पर कहीं कहीं पानी की बूँदें मोती सी चमक रही थी, जिनमें सूर्य की लौटती किरणें अपने गरम प्यार के नरम इन्द्रधनुषी रंग बसा रही थी ।"[1]

उपर्युक्त विवेचन से प्रत्यक्ष है कि सौनरेक्साजी की भाषा सरल, स्पष्ट, मुहावरेदार, भावानुकूल एवं अनेकश: व्यंग्यपूर्ण है ।

भाषा के सरल एवं व्यावहारिक रूप के दर्शन चन्द्रवती ऋषभ सेन जैन की कहानियों में होते हैं । उसमें अंग्रेज़ी, उर्दु तथा प्रान्तीय शब्दों के प्रयोग से भाषा को सजीव एवं प्रचलित रूप प्रदान किया गया है । जैसे -

अंग्रेज़ी शब्द कान्फ्रेंस, ब्राडकास्ट, ओवर लोडड, सर्व, फिनिशिंग टच, सिग्नेचेर्स आदि ।

उर्दु शब्द ताउँस, निकाह, तशरीफ, तमकनत आदि ।

प्रान्तीय शब्द कड़ाह, घुसरैला, गारा आदि ।

भाषा की सज्जा केलिए किसी प्रकार का कृत्रिम प्रयास लेखिका ने नहीं किया है । मुहावरों, लोकोक्तियों और सूक्तियों का प्रचुर प्रयोग इसी प्रवृत्ति का फल है । कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकरजी ने उनके शैली के संबंध में लिखा है -"उसमें कहीं कृत्रिमता नहीं है, निर्झर के निर्मल प्रवाह की भाँति, वे जो कुछ मन में है, उसे कह देती है, कहती चली जाती हैं । अपनी भावना केलिए उन्हें भाषा, उपमा, ज़ोर, सुन्दरता या दूसरा कुछ भी "गढना" नहीं पडता, तन्मयता की मूड में उसका उद्गम होता रहता है और वे सिर्फ संभाल कर उसे कागज़ पर ले लेती हैं । यही कारण है कि उनकी कहानियों में कहीं उलझाव नहीं है और पढते समय हम उनकी कहानियों में साक्षात् घटी घटनाओं की तरह रमे रहते हैं, रस लेते है और पात्रों के सुख-दुख की भाव-गंगा में अवगाहन कर पाते हैं ।"[2]

कुल मिलाकर लेखिका की शैली प्रभावपूर्ण एवं प्रसादगुण युक्त है । उसमें सहजता एवं प्रवाह का माधुर्य सर्वत्र विद्यमान है ।

1· संपादक:योगेन्द्र लल्ला, श्री कृष्ण, हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियाँ, अफसर का बेटा, पृ-13-22

2· चन्द्रवती ऋषभसेन, जैन, नींव की ईंट, पृ-24

श्रीमती तारा पाण्डे ने अपनी कहानियों में सामान्य हिन्दी का प्रयोग किया है। निठल्ले, ढीठ आदि देशज शब्दों तथा तसल्ली, लाचार, फिकर, आदि प्रचलित उर्दु शब्दों का प्रयोग आप की भाषा को व्यावहारिक बनाया है। प्रसंगानुकूल प्रयुक्त मुहावरें तथा लोकोक्तियाँ भाषा को रोचक बना दिया। जैसे "अपना सोना खोटा, परखनेवाले को दोष"[1] "लोक लाज तो जैसे धो कर पी ली है"[2] "चुपचाप मुँह लटकाये बैठे है"[3] "ओस चाटकर उसने प्यास बुझानी चाही थी"[4] आदि। आप की कहानिय में लघु संवादों की आयोजना की गई है। उदाहरणार्थ "उत्सर्ग" कहानी में सोना औ प्रकाश का प्रस्तुत संवाद द्रष्टव्य है -

"मानोगे ?"
"यथाशक्ति"
"अपना विवाह कर लो "
"विवाह"
"हाँ भैया।"
"नहीं - - - - नहीं - - - - नहीं।"[5]

लेखिका ने वार्तालाप के समय पात्रों की भाव-भंगिमों के वर्णन पर भी अधिक ध्या दिया है जिससे हमें यह आभास होता है कि संवाद प्रत्यक्ष रूप में हो रहे हैं। यथा

(अ) "गजाधरजी ने नाक से बोलते हुए और अपनी छोटी आँखों को बड़ी करने का निष्फल प्रयत्न करते हुए कहा।"[6]

(आ) "एक झटका देते हुए वंशीधर ने भिनभिनाकर कहा।"[7]

"माँ" तथा "पिता और पुत्री" में भावपक्ष की अपेक्षा कलापक्ष पर विशेष बल दि गया है। गद्य काव्य के कलात्मक शैली में भावपूर्ण कथा-प्रणयन इन कहानियों का लक्ष्य है। कवयित्रि होने के कारण आप की कहानियों में काव्यात्मकता का आभास मिलता है। "माँ" कहानी की प्रस्तुत पंक्तियाँ उद्धरणीय हैं

---

1. तारा पाँडे, उत्सर्ग, पृ-28
2. " " "
3. "
4. -61
5. " " -8
6. " -118
7. " -120

"बालिका न समझी कहाँ चली गयी । उसे छोडकर माँ कहाँ गयी ।

किसी ने कहा - "गंगा स्नान को गयी ।"

कोई बोला - "अपनी माँ के पास गयी ।"

किसी सत्य के पूजारी ने कहा , न बिटिया माँ तो गयी - सदा केलिए - उस पार - अब न लौटेगी ।

बालिका बिलबिला पडी, "माँ न लौटेगी ?"[1]

लेखिका ने अपनी भाषा-शैली को प्रभावोत्पादक बनाने केलिए तुक-साम्य, प्रश्नात्मक उक्ति, सूक्ति वाक्य, विश्लेषणात्मक चित्रण, प्रतीक शैली आदि का प्रयोग किया है ।

तुक साम्य :- "सहसा गाँधी की आँधी में वह किनारे लग गयी ।" समय की गति विचित्र है । कैसे कैसे पत्थर पिघल गये ।"[2]

प्रश्न शैली :- "अनूप की आँखों से आँसु बहने लगे, पता नहीं ये आँसु हर्ष के थे या विषाद के, सन्तोष के थे या आत्मग्लानि के । -[3]

सूक्ति वाक्य :- "संसार में दुख और कष्टों का कहीं ओर छोर नहीं, "सुख, सुख" कहते मनुष्य अन्धंकार में भटकता फिरता है । परन्तु वह सुख किसे मिला जिससे आत्मा की तृप्ति हो ? सांसारिक सुख मृगतृष्णा है, धोखा है ।"[4]

प्रतीकात्मक शैली - "चमकीला जाल बिछा । बालिका मुग्ध हो गयी । उसकी सखी सहेलियाँ सभी तो उसी जाल में फँसी हुई हँसती सी उसने देखी । वह भी ललचा उठी । उसे नहीं मालूम हुआ कि वह जाल उसे धोखा देने केलिए है, यह हँसी दिखावा है ।"[5] यहाँ "जाल" विवाह का प्रतीक है

---

1. तारा पाँडे, उत्सर्ग, पृ-154
2. " " -138
3. " " -106
4. " " -43
5. " " -163

मनोविश्लेषणात्मक शैली :- "अनूप प्राय: सोचा करते थे कि शीला को बुला लाऊँ और फिर पहले की तरह सुख से जीवन बिताऊँ, प्यार भी पहले की तरह करूँगा । यह सोचते सोचते वे प्राय: निश्चय ही कर लेते थे, परन्तु भीतर से उनकी प्रकृति हँसती थी । भला प्यार क्या सोच समझकर किया जाता है ? यदि ऐसा ही होता तो प्यार और कर्तव्य में इतनी भिन्नता न होती ।"[1]

कहानियों में अर्थालंकारों का भी यथास्थान सुरुचिपूर्ण ढंग से प्रयोग हुआ है । निम्नस्थ पंक्तियों में उपमा अलंकार द्रष्टव्य है -

"जब अपनी ही इच्छाएँ नागिन की तरह फुफकारने लगीं तब उसने उन्हें पैरों तले दबाकर कुचल दिया ।"[2]

उपर्युक्त विवेचन से प्रत्यक्ष है कि श्रीमती तारा पाँडे की भाषा मंजी हुई साहित्यिक भाषा है । उनकी शैली प्रभावपूर्ण एवं मधुर है ।

तेजरानी पाठक की भाषा सबल, सरल, व्यावहारिक, मुहावरेदार तथा प्रवाहपूर्ण है । उर्दु, अंग्रेजी शब्दों का प्राय: अभाव है । मुहावरों के प्रयोग के कार भाषा को रोचक बना देता है जैसे "जो गरजते हैं वे बरसते नहीं", "हाथी के दाँत खाने के और तथा दिखाने के और होते हैं," "अन्धों में काने राजा", "रोज़ कुआँ खोदना और रोज़ पानी पीना" आदि । वर्ण्य उक्ति को प्रभावपूर्ण बनाने केलिए उन्होंने प्राय: सूक्ति वाक्यों को भूमिका रूप में प्रस्तुत किया है । उदाहरणार्थ "निर्बल के बल" कहानी की निम्नलिखित उक्ति देखिए - "यदि मनुष्य की इच्छा सर्वशक्तिमान परमात्मा की इच्छा से नीचे न दबी होती तो मालूम नहीं संसार में क्या अन्धेर मच गया होता । कम से कम विष्णु को तो अपनी बाल लीला समाप्त करने के पहले ही संसार यात्रा समाप्त कर देनी पडती और किशोर आनन्द से अमर रहता ।"[3] उनकी भाषा पात्रानुकूल है । उदाहरणार्थ "गरीबी की बू" में देहातियों और कृतघ्न चन्द्रभूषण का यह वार्तालाप देखिए -

---

1. तारा पाँडे, उत्सर्ग, पृ-102
2. " -41
3. तेजरानी पाठक, एकादशी, पृ-102

"गाँववाले - तोहार भयवा कीत बीयत बहुत खराब है ।

इन्सपैक्टर साहब बीच ही में बोल पडे । अच्छा है, अब जाओ, अब की बार गाँववालों को भी गुस्सा आ गया । वे बोले - तो भैया हमारे पीछे काहे का पडे हो - लो जात है । अपने वे दिन भूल गये जब हमारे पास दौडे फिरत रहे और खुशामत करत रहे । अब निसपेट्टर हो तो तब के दिन सब भूल गये का ।"[1]

आलोच्य लेखिका की शैली मुख्य रूप से वर्णनात्मक है । पात्रों की मानसिक स्थिति तथा द्वंद्वों का विश्लेषण करते समय लेखिका की शैली में भावुकता आ गयी है । "गुप्ताकर्षण" कहानी में विभा और अतीत की चिन्तन शैली इसका प्रमाण है ।"[2] "विमाता" तथा "फिलासोफर" आत्मकथात्मक शैली में लिखी गयी है तो "मेरी डायरी" कहानी की रचना डायरी प्रणाली में हुई है । "गुप्ताकर्षण" मनोविश्लेषणात्मक शैली में लिखित है । कभी कभी लेखिका की शैली व्यंग्यपूर्ण भी है । "दो शब्द" में समकालीन समाज की धार्मिक संकीर्णता का उल्लेख है - तब विदेश यात्रा करनेवाले को जाति-च्युत कर दिया जाता था और कूपमण्डूकता को श्रेष्ठ गुण माना जाता था ।"[3]

आपके कथोपकथन अत्यन्त प्रभावशाली और स्वाभाविक है । नाटकीयता का गुण लिये हुए कथोपकथन भी देखने को मिलता है । यथा -

"मेरी अंगूठी खो गयी माँ ।

"हैं । कैसे खो गयी ? कहाँ थी ? अकचका कर एक प्रौढा ने पूछा -

"चपला । क्या सच कह रही हो ?

चपला ने केवल सिर हिला कर उत्तर दिया - हाँ ।

चपला की माँ ने फिर पूछा - क्या तुम अँगूठी अपने हाथ में नहीं पहने थी ? वह किस प्रकार खो गयी ?

चपला ने धीरे से उत्तर दिया - ठीक याद नहीं है माँ । शायद मैं हाथ धोने केलिए

---

1. तेजरानी पाठक, एकादशी, पृ-61-62
2. " " -113-118
3. अंजली -76

गुसलखाने में गयी थी - वहीं भूल आयी ।"[1]
कहीं कहीं पात्रों के कथोपकथन आवश्यकता से कुछ अधिक लंबे हो गये हैं । "सन्यासिनी" कहानी में सन्यासिनी और ऊर्मिला के कतिपय वार्तालाप तथा सन्यासिनी की उक्तियाँ[2] एवं "दो शब्द" में कल्याणी तथा रमेशचन्द्र का वार्तालाप इसी प्रकार का है । अत: यह असंदिग्ध है कि उनकी कहानियों में शैलीगत सरलता, मार्मिकता और व्यावहारिकता का उचित सन्निवेश हुआ है ।

महादेवी वर्मा ने अपने रेखाचित्रों में गंभीर साहित्यिक शब्दावली का प्रयोग किया है । उनकी शब्द-सम्पदा का मूल स्रोत संस्कृत भाषा और साहित्य है । वे "बछडा" के स्थान पर "वत्स" का प्रयोग करती है । "चँवर" की जगह "चमर" "रोयाँ" के स्थान पर"रोम" गर्मी की छुट्टियों केलिए "ग्रीष्मावकाश" का प्रयोग करना उन्होंने अधिक उचित समझा है । संस्कृत साहित्य से प्राप्त शब्द संपदा से काम न चलने पर महादेवी को अंग्रेज़ी के आवश्यक, उपयोगी और उचित शब्दों को ग्रहण करने में हिचक नहीं होती । मार्जिन, टिकट, डिपो, सप्लाई, रिज़र्व, नेगेटीव, डेड लेटर, स्टूल, प्रोग्राम, इन्लार्जमेंट आदि अनेक शब्दों का प्रयोग अभिव्यक्ति को व्यावहारिक और सटीक बनाने केलिए किया है । गाँव के ठेठ शब्द भी उनके साहित्य में उसी प्रकार आकर बैठ गये हैं जिस प्रकार गाँव के उपेक्षित निरीह व्यक्ति उनके मन-मन्दिर में प्रतिष्ठित हो गए हैं । चौपाल, ओसारा, खटिया, खटोला, घुघरी, गोंदरा, बांमनी, पथरौटी, बरेठिन आदि शब्द बिना किसी परिवर्तन के अपने ठेठ रूप में उनकी शब्द सम्पदा में सम्मिलित हो गए हैं । अर्जीनवीस, गवाह, शोरगुल, मज़दूर, लियाकत, रेहन, जामा, बेदखली आदि उर्दु-फारसी के शब्दों ने भाषा में पर्याप्त सजीवता का संचार किया है । इसी प्रकार हाँट-पटकार, काटा-छाँटा, लेखा-जोखा, लिपे-पुते, माँग-जाँच, टोने-टोटके, बची-खुची, नहाने-धोने, हक्का-बक्का, आदि शब्द युग्मों तथा भटकते-भटकते, बचते-बचा पूछते-पूछते, घुमा-घुमा कर, सुन-सुनकर, ठहर-ठहर कर, आदि पुनरूक्त शब्दों ने

---

1. तेजरानी पाठक, एकादशी; पृ-44
2. " अंजली, पृ-57-60,63,65
3. " -74-77

भी भाषा को पर्याप्त सौष्ठव प्रदान किया है । ग्रामीण पात्रों की उक्तियों में ग्राम सुलभ तद्भव एवं देशज शब्दावली का मिश्रण है । यथा - "कल्पवास की उमरी आई तब उहो हुई जाई । का एकै दिन सब नेम-धरम समापन करे की परतिज्ञा है।"[1]

शब्द-चयन की तरह महादेवी की वाक्य-योजना भी बड़ी सुलझी हुई है । उनके वाक्य बडे आकर्षक एवं सुबोध होते हैं । संक्षिप्त वाक्य रचना की अपेक्षा दीर्घ वाक्य-योजना की भी प्रवृत्ति लक्षित होती है । दीर्घ-वाक्य-योजना बोझिल प्रतीत नहीं होती, उसमें कवित्वमयता की शक्ति आ गयी है । पहाड़ी युवती का चित्र प्रस्तुत करते हुए उन्होंने लंबी वाक्य योजना प्रस्तुत की है - "धूल-धूल कर धूमिल हो जानेवाले पुराने काले लहंगे को एक विचित्र प्रकार से खोंसे, फटी मटमैली ओढनी को पेंट देकर कमर में लपेटे और दाहिने हाथ में एक बडा सा हंसिया संभाले लछमा नीचे पडी घास-पत्तियों के ढेर पर कूद कर खिलखिला उठी ।"[2] प्रवाहमयी प्रांजल भाषा में मुहावरों, कहावतों, सूक्तियों तथा लोकोक्तियों का प्रचुर प्रयोग रहता है । इन से भाषा समृद्ध होती है तथा विषय अधिक स्वाभाविक और प्रभावोत्पादक बन पडे हैं । भाषा में चुटीलापन उभर आया है । छापा मारना[3], साँचे में ढलना ढिंढोरा पीटना[5] मन हाथों पर लेना[6] टेढी खीर,[7] बीडा उठाना[8] गले मढना[9], घुट घुट कर मरना[10] महाभारत के अंकुर जमना[11] खेल के संसार में सूखा पडने की संभावना[12] आदि मुहावरे बडे प्रासंगिक और आकर्षक है । सूक्तियों तथा लोकोक्तियों का प्रयोग महादेवी ने अभिव्यंजना में विशेष अर्थ लाने केलिए किया है । यथा जीवन सौन्दर्य की आत्मा है,[13] अश्व के बिना अश्वमेघ नहीं हो सकता [14], दूध का जला मट्ठा भी फूँक फूँक[15] जिसने ऊँचे स्वर्ग की सृष्टि की है, उसने नीचे पाताल की रचना भी की है[16] दूध से सफेद बाल और दूध फेनी सी सफेद दाढी[17]

---

1. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ, पृ-68
2. " अतीत के चलचित्र, -105
3. " " -11
4;5,6,7,8 - महादेवी वर्मा, अतीत के चलचित्र, पृ-12,14,52,53,53,
9,10,11,12 " " पृ-53,53,21,21
13,14,15,16,17 " पृ-10,18,42,78,56

लग जाय तो तीर नहीं तो तुक्का[1], रोज़ कुआँ खोदना, रोज़ पानी पीना[2], अपनी करनी अपनी भरनी[3], न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी[4] रहने का आश्चर्य है, गये अचमभा कौन[4]।

विविध अलंकारों की योजना कर महादेवी ने अपनी गद्य-भाषा को काव्य-मयता प्रदान की है। रामा की कुरूपता और कालेपन को उपमानों के सहारे अभिव्यक्त करने में लेखिका ने अपनी कुशल लेखनी का परिचय दिया है - "साँप के पेट जैसी सफेद हथेली और पेड की टेढी मेढी गाँठदार टहनी जैसी अंगुलियाँ।[5] कोने में दुबके हुए "घीसा" का वर्णन देखिए - जिसकी उभरी हड्डियोंवाली गर्दन की संभाले हुए झुके कंधों से रक्तहीन मटमैली हथेलियाँ टेटे-मेढे कटे हुए नाखूनों से युक्त हाथोंवाली पतली बाहें ऐसी झूलती थी जैसे ड्रामा में विष्णु बननेवाले की दो नकली भुजाएँ।[6] उत्प्रेक्षा का एक अनुपम दृश्य देखिए - "बिन्दा अपने जले पैरों को घास में छिपाने और दोनों ठंडे हाथों से मेरा हाथ दबाये ऐसे बैठी थी मानो घास का चुभता हुआ ढेर रेशमी बिछौना बन गया हो।[7] अनुप्रास का स्वाभाविक प्रयोग लेखिका की कुशलता का प्रतीक है। यथा - "इसके स्वागत में मेवे नहीं बँटे, बधाई नहीं गाई गयी, दादा-नाना ने अनेक नाम नहीं सोचे, चाची-ताई ने अपने-अपने नेग केलिए वाद-विवाद नहीं किया "[8] अनेक स्थलों पर काव्यमय उपमाओं से अलंकृत वाक्य-योजना उसके कवि-हृदय का परिचय भी देती चली है। यथा- "रामा के कुम्हलाये मुख पर ओस के बिन्दु जैसे आनन्द के आँसु ढुलक पडे।"[9] "लछमी का पहाड़ के हृदय पर पड़े छाले जैसा छोटा घास फूस का घर है।"[10] रूपक का निम्नलिखि उदाहरण अवलोकनीय है "उन मानव हृदयों में उमडते हुए भाव-समुद्र की जो स्पर्श-

---

1. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ, पृ-51
2,3, " " -52,53
4. " अतीत के चलचित्र, -69
5. " " -9
6. " " -66
7. " " -38
8. " " -59
9. " " -15
10. " " -105

मधुर तरंग मुझे छू भर गयी थी, उसी की स्मृति मेरे मानस पटल पर न जाने कितने विरोधी चित्र आँकने लगी ।"[1] इनके अतिरिक्त इस वर्ग का जीवन "खुली पुस्तक जैसा[2] अथवा वृद्ध जीवन के कम से कम "54 बसन्त और पतझड"[3] देख चुके होंगे जैसे वाक्य पाश्चात्य अभिव्यंजना के अलक्ष्य प्रभाव का संकेत करते हैं । इसी प्रकार विषय भेद के साथ भाषा का साहित्यिक रूप भी उन स्थलों पर उपलब्ध है जहाँ जीवन का गंभीर एवं दार्शनिक विवेचन हुआ है ।

महादेवी के गद्य की प्रमुख शैली वर्णनात्मक है । वर्णनात्मक शैली का उदाहरण देखिए - "मुन्नू की माई को सुन्दरी कहना असत्य है और कुरूप कहना कठिन । वास्तव में उसका सौन्दर्य रेखाओं में न रहकर भाव में स्थित रखता है।इसी से दृष्टि उसे नहीं खोज पाती पर हृदय उसे अनायास ही अनुभव कर लेता है । साधारण सांवले रंग और विवर्ण गालों के कारण कुछ लम्बे जान पडने वाले मुख में कोई विशेषता नहीं । नाक का नुकीलापन यदि बुद्धि की तीक्ष्णता का पता न देता तो उसका छोटापन मूर्खता का परिचायक बन जाता ।"[4] रेखाचित्रों में सर्वत्र वर्णनात्मक शैली ही अपनाये जाने पर भी विविधता लाने केलिए यत्र-तत्र हास्य के चुटीलेपन चित्रात्मक शैली की सजीवता, प्रश्नोत्तर शैली का चमत्कार, कथात्मक शैली आदि का सुन्दर चमत्कार मिलता है। कथात्मक शैली में वे चीनी की कथा शुरू करती है - "कई वर्ष पहले की बात है । मैं ताँगे से उतरकर भीतर आ रही थी और भूरे कपडे का गठ्ठर बाये कन्धे के सहारे पीठ पर लटकाये हुए और दाहिने हाथ में लोहे का गज घुमाता हुआ चीनी फेरीवाला फाटक से बाहर निकल रहा था ।"[5] कुली वर्ग के करूण जीवन को महादेवी ने चित्रात्मक शैली में प्रस्तुत किया है । - "कोई टाट का सिला विचित्र पैजामा और फटे हुए काले खुरदरे कम्बल का गिलाफ जैसा कुरता गले में लटकाये भालू के समान घूम रहा है । कोई कौपीनदारी तार तार पटा सूती कोट पहने, कमर से बोझ बाँधने की मोटी रस्सी लपेटे और रूखे खडे बालों को

---

1. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ, पृ-91.
2. " अतीत के चलचित्र, पृ-84
3. " पृ-50
4. स्मृति की रेखाएँ, पृ-50
5. अतीत के चलचित्र, पृ-20

खुजलाता हुआ सेही जैसा काँटेदार जन्तु जान पड़ता है ।"[1] शब्दों के माध्यम से वर्ण्य वस्तु का, चाहे वह कितना ही अमूर्त क्यों न हो, जीवन्त चित्र उरेह देने की कला महादेवी को खूब आती है । इसलिए तो कहीं कहीं आपने अपने पात्रों का ऐसा सूक्ष्म और यथार्थ वर्णन किया है कि सहज ही वे हमारी आँखों के समक्ष साकार हो उठते हैं । कुलियों के जीवन की स्थितियों को अधिक करूणामय बनाने केलिए महादेवी ने बिंबों का सहारा लिया है । भाव बिंबों की पूर्ति उन्होंने संवादों और कथनों से कर लिया है । इसके कारण कुलियों के जीवन और भी दयनीय प्रतीत होने लगती है - "उसकी आँखें अधिक सजल हो गयी या कंठ अधिक गद्-गद् हो उठा, यह बताना कठिन है ।"[2] यह उक्ति इस धारणा की पुष्टि करता है कि सामान्य की महत्ता देखने की अपेक्षा वे सामान्य की मानवीयता देखने में ही हिमायती है । उनकी बिम्ब योजना में भी चेतना-कला-पद्धति की प्रवृत्ति स्पष्ट है ।

हास्य-व्यंग्य पूर्ण चुभते हुए विशेषणों से युक्त आपकी शब्दावली कभी-कभी आप की शैली को मुखरित कर देती है । पाँचवें रेखाचित्र में समाज पर करारी चोट करती हुई आप कहती है - "जिस समाज में 64 वर्ष का व्यक्ति 14 वर्ष की पत्नी चाहता है, वहाँ 32 वर्ष की बिट्टो के पुनर्विवाह की समस्या सुलझा लेना टेढी खीर थी । उसके भाग्य से ही 150 वर्ष की पूर्ण आयुवाला पुरूष कोई भी न मिला और उसके जन्म-जन्मान्तर के अखण्ड पुण्य फल से हमारे 54 वर्ष के बाबा ने उसके उद्धार का बीडा उठाया ।"[3] लेखिका की गद्य कृतियों में प्रश्नोत्तर शैली के अनेक उदाहरण भी मिलते हैं । "आँसुओं से उजली उनकी दृष्टि पल भर को उठी, फिर कास के फूल-जैसी बरौनियों वाली पलकें झुक गयी, न जाने व्यथा के भार से, न जाने लज्जा से"।[4] इस प्रकार महादेवी की गद्य शैली विविध रूपों में दृष्टिगत होती है । निष्कर्ष रूप में यह कहना उचित होगा कि महादेवी के रेखाचित्रों में एक भी शब्द फालतू नहीं, एक

---

1. महादेवी वर्मा, स्मृति की रेखाएँ, पृ- 32
2. " " -46
3. " अतीत के चलचित्र, पृ-53
4. " " -57

भी वाक्य अनावश्यक नहीं, एक भी पद-विन्यास सन्दर्भ च्युत नहीं, सब कुछ नपा-तुला व्यंजक और प्रभावपूर्ण है । सत्य तो यह है कि हिन्दी में रेखा-चित्र लेखन कला में जो सिद्धि उन्हें प्राप्त हुई है, वह अन्य लेखक-लेखिकाओं केलिए प्राय: दुर्लभ रही है।

बंग महिला की कहानियों की भाषा सरल और प्रवाहपूर्ण होने के अतिरिक्त पर्याप्त स्वच्छ भी है । डॉ॰ऊर्मिला गुप्ता ने श्रीमती बंगमहिला की कहानियों में उनकी भाषा-शैली का सम्यक् विवेचन प्रस्तुत करते हुए लिखा है - "बंगमहिला ने भाषा में व्यावहारिकता केलिए देशज शब्दों का प्रयोग किया है । इससे जहाँ भाषा में सजीवता आई है, वहाँ कतिपय स्थलों पर ग्राम्य दोष भी आ गया है ।"[1] यथा -

अ॰ "नवल की बातें और न जाने क्या अगड-बगड सोचते-सोचते गाडी कई स्टेशन डाक कर मिरजापुर पहुँची ।"[2]

आ॰ "जिसे उन्होंने रखवाली केलिए छोडा था किसी बहाने भाग गयी ।"[3]

इ॰ "हँसी ठट्ठा भी रहा से अच्छी लगती है । "[4] इनके अतिरिक्त युग्म शब्दों की ओर भी उनकी विशेष प्रवृत्ति रही है । "हंसी-ठट्ठा, रोती-धोती, रो-रूलाकर आदि प्रयोग इसके प्रमाण है । भाषा को व्यवहारानुकूल रखने केलिए उन्होंने इत्तिला हिस्सा, तसवीर, आदि उर्दु-शब्दों का भी प्रयोग किया है । बंगाली छाप आपकी भाषा में स्पष्ट है जैसे "सरम", "ससुरार" , "शिर", "पोष्ट", आदि । मुहावरों के प्रसंगानुकूल प्रयोग से भाषा में व्यंग्यमयी अर्थगरिमा आ गयी है । रफू चक्कर हो जाना"[5] 'मुझे अच्छा उल्लू बनाया"[6], "दोनों एक जान दो कालिब है"[7] आदि वाक्यांशों में मुहावरों का सुष्ठु प्रयोग हुआ है ।

श्रीमती बंगमहिला की कहानियों में अधिकतर वर्णनात्मक शैली का ही प्रयोग

1॰ ऊर्मिला कुमारी गुप्ता, हिन्दी कथा साहित्य के विकास में महिलाओं का योग, पृ-29
2॰ बंग महिला, कुसुम संग्रह, पृ-84
3॰ " " -80
4॰ " " -76
5॰ " -84
6॰ " " -84
7॰ " - 80

हुआ है । "दुलाईवाली" कहानी के अन्त में रहस्योद्घाटन की शैली हम देख सकते हैं कथोपकथन इतनी सुचारू रूप से सजाया गया है कि कहानियों में एक प्रकार की नाटकी यता आ गयी । यथा -

"वंशीधर बोलो - "मेरे उमर तो जो कुछ बीती सो बीती परवह बेचारी, जो तुम्हारे से गुनवान के संग पहली ही बार रेल से आ रही थी बहुत तंग हुई । उसे तो तुम ने नाहक रुलाया । वह बहुत ही डर गयी थी ।"

"नहीं जी । डर किस बात की थी ? हम, तुम दोनों गाडी में न थे ?"

"हाँ पर, यदि मैं स्टेशन मास्टर से इतिला कर देता तो बेखडा खडा हो जाता न ?"

"अरे तो क्या मैं मर थोडे ही गया था । चार हाथ की दुलाई की बिसात ही कितनी ?"[1]

लेखिका ने पात्रों की शिक्षा, संस्कृति आदि को ध्यान में रखकर कथोपकथन में स्वाभाविकता लाने केलिए तदनुरूप भाषा का प्रयोग किया है । इसलिए "भाई-बहन" में गंगादेई और साहब की भाषा सरल है तथा श्रीराम की भाषा में सहज गांभीर्य है । इसी प्रकार "दुलाईवाली" में वंशीधर और नवलकिशोर शुद्ध हिन्दी बोलते हैं, किन्तु रेल के डिब्बे में बैठी हुई गाँव की स्त्रियों ने पूर्वी हिन्दी का प्रयोग किया है । यथा - "हम तो इनके संघे के आदमी के देखबो न किहा गोइयाँ ।"[2] पात्रानुकूल भाषा की भाँति लेखिका ने वार्तालाप के समय पात्रों के भावानुकूल आकृति-परिवर्तन का भी चित्रण किया है । इससे संवादों में विशेष स्वाभाविकता आ गयी है । उदाहरणार्थ ये उक्तियाँ देखिए - (अ) "जानकी जी ज़रा भौहें टेढी करके बोली"[3] "तब बिचारी गंगादेई बडे बोलेपन से भाई के मुँह की ओर ताकती हुई बोली ।"[4]

---

1. बंग महिला, कुसुम संग्रह, पृ-86
2. " " -82
3. " " "
4. " " -79

लेखिका की शैली की प्रमुख विशेषता यह है कि उसमें हास्य-व्यंग्य का पुट सर्वत्र विद्यमान है । पेट की क्षुधा की ओर इंगित करते हुए हास्यपूर्ण शब्दावली का प्रयोग उद्धरणीय है - "मिरजापुर में पेटराम की शिकायत शुरू हुई । उसने सुझाया कि इलाहाबाद पहुँचने में अभी देरी है । चलने के झंझट में अच्छी तरह उसकी पूजा किए बिना ही वंशीधर ने विलायत छोडा था ।"[1] ये वाक्य लेखिका की हास्य-विनोदात्मक प्रतिभा के स्वस्थ निदर्शन है । हास्य-विनोद की यह योजना अपने समय से काफी आगे की चीज़ है । कतिपय स्थलों पर व्यंग्य का रंग इतना गहरा तथा चुटीला है कि भावक के मन में हास्य रस की तरंगें उद्वेलित हो उठती है । इसके विपरीत कहीं-कहीं उपदेशात्मक शैली को प्रश्रय देनेवाले सूक्ति-वाक्यों का भी मनोविज्ञानुसार प्रयोग हुआ है । उदाहरणस्वरूप "भाई-बहन" से ये उक्तियाँ देखिए - (अ) "लडकपन में जिस बात का प्रभाव मनुष्य पर पड जाता है, बडे होने पर वह उसी के अनुसार व्यवहार करता है"[2], (आ) "जिसके हृदय में संतोष है उसी ने सब कुछ भर पाया । - - - - अपनी अवस्था पर सन्तुष्ट रहना और उसी के अनुसार चलना बुद्धिमानों का काम है ।"[3]

श्रीमती रामेश्वरी देवी "चकोरी"जी ने साधारण बोल-चाल की भाषा का ही प्रयोग अपनी कहानियों में किया है । भाषा में सहजता लाने केलिए लेखिका ने हरम, बेगम, शाही, तालीम, ज़ेर-साये, आलमगीर, परवरिश, खिदमत, नशाद, मर्तबा, रूतबा, पोशीदा आदि उर्दु शब्दों तथा सीटें, रिज़र्व, आर्डिनेन्स, आरकेस्ट्रा, स्टेज, सिविल-मैरेज, इन्क्वायरी, रिपोर्ट, लेडी आदि अंग्रेज़ी शब्दों का यथास्थान प्रयोग किया है । मुहावरों तथा लोकोक्तियों का प्राय: अभाव है यद्यपि "गुदडी में लाल," "आग में घी छोडना"[5] आदि प्रचलित मुहावरे भाषा-प्रवाह में सहायक रहे हैं । आपने "आलमगीर", आँखों का कौतुक", "माता की ममता" कहानियाँ वार्तालाप शैली में

---

1. बंग महिला, कुसुम संग्रह, पृ-80
2. " " -111-112
3. " " -109
4. रामेश्वरी देवी "चकोरी", धूमछाँह तथा अन्य कहानियाँ, पृ-5
5. " " -16

लिखी है । आपने अपनी वर्णन शैली के माध्यम से प्रकृति के अनेक हृदयग्राही चित्र प्रस्तुत किये हैं जैसे कोयल ने वसन्त के आने की सूचना दी - पेडों की सूखी टहनियाँ फिर से हरी हो गयी - सरसों के हरे पेडों ने पीली चादर से अपना मुँह ढँक लिया । भौरों से प्रणय सन्देश सुनकर फूल और कलिकाएँ फूल उठी । वसन्त ने प्रकृति को प्यार से चूम लिया । प्रकृति में जीवन आ गया ।"[1] इनकी भाषा में अतिद्वीय प्रवाह और सादगी है । कृत्रिमता और आरोप कहीं नहीं है । इनके कथोपकथन अत्यन्त संक्षिप्त मार्मिक एवं पात्रानुकूल है । यथा - पुलिस सुपरिन्टेंडेंड मिस्टर एक्मैन ने अपने हाथ में का सिगार ट्रे में रखते हुए कहा - वेल सबइन्सेक्टर । तुम बहुत तेज़ आदमी है होशियार हैं ।

सतीश ने उत्तर दिया - "जी, फिर आपका हुक्म ?"

"इसलिए तुम जाकर फूलपुर में इन्क्वायरी कर सकता है । फूलपुर जाया करता है, समझा, मेरा रिपोर्ट सच्चा है, तुम कब जाएगा ?"

"अब तो कल शाम को ही ट्रेन मिल सकेगी - कल जाऊँगा ।"[2]

संवाद आपकी कहानियों के प्राण है । इनके संवाद स्वाभाविक तथा नाटकीय हैं । जैसे -

"तुम कौन हो ?

"भिखारिन -"

"यहाँ क्या करती हो ?"

"उपासना - "

"किसकी ?"

"बार-बार बतलाना होगा ?"

"हाँ - "

"प्रेम देवता की - "

"लेकिन उससे वरदान तो न मिलेगा ? तुम्हारी उपासना तो व्यर्थ ही है ।"[3]

उनकी उल्लेखनीय विशेषता यह है कि भाषा में संगीतात्मकता और चित्रगुण की

---

1. रामेश्वरी देवी "चकोरी", धूपछाँह, तथाअन्य कहानियाँ, पृ-37
2. " " -74
3. " " -30

प्राय: काव्यानुरूप व्याप्ति रही है । यथा -

"उसने अपनी आँखें ऊपर उठाकर प्रकृति का यह वैभव देखा -
आँखों ने चुपचाप वसन्ती मदिरा पी ली ।
शुष्क अधर अज्ञात भाव से काँप उठे ।"[1]

लेखिका ने प्राय: रम्य उपमान और मनोहर समान धर्म जुटाये हैं -
"चाँदनी सी उज्ज्वल, हीरे सी चमकीली, स्वर्ण सी मोहक और सुरा-सी मादक।"[2]
निष्कर्षस्वरूप यह उल्लेखनीय है कि श्रीमती "चकोरी" जी ने कहानियों में भावुकता, सहजता और आदर्शवादिता को स्थान दिया है ।

शिवरानी प्रेमचन्द की भाषा सुन्दर, सजीव, मुहावरेदार, प्रवाहमयी तथा आकर्षक है । लघु-वाक्यान्विति तथा व्यावहारिक भाषा शैली का प्रयोग श्रीमती शिवरानी की कहानियों में मिलता है । इत्तफाक, हुक्मनामा, नाहक, तहजीब, खुदगरजी, मर्तबा, खुशनसीब, तह्जीब आदि उर्दु शब्दों का बहुल प्रयोग आपकी भाषा में द्रष्टव्य है । दुधेंडी, नगीच, जैजात, पराछित आदि आँचलिक शब्दों के प्रयोग ने भाषा को पर्याप्त सजीवता प्रदान की है । "साँप-सा-लोटने लगा, जामे से बाहर, न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी, जिसकी लाठी उसकी भैंस, आदि मुहावरों तथा कहावत का प्रयोग तथा ठाट -बाट, हिसाब-किताब, दवा-दारू, लाद-फाँद, बाजा-गाजा, चना-चबेना, जोडा-जामा आदि शब्द युग्मों के प्रयोगसे भाषा में सहजता आ गयी है । कहीं कहीं भाषा काव्यमय हो उठी है जैसे - "आकाश में काले बादल घिरे थे । छोटी-छोटी बूँदें पड रही थी जैसे वह भी अनाथिनी के साथ कोई रोनेवाला न देखकर उसका साथ देती है ।"[3]

लेखिका की कहानी-शैली अधिकतर वर्णनात्मक है । पात्रों एवं घटनाओं का वर्णन अधिकांशत: परिचयात्मक शैली में स्वयं करती है । "समझौता" कहानी में पूर्णतया संवादात्मक शैली का सहारा लिया है । संवादों में नाटकीयता का अंश अधिक है । यथा -

---

1. रामेश्वरी देवी, "चकोरी", धूपछाँह तथा अन्य कहानियाँ , पृ-37
2. " " -33
3. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, नारी हृदय, पृ-67-68

"मुझे न्योते की जरूरत न थी ।"

"हट जाओ मेरे सामने से, मैं तुम्हारी सूरत नहीं देखना चाहता ।"

"तुम विवाह करने नहीं जा सकते ।"

"तुम क्या खाकर मुझे रोकोगी ?"

"या तो रोक लूँगी या प्राण दे दूँगी ।"[1]

संवाद पात्रानुकूल है । मुसलमान पात्रों की उक्तियों में उर्दु-शब्दों की प्रचुरता है । ग्रामीण पात्र ठेठ ग्राम्य शब्दावली में वार्तालाप करते हैं । जैसे -

"कई स्त्रियाँ एक साथ बोली - ऐसई गाँव में कोऊ नहीं है ।

तुम सब के सब भाँग खाय के तो नाहीं चले हो । ई गाँव माँ तो न कतहुँ ब्याह है न सगाई है । सब जने माधोपुर में डाकापडिहो काथो ।"[2] कुछ ग्रामीण पात्र नागरिक एवं ग्रामीण भाषा का मिश्रित रूप भी प्रयोग में लाते हैं । अभिप्राय यह है कि संवादों में विविधता, स्वाभाविकता, सजीवता आदि गुण सर्वत्र व्याप्त हैं । नारी के प्रति समाज के अन्याय का वर्णन करते समय उन्होंने व्यंग्य शैली का प्रयोग किया है । उदाहरणार्थ - "स्त्री का रूपवती होना जरूरी, है नहीं तो उस जीवन वृथा है । उसमें और कितने ही गुण हो, वह कितनी ही सुशीला हो, कित ही स्नेहमयी हो, कितनी ही प्रबन्धकुशल हो, पर रूप नहीं तो कुछ नहीं । फिर पुरूष केलिए दुसरा विवाह लाजिमी हो जाता है । आखिर बेचारा कुरूप के साथ जीवन कैसे सानन्द बिताए ।"[3] किसी गंभीर प्रसंग का उल्लेख करते समय उन्होंने प्राय: लघु सूक्ति वाक्यों में भावाभिव्यक्ति की है । यथा- जब मनुष्य की विचार शक्ति मन्द हो जाती है, तो वह अन्धा हो जाता है ।"[4]

मुंशी प्रेमचन्द की शैली का प्रभाव श्रीमती शिवरानी की कहानियों में स्प परिलक्षित होता है । स्वयं प्रेमचन्दजी इस बात को स्वीकार करते हुए कहते हैं - "- - - - मैं इनकार नहीं करता कि उनकी (श्रीमती शिवरानी) रचनाओं में साहित्यिक सजावट मेरी है, लेकिन विचार और लेखन सर्वथा उन्हीं के होते हैं ।

---

1. शिवरानी देवी प्रेमचन्द, नारी हृदय, पृ-60
2. " कौमुदी, पृ-216
3. नारी हृदय, -88
4. " " -62

उनकी प्रत्येक लाइन में एक ओजपूर्ण स्त्री का व्यक्तित्व प्रकट होता है ----।"[1]

सत्यवती मल्लिक की कहानियों की भाषा दीर्घवाक्यान्वित होने पर भी सरल, स्पष्ट एवं प्रभावपूर्ण है । भाषा में व्यावहारिकता तथा सजीवता लाने केलिए फरमाइश, मज़ार, करतूत, वश्मा, हुजूर, आदि उर्दु शब्दों का ड्राइंग-रूम, ट्यूटर, टाईपायड, ड्रेसिंग टेबिल, स्केच, टूथपेस्ट, बिज़िनेस सेन्टर आदि प्रचलित अंग्रेज़ी शब्दों का, आब, फिरन, छाछ, सीत, दहलीज़ आदि स्थानीय शब्दों का भी प्रयोग आवश्यकतानुसार मिलता है । धुल-मिल, छीन-छान, थके-मांदे, लोट-पोट, मैली-कुचैली, हेल-मेल, झटक-पटक, तोड-मरोड आदि अनुप्रासात्मक युग्म शब्दों के साथ साथ दूध सा सफेद, परियों सी सुन्दर, दुग्धफेन सी धवल, प्रलय का सा भयावना सन्नाटा, साँझ सा मनोरम सौन्दर्य, वज्र सा कठोर वाक्य आदि युक्तियुक्त उपमाओं के प्रयोग में भी लेखिका सिद्धहस्त है । गंभीर भावों का विश्लेषण करते समय उन्होंने प्राय: सूक्ति शैली का प्रयोग किया है । जैसे - "जीवन के आदि से अन्त तक मनुष्य न जाने कितने संबंध बनाता और तोडता चला जाता है, किन्तु इनमें से कुछ एक ऐसे होते हैं, जिनकी याद विस्मृति की सूखी घाटी में कभी कभी अकस्मात् किसी उच्छृंखल पहाडी नाले के समान उमडकर न जाने कैसी हलचल सी मचाकर उसे आप्लावित कर देती है ।"[2]

अधिकाँश कहानियाँ वर्णनात्मक व संवादात्मक शैलियों में चली हैं । संवादों में कथानक का विकास कराने के गुण के साथ-साथ नाटकीयता, संक्षिप्तता, प्रभावोत्पादकता आदि गुण भी पाये जाते हैं । नाटकीयता का गुण लिए हुए संवाद देखिए -

"जी थोडा बहुत - - - -"

"लेकिन जाने आपका तरीका क्या रहा है । मैं तो साहब, दस-पन्द्रह मिनट में रंग लगाकर खत्म कर देता हुँ । हा हा - - - "

"आपका विषय क्या है ?"

---

1. आजकल, नवम्बर 1953, पृ-14
2. सत्यवती मल्लिक, वैशाख की रात, पृ-69

"यही प्रकृति, पहाड, फूल और कभी कभी आकृति भी ।"

"और मैं तो अपने प्रयत्न अधूरे ही छोड देती हुँ । वास्तव में मुझे यह शोक पिछली लंबी बीमारी में लगा था, जब खाली बैठे-बैठे मन घबरा जाता था ।"

"आपक भी बीमार थी तो साहब, और मैं भी । हाँ तो मैं भी वीरभद्र का पता पूछने आया था, वहीं है न वे ?"[1]

भाषा में यत्र-तत्र काव्यमयता भी आ गयी है । यथा -

"श्वास-प्रश्वास की इस प्रगति में, रवि-शशि की इस आँख मिचौनी में और दिन-रात की इस हेराफेरी में मेरा यौवन-वसन्त बिखर पडा था ।"[2]

प्रकृति-श्री का चित्रांकन करते समय सत्यवतीजी ने विशेष तन्मयता का परिचय दिया है । "स्मृति" कहानी में प्राकृतिक एवं मानवीय सौन्दर्य का सामूहिक झाँकी कितनी मनोरम बन पडी है । - "चन्द्रभागा पडाव से प्राय: एक सौ गज नीचे जाकर बहती है । बहेकड तथा जंगली अनार की झाडियों के बीचोंबीच मार्ग बनाती हुई जहाँ तक पतली पगडंडी पडी है, वहीं छोटे-छोटे सपेद पत्थरों को इधर-उधर लुंढकाती हुई ग्रामीण पहाडी कन्याएँ सिर पर पीतल के कलसे रखे आती-जाती रहती है ।"[3]

लेखिका की अधिकाँश कहानियाँ आत्मकथात्मक शैली में लिखी गयी हैं । फिर भी "उलझन" कहानी में पत्रात्मक शैली और "डायरी से" कहानी मेंडायरी शैली देखने को मिलती है । गीतों का प्रयोग भी आपकी कहानियों में मिलता है उदाहरणार्थ "कैदी" कहानी में कैदी का गाना अवलोकनीय है -

"अजाबल म्यान दीदार जाने
छल-छल म्यान दीदार जाने
बला म्यानी पोशे-पोशे
चे कुत छुई शान व्यथिरालो
बागे निशातके गुलो ।"

---

1. सत्यवती मल्लिक, नारी हृदय की साध, पृ-74-75
2. " वैशाख की रात, पृ-90
3. " दो फूल, पृ-96-97

लेखिका की कहानियों में चित्रात्मकता तथा प्रतीकात्मक शिल्प का प्रयोग भी देखा जा सकता है। चित्रात्मकता केलिए "भाई-बहन" कहानी के निम्नलिखित भाग उद्धरणीय है - "सीढियों में से फिर सिसकने की आवाज़ सुनकर सावित्रि ने देखा तो मन्त्रमुग्ध सी रह गयी। कमल को दृढ पाश में बाँधे निर्मला दुगने बेग से रो रही है। उसके कोमल गुलाबी गाल मोटे-मोटे आँसुओं से भीगे जा रहे हैं और वह बार बार कमल का मुख चूम चूम कर कह रही है। "पगले। तू कहाँ चला गया था ?" गधे। तु क्यों चला गया था ?"[1] एक दिन जुलुस में कमल को खो गया समझकर निर्मला व्याकुल हो उठी, बहुत रोयी और उसके लौटने पर प्रेमाश्रु बहाकर रोनेवाली निर्मला के मन में छिपी स्नेहमयी बहिन का चित्र ही उक्त प्रसंग में उभरकर आया है। सत्यवती मल्लिक की कहानियों में प्रतीक का व्यापक एवं घनत्वपूर्ण प्रयोग हुआ है। "दो फूल" "नारी हृदय की साध", "वसन्त है या पतझड" आदि कहानियाँ प्रतीकात्मकता को सार्थक करनेवाली है। दृष्टान्त रूप में "दोफूल" कहानी के अन्त की ये पंक्तियाँ अवलोकनीय है - "ओह, मैं ने तुझे अपने भाषी से बचाया था मगर फिर भी मैं महाकाल से तेरी रक्षा नहीं कर पाई। एकक्षण तक बडे गंभीर भाव से मैंने उस मुरझाये गुलाब के फूल की ओर देखा। उसके बाद मेरे शरीर में कंपकंपी-सी दौड गयी। मानो वह मुझ से कह रहा था क्या तुम्हारे मानव जीवन का इतिहास भी मेरे समान नहीं है।"[2] यहाँ फूल के प्रतीक द्वारा मानव-जीवन की नित्यानित्यता का बोध कराने का सुन्दर ढंग से प्रयास किया गया है। मानव-जीवन क्षणिक है, जो किसी समय भी काल के क्रूर हाथों द्वारा मसल दिया जाता है। "नारी हृदय की साध"में नदी के प्रतीक का निर्वाह सफलतापूर्वक किया है। नदी की सार्थकता सागर के मिलन में ही है, इसी प्रकार नारी जीवन की सार्थकता , पति-मिलन-लालसा में अपना अस्तित्व मिटा देने में है। "वसन्त है या पतझड" के माध्यम से जीवन के महत्वपूर्ण सत्य में युवावस्था और वृद्धावस्था की अभिव्यंजना की गयी है। पूर्वदीप्ति शैली का भी सहारा लेखिका ने कहीं कहीं किया है। जैसे - "उसके हृदय के कैमरे में प्रतिबिंबित हो जाती है कुछ और ही तसवीरें। पहले दिखाई देता है

---

1. सत्यवती मल्लिक, दो फूल, पृ-38
2. " " -4

मिट्टी से सना मां-मां करता हुआ एक छोटा-सा शिशु । उसके बाद आता है बरसात के किसी दिन पुस्तकें हाथ में दाबे भीगे वस्त्रों से घर लौटनेवाला एक बालक और तब मानो उसे प्रत्यक्ष दिखाई देने लगता है आशाओं का प्रदीप वहीं तरुण मनोहर, आज का प्रोफ्सर मनोहरलाल एम·ए· ।"[1] उक्त प्रसंग में विधवा गंगा अपने एकमात्र पुत्र को पढा-लिखा कर एक प्रोफ्सर बनाने के बाद उसकी शादी निश्चि करते समय अतीत की घटनाओं को अपने स्मृतिपटल में साकार करती है । लेखिका की गद्य कृतियों में प्रश्नोत्तर-शैली के अनेक उदाहरण भी मिलते हैं । जैसे - अरे । त क्या मुझे " बच्चा" की संपूर्ण चिन्ता, संपूर्ण देखभाल एक नये व्यक्ति के हाथों में सौंप देनी होगी ? यहाँ तक कि उसके आने-जाने के समय गहरी उत्सुकता और अनन्य प्रतीक्षा का मेरा संपूर्ण अधिकार भी मुझसे छिन जाएगा ? जिस नन्हें पौधे को वह लगातार बाईस वर्षों से बिना किसी की सहायता के सींचती आयी है, क्या आज एकाएक किसी कोने में बैठकर सिर्फ उसकी छाया का ही आनन्द उठाया करे ? गंगा सहसा सपना सा देखने लगी ।"[2]

इस प्रकार सत्यवती मल्लिक की गद्य शैली विविध रूपों में दृष्टिगत होती है श्री·चन्द्रगुप्त विद्यालंकार ने श्रीमती मल्लिक की भाषा में गद्य-काव्य जैसे प्रवाह के दर्शन किये हैं - "श्रीमती सत्यवती मल्लिक की रचनाओं में मानव हृदय की कोमल भावनाओं का बहुत नाजुक चित्रण रहता है । संवेदनशीलता उनका एक असाधारण गुण है । कला की दृष्टि से भी उनकी कहानियाँ श्रेष्ठ कोटी की है - श्रीमती मल्लिक की कुछ कहानियाँ पूरी तरह गद्य-काव्य है ।"[3] इस उक्ति से स्पष्ट है कि सत्यवतीजी की कहानियाँ पूर्णत: कलात्मक है ।

श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान की भाषा सुबोध, स्वाभाविक और जनसाधारण के हृदय को स्पर्श करनेवाली खडीबोली है । भाषा भावों के अनुरूप है चाहे वह कविता में हो या कहानी में । तत्सम तथा तद्भव शब्दों के साथ साथ भाषा में प्रवाहमयता लाने केलिए लेखिका ने विदेशी शब्दों का भी प्रयोग किया है ।

1· सत्यवती मल्लिक, दो फूल, पृ- 10

2· " " -19

3·श्री·चन्द्रगुप्त विद्यालंकार भारतेन्दु अक्तूबर 1931 पृ-50

विदेशी शब्दों में अरबी फारसी शब्दों का प्रयोग अत्यधिक प्रचलन के कारण हिन्दी के सहज अंग बन गये हैं जैसे शोक, फर्क, आदमी, फीकी, पर्दा, दाग, काबू, फुरसत, जौहर, सहूलियत, काफूर, खातिर-तवाज़ो आदि । अंग्रेज़ी शब्दों जैसे कटिंग, पोस्टर, कम्पार्टमेन्ट, क्वार्टर्स, मनिआर्डर, फीस, प्राइमरी, हाई-स्कूल, प्रोफेसर आदि का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ है ।

भाषा की जीवनी-शक्ति मुहावरे व लोकोक्तियों से प्राप्त होती है । कहानियों में इसके प्रयोग से वाग्वैदग्ध्य और अर्थ गांभीर्य बढ गया है । मुहावरे प्राय: पात्रों की मन:स्थिति, उसकी प्रतिक्रिया, व्यवहार, विशिष्ट वातावरण आदि की सटीक एवं अर्थगर्भित अभिव्यक्ति केलिए प्रयुक्त हुए हैं । ढिंढोरा पीटना[1], मज़ाक उडाना[2], ताँता लगाना[3], डेरा डाल के रहना,[4] फूँक फूँक पैर रखने की आदत थाह लेना[6], मिट्टी में मिल जाना[7], रास्ते में काँटा बनना[8], ज़बान पर ताला डा रखना[9], आव देखा न ताव[10]. आकाश कुसुम[11], आदि मुहावरों का प्रयोग हुआ है सिद्धान्तविशेष के प्रतिपादन केलिए लेखिका ने प्राय: सूक्ति शब्दावली का आश्रय लिय है । यथा - "मानवोत्थान से बढकर कोई मानव धर्म है ?"[12] "पति मानवता को जीवन-दान देने की अपेक्षा भी कोई महत्तर पुण्य है"[13] आदि । सुभद्राजी के गद्य में ध्वनि, शब्द, अर्थ, रूप से सम्बद्ध लयात्मकता को पाया जा सकता है । ध्वनि के अन्तर्गत- "बहन ने अपनी पुरानी ओढनी फाडकर झंडे का कपडा बना दिया ।"[14] "हम अमर अनन्त की कहानी कहने चले हैं[15], आदि । भाषा में प्रवाह की योजना केलिए उन्होंने अनुप्रासात्मक शब्द युगमों जैसे लडना-झगडना, पढना-लिखना, लथ-पथ,

---

1,2,3,4,5,6 7,8,9,10,11 सुभद्राकुमारी चौहान, सीधे सादे चित्र, पृ-58,59,59,59,68, 72,72,75, 81, 83, 68,

12. सुभद्राकुमारी चौहान, सीधे सादे चित्र, पृ-60

13. " " "

14. " " -63

15. " " -62

रोते-बिलखते, इने-गिने, उठने-बैठने, धुल-मिल, हिल-मिल, रोक-टोक, मिलने-जुलने भोली-भाली आदि को भी प्राय: प्रयुक्त किया है । शब्द समानान्तरता में एक ही शब्द एक ही अर्थ के साथ केवल बात में दृढता लाने केलिए दो या दो से अधिक बार समानान्तर रूप से प्रयुक्त होता है । जैसे - "एक दिन ऐसी हवा बही कि मुरझाये हुए मनों में भी नयी जान आ गयी । एक हवा ऐसी होती है जो मुर्झाए हुए पौधों में ताज़गी ला देती है और एक हवा ऐसी होती है जो मुर्दा-मन मनुष्यों में नयी उमंग भर देती है ।"[1] "किसी भी चीज़ केलिए तरस-तरस के माँग-माँग के जीभ घिस जाती है ।"[2] "आप तो दोना भर-भर मिठाई मंगा-मंगा कर खाती है।"[3] "फूट फूट कर रोने लगी [4] दो नन्हें-नन्हें अबोध बच्चे [5] आदि ।

सुभद्राजी की कहानियों में उनके कवि-हृदय की झलक भी कहीं-कहीं स्पष्ट देखने को मिलती है । उदाहरण स्वरूप यह शब्द चित्र देखिए - "चैती पूर्णिमा ने संध्या होते-होते धरित्रि को दूध से नहला दिया । बसंती हवा के मधुर स्पर्श से सारा संसार एक प्रकार के सुख की आत्म-विस्मृति में बेसुध सा हो गया है ।"[6] लेखिका ने संक्षिप्त, पात्रानुकूल, चुटीले और भावपूर्ण, कथोपकथन का विधान किया है । "किस्मत", "अनुरोध", "असमंजस", "राही" जैसी कहानियों का आरंभ पात्रों के कथोपकथन से होता है जिसमें कहानी में नाटकीय सौन्दर्य का समावेश हुआ है । नारी सुलभ वार्तालाप तथा बालोचित कथोपकथन की योजना में लेखिका को सर्वाधिक सफलता मिली है । उदाहरणार्थ "किस्मत" में मुन्नी और उसकी विधवा भौजी किशोरी का यह वार्तालाप देखिए -

"भौजी, तुम सदा सफेद धोती क्यों पहनती हो ?

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, सीधे सादे चित्र, पृ-63
2. " बिखरे मोती, पृ-54
3. " "
4. " उन्मादिनी, पृ-83
5. " "
6. " पृ-88

- मैं क्या बताऊँ मुन्नी ।

- क्यों भौजी । क्या तुम्हें अम्मा रंगीन धोती नहीं पहिनने देती ?

- नहीं मुन्नी । मेरी किस्मत ही नहीं पहिनने देती, अम्मा भी क्या करे

-किसमत कौन है, भौजी । यह भी क्या अम्मा की तरह तुम से लडा करती है और गालियाँ देती हैं ?"[1]

कथोपकथन में स्वाभाविकता लाने केलिए लेखिका ने पात्रानुकूल भाषा-शैली की मनोहारी योजना की है जैसे "हींगवाला" में खान की अटपटी हिन्दी बोली, "बिआहा" कहानी में देहाती बालिका रामप्यारी की ग्रामीण शब्दावली, "स्या" कहानी में जेल की जमादारिन की अश्लील गालियाँ आदि इसके प्रमाण हैं । उन्होंने संवादों के साथ-साथ पात्रों की भावमुद्राओं का भी उल्लेख किया है जिससे कथानक में सजीवता का संचार हो गया जैसे राधेश्याम रुखाई से उत्तर दिया [2] वीणा ने विरक्ति के भाव से कहा,[3] मेरे गले से लिपटकर बोली[4] आदि ।

लेखिका की कहानियों में वर्णनात्मक, व्याख्यात्मक, आत्मकथात्मक आदि शैलियों का प्रयोग अधिकतया पाया जाता है । उन्होंने कतिपय कहानियों में शैली को आकर्षक बनाने केलिए प्रश्न शैली का आश्रय लिया है । उदाहरणस्वरूप "उन्मादिनी" शीर्षक कहानी की ये पंक्तियाँ द्रष्टव्य है - "क्या एक भी दिन मैं उस समाधि पर फूल चढाना भूली हूँ ? क्या ऐसी भी कोई संध्या गयी है जब मैं ने वहाँ दीपक नहीं जलाया है ? कौन सा ऐसा सबेरा हुआ है जब ओस से धुली हुई नई नई कलियों से मैं ने उस समाधि को नहीं ढँक दिया ?"[5] उपर्युक्त शैलियों के अतिरिक्त उन्होंने कहीं कहीं व्यंग्य शैली का भी सफल प्रयोग किया है । अत: यह असन्दिग्ध है कि उनकी कहानियों में शैलीगत व्यावहारिकता का उचित सन्निवेश हुआ है ।

---

1. सुभद्राकुमारी चौहान, बिखरे मोती, पृ-56
2. " " पृ-87,
3. " पृ-100
4. " सीधे सादे चित्र, पृ-15
5. उन्मादिनी, पृ-1

श्रीमती सुमित्राकुमारी सिन्हा ने अपनी कहानियों में सरल, सहज, प्रवाह-पूर्ण तथा प्रसादगुणान्वित भाषा को स्थान दिया है । इनकी भाषा में व्यावहारिक तथा बोलचाल के शब्द, लोकोक्ति तथा मुहावरे और विदेशी शब्द प्रयुक्त हुए हैं । आजिज़ी, बोसीदा, खफा, बेबसी, ज़िन्दगी आदि उर्दु शब्दों बहुरिया, कंडे, गामिन, सिहाती, खटिया, गठरिया, मोटरिया आदि देशज शब्दों तथा ड्रेसिंग रूम, ईज़ी चेयर, ट्रे, टेबिल, ऐशट्रे, हॉल, ब्रॉडकास्ट, ट्रान्सफर आदि प्रचलित अंग्रेज़ी शब्दों का उन्होंने प्रचुर प्रयोग किया है । भाषा में प्रवाह की योजना केलिए उन्होंने अनुप्रासात्मक शब्द युग्मों (सुध-बुध, तर्क-वितर्क, तहस-नहस आदि) को भी प्राय: प्रयुक्त किया है । भाषा में सजीवता और रोचकता की सृष्टि केलिए सूक्तियों को भी स्थान दिया है । यथा -

(अ) "मानव प्रकृति का सुलभ गुण है कि सहानुभूति पाकर वह उमड आना चाहता है । मोह ममता के छू जाने पर हृदय भारोन्मुक्त हो जाना चाहने लगता है।'

(आ) जब मनुष्य को कहीं शान्ति नहीं मिलती और तन मन भी अस्वस्थ होता है, तो निरुपाय रोदन की दुर्बलता ही मात्र सहारा पा उभर आती है । जैसे सूखा पत्ता वायु के तनिक कठोर स्पर्श से ही खडखडा उठता है ।"[2]

लेखिका अपनी कहानियों में घर में चूहे डण्ड पेलते हैं[3], यहाँ तो पेट की रोटि के भी लाले हैं[4], हरीश के पिताजी कच्ची गोलियाँ खेलने से रहे[5], बौने की चाँद पकडने की कोशिश[6] क्या तिल का ताड बना रखा है[7] आदि मुहावरों का अवसरानुकूल उपयुक्त प्रयोग उल्लेखनीय है ।

सुमित्राजी की कहानियों में कथोपकथन की योजना सुचारू रूप से हुई है । संवाद सर्वत्र पात्रानुरूप एवं स्वाभाविक प्रतीत होते हैं । इस विषय में एक उदाहरण

---

1. सुमित्राकुमारी सिन्हा, वर्षागाँठ, पृ-23
2. " " -27
3;4,5- " -2,6,29
6;7 - अचल सुहाग, -48,71

इस विषय में एक उदाहरण अप्रासंगिक न होगा । जब "विद्रोहिणी" की नायिका सरला का पति अमर उससे पूछता है कि वह उससे प्रेम करती है या नहीं, तो वह निधड़क अपनी आन्तरिक, विद्रोहपूर्ण मान्यता को व्यक्त करते हुए कहती है - "हार जाओगे । तर्क न करो । पति परमेश्वर है, पत्नी उसकी दासी ही बनकर उसे पूज सकती है । ऐसा हमारा हिन्दु-धर्म और ज्ञान ने सिखाया है ? तो फिर स्वामी और दासी में प्यार कैसा ? प्यार तो स्वतंत्र होता है । समानता चाहता है ।"[1] सुमित्राजी की शैली भावानुरूप, सजीव एवं प्रवाहमयी है । अभिव्यंजना की दृष्टि से उनकी गद्य शैली में काव्य-शैली की मधुरता का समावेश हुआ है जो अपनी भावुक प्रकृति के अनुरूप है । जैसे चन्द्रमा की धवल विमल किरणें जब वसुधा के कण-कण को चूम कर "रंगरेलियाँ करती, और खेतों के उस पार, नदी के तीर पर कोई बिरहा गाता हुआ किसान हल-बैल लिये चाँदनी रात में निकल पडता है, अथवा आम के बगीचे में पपीहा "पी कहाँ, पी कहाँ" की पुकार मचाता तो उसका छोटा सा हृदय अनजान में ही आलोक की वह वंशी-ध्वनी सुनने को व्यग्र हो उठता । पर वह खोया हुआ गान कहाँ मिलता ।"[2] एक सहृदय कवयित्रि होने के नाते यह स्वाभाविक है कि भावातिरेक होने पर उनकी कथा-शैली लय एवं माधुर्य की दृष्टि से गद्य-काव्य शैली का संस्पर्श करती होती है । वर्णनात्मक एवं काव्यात्मक शैली के अतिरिक्त श्रीमती सिन्हा चित्रात्मक शैली प्रस्तुत करने में भी पटु है । जैसे - "खिडकी के सामने उसने एक दुर्बल काय, लुटती हुई यौवन- निधि को मलिन वस्त्रों में लपेटे, गेहुएँ रंग की स्त्री को देखा । वह अपने सिर पर एक छोटा टीन का सन्दूक लिए हुए खडी, करूणा-कोमल स्वर से पूछ रही थी - चाय की प्यालियाँ लोगे बाबूजी ?"[3] इस शैली के द्वारा आँखों के समक्ष प्याला बेचनेवाली स्त्री का सजीव चित्र अंकित हो जाता है । निष्कर्ष रूप में कहें तो सुमित्राजी की कहानियों में शैलीगत सरलता, मार्मिकता और व्यावहारिकता का उचित सन्निवेश हुआ है ।

---

1. सुमित्राकुमारी सिन्हा, अचल सुहाग, पृ- 117
2. " " -102
3. " " -42

होमवती देवी की भाषा सीधी-सादी, व्यावहारिक और चलती हुई है। वातावरण के अनुरूप ही शब्दावली का प्रयोग लेखिका ने किया है। उदाहरणार्थ - पारिवारिक वातावरण का चित्रण करते समय थेगलियाँ, उल्टा-सुल्टा, जिमाने गयी थी, खुला खुला, संगवाए बैठे थे, सलूका[1], असगुन, लौंडिया, सब तेरी तरह ठाली हैं[2], आदि शब्द एवं वाक्यांश उक्त कथन के प्रमाणस्प में अद्धृत किए जा सकते हैं। मुसलमान पात्रों के संवादों में अरबी, फारसी शब्दों की प्रचुरता पायी जाती हैं। मुहावरों का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में मिलता है जैसे चारों पल्ले झाडकर[3], तीर छूटकर निशाने पर बैठ चुकना[4] भावताव करना[5] मुँह फक पड जाना[6] हाथ पर हाथ धरे बैठना[7] तबाह कर देना[8] आदि। होमवती जी की कहानियों में एक अनुभवी साहित्यकार के मुख से प्रकट ऐसी अनेक सूक्तियाँ भी मिलती हैं जो जीवन केलिए मार्ग दर्शन का काम दे जाती हैं। यथा - "जैसा कोई करेगा वैसा भरेगा"[9] "सभी आदमी तो दुनिया में एक से नहीं होते"[10], "जिन्हें कल रोते देखा था आज खिलखिला रहे हैं। जहाँ कल मातम छा रहा था, उसी स्थान पर आज शहनाइयाँ बज रही हैं, यही संसार का क्रम है।"[11] अनुप्रासात्मक वाक्य-योजना में भी लेखिका सिद्धहस्त है। जैसे - "शहर भर में घूम घूम कर घर घर का कूडा कचरा समेट लाता था।"[12]

कहीं कहीं आपकी शैली काव्यात्मकएवं बहुत ही भावपूर्ण हो गयी है। एक उदाहरण द्रष्टव्य है - "उसकी आशा मचल रही थी, विश्वास डगमगा रहा था, औ

---

1. होमवती देवी, अपना घर, पृ-127,128,129,135,171.
2. " स्वप्न भंग, पृ-29,37,83.
3. धरोहर, पृ-14
4. " " पृ-82.
5. स्वप्न भंग, पृ-117
6. " " पृ-118
7. " "
8. पृ-119
9. " पृ-118
10. " पृ-117
11. अपना घर, पृ-61
12. स्वप्न भंग, पृ-9.

भरोसा सिसकियाँ भर रहा था, पर उसका वात्सल्य उसे सम्हाले था ।"[1] मानवीय घटनाओं को प्राकृतिक आचरण से सुसज्जित कर देना इनकी शैली की विशेषता है - "इसी समय पपीहे की दर्दभरी पुकार सुन पडी, पिउ कहाँ, पता नहीं उसका पिउ कहाँ था ।"[2] लेखिका द्वारा विरचित रेखाचित्रमयी आख्यायिकों में चित्र शैली का प्रयोग किया गया है और अन्य कहानियों में प्राय: वर्णन प्रधान शैली को स्थान दिया है । चित्रण शैली का उन्होंने इतना सजीव प्रयोग किया है कि चित्र प्राणवान होकर पाठकों को चमत्कृत सा कर देता है जैसे लल्लू कहानी में लल्लू का वर्णन द्रष्टव्य है - "काले और खूब चमकदार दाँत ऐसे लग रहे थे जैसे कि तम्बाकू के पिंडे पर कौडियाँ । आयु होगी 8 या 10 वर्ष । जात बतायी थी खटीक । माँ के आँचल से चिपका हुआ वह लडका कनखियों से मुझे देख रहा था - बडा चालाक और चुस्त मालूम होता था - पर बीमार-सा भी, क्योंकि उसका पेट शरीर के अन्य भाग की अपेक्षा ज्यादा बढा हुआ सा था । हाथ-पैर दुबले पतले और पेट ढोलक-सा[3] कथा-शैली बनावट से परे और मर्मस्पर्शी है । इसी कारण उनके दृश्य वर्णन सुन्दर और रोचक बन पड़े हैं "गोटे की टोपी" में - "शरद् पूर्णिमा का दिन था । प्रकृति चन्द्र की चाँदनी में मल-मल कर स्नान कर रही थी, और तारिकाएँ उसकी माँग भरने केलिए मोतियों की लडियाँ गूँथ रही थीं । छत पर खडी हुई मंजरी चाँद दिखा - दिखाकर प्रवाल को बहला रही थी । द्वार पर किसी ने धक्का मारा, साँकल झनझना उठी । - - - "[4] लेखिका ने समाज के कटु यथार्थ का उद्घाटन करते समय तीखे व्यंग्यों की योजना की है । उदाहरणार्थ "टी पार्टी" कहानी से ये पंक्तियाँ देखिए - "टी पार्टी क्या थी ? मानो पृथ्वी पर स्वर्ग की रचना की गयी थी । आखिर बडे बडे अफसर और पदाधिकारियों की दावत ठहरी, कब कब ऐसा दिन आता है नगर के सेठ-साहूकारों ने भविष्य की किसी आशा को हृदय में बाँधकर जी खोलकर रूपया पानी की तरह बहाया था । पैसा इसी दिन केलिए झूठ सच बोलकर

---

1. होमवती देवी, धरोहर, पृ-93
2. " -85
3. " अपना घर, -146
4. " निसर्ग, -52

और जनता का तन-पेट काटकर चोरबाज़ारी का कलंक माथे पर लगाकर कमाया जाता है।"[1] "टी पार्टी", "त्यागीजी", "पुरस्कार" आदि व्यंग्य चित्रों में कथोपकथन को ही आधार सूत्र बनाकर लेखिका ने पात्रों का चरित्र-चित्रण किया है। अन्य कहानियों में कथोपकथन को अधिक प्रमुखता नहीं दिया गया है। इनके संवाद बडे प्रभावपूर्ण होते हैं, उनमें सारल्य, व्यावहारिकता एवं व्यंग्य का प्राधान्य होता है। लेखिका को घरेलू दृश्यों के वर्णन में जो सफलता मिली है, वह हिन्दी कथा साहित्य में पर्याप्त विरल है। इसका संपूर्ण श्रेय उनकी सशक्त चित्रण शैली को है। "मीरा की जात" कहानी से उद्धृत निम्नलिखित पंक्तियाँ उक्त कथन के प्रमाणरूप में प्रस्तुत हैं। -"अभी वह चाय सुटक ही रहे थे कि गृहणी ने दो मिस्सी रोटियों पर खूब-सा घी चुपड़कर और आलू के साग पर खूब सी हरी मिर्च तथा प्याज कतरकर उनके सामने ला धरी।"[2] उपर्युक्त दृश्य में "सुटक रहे थे", "खूब सा", "सामने ला धरी" आदि वाक्यांशों के चयन एवं विधान से चित्रण में निश्चय ही सजीवता आ गयी है। श्रीमती होमवती देवी की कहानियों के संबंध में श्री देवेन्द्र शर्मा सत्यार्थी के निम्न-लिखित वचन उद्धरणीय है - "होमवतीजी कवयित्रि से कहीं अधिक एक कहानी लेखिका के रूप में सफल हुई। भाषा का प्रवाह और जीवन का मोह, ये दो विशेषताएँ उनकी कहानियों में प्राणप्रतिष्ठा करती हैं। उनकी लेखनी सामाजिक अन्याय के प्रति चुप नहीं रह सकती थी।"[3]

निष्कर्ष

स्वातंत्र्यपूर्व महिला कहानीकारों की कहानियों में भाषा-शैली के विविध रूप उपलब्ध हैं। उन्होंने अपने साहित्य में परिष्कृत खडीबोली का प्रयोग करने के साथ साथ अन्य भाषाओं और बोलियों के संभव रूपों का यथास्थान प्रयोग किया है। यथार्थता और स्वाभाविकता लाने के विचार से लेखिकाओं ने अंग्रेज़ी भाषा के प्रचलित शब्दों का निधडक प्रयोग किया है। उनकी अलंकार सज्जा विशेषकर उपमाओं के

---

1. होमवती देवी, स्वप्न भंग, पृ-26
2. " " -59
3. द्रष्टव्य कुमारी सुर्यदेवर ललिता रानी, हिन्दी तथा तेलुगू लेखिकाओं की कहानियों का तुलनात्मक अध्ययन, पृ-216

प्रयोग अनायास ही पाठक का ध्यान आकर्षित कर लेते हैं । उनकी अलंकृत शब्दावली वस्तु जगत् से ग्रहण की हुई है, उसमे लेखिकाओं की कपोल-कल्पना या वायवी उड़ान नहीं है, उसमें चमत्कार नहीं है, केवल यथार्थ रूप में भावों की प्रेषणीयता है । पात्र की विषम मानसिक अवस्थाओं को चित्रित करते समय आवश्यकतानुसार उन्होंने बिंब, संकेत एवं प्रतीकों का प्रभावात्मक प्रयोग प्रस्तुत किया है । प्रतीकों एवं संकेतों के रंग कहीं फीके हैं तो कहीं गहरे । शब्द-चयन के अतिरिक्त भाषा की शक्ति के विकास की दृष्टि से सुभद्राकुमारी चौहान, महादेवी वर्मा, होमवती देवी, सुमित्राकुमारी सिन्हा आदि ने कवित्वपूर्ण भाषा का भी प्रयोग किया है । काव्यात्मक संवाद ही उषादेवी मित्रा की कहानियों की प्रमुख विशेषता है । प्रेमचन्दोत्तर कालीन लेखिकाओं की कहानियों में भावात्मक, सांकेतिक, व्यंग्यात्मक, नाटकीय तथा उद्देश्यपूर्ण कथोपकथन का चित्रण मिलता है ।

रचना-प्रणाली में प्राय: सभी प्रकार की रचना शैलियों का सहारा लिया गया है यथा वर्णनात्मक शैली, व्यंग्यात्मक शैली, डायरी शैली, पत्रात्मक शैली, संवाद शैली, नाटकीय शैली, भावात्मक शैली तथा प्रश्न शैली । वर्णनात्मक शैली में लिखी कहानियों में लेखिकाओं ने कलात्मक सूझ-बूझ के साथ मानव जीवन की संवेदनाओं को गहराई के साथ आँका है । विवरणात्मकता और वर्णनात्मकता की स्पष्टता के कारण कहीं कहीं कहानियों में दृश्यात्मकता उभर आयी है । वर्णनात्मक शैली की अपेक्षा आत्मकथात्मक शैली का निर्वाह कम हुआ है । उषादेवी मित्रा, सुभद्राकुमारी चौहान, सत्यवती मल्लिक, होमवती देवी आदि लेखिकाओं ने इस शैली के माध्यम से वर्णनात्मकता की जटिलता से बचकर सहज विवरणों के द्वारा पाठकों के साथ आत्मीय संबंध स्थापित करने का सफल प्रयास किया है । लेखिकाओं ने पूर्व दीप्ति शैली को अपनाया तो है लेकिन बहुत कम क्योंकि इस शैली के द्वारा कथ्य की अंतरंग गहराई को पकड़ जाने में असमर्थता का अनुभव होता है । व्यंग्य प्रधान शैली का लेखिकाओं ने विशेष रूप से खुलकर प्रयोग किया है । व्यंग्य के तीखे, कड़ुवे, पैने, मीठे सभी आयुधों को लेखिकाओं ने यथास्थान अपनी साहित्यिक शैली में ग्रहण कर

इसका सदुपयोग किया है । महादेवी वर्मा ने गद्य शैली के क्षेत्र में नवीन कला का प्रवर्तन किया है । उनके ये शब्द चित्र हिन्दी में अपने ढंग के सर्वप्रथम और सशक्त है रेखा चित्रों में हिन्दी गद्य की जो विशिष्ट पहचान उभरती है उसमें महादेवी के चित्र-विधान का विशेष योगदान है । अलंकारिक सौन्दर्य-विधान को रचना का सहज संस्कार बना लेना महादेवी की निजी विशेषता है ।

साम्यवाद से प्रभावित महिला कहानीकारों की शैली में प्रखरता तथा सजीवता का समावेश भी है । इन कहानियों की रचना वर्णनात्मक तथा व्याख्यात्मक शैलियों में हुई हैं। उदाहरणार्थ तेजरानी पाठक की कहानियों में "परिमित हृदय", "आत्मा", "लाल कुरता", श्रीमती चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की कहानियों में "कमीनों की जिन्दगी", "आदमखोर", "बेजुबाँ", "दो रोटियाँ", "गृहस्थी का सुख" आदि उल्लेखनीय हैं जिनमें किसान तथा मजदूरों के शोषण की समस्या प्रधान रूप में चित्रित किया गया है ।

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर यह प्रतिपादित किया जा सकता है कि हमारे अधिकाँश महिला कहानीकार भाषा प्रयोग में अधिक सचेत और जीवन्त रही हैं । निश्चय ही महादेवी वर्मा चन्द्रकिरण सौनरेक्सा, सुमित्राकुमारी सिन्हा, होमवती देवी, कमला चौधरी आदि भाषा प्रयोग की दृष्टि से कुछ ऐसे नाम हैं जो न केवल निरंतर आगे बढी हैं वरन् उनकी भाषा-प्रयोग आधुनिक, जीवन्त और नई तेवर लिए हुए हैं ।

"""""""""

उपसंहार

उपसंहार

हिन्दी कथा साहित्य का प्रारंभ भारतेन्दु युग में हुआ, किन्तु महिला कथाकारों ने इस क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का अपेक्षाकृत विलंब से परिचय दिया। आरंभिक कहानी लेखिकाओं में श्रीमती बंग महिला ही एकमात्र प्रमुख लेखिका है। उनकी "दुलाईवाली" कहानी पाश्चात्य कहानी कला के गुणों को लिये हुए हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी स्वीकार की गयी है। मानवीय भावों के संवेद्य रूप, संवादों की अविरल सहजता, हास्य का रस-सिंचन, औत्सुक्य की प्रबलता, पात्रों की सजीवता आदि वैशिष्ट्य इस कहानी के संपूर्ण कलेवर को एक मधुर स्वरूप प्रदान करते हैं। अत: यह योजना निस्सन्देह अपने समय से काफी आगे की उपज है। यहीं से रचनाकार के रूप में नारी के व्यक्तित्व का पहला सहभाग दिखाई पडा और अपनी तमाम सीमाओं के बावजूद भी इन लेखिकाओं ने पुरूष कथकारों से भिन्न धारा में अपने सृजन की परंपरा का सक्षम निर्वाह किया।

प्रेमचन्द पूर्व युग की कहानी लेखिकाओं ने कथा रचना केलिए सीमित विषय सामग्री अपनायी है। वर्षों तक घर की चार दीवारी में बन्दी रहने के कारण नारी की संवेदना का क्षेत्र अधिकांशत: घर, परिवार, पति, बच्चे और अन्य पारिवारिक संबंधों का क्षेत्र रहा। अत: उन की कहानियों में समाज का तटस्थ विश्लेषण न होकर प्राय: परिवार की समस्याओं का आँकलन हुआ है। यशोदा देवी की "पवित्र धर्म महिमा", "सच्चा पति प्रेम", प्रियंवदा देवी की "माता की आन्तरिक इच्छा", शारदा कुमारी की "विधवा" आदि कहानियों में पति-सेवा, कर्तव्य-परायणता, त्याग, बाल-विवाह के दुष्परिणाम, पुरूष की स्वार्थपरता, स्त्री के ममतापूर्ण हृदय और दृढ चरित्र का चित्रण है। कभी कभी कहानियाँ उपदेश प्रधान हो गयी है। उपदेश को प्रथमिकता देते हुए चरित्रों में आदर्श की स्थापना करना उनकी प्रमुख प्रवृत्ति है। इन

कृतियों का लक्ष्य समकालीन नारी वर्ग को शिक्षा देना है, फलत: कथानक में स्त्री-चरित्रों को विशेष रूप से गौरवान्वित रखा गया है । उपदेश तथा उद्देश्य के भार से दबी रहने के कारण उनकी कहानियों में नीरसता अधिक है । कुछ रचनाओं में बाल-विवाह, विधवा-विवाह-निषेध, पर्दा-प्रथा, स्त्री-अशिक्षा आदि सामाजिक रूढ़ियों के विरोध करने का प्रयत्न है तो अधिकांश कृतियों में उक्त सामाजिक मर्यादाओं को अनिवार्य मानकर उनका पोषण हुआ है । उदाहरणार्थ "आदर्श हिन्दु विधवा" (यशोदा देवी) शीर्षक कृति में विधवा सत्यवती का अति कठोर नियम-पालन द्रष्टव्य है । श्रीमती शारदा कुमारी की "विधवा" और "अभागिनी" में बाल-विवाह, बहु-विवाह; विधवा के प्रति समाज के अनाचार आदि का चित्रण कर हिन्दु समाज की दुर्बलताओं पर प्रकाश डाला गया है । इस काल की लेखिकाओं द्वारा विरचित राजनीतिक कहानियाँ विषय-वस्तु की दृष्टि से प्राय: एक रूप है । सभी कहानियों में असहयोग आन्दोलन की चर्चा की गयी है । विदेशी वस्तु बहिष्कार तथा स्वदेशी वस्तु प्रयोग पर बल दिया गया है । वनलता की कहानी में असहयोग आन्दोलन की चर्चा की गयी है तथा हेमन्त कुमारी की कहानी में हिन्दी भाषा का राष्ट्रीय दृष्टिकोण से विचार प्रस्तुत किये गये हैं । धार्मिक तथा नीतिपरक कहानियों में दान, धर्म, अहिंसा, पुनर्जन्म आदि के प्रति पाठकों की निष्ठा जागृत करने का यत्न है । सभी कहानियों में प्राय: धर्म की जय एवं पाप की पराजय दिखायी गयी है । अधिकांश कहानियाँ आदर्शात्मक एवं सुखान्त है । महिलाओं की कहानियों में प्राचीन भारतीय संस्कृति का समर्थन और पाश्चात्य संस्कृति का खुल कर विरोध किया गया है । इनकी कहानियों द्वारा युगीन समस्याओं के समाधान की व्यग्रता व्यक्त की गयी है, लेकिन इनके लेखन में मानव जीवन के साथ कोई विशेष संबंध नहीं स्थापित हो पाया । फिर भी जो प्रयत्न हुए है उसमें उस अकुलाहट और बेबसी का आभास इनकी कहानियों में प्राप्त होता है जो आगे चलकर और क्रियाशील रूप में प्रकट हुआ ।

प्रेमचन्द युग की कहानी लेखिकाएँ प्रेमचन्द, प्रसाद जैसे महान कहानीकारों की कहानियों से काफी प्रभावित हुई हैं । फलत: लेखिकाओं की कहानियों में वस्तु तथा शिल्पगत विविधता आयी । समाज में विधवा की दुर्दशा, पुरूष-वर्ग की दुराचारी

प्रवृत्ति, पतियों की उपेक्षा, विश्वासघात के परिणाम स्वरूप विवाहित नारियों की आत्म-पीडा, दाम्पत्य जीवन की कटु एवं मधुर अनुभूतियाँ, वर्णाश्रम व्यवस्था की निस्सारता, स्वच्छन्द प्रेम के सफल और असफल परिणाम, पूँजीवादी शोषण आदि इन कहानियों के प्रमुख विषय हैं । आरंभ काल की लेखिकाओं ने जहाँ अनेक सामाजिक रूढियों का पोषण किया था, वहाँ इस काल की लेखिकाओं ने विधवा-विवाह,-निषेध दहेज प्रथा, पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह, बहु-विवाह के परिणाम स्वरूप सौतिया डाह, वृद्ध विवाह आदि की भरपूर निंदा की । इस युग की कहानियों में आदर्श की अपेक्षा यथार्थ चित्रण के प्रति प्रबल आग्रह रहा है । मुन्नीदेवी भार्गव की "कमला" कहानी में नारी के प्रति समाज की निर्दयता एवं क्रूरता का सजीव चित्रण है । इनकी कहानियों में समाज सुधार के प्रति विशेष आग्रह है । पीडित नारियों एवं शोषित वर्गों के प्रति संवेदना इन कहानियोंग का प्रमुख स्वर है, फलत: अधिकाँश कहानियाँ करूण एवं दुखान्त ही है । विमल देवी चौधरानी की "विधवा" में एक विधवा नारी के जीवन की घटनाएँ कहानी के रूप में लिखी गयी हैं । पतितों के उत्थान की आकाँक्षा सब में समान रूप से दृष्टिगत होती है । सामाजिक कुरीतियों के प्रति वैयक्तिक असन्तोष एवं कुंठाओं का चित्रण करते समय लेखिकाओं ने प्राय: व्यक्ति के धरातल से चित्रांकन, किया है । आरंभ काल में सर्वत्र आदर्शवाद ही लक्ष्य था, लेकिन प्रेमचन्द युग में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की ओर लेखिकाएँ मुडती है जो निश्चय ही प्रेमचन्द की कहानी कला का ही प्रभाव है । राष्ट्रीय जागृति के दौर में राजनीतिक चेतना को आधार बनाकर भी अनेक लेखिकाओं ने कहानियाँ लिखीं ।

सन् 1930 के आस-पास प्रसाद और प्रेमचन्दीय प्रवृत्तियों के स्थान पर गाँधीवाद, मार्क्सवाद और फ्रायड के मनोविश्लेषणवाद से प्रभावित हो कर लेखिकाएँ मनोवैज्ञानिक, प्रतीकात्मक, भावकथाचित्र आदि अनेक प्रकार की कहानियाँ लिखने लगीं । गाँधीवाद से प्रभावित महिला कहानीकारों की कहानियों में विश्व-कल्याण, पीडितों तथा पतितों के प्रति दया और सहानुभूति की भावना, जागृति का सन्देश आदि का चित्रण है । इस प्रकार की कहानियों में अधिकाँश आदर्शोन्मुख हैं । श्रीमती कमला चौधरी की "भिखमंगे की बिटिया", "प्रायश्चित", उषादेवी मित्रा की "पिऊ कहाँ", "बहता फूल" आदि कहानियों में अस्पृश्यता की समस्या, अच्छूतोद्धार, वर्ग-चेतना आदि की ओर

पाठक के मन को लेखिकाएँ आकृष्ट करती हैं । लेखिकाओं की कहानियों में सर्वहारा वर्ग के प्रति सहानुभूति व्यक्त की गयी है । तेजरानी पाठक की "परिमित हृदय", "आत्मा", "लाल कुरता" आदि कहानियों में किसान तथा मजदूरों के शोषण की समस्या प्रधान रूप में चित्रित की गयी है । साम्यवाद से प्रभावित शिवरानी देवी ने "आत्मा "राष्ट्र की बलि" आदि कहानियों में प्रगतिवादी विचार-धारा का आश्रय लेते हुए पूँजीवादी शोषण की निन्दा की । फ्रायड के भोगवाद के गहरे प्रभाव के कारण घटनाओं की अपेक्षा पात्रों के चरित्र-चित्रण पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा । नैतिकता, आदर्शवादिता तथा सुरुचि के स्थान पर अश्लीलता, यथार्थता तथा अनैतिकता का चित्रण होने लगा । श्रीमती सुमित्रा कुमारी सिन्हा द्वारा कुछ ऐसी कहानियों की रचना हुई जिनमें विवाहित नायिकाएँ परपुरुषों के मोह में पड कर मानसिक संघर्ष का शिकार होती हैं । श्रीमती कमला चौधरी की "साधना का उन्माद" कहानी में प्रेम की अतृप्ति में कुंठित साधना के हृदय की अन्तर्वेदना का मनोवैज्ञानिक चित्रांकन है । यह युग समष्टिगत समस्याओं का युग था, फलत: अधिकांश लेखिकाओं ने समाज-सापेक्ष कथा-साहित्य की रचना की ।

इस काल की लेखिकायें अपने समकालीन जीवन से संपृक्त हैं जो हिन्दी कहानी केलिए एक दिशा है - नवीनता है । इनकी रचना-प्रक्रिया प्रगतिवादी चेतना से युक्त जीवन और समाज के प्रति उन्नयन और सुधार का निश्चित उद्देश्य लिये हुए है । आदर्शवादी दृष्टिकोण को वस्तुस्थिति के सन्दर्भ में प्रस्तुत करने के कारण इनकी कहानियों में एक विशेष प्रकार की समन्वयात्मकता आ गयी है । आदर्श और यथार्थ के समन्वय का यह प्रयत्न इस बात का साक्षी है कि इन लेखिकाओं ने भारतीय समाज, संस्कृति, साहित्य और सभ्यता के ही संदर्भों में पहचाना है और अपने लेखन द्वारा वे उसी को साकार करने के प्रयत्न में लगी रहीं ।

पूर्ववर्ति लेखिकाओं की भाँति प्रेमचन्दोत्तर युग की लेखिकाओं ने मुख्य रूप से सामाजिक कहानियों की रचना की । कुछ विशिष्ट वर्गों के प्रति तीव्र व्यंग्य, पात्रों के बहिरंग तथा अन्तरंग का सम्यक विश्लेषण, स्वतंत्रता प्राप्ति केलिए किये गये अहिंसात्मक आन्दोलनों की चर्चा, स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेनेवाली नारियाँ, काम-

पीडा से आक्रान्त युवक और युवतियाँ, शोषक जमीन्दार, शोषित मजदूर, साहूकार तथा पूँजीपति, किसान तथा मध्य वर्ग आदि लेखिकाओं के कहानी-साहित्य के प्रमुख आधार बने। सुभद्राकुमारी चौहान की "गौरी", रामेश्वरी देवी की "तिरस्कृता", तेजरानी पाठक की "दो शब्द", सुमित्राकुमारी सिन्हा की "व्यक्तित्व की भूख" आदि इस सन्दर्भ में सबूत हैं। भारतीय संस्कृति तथा पाश्चात्य संस्कृति दोनों का सुंदरसुन्दर सम्मिलन कहानियों द्वारा प्रस्तुत किया जा रहा था। उदाहरणार्थ उषादेवी मित्रा की "समझौता" कहानी ली जा सकती है। इस युग की एक अन्य समस्या है - विवाहित नारी का परपुरूष के प्रति प्रेम अथवा मानसिक व्यभिचार जिसका चित्रण सुमित्राकुमारी सिन्हा ने अपनी कहानियों में किया था। राष्ट्रीय भावना को इस युग में वाणी मिली। लेखिकाओं ने प्राय: यथार्थवादी चित्रण पर बल दिया है। उनकी कहानियों में आदर्श के संकेत यत्र-तत्र हैं, किन्तु दृष्टान्त रूप में आदर्श प्राय: प्रस्तुत नहीं हुए। अधिकाँश लेखिकाओं की आन्तरिक भावना एक-सी है। प्राय: सभी में सामाजिक कुरीतियों, अन्धविश्वासों, धार्मिक आडंबरों आदि के सुधार का आग्रह है, पीडित-व्यथित वर्ग के प्रति करूणा है तथा पतितों के उत्थान की प्रबल आकाँक्षा है। इस समय लेखिकाओं ने युग की समस्याओं को आर्थिक पैनी दृष्टि से देखना शुरू किया। उन्होंने मानव के अन्तर्मन में पैठ कर उसके अन्तर्द्वन्द्वों और आंतरिक प्रवृत्तियों को समझने का प्रयास किया। कमला चौधरी की "स्वप्न" कहानी में महात्मा के आवरण के नीचे छिपी हुई मानव मन की स्वाभाविक दुर्बलता महात्मा दीक्षित बैरिस्टर के द्वारा दिखायी गयी है। "वीणा" कहानी मनोवैज्ञानिक धरातल पर नायिका वीणा के नारीत्व भाव को उभारने में सफल सिद्ध हुई है। ऐसी कहानियों में व्यक्ति एवं समाज के संघर्ष से उत्पन्न व्यक्तिगत कुंठाओं एवं पीडाओं को मुख्य स्थान मिला है। यद्यपि पूर्ववर्ति लेखिकाओं की भाँति इस युग में स्त्री-चरित्रों को अपेक्षाकृत प्राथमिकता दी गयी है, किन्तु इस युग की स्त्रियाँ पहले की भाँति केवल भारतीयता में आवृत दब्बू नारियाँ नहीं हैं। अन्याय होते देखकर वे विद्रोह भी कर बैठती हैं। यह वृत्ति युग-चेतना का ही परिणाम है। उदाहरणार्थ कमला चौधरी की "त्याज्या" कहानी की तिरस्कृत सावित्री पति के पैरों पर नहीं पडती वरन् विद्रोही स्वर में कहती है कि कुत्ते की भाँति केवल रोटी केलिए उसके घर में रहने से

अच्छा दूसरों की चाकरी करके पेट पालन करना है । इस युग के अधिकांश लेखिकाओं की आन्तरिक भावना एक-सी है । लेखिकाओं ने यथार्थवादी चित्रण पर बल दिया है, अत: अनुभूति-चेतना अधिक है । उनकी कहानियों का वैशिष्ट्य यह है कि उनका यथार्थ-बोध बाह्य परिस्थितियों के साक्ष्य पर नहीं बल्कि लेखिकाओं के निजी अनुभवों के साक्ष्य पर आधारित है । इस युग में कहानी-लेखिकायें एक ओर पुरानी परंपरा और पुराने मार्ग पर बढती दृष्टिगोचर होती है, तो दूसरी ओर नये युग का सन्देश देनेवाली नवीन लेखिकायें अपनी कला कृतियों द्वारा स्वतंत्रता-मार्ग का निर्माण करती सामने आती है ।

स्वातंत्र्यपूर्व कहानीकर्त्रियों की कहानियों का वस्तु पक्ष की दृष्टि से तुलनात्मक विवेचन करने से निम्न लिखित तथ्य प्रकाश में आये हैं ।

हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी बंग महिला की "दुलाईवाली" में सामाजिक यथार्थबोध से संबंद्ध किसी गहरी समस्या का चित्रण नहीं है और न ही पात्रों की मनो-वृत्ति का सूक्ष्म विश्लेषण इसमें उपलब्ध है । बंग महिला ने नग्न यथार्थ के चित्रण तथा तत्वों के संयोजन से कथा को रूचिकर बनाने की अपेक्षा उसमें आदर्श समावेश पर बल दिया है । लेखिका की मौलिक एवं अनूदित कहानियों में अधिकांश उपदेशोन्मुख है । शिवरानी देवी की अधिकांश कहानियों का लक्ष्य आदर्शोन्मुख यथार्थवाद है । आदर्शगत सामंजस्य का उत्तम उदाहरण "आँसु की दो बूँदे" कहानी है । उनकी कहानियों का मूल उपादान मध्यवर्ग के हिन्दु परिवार की अशान्तिकर अवस्था है । सुभद्राकुमारी की "बिखरे मोती" इस विषय में सर्वप्रथम है । कमला चौधरी के "पिकनिक" और होमवती देवी के नि:सर्ग कहानी संग्रहों में ये बातें कुछ गौण हैं । सुभद्राजी के चरित्रों का व्यक्ति समाज के कठोर नियमों के कारण दब जाता है तो शिवरानी देवी के चरित्रों का व्यक्तित्व समाज के नियमों की कठोरता को प्राय: दबा देने में समर्थ हो जाता है । उदाहरणार्थ सुभद्राकुमारी चौहान की "नारी हृदय" और "एकादशी" की नारिकायें पुरूषों की वासना-पाश में आबद्ध हो कर जीवन पर्यन्त अशान्त रहती हैं । शिवरानी देवी की "करनी का फल" का नायक मोहन कान्ति पर कामुक दृष्टि डालता है तो अपनी सखी की सहायता से उसकी नाक काटकर करनी का उचित फल चखवाती है ।

अधिकतर लेखिकाओं की सहानुभूति सदा वधुओं की ओर रहती है, पति-पत्नी में पत्नी की ओर, सास-बहु में बहू की ओर, जेठानी-देवरानी में देवरानी की ओर जाती है। इससे स्पष्ट है कि लेखिकाओं का पक्षपात आधुनिकाओं के ऊपर है। इसका कारण उनके मन का द्वन्द्व है। सुभद्राजी की अधिकांश कहानियाँ बहुओं के दुखपूर्ण जीवन को लेकर लिखी गयी हैं। निस्सन्देह वे इसकी अधिकारिणी हैं। उनकी कहानियों में समाज-व्यवस्था के प्रति एक नकारात्मक घृणा ही व्यंजित है।

उषादेवी मित्रा की कहानियों में एक तरफ नारी की शोचनीय दशा में सुधार करने की कोशिश है तो दूसरी तरफ हर तरह के वातावरण से सामंजस्य बिठा पाने की असफल चेष्टा। नारी हृदय की कोमल प्रवृत्तियों की सूक्ष्मता के प्रति उनकी पकड़ बड़ी मार्मिक है। "रिक्ता" की तपेदिक की रोगिणी कमला पति की शुभकामना के फलस्वरूप ही जीवन के अन्तिम क्षण तक अपनी संपूर्ण इच्छाओं, वासनाओं का दमन कर अपने को पति से दूर रखती है। लेखिका की नर और नारी के आपसी संबंधों पर आधारित जितनी कहानियाँ हैं उनमें प्रेम का स्वरूप प्राय: छायावादी है तथा रोमांच है। इनमें प्रेम का विरोधी समाज है या व्यक्ति की निजी मान्यतायें हैं जो बाद के महिला कथाकारों में प्राय: उपलब्ध नहीं होती। लेकिन कमला चौधरी की कहानियों में प्रेम परिस्थितियों का दास है। इसकी सफलता या असफलता सामाजिक परिवेश में संभव है। इसलिए इनकी कहानियों में युवक युवतियों के प्रेम में द्वन्द्व का अभाव है। उदाहरणार्थ "वरमाला" कहानी की कुमुद पारिवारिक नियंत्रण से मुक्त होने में असमर्थ तो ही है सो उसका हृदय अन्दर-अन्दर मसल गया है, लेकिन पिता के नियंत्रण का विरोध वह नहीं करती। सुभद्राकुमारी चौहान, उषादेवी मित्रा, कमला चौधरी आ लेखिकाओं ने अपनी कहानियों में नारी को आदर्श के धरातल पर प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया है। इनके नारी पात्र परंपरागत जीर्ण समस्याओं में जकड़ी हुई प्रतीत होती हैं। समाज के अन्यायों के प्रति आवाज़ बुलन्द करने की क्षमता इन पात्रों में नहीं है। ये पात्र अन्यायों को मौन भाव से सहने केलिए विवश है। इस कारण इनकी कहानियों में एक प्रकार का खोखला आदर्श दृष्टिगत होता है। कमला चौधरी में वैयक्तिक स्वाधीनता के प्रति पक्षपात का स्वर प्रधान हो उठा है तो होमवती देवी

में रूढ़ियों की प्रधानता का स्वर । शायद यही कारण है कमला चौधरी अपने चरित्रों में अनुभवों के द्वारा काट-छाँट करती है और होमवती देवी कल्पना के द्वारा उन्हें माँसल करने की चेष्टा करती है । उस काल की मनोवैज्ञानिक कहानियाँ लिखनेवाली लेखिकाओं की परंपरा में कमला चौधरी का महत्वपूर्ण स्थान है । "स्वप्न" जैसी कहानियों में अन्तश्चेतन मन का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण है ।

तेजरानी पाठक ने मुख्य रूप से समाज के आर्थिक वैषम्य एवं तज्जन्य कुरूपताओं को अपनी कहानियों में स्थान दिया है तो चन्द्रकिरण सौनरेक्सा ने समाज की उस घातक अर्थव्यवस्था पर कटु-प्रहार किया है जो कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को आवश्यकता से अधिक धन संपन्न बनाकर समाज में अनीति एवं अनाचार को जन्म देती है । चन्द्रकि सौनरेक्सा का व्यंग्य तीक्ष्ण, हृदयस्पर्शी और कटु होता है, किन्तु कहीं उनकी कटुता अत्यन्त अशोभनीय सी प्रतीत होती है । तेजरानी पाठक की कहानियों में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद है तो तारा पांडे की कहानियों में आदर्शवाद है । प्रगतिशील विचार-धारा को लेकर सत्यवती मल्लिक ने समाज के शोषित, पीड़ित, पददलित वर्ग को लेकर जिन कहानियों की रचना की है उन्हें प्रगतिशील सामाजिक यथार्थ की कहानियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है । सुमित्राकुमारी सिन्हा की विचार-धारा क्रान्तिकारी है । विवाहित नारी का अपने पति के विरुद्ध असन्तोष तथा परपुरुष के प्रति प्रेम सुमित्राजी की कहानियों का प्रमुख अंग है । उनकी कहानियों में वासनात्मक अतृप्ति की झलक मिलती है । आप पहली लेखिका हैं जिन्होंने स्पष्ट शब्दों में पुरुषों के समान स्त्रियों में भी इसी वासनात्मक अतृप्ति को स्वीकार किया है । प्राय: हमारी लेखिकायें भारतीय नारी के आदर्श रूप को ही प्रस्तुत करती आयी हैं । अत: श्रीमती सुमित्राकुमारी की कहानियाँ नितान्त मौलिक एवं क्रान्तिकारी मानी जायेंगी, किन्तु आदर्श की भाव-भूमि पर पले अधिकांश पाठक उसका स्वागत नहीं कर पायेंगे ।

स्वातंत्र्यपूर्व महिला कहानीकारों की तमाम कहानियों की भावाभिव्यक्ति में युग-युगों की नारी समस्यायें उभर कर आयी हैं । कहानियों में लेखिकायें नारी के हिमायती बनकर उपस्थित हुए हैं । उन्होंने नारी-जीवन और उससे संबंधित अनेक महत्वपूर्ण समस्याओं का न केवल सामान्य निरूपण किया है, अपितु उनके संबंध में जीवन्त निष्कर्ष

और युग सापेक्ष समाधान भी प्रस्तुत किये हैं । उन्होंने एक ओर नारी जीवन से संबंधित प्रमुख समस्याओं जैसे दहेज, बाल-विवाह, अनमेल-विवाह, बहु-विवाह, वेश्या-वृत्ति, अन्तर्जातीय-विवाह, विधवा-विवाह, पारिवारिक-संबंध, सामाजिक स्थिति आदि का निरूपण किया है तो दूसरी ओर नारी के स्वाभिमान, प्रतिशोध-भाव, चरम-सहनशीलता, ममत्व, मातृत्व, पति-परायणता, मर्यादा और महत्ता का भी सशक्त चित्रण किया है । उनकी कहानियों में नारी के माता, भाभी, बहन, प्रेयसी, सास, जिजीविषा की प्रेरणादायिनी, गणिका, दासी जैसे अनेक रूप हम देख सकते हैं ।

लेखिकाओं ने नारी के मातृत्ववाले स्वरूप को कई स्थलों पर विवेचित किया है "माता की ममता" कहानी में चकोरीजी ने सुधा के माध्यम से नारी जीवन की सफलता मातृत्व में देखी है । मातृत्व में है नारी का चरम विकास और वात्सल्य में है प्रेम की पूर्णता । कमला चौधरी की "कैलाश दीदी" कहानी में प्रस्तुत किया गया है कि स्त्री केलिए असहनीय है वह समाज में वंध्या कहलाये । नारीत्व का चरम विकास मातृत्व में है जो हमें महादेवी की गूँगिया तथा नवजात अवैध शिशु की विधवा माता अठारह वर्षीया बालिका में उपलब्ध होता है । सुभद्राजी ने अपनी कहानियों में नारी की परम प्राकृत-मातृत्व भावना का मार्मिक रूपांकन किया है । "विमाता" में रजनी के सौतेले पुत्र के प्रति ममत्व दिखाकर तारा पाँडे दिखाती है कि नारी में माँ बनने की कामना अत्यन्त बलवती है तथा मातृत्व एक अलौकिक सुखानुभूति है । लेखिकाओं ने अपनी कहानियों में सास के रूप में नारी को रूढिवादी एवं उग्र स्वभाव युक्त चित्रित किया है । सास बहू से प्रतिद्वन्द्विता करती है । ईर्ष्या मिश्रित शासकीय मनोवृत्ति के साथ ही सास प्राय: दहेज की कमी के कारण बहू से दुर्व्यवहार करती है । चन्द्रकिरण सौनरेक्सा की "गृहस्थी का सुख" में लक्ष्मी की सास रूढिवादी विचारों की वृद्धा है जो निरीह वधू से सारा गृहकार्य कराके उस पर रौब-गाँठना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझती है । केवल होमवती देवी की कहानियों में सहज, आत्मीय और मधुर सास-बहू का चित्रण है । उनकी "स्वाभिमानी" कहानी में ऐसी स्नेहमयी सास है जो अपनी विधवा बहू के प्रति प्यार, दुलार एवं ममता रखती है । लेखिकाओं की कहानियों में भाभी-देवर संबंध विभिन्न सन्दर्भों में जीवन्तता लिये हुए हैं । "करूणा", "है न यही बात", 'नारीत्व' आदि कहानियों में देवर-भाभी संबंध पुराने भावुकतापूर्ण संबंधों के स्थान पर

समाज सुधार की प्रगतिशील चेतना पर टिके हैं । कहानियों में चित्रित भाई-बहन संबंध सात्विक प्रेम पर आधृत है । उषादेवी मित्रा की "मातृत्व", सुभद्राकुमारी चौहान की "गुलाबसिंह", "अमराई", आदि कहानियाँ उपर्युक्त प्रेम के प्रमाण हैं । पत्नी रूप में महिला कहानीकारों की पात्राएँ प्राय: भारतीय मर्यादा से अनुप्राणित, पति-परायणा सेवामयी एवं त्यागशीला हैं । भारतीय आदर्श पत्नी, पति के सभी अत्याचारों को चुपचाप सहन करती हैं । लेकिन कमला त्रिवेणी शंकर की "अमीर की बेटी" की नीलिमा पति की जूतियाँ चाटना अपना ध्येय नहीं समझती । महादेवी ने अपनी कृतियों में जिन पति-पत्नी संबंधों का चित्रण किया है उनके संबंधों के सन्दर्भ में अधिकांश पत्नियाँ अनमेल विवाह का शिकार हैं । अधिकांश लेखिकायें पति को परमेश्वर मानने के पक्ष में हैं । वे स्वीकार करती हैं कि मानसिक कष्ट और यातना पत्नियों के दैनिक जीवन का अंग है । लेखिकाओं की कृतियों में नारी के पारिवारिक संबंधों का चित्रण यथार्थ भाव भूमि पर हुआ है । कहीं ये संबंध आत्मीयता की पराकाष्ठा लिये हुए हैं तो कहीं कहीं इन में तनाव, घुटन और टूटन भी आ गये हैं ।

प्रत्येक युग में नारी की हालत अपनी अपनी समस्याओं से जुडी रहती है । समाज के बदनाम और सदनाम उस पर आधारित है । लेखिकाओं ने नारी समस्याओं को दिखाकर विधवा-विवाह की आवश्यकता और बाल विवाह की अनावश्यकता पर विचार किया है । शिवरानी देवी समर्थन करती है कि बाल-विवाह ही बाल-विधवा होने का कारण है । विवाह की वास्तविकता से अपरिचित, भोली-बालिका की कहानी है शिवरानी देवी की "विश्वास" कहानी । विधवा जीवन की समस्या के सभी पहलुओं का चित्रण तो यथार्थवादी स्तर पर सभी लेखिकाओं ने किया है । अत: लेखिकायें विधवा विवाह का समर्थन अपनी रचनाओं द्वारा करती हैं । सुभद्राकुमारी की "असंमंजस्य" "कल्याणी", "नारी हृदय" आदि कहानियों में विधवा-विवाह समस्या ही उठायी गयी है, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि युक्ति तर्क से पुनर्विवाह की समर्थिका होने पर भी लेखिका विधवा की तपोमय-जीवन के सम्मान एवं गौरव की रक्षा के कारण इसका समर्थन नहीं कर सकी । अत: उनकी विधवा नायिकायें पुनर्विवाह करना अस्वीकार कर देती हैं । कमला चौधरी की कहानियों में ऐसा प्रतीत होता है

कि आप विधवा विवाह की पक्षपातिनी हैं। उनकी कहानियों में एक ओर हिन्दु-समाज के कुचक्र में पँसी हुई पतित, दुखी विधवा की कसक भरी करूण कथा है तो दूसरी ओर जागरूक समाज के व्यक्तियों द्वारा पुनर्विवाह करा कर विधवा समस्या का समाधान सम्मुख रखा है। "कन्यादान" की सुनीता इसका अनुपम उदाहरण है। उनकी विधवायें यदि मर्यादित एवं पूनीता हैं तो पतिता एवं चरित्रहीना भी हैं जिनको उन्होंने परिवार का अभिशाप कहा है। ये पतितायें या तो विक्षिप्त हो जाती हैं या आत्महत्या कर लेती हैं जैसे देवर द्वारा गर्भवती हो जानेवाली "रूपा" कहानी की रूपा। "आधार", "गोटे की टोपी", "अन्तिम सहारा" आदि कहानियों द्वारा होमवती देवी ने विधवा पुनर्विवाह का समर्थन करते हुए भी प्राचीन संस्कारों के कारण विधवाओं के जीवन-गौरव का भी सम्मान करती थीं। वनिताश्रमों की स्थापना को छोड़कर उषादेवी मित्रा के विचार में विधवा-विवाह और आर्थिक आत्मनिर्भरता विधवाओं की स्थिति सुधारने के सशक्त कदम हैं। आप कहती हैं कि भारतीय नारी अपने पूर्व पति की स्मृति को सहज रूप से न भुला पाती, अतः विवाह के बाद और भी कठिनाई उपस्थित होती है। इसलिए मृत्युंजयी" की सीता के द्वारा व्यक्त किया जाता है कि विधवा के दृष्टिकोण में भी मूलभूत परिवर्तन आवश्यक है। उषादेवी की विधवायें शारीरिक अपवित्रता को कोई स्थान नहीं देतीं। उनका विश्वास है कि आपत्काल में सतीत्व नष्ट होने से पवित्रता नष्ट नहीं होती क्योंकि उसमें स्त्री अपने मन से कोई कार्य नहीं करती। अतः यह सत्य है कि किसी भी नारी की, चाहे वह सधवा हो, चाहे विधवा, उसकी शारीरिक पवित्रता परिस्थिति सापेक्ष है, परिस्थिति निरपेक्ष नहीं। कठोर पारिवारिक एवं सामाजिक बन्धनों तथा उफलती हुई यौवन इच्छाओं के बीच पँसी बाल-विधवा का सूक्ष्म एवं तटस्थ चित्रण लेखिकाओं ने किया है। मनचाही जिन्दगी जीने की उनकी महत्वाकांक्षाएँ, सामाजिक रूढियों, परंपराओं और विश्वासों की लपट में स्वाहा हो जाती हैं।

जिस प्रकार विधवाओं की दीनहीन दशा समाज के अमानवीय व्यवहार की द्योतक तथा अन्य बुराइयों (वेश्यावृत्ति तथा व्यभिचार) को जन्म देनेवाली है, उसी प्रकार दहेज की कुप्रथा भी अनमेल विवाह, दाम्पत्य कलह, वेश्यावृत्ति इत्यादि कई

प्रश्नों को सामने लाती है । शिवरानी देवी प्रेमचन्द की "साहस", "वधु-परीक्षा", "नर्स" आदि कहानियाँ उदाहरणस्वरूप ली जा सकती हैं । दहेज ऐसी भयानक समस्या है जो अनेक युवतियों के जीवन को आँसुओं से भर देती है । यदि माता-पिता अपनी प्रिय पुत्री केलिए दहेज जुटा न सके तो पुत्री का विवाह किसी वृद्ध या वासनामय दुराचारी से कर देता है । इस समस्या का समाधान "नर्स" कहानी द्वारा शिवरानी देवी प्रस्तुत करती है - श्रमनिष्ठ स्वालंबी जीवन । दहेज प्रथा के दुष्परिणाम है अनमेल विवाह । अनमेल विवाह से उत्पन्न स्थिति का चित्रण उषादेवी मित्रा ने "काल की देन" कहानी में विपिन नामक वृद्ध व्यक्ति के साथ वल्लरी नामी युवती के विवाह के द्वारा व्यक्त किया है । वस्तुत: ऐसे चित्रणों के माध्यम से उषा देवी मित्रा, शिवरानी प्रेमचन्द, महादेवी वर्मा, कमला चौधरी, होमवती देवी आदि लेखिकाओं ने अनमेल विवाह का विरोध किया है और विवाह में दहेज की अनिवार्य स्थिति को कलंक मानकर उसे दूर करने की चेष्टा की है ।

पर्दा प्रथा के नितान्त विरोधी थी महिला लेखिकायें । सत्यवती मल्लिक की "बुत" नामक कहानी में देहाती परिवारों में प्रचलित पर्दा-प्रथा, रीति-रिवाजों आचार-विचारों तथा अन्धविश्वासों के धरातल पर नारी जीवन की झाँकी प्रस्तुत करके नारी की विवशता और कुंठा की अभिव्यक्ति हुई है । प्रथम कहानी लेखिका बंग महिला ने "दुलाईवाली" कहानी के द्वारा इस समस्या के दुष्परिणामों को व्यक्त किया है । "मर्द" कहानी के द्वारा चन्द्रकिरण सौनरेक्सा ने इस प्रथा की निन्दा की । पर्दा-प्रथा, अनमेल-विवाह, बहुविवाह तथा अन्य सामाजिक कुरीतियों के साथ समाज में वेश्या-समस्या भी प्रमुख समस्या है । उषादेवी मित्रा ने इस समस्या की मूल जड़ें समाज में व्याप्त घोर आर्थिक विषमता में देखी हैं । उन्होंने वेश्याओं तथा अन्य पतित नारियों के प्रति एक सहानुभूतिपूर्ण रुख अपनाया है । "जीवन का एक दिन" की परमा द्वारा यह दिखाने का प्रयास किया गया है कि दरिद्र परिवार की भूखी लड़कियाँ इच्छा न रहते हुए भी अपना सतीत्व बेचने केलिए बाध्य हो जाती हैं । महादेवी वर्मा के विचार में संभवत: समाज की ओर से सहानुभूति का अभाव ही वेश्या वृत्ति के प्रादुर्भाव का कारण है । "वे तीन दिन" द्वारा चन्द्रवती नृपसेन जैन व्यक्त करती हैं कि नारी

को वासना, कामुकता, भोगलिप्सा या खरीदने-बेचने की वस्तु समझने के कारण ही वेश्या-वृत्ति को समाज में प्रोत्साहन मिलता है। अधिकाँश लेखिकाओं के विचार में पुरूष की वासना के अतिरिक्त असंतुलित आर्थिक व्यवस्था ही वेश्यावृत्ति केलिए उत्तरदायी है। अत: लेखिकाओं का कहना है कि सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक ढाँचे में परिवर्तन किये बिना और स्त्रियों में आत्मसम्मान का बोध जगाये बिना वेश्या समस्या का कोई ठोस मौलिक हल नहीं निकाला जा सकता। लेखिकाएँ देव-दासियों के जीवन को पाप नहीं सामाजिक व्यवस्थाओं की देन कहती है। व्यवस्थाओं और उससे पतित हुई संस्कृति के उत्थान ही समस्याओं का समाधान है।

महिला कहानीकारों के अनुसार विवाह एक सामाजिक एवं सांस्कृतिक बन्धन है। आज की वैवाहिक प्रथा एकोन्मुख है। अत: वे विवाह केलिए लडके-लडकी दोनों की सम्मति आवश्यक मानती हैं। साथ ही वे अन्तर्जातीय विवाह के पूर्ण समर्थक हैं। भारत वर्ष में विशेषत: हिन्दु समाज के जाति भेद ने विवाह समस्या को और भी जटिल बना दिया है। उषादेवी मित्रा हिन्दु समाज की जातिगत जडता की विरोधी है। इसलिए "स्मृति की पूजा" में विनय का सुरंगी से विवाह करवाकर एक व्यापक दृष्टिकोण का परिचय दिया है। सत्यवती मल्लिक ने श्यामा कहानी इस समस्या के समाधान स्वरूप ही लिखी है। शिवरानी देवी ने विवाह को पुरूष प्रधान समाज व्यवस्था की दासता समझी। अत: उनकी "वधु-परीक्षा", "साहस" कहानियों की निर्मला और रामप्यारी विवाह कर पुरूष की दासी बनना अस्वीकार करती है। बहु-पत्नी समस्या का भी घोर विरोध शिवरानी ने अपनी कहानी "वरयात्रा" में किया है। रामप्यारी किसी प्रकार यह सहन करने केलिए तैयार है कि उसके जीते ही रामनाथ दूसरा विवाह करे। अपनी संपूर्ण शक्ति से वह इस अमानवीय कुप्रथा के विरूद्ध संघर्ष करती है। "त्याग की सौदा", "प्रायश्चित" तथा "अपराजिता" शीर्षक कहानियों में कमला त्रिवेणी शंकर ने सपत्नी-समस्या का चित्रण किया है, साथ ही इन कहानियों की पात्राओं को ईर्ष्या, द्वेष आदि नारी संभावित प्रवृत्तियों से पृथक रखकर उस समस्या का सुन्दर आदर्शवादी समाधान प्रस्तुत किया है। परित्यक्ताओं की समस्या भी इस पुरूष सत्ता प्रधान समाज की देन है। प्रौढ विधवाओं, परित्यक्ताओं, तथा वंचिताओं

की समस्याओं को लेखिकाओं ने समग्रता के साथ पकड़ने का प्रयत्न किया है । नारी पुरूष द्वारा पूर्णतया उपेक्षित होकर भी अन्दर की कसक को बाहर की संपन्नता के नीचे दबा लेती है । अपमान का जहरीला घूँट पीकर भी वह संबंधों की सड़ी लाश को बन्दरिया की तरह छाती से चिपकाये घूमती है ।

अपने प्रेमियों को छोड़ माता-पिता द्वारा आयोजित विवाह के दुष्परिणामों को दिखाकर महिला लेखिकाओं ने प्रेम-विवाह का समर्थन किया है । कमला चौधरी की "मेरी रानी", "त्याग", चन्दवती ऋषभसेन जैन की "है न यही बात" सुमित्राकुमारी सिन्हा की "भावुक", "प्रतिक्रिया" आदि असफल प्रेम की कहानियाँ है । सुमित्रा कुमारी जी नारी के अपना वर स्वयं चुनने के अधिकार की हिमायती करती हैं । यह उनके नारी के प्रति प्रगतिशील दृष्टिकोण का ही परिचायक है । सुभद्राकुमारी का स्पष्ट मत था कि पति-वरण का अधिकार कुमारियों को मिलना चाहिए । उनकी "गौरी", "प्रोफेसर" मित्रा", "मंगल" आदि कहानियों में कुमारियों के पति-वरण विषयक अधिकार पर युगीन परिस्थितियों के सन्दर्भ में विचार किया गया है ।

मानव-जीवन में पूर्णता तभी होती है जब नर-नारी अपने बीच निस्वार्थ भाव का संबंध स्थापित करे । लेखिकाओं की कहानियों में अनेक नारियाँ अपने निस्वार्थ, ईर्ष्याहीन और पवित्र स्नेह बाँट देती हैं । उषादेवी मित्रा की "रिक्ता", सुभद्रा-कुमारी चौहान की "कदम्ब के फूल", सत्यवती मल्लिक की "जीवन सन्ध्या", कमला चौधरी की "कर्तव्य", रामेश्वरी देवी की "आँखों का कौतुक" आदि कहानियों के स्त्री पात्र इस प्रसंग में प्रमाण हैं । उषादेवी मित्रा ने पति-पत्नी संबंधों के बीच जहाँ हिन्दु शास्त्रोचित रीतियों और परंपराओं को मान्यता दी है वहाँ वैद्य संबंध को ही आदर्श मानती है । लेकिन स्त्री-पुरूष संबंधों की रूढिग्रस्त मान्यताओं को चुनौती देनेवाली कहानियाँ है सुमित्रा कुमारी सिन्हा की व्यक्तित्व की भूख तथा "मैं नहीं जाऊँगी" । अन्य सभी लेखिकायें स्त्री-पुरूष दोनों के परस्पर आकर्षण को सहज मानते हुए भी एकनिष्ठता पर बल देती हैं जो भारतीय संस्कृति के अनुरूप है ।

नारी पर पुरूष की दृष्टि कामुकता या वासनापूर्ण नहीं होनी चाहिए । नारी वासनापूर्ण स्नेह की अधिकारिणी नहीं, अपितु अक्लुष प्रेम की अधिकारिणी है । उसके

सौन्दर्य, उसके हृदय की कोमलता और उदारता को देव-सम्मान मिलना चाहिए - महिला कहानीकारों का प्रबल उद्देश्य यही था । इनके नारी पात्रों के प्रेम प्रसंगों में भारत की प्राचीन सभ्यता के उत्कृष्ट रूप को प्रस्तुत करने का प्रयास दृष्टिगोचर होता है । प्रेम में सेवा का भाव होना लेखिकाओं की उदात्त मान्यता है । उसमें कलुष या स्वार्थ केलिए स्थान नहीं । इससे ओत-प्रोत नर-नारी संबंध देश रक्षा केलिए भी सहायक है जैसे सुभद्राकुमारी चौहान की "गौरी" कहानी की गौरी और उषादेवी मित्रा की "देश भक्त" कहानी के अमीर । लेखिकाओं की नस-नस में देश के प्रति जो उद्धरण की भावना थी, भ्रष्टाचारिता और अत्याचार से देश की रक्षा करने की जो प्रबल चाह थी, सब की आवाज़ लेखिकाओं की कहानियों में गूँज उठी है ।

रूढिबद्ध समाज में नारी की दयनीय स्थिति देखकर सभी लेखिकाओं का सुकुमार हृदय रो उठा है और वे नारी की वैयक्तिक स्वतंत्रता का आह्वान करने लगती हैं । सुभद्राकुमारी ने ही प्रथम बार नारी को सच्ची मानवी के रूप में देखकर समाज में उसकी प्रतिष्ठा की स्थापना केलिए ज़ोरदार आवाज़ उठायी है । आप की वीणा, मंगला, गौरी, निर्मला आदि पात्राएँ अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व और अधिकारों के प्रति जागरूक हैं । उषादेवी मित्रा की "पहचान" कहानी का मूल स्वर वैयक्तिक स्वतंत्रता तो है । सुमित्रा कुमारी सिन्हा ने अपनी कहानियों में विवाहित नारी के पति के अतिरिक्त अन्य पुरूष मित्र होने के अधिकार पर विचार किया है । जैसे "व्यक्तित्व की भूख" की इला की अतृप्त आकाँक्षाएँ ही कई युवकों के प्रति आकर्षण का कारण बनीं और उसके जीवन में एक नहीं चार पुरूष आये । सुमित्राजी आधुनिक कहानी जगत् की पहली महिला है जिनकी कहानियों में इस दिशा की ओर मोड दिया गया है जो भारतीय संस्कृति के बिलकुल विरूद्ध है । नारी की स्वतंत्र व्यक्तित्व की होड में लेखिका ने देवर-भाभी जैसे पवित्र संबंध को भी कलंकित कर दिया है । पारिवारिक रूप से मुक्ति तथा सामाजिक रूप से स्वतंत्र करने केलिए नारी को शिक्षित तथा आर्थिक रूप से स्वतंत्र होने की प्रेरणा लेखिकायें देती हैं । शिवरानी देवी की "नर्स" कहानी की क्षमा दहेज के अभाव में वर पक्ष की उपेक्षा से तंग आने से शिक्षित होकर आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र होना चाहती है । अधिकाँश लेखिकाओं ने नारी की आर्थिक स्वतंत्रता को उनकी वैयक्तिक स्वतंत्रता का आधार माना । वे कहती हैं कि पतियों के दुराचार

को स्त्रियाँ इसलिए सहती आयी हैं कि उनके आगे अपनी जीविका का और विशेष कर अपने बच्चों का भविष्य खटकता है । "सफल नारीत्व" की माला, "पत्थर की देवी" की शान्ति द्वारा सुमित्राकुमारी ने व्यक्त किया है कि आर्थिक पराधीनता के कारण नारी को अनैतिक कार्य करना पडता है । यहाँ नैतिक मूल्यों का ह्रास तथा मनवता का सर्वनाश होना सहज बात है जिससे देश की सांस्कृतिक मान्यताओं का मूल्य कटता जा रहा है । अतएव नारी की मुक्ति आर्थिक रूप से स्वनिर्भर और शिक्षित होने पर ही संभव है ।

इस संपूर्ण अध्ययन के पश्चात् हम अनुभव करते हैं कि महिला लेखिकाओं ने अपने चारों ओर के समाज की लगभग सभी नारी समस्याओं को अपनी विषयवस्तु बनाया है । लेखिकाएँ अपने सीमित अनुभवों तथा ज्ञान के कारण अपने समय से पूर्व प्रकाशित कथा साहित्य के प्रभाव में आकर पुन: उन्हीं समस्याओं को अपने कहानी साहित्य में दुहराने लगीं जैसे विधवा-विवाह, बाल-विवाह, अनमेल-विवाह, दहेज-प्रथा, वेश्या समस्या आदि । नारी संबंधी पूर्वचर्चित विषयों के वर्णन के साथ-साथ कुछ मौलिक, सार्वलौकिक एवं सार्वदेशीय समस्याओं का चित्रण भी पाया जाता है । अत: महिला कहानीकारों की कहानियाँ समय की माँग की पूर्ति करती हैं । एकदम देखने पर ऐसा लगता है कि मौलिक रूप से इन कहानी लेखिकाओं ने कुछ नयी बात प्रस्तुत नहीं की है तथापि स्त्री की समस्या स्त्री द्वारा प्रस्तुत होने पर जो लगाव रहता है उसको उन्होंने ज़ोर देकर प्रस्तुत किया है । स्वातंत्र्यपूर्व नारी किस मोड पर आकर रुकी है, इस बात को ये कहानियाँ स्पष्ट करती हैं । इस अर्थ में ये कहानियाँ स्वातंत्र्यपूर्व नारी की मानसिकता के जीवन्त दस्तावेज़ हैं । जिस मूल्यात्मक द्वन्द्वों एवं विघटन की स्थिति से नारी गुज़र रही थी, उसे ये कहानियाँ प्रमाणित करती हैं । यह सही है कि भारतीय नारी एक ही समय दो परस्पर विरोधी स्थितियों की शिकार हो रही थी । एक ओर शिक्षित स्वावलंबी, बुद्धिवादी और नये जीवन मूल्यों से ओतप्रोत बनाने का प्रयत्न हो रहा था तो दूसरी ओर बिरादरी और ससुराल में उसे दूसरे दर्जे के व्यक्ति के रूप में देखा जा रहा था । महिला कहानीकारों ने इस विसंगति को स्पष्ट किया है । एक ओर पुरूषों की ढोंगी मनोवृत्ति का, तो दूसरी ओर नारी की करूण स्थिति का चित्रण हो रहा है । उस समय की नारी पुरूष से न बहुत आगे

निकल जाना चाहती थी और न बहुत पीछे रह कर घिसटना पसन्द करती थी । वह तो सही माने में किसी की पत्नी, माँ, बहन, बेटी बनकर जीना चाहती थी । पुरूष भी उसे बराबरी का दर्जा देकर साथ लेना नहीं चाहता । पीछे रहने का दुख, आर्थिक परालंबन, अपमान, उपेक्षा, अतृप्त यौवन आकांक्षायें, वासनामय निगाहें आदि के बीच पुरूष के कंधे से कंधा मिलाकर चलने का उसका सपना धुन्धुला पड गया है । गन्तव्य की ओर बढनेवाले उसके चरण एक ओर हैं, तो दूसरी ओर पुरूष वृत्ति के कारण छटपटाती उसकी मानसिकता है । लेखिकाओं की कहानियों की यह उपलब्धि है कि संक्रमण काल से गुज़रनेवाली नारी की इस मानसिकता को जानने केलिए भविष्य में ये कहानियाँ शायद एक ऐतिहासिक दस्तावेज़ के रूप में मानी जायेंगी ।

स्वातंत्र्यपूर्व भारतीय नारी का उभरता हुआ रूप निराशाजनक नहीं है । धीरे धीरे उसमें वैचारिक स्पष्टता आ रही थी । कहानियों द्वारा लेखिकाओं ने नारी को नवीन प्रगतिशील चेतना से जागृत करने का प्रयत्न किया । वे चाहती थीं कि नारी में जागरूकता का भाव तथा चारित्रिक दृढता उत्पन्न हो, संयमशीलता का भाव दृढ हो और उनमें दृढ निश्चय की भावना जन्म ले सके जिससे नारी विकास के चरम लक्ष्य की ओर प्रगतिशील हो सके । समाज में नारी भोग-विलास की वस्तु न रहे बल्कि जागरण की विभिन्न दिशाओं की ओर उन्मुख हो जावे । नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व और मानवीय अधिकारों को स्थापित करने केलिए लेखिकायें उन्हें प्रभावित करती हैं । ऐसी चुनौतियाँ इन कहानी लेखिकाओं की कहानियों में मुखरित होती हैं । स्वातंत्र्यपूर्व कहानियों में नारी की जिन जिन समस्याओं को उठाया गया है, उनके समाधान का प्रयास स्वातंत्र्योत्तर कहानी लेखिकाओं में द्रष्टव्य है । उदाहरण केलिए उषा प्रियंवदा की कहानियाँ ली जा सकती हैं जैसे "कितना बड़ा झूठ", "चुनौती", "नींद" आदि । उषा प्रियंवदा ने पश्चिमी शिक्षा में शिक्षित नारियों की अहंमन्यता को ही अवतरित किया है । मन्नु भंडारी, कृष्णा सोबती, शिवानी, विजय चौहान आदि आधुनिक युग की कहानी लेखिकाओं का अपना संसार है जो किसी सीमा तक पुरूषों के संसार से अलग है । उनके कहानी साहित्य में आधुनिक जीवन के अनेक आयाम दिखायी पडती है । सेक्सजन्य भावुकता को भी तो लेखिकाओं ने उभार कर लिखा है । इस प्रकार

प्रेमचन्दोत्तर स्वातंत्र्यपूर्व कहानी की प्रतिक्रियात्मक कडी के रूप में ये कहानियाँ ली जा सकती हैं ।

इस प्रकार स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी कहानी लेखिकाओं की रचनाएँ अस्वतंत्रता के जंजीरों को तोड़ने की इच्छुक भारतीय नारियों की वेदनाजनक स्थिति का स्पूर्त चित्रण प्रस्तुत करती हैं । सभी लेखिकाएँ स्वतंत्रता की वायु के अंतराल काल की हैं जो नारी स्वातंत्र्य केलिए आवाज़ उठाती हैं । भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम में भाग लेनेवाली उद्बुद्ध लेखिकायें भी इस युग में प्राप्त हैं । इसीलिए घोर यथार्थ पर प्रकाश डालते हुए स्त्री की अधीनता के कारणों को अभिव्यक्त करते हुए अनेकानेक स्त्री पात्र इन लेखिकाओं की तूलिकाओं से अवतीर्ण हुई हैं जो आधुनिक नारी के आदर्शजीवन को स्थापित करने में सहायक हैं । इसी तरह ये लेखिकाएँ आनेवाली पीढ़ियों की कहानी लेखिकाओं को ऐसा मार्ग प्रशस्त करती हैं कि वे खुलकर नारी जगत के यथार्थ रूप को ज्यों का त्यों प्रस्तुत करें और घोर दुराचारों में जकडी हुई भारतीय नारी को दम लेने का अवसर दें उसे स्वतंत्र करें, उस को पुरूष की सहयोगी एवं सहगामी कर्तव्य-परायणता और भारतीय आदर्श बनाने में समर्थ सिद्ध करें । यथार्थत: साठोत्तरी हिन्दी कहानियों में यही दृष्टि गोचर होता है और लेखिकाओं की संख्या में पूर्व युगों से अधिकता भी दृष्टिगोचर होती है । इस कारण स्वातंत्र्योत्तर युगीन कहानी लेखिकाओं की रचनाओं का शोधपरक अध्ययन एवं मूल्यांकन स्वातंत्र्योत्तर कालीन विभिन्न दशकों की कहानी लेखिकाओं की रचनाओं के विषयगत तथा चरित्रगत निदर्शन सिद्ध होगा यही विश्वास है ।

"""""""""""""""

परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थ सूची

परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थों की सूची

लेखिकाओं के कहानी संग्रह :-

1 - 7. उषादेवी मित्रा

आँधी के छन्द, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, प्रथम संस्करण 1938

नीम चमेली, इण्डियन प्रेस, प्रयाग, प्रथम संस्करण

महावर, नेशनल लिट्रेचर कम्पनी, कलकत्ता, प्रथम संस्करण 1941

मेघ मल्लार, सरस्वती प्रेस, बनारस, प्रथम संस्करण 1946

रागिनी, हिन्दुस्तानी पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद द्वितीय संस्करण 1949

रात की रानी, श्री अजन्ता प्रेस लिमिटेड, पटना ।

सान्ध्या पूरवी, रामनारायणलाल, दिल्ली ।

8 - 10. कमला चौधरी

उन्माद, साहित्य सेवा सदन, मेरठ, तृतीय संस्करण

यात्रा, नवयुग साहित्य भवन, इन्दौर, तृतीय संस्करण 1950

पिकनिक, सरस्वती प्रेस, बनारस, तृतीय संस्करण 1946

11-12 कमला त्रिवेणी शंकर	पुकार, लक्ष्मी प्रकाशनमन्दिर, गोरखपुर, 1945
13. चन्द्रवती ऋषभसेन जैन	जयमाल, लक्ष्मी प्रकाशन मन्दिर, गोरखपु नींव की ईंट, जीवन कला मन्दिर, सहारनपुर, 1942.
14. चन्द्रकिरण सौनरेक्सा	आदमखोर, सरस्वती पुस्तक मन्दिर, दि प्रथम संस्करण
15 तारा पांडे	उत्सर्ग, विद्याभास्कर बुक डिपो, बनारस 1937
16. तेजरानी पाठक	अंजली, चाँद प्रेस, इलाहाबाद, प्रथम सुंस्करण 1931
17. तेजरानी पाठक	एकादशी, जगत् निवास नरसिंहपुर 1933
18. बंग महिला	कुसुम संग्रह, साहित्य सेवा सदन, काशी, संवत् 1979.
19. महादेवी वर्मा	अतीत के चलचित्र, भारती भंडार, इलाहा सातवाँ संस्करण संवत् 2015
20. महादेवी वर्मा	स्मृति की रेखाएँ, भारती भंडार, इलाहाबाद, आठवाँ संस्करण, संवत् 2019
21. रामेश्वरी देवी "चकोरी"	धूमछाँह, तथा अन्य कहानियाँ, अवध पब्लिशिंग हाउस, लखनऊ, संवत् 2000.
22. शिवरानी देवी	कौमुदी, सरस्वती प्रेस बनारस प्रथम संस्करण 1937
23. शिवरानी देवी	नारी हृदय, प्रेमचन्दर गृह, बनारस, द्वितीय संस्करण
24. सत्यवती मल्लिक	दो फूल, नालन्दा प्रकाशन, बम्बई, अगस्त 1948

25· सत्यवती मॉल्लिक — वैशाख की रात, मोतिलाल बनारसीदास नेप खपरा, बनारस ।

26· — नारी हृदय की साध, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1961·

27· सुभद्राकुमारी चौहान — सीधे सादे चित्र, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद ।

28· " — उन्मादिनी, प्रकाशक-अजय चौहान, जबलपुर

29· — बिखरे मोती, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1959

30· सुमित्राकुमारी सिन्हा — अबल सुहाग, युग मन्दिर, उन्नाव, प्रथम संस्क 1939

31· " — वर्षगाँठ, युगमन्दिर, उन्नाव, प्रथम संस्करण ।

32· होमवती देवी — अपना घर, गौतम बुक डिपो, मेरठ ।

33· " — धरोहर, साहित्य रत्न भंडार, आगरा, प्रथम संस्करण 1946

34· — निसर्ग, साहित्य रत्न भंडार, आगरा, प्रथम संस्करण 1939

35· " — स्वप्न भंग, निष्काम प्रकाशन, मेरठ 1948

अन्य सृजनात्मक ग्रन्थ :-

36· अजित कुमार — सुमित्राकुमारी सिन्हा: रचनावली, ऋषभचरण जैन एवम् सन्तति, दिल्ली, प्रथम संस्करण 199

37· उषादेवी मित्रा — पिपा, सरस्वतीप्रेस, बनारस, प्रथम संस्करण

38· " — सम्मोहिता, नाशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ल प्रथम संस्करण 1963

39· किशोरीलाल गोस्वामी — चन्द्रिका, कल्पतरू प्रेस, बनारस, 1904

40· — गुलबहार, काशी हितचिन्तक प्रेस, 1906

41. क्षेमेन्द्र सुमन — मनोरंजक कहानियाँ, मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास, दिल्ली
42. " — कथाकौमुदी, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास 1957
43. प्रसाद — आकाशदीप, इलाहाबाद तृतीय संस्करण संवत् 2002.
44. प्रेमचन्द — मानसरोवर भाग-3, सरस्वती प्रेस, बनारस, छठवाँ संस्करण, 1941
45. " — नवनिधि, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद 1960
46. भगवती प्रसाद वाजपेयी — प्रतिनिधि कहानियाँ, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, संवत् 2010
47. — हिन्दी कहानी संग्रह, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रया
48. महादेवी वर्मा — श्रृंखला की कडियाँ, भारती भंडार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, आठवाँ संस्करण 1939.
49. योगेन्द्रकुमार लल्ला, श्रीकृष्ण — हिन्दी लेखिकाओं की प्रतिनिधि कहानियाँ, आत्माराम एण्ड सन्स, काश्मीरी गेट, दिल्ली-6
50. रणवीर रांग्रा — नारी हृदय की साध: सत्यवती मॉल्लिक की श्रेष्ठ रचनाएँ, आर्य प्रकाशन मण्डल, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1990
51. राजाशिवप्रसाद "सितारेहिन्द": राजा भोज का सपना, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ 1988
52. संपादक-विष्णु प्रभाकर — समदर्शी, सस्ता साहित्य मंडल, दिल्ली, तृतीय संस्करण 1954
53. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी: बाणभट्ट की आत्मकथा, साहित्य भवन, इलाहाबाद 1946

आलोचनात्मक ग्रन्थ :-

54. अज्ञेय — त्रिशंकू, सरस्वती प्रेस, बनारस, 1945
55. आशारानी व्होरा — नारी शोषण; आइने और आयाम, नाशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1982.

56· इन्द्रनाथ मदान — हिन्दी कहानी:अपनी जबानी, राजकमलप्रकाश दिल्ली, प्रथम संस्करण 1968

57· उपेन्द्रनाथ अश्क — हिन्दी कहानी:एक अन्तरंग परिचय, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1967

58· — हिन्दी कहानियाँ और पैमान, नीलाभ,प्रकाशन इलाहाबाद, 1964

59· डॉ·उमेश माथुर — आधुनिक युग की हिन्दी लेखिकाएँ, ऋषभचरण जैन एण्ड सन्स, दिल्ली, 1969

60· डॉ·ऊर्मिला गुप्ता — हिन्दी कथा साहित्य के विकास में महिलाओं का योग, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1969

61· डॉ·ओमशुक्ल — हिन्दी उपन्यास की शिल्पविधि का विकास, अनुसन्धान प्रकाशन, कानपुर प्रथम संस्करण 196

62· कमलेश्वर — नयी कहानी की भूमिका, अवर प्रकाशन, दिल्ल 1966

63· पं·करूणापति त्रिपाठी — शैली, वाराणसी, 1941·

64· डॉ·कुमार विमल — सौन्दर्यशास्त्र के तत्व, राजकमल प्रकाशन, दिल्ल प्रथम संस्करण 1981

65· गंगाप्रसाद बिमल — आधुनिक हिन्दी कहानी, दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड, 1978·

66· श्रीमती गिरीश रस्तोगी — हिन्दी कहानी:सिद्धान्त और विवेचन, प्रकाश मन्दिर, प्रथम संस्करण 1961·

67· डॉ·गीतालाल — प्रेमचन्द का नारी चित्रण, हिन्दी साहित्य सं पटना, प्रथम संस्करण 1965

68· डॉ·चंडीप्रसाद जोशी — हिन्दी उपन्यास:समाज शास्त्रीय विवेचन, अनुसंधानप्रकाशन, कानपुर, 1962

69· डॉ·चन्द्रभानु सीताराम सोनवणे — यशपाल की कहानियाँ कथ्य और शिल्प, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण 1981·

70· डॉ·देवराज उपाध्याय — आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य, साहित्य भव
प्रा·लिमिटेड,इलाहाबाद,द्वितीय संस्करण ।96

71· डॉ·नगेन्द्र — विचार और विश्लेषण, नाशनल पब्लिशिंग हा
दिल्ली ।

72· नन्ददुलारे वाजपेयी — आधुनिक साहित्य, भारती भंडार, इलाहाबा
।974·

73· डॉ·परमानन्द श्रीवास्तव — हिन्दी कहानी की रचना-प्रक्रिया, ग्रन्थम
रामबाग, कानपुर, प्रथम संस्करण ।965

74· पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र — पोली इमारत, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली
।964

75· पाण्डेय शशिभूषण "शीतांशु" — नयी कहानी के विविध प्रयोग, लोकभारती प्र
इलाहाबाद, प्रथम संस्करण ।974

76· डॉ॰प्रभा सक्सेना — उषादेवी मित्रा;व्यक्तित्व और कृतित्व, पंचशी
प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण ।984

77· प्रेमचन्द — कुछ विचार, सरस्वती प्रेस, बनारस,प्रथम
संस्करण ।939

78· प्रतापनारायण श्रीवास्तव — विदा, गंगा ग्रन्थकार, लखनऊ ।928

79· डॉ·प्रभाशंकर मिश्र — राहुल सांकृत्यायन का कथा साहित्य, अशोक
प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण ।967

80· डॉ·बलवन्त लक्ष्मण कोतमिरे — हिन्दी गद्य के विविध साहित्य रूपों का
उद्भव और विकास, किताब महल, इलाहाबा
।958·

81· बाबुराम गुप्त — नागार्जुन के उपन्यास में चित्रित नारी पात्र,
श्याम प्रकाशन, जयपुर ।985·

82· डॉ·ब्रह्मदत्त शर्मा — हिन्दी कहानियों का विवेचनात्मक अध्ययन,
सरस्वती पुस्तक सदन,आगरा,प्रथम संस्करण ।९

83· मो·क·गाँधी — महिलाओं से, बनारस, 1949·

84· प्रो·मोहनलाल "जिज्ञासु" — हिन्दी गद्य की रूपरेखा, मेहरचन्द लक्ष्मणदास, दिल्ली 1949

85· डॉ·रघुवर दयाल, — समकालीन हिन्दी कहानी:परिदृश्य, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण 1988

86· डॉ·राजेन्द्र प्रसाद शर्मा — हिन्दी कहानियों में व्यक्तित्व विश्लेषण, भार्गव एण्ड कंपनी, 4-बाई-का-बाग, इलाहाबाद-3

87· आचार्य रामचन्द्र शुक्ल — हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारणी सभा, काशी, संवत् 1999·

88· डॉ·रामचन्द्र महेन्द्र — प्रतिनिधि कहानीकार, साहित्य सदन, देहरादून प्रथम संस्करण 1967

89· डॉ·रामकली शराफ — आधुनिक हिन्दी कथा लेखिकायें, विजय प्रकाशन मन्दिर, वाराणसी, प्रथम संस्करण 1989

90· रामदर्श मिश्र — हिन्दी कहानी:अन्तरंग पहचान, नाशनल पब्लि हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1977·

91· डॉ·रामस्वरूप चतुर्वेदी — भाषा और संवेदना, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, काशी, प्रथम संस्करण 1964

92· डॉ·रीता शुक्ल — हिन्दी कहानी के विकास में महिला कथाकारों का योगदान(शोध प्रबन्ध) महिला विश्वविद्यालय, वाईबासा, मगधा ।

93· डॉ·लक्ष्मीनारायण लाला — हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास, साहित्य भवन,प्राइवट लिमिटेड,इलाहाबाद-3, तृतीय संस्करण 1967

94· डॉ·लक्ष्मीदत्त गौतम — आधुनिक हिन्दी कहानी में प्रगति चेतना, कोणा प्रकाशन,दिल्ली,प्रथम संस्करण 1972·

95· डॉ·के·लीलावती — हिन्दी तथा तेलुगु लेखिकाओं के उपन्यास, आन्ध्रा विश्वविद्यालय, वालटेर, विशाखपटनम ।

96· प्रो·वासुदेव	हिन्दी कहानी और कहानीकार, वाणी विहार, वाराणसी, द्वितीय संस्करण 1957·
97· डॉ·विश्वम्भरनाथ उपाध्याय	समकालीन सिद्धांत और साहित्य, मैकमिलन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1976
98· डॉ·वेदप्रकाश अमिताभ	हिन्दी कहानी के सौ वर्ष, मधुवन प्रकाशन, मथुरा, प्रथम संस्करण 1988·
99· व्यथित हृदय	हिन्दी की श्रेष्ठ लेखिकायें, ग्रन्थमाला कार्यालय, वाकीपुर, 1942·
100·डॉ·शिवशंकर पाण्डेय	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी, कथ्य और शिल्प आलेख प्रकाशन, देहली, प्रथम संस्करण 1978
101·शिवरानी देवी प्रेमचन्द,	प्रेमचन्द घर में, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 19
102·डॉ·शेख मुहम्मद इकबाल,	स्वातंत्र्यपूर्व हिन्दी-तेलुगु कहानी, कन्दर्प प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1988
103·डॉ·शोभा बिसारिया	कहानीकार प्रसाद, कल्पकार प्रकाशन, लखनऊ, प्रथम संस्करण 1977
104·श्रीकृष्ण लाल	हिन्दी कहानियाँ, साहित्य भवन लिमिटेड, प्रयाग प्रथम संस्करण
105·डॉ·श्रीपति शर्मा त्रिपाठी	कहानी कला-विकास और इतिहास, नन्दकिशोर एण्ड सन्स, वाराणसी 1962·
106·डॉ·श्यामसुन्दर दास	साहित्यालोचन, इण्डियन प्रेस प्रयाग, प्रथम संस्करण 1942·
107·सत्यप्रकाश मिलिन्द	हिन्दी की महिला साहित्यकार, स्वकमल प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1960
108·सरिता सूद	महिला कहानीकारों की कहानियों में प्रेम का स्व सूर्य प्रकाशन, नई सडक, दिल्ली, 1978
109·डॉ·एस·टी·सरसिंहचारी	सौन्दर्य तत्त्व निरूपण, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1977

110. डॉ.सुरेश सिन्हा	हिन्दी कहानी उद्भव और विकास, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1967
111. सुधा चौहान	सुभद्राकुमारी चौहान, साहित्य अकादमी, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1981.
112. डॉ.सुरेन्द्र माथुर	यात्रा साहित्य का उद्भव और विकास, साहित्य प्रकाशन, दिल्ली 1962.
113. डॉ.सूतदेव हंस	उपन्यासकार चतुरसेन के नारी पात्र, भारतीय ग्रन्थ निकेतन दिल्ली, 1974
114. कुमारी सूर्यदेवर ललिता रानी:	हिन्दी तथा तेलुगू लेखिकाओं की कहानियों का तुलनात्मक अध्ययन (शोध प्रबंध) आन्ध्रा विश्वविद्यालय 1983
115. सूर्यनारायण.मा.रणसुभे	कहानीकार कमलेश्वर-सौन्दर्य और प्रकृति, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण 1977

अंग्रेजी ग्रन्थ :-

116. Chesterfield; Lord Chesterfield's Letters To His Son, Dent & Sons Ltd. London.

117. Encyclopaedia Britanica-Vol XXVI; I.N.C.E.B.-William Bothman Publisher.

118. W.H. Hudson; An Intraduction To The Study Of Literature, George G. Herraps & Co. Ltd. London 1961.

119. F.L. Lucas; Style; Cassell & Co. Ltd. London, 3rd Ed. 1956.

120. J.M. Murry; The Problem Of Style; London 1922.

121. G.K. Ogden And I.A. Richards; The Meaning Of Meaning; Keggan Paul, London 1956.

122. J.T. Shipley; Dictionary Of World Literature; New York 1953.

कोश :-

123. कालिका प्रसाद तथा अन्य लेखक	बृहत् हिन्दी कोश, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, तृतीय संस्करण संवत् 2020
124. डॉ.धीरेन्द्रवर्मा तथा अन्य लेखक	हिन्दी साहित्य कोश भाग-2, ज्ञानमंडल लिमिटे दिल्ली, संवत् 2020.

125. प्रेमनारायण टंडन	हिन्दी साहित्यकार कोश,भाग-1,हिन्दी सेवी-संसार कार्यालय, लखनऊ, जून23, 1963.
126. श्री नवलजी	नालन्दा विशाल शब्द सागर, आदेश बुक डिपो, देहली-7.
127. श्री.रामचन्द्र वर्मा	मानक हिन्दी कोश, हिन्दी साहित्य सम्मेलन,प्रया

पत्र-पत्रिकाएँ

आजकल	नवंबर 1953
इन्दु	अप्रैल 1912
	मई 1913
	कला-4, खण्ड-2, किरण-1
कहानी	मार्च 1940
	अक्तूबर 1941
	जनवरी 1956
चाँद	नवंबर 1922
	जनवरी 1923
	दिसंबर 1923
	मई 1924
	अगस्त 1924
	सितंबर 1925
	1927
	जून 1936
	जून 1940
	जुलाई 1940
	फरवरी 1941
तरूण	अगस्त 1948
नया समाज	नवंबर 1957
प्रतीक	सितंबर 1947
भारती	जुलाई 1955

मधुमती	फरवरी 1968
माया	सितंबर 1945
	जनवरी 1950
	1952
विश्वामित्र	अगस्त 1934
	नवंबर 1940
	अगस्त 1945
विशाल भारत	जून 1943
	अगस्त 1945
	सितंबर 1946
वीणा	सितंबर 1941
	मार्च 1946
सरस्वती	भाग-1, संख्या-5
	भाग-1, संख्या-6
	संख्या-7
	भाग-2, संख्या-1
	" संख्या-5
	भाग-4, संख्या-2
	" संख्या-9
	भाग-5, संख्या-6
	भाग-6, संख्या-4
	" संख्या-9
सरस्वती हीरक जयन्ति (विशेषांक)	1900-1959
हंस	दिसंबर 1933
	अक्तूबर 1933
	" 1936
	जनवरी 1937
	फरवरी 1937

"""""""""